दृष्टान्तप्रदीपिनी सटीक

द्वितीय भाग ॥



सार्वविषयिकमिश्रनिबन्ध

जिसमें

प्राचीन भगवद्भक्तिसम्बन्धी तथा रसिक वा वैराग्यसम्बन्धी तथा सर्वविषय के अत्यन्त रोचक, चमत्कृत कथोपयोगी दृष्टान्तोंका संग्रह प्रत्येक दृष्टान्त श्लोक सहित है

जिसको

पण्डित देवीसहाय शुक्ल नारनवलीय ने निर्मितकिया

तीसरी बार



लखनऊ

सुपरिंटेंडेंट बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., के प्रबन्ध से

मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपी

सन् १९१२ ई० ॥

सूचना ॥

देखिये इससंसार में कैसे २ दृष्टान्त रत्न भरे हैं जिनके आगे रत्नाधीश जौहरी आदि न्यून गिनेजाते हैं क्योंकि वे रत्न तो अल्पमूल्य वा बहुमूल्य हैं और ये अमूल्य जिनका मोल न होसके ऐसे और सुलभ हैं पर वे रत्न जहां कहीं थे इससे उन सबों को एकत्र करके उनकी आदि में प्रायः एक २ श्लोक भी लगादिया है इस द्वितीयभाग में वेतालपञ्चविंशतिसंग्रह भी है पहले होने की अपेक्षा से इतना विशेष है कि भाषा रसीली यमकादि मधुरतायुक्त और सबके आदि में श्लोक और इस में तथा सर्वत्र समस्त दृष्टान्त शिक्षागर्भित हैं ॥

आप का शुभचिन्तक शुक्लोपाध्याय पण्डित (देवीसहाय) शर्मा शुक्लजी श्रीगंगासहायजी तथा देवीसहाय महेसरी मुहाल कानपूर राव का मुहल्ला नारनवल ॥

उक्त पते से पुस्तकादि निर्णय करना हो कीजिये ?

इति ॥

दृष्टान्तप्रदीपिनी सटीक द्वितीयभाग का सूचीपत्र ॥

विषया	प्रदीपा पृष्ठम्
सार्वविषयिक निबन्ध	१– १
किसी ठग से ठगे साधु का हरि-दर्शन पाना	,,– २
राजा और पण्डित का दृष्टान्त	२– ३
एकादशी को अन्न न खाने पर दृष्टान्त	३– ४
हजार रुपये के श्लोक का दृष्टान्त	४– ७
साधु का दृष्टान्त	५– ८
गुरु का दृष्टान्त	६–१०
हत्याकारी का दृष्टान्त	७–१०
रामाधार पण्डित का दृष्टान्त	८–१३
दूती का दृष्टान्त	९–१४
गोपगृहिणी आदिकों का दृष्टान्त	१०–१७
'यतो यतो धावति" पर तीन दृष्टान्त	११–१८
आयुर्बल का दृष्टान्त	१२–२०
भावी विमाता का दृष्टान्त	१३–२१
मछलीभक्षक बगला का दृष्टान्त	१४–२१
नरराजसिंह व ब्राह्मण का दृष्टान्त	१५–२४
गीता पर दृष्टान्त	१६–२५
गीता पर दूसरा दृष्टान्त	१७–२६
समयानुसारिणी बुद्धि का दृष्टान्त	१८–२६
वेश्या और साधु का तथा आठ रोज के लिये राजा बने मनुष्य का दृष्टान्त	१९–२७
शास्त्र की सूक्ष्मा गति पै एक पण्डित का दृष्टान्त	२०–२९
जहा हरिभक्तसमाज तहा सर्व तीर्थ विराजमान होने का दृष्टान्त	२१–३०
नारी से नर होने का दृष्टान्त	२२–३०
सती को सुहागिन होने का दृष्टान्त	२३–३१
'वह पानी मुलतान गया' पर दृष्टान्त	२४–३२
ब्याह मे बीज के लेखे पै दृष्टान्त	२५–३३
(नगी भली कि छींके पात्र) पर दृष्टान्त	२६–३४
कथा सुनते हुए बनिया बजाज का दृष्टान्त	२७–३४
गऊ पानेवाले पुरोहित का दृष्टान्त	२८–३६
ऋतु पूछनेवाले वैश्य और बहू का दृष्टान्त	२९–३[illegible]
किसी वैश्य को अपनी स्त्री के गर्भ का धरोहर धरना	३०–४०

विषया	प्रदीपा पृष्ठम्
पण्डित की दाढ़ी देख किसी गवेला का रोदन करना .	३१–४१
धतूरे से विशेष मादक कनक का दृष्टान्त	३२–४१
घट घट मे उसी मूर्ति का दृष्टान्त .	३३–४२
वृषसेनित महाकृपण का दृष्टान्त	३४–४३
स्वाति में बूंद पड़ने पर सीपी मे मोती का उपजना आदि सत्संग का फल	३५–४३
किसी कपटी और सीधे सादे जन का झगड़ा	३६–४४
पूर्वदेश के नारी नरों को गँवार होना .	३७–४५
एक राजा को परीक्षा के लिये सौ मनुष्यों से कहना	३८–४६
एकही ईश्वर को सर्वत्र जानना	३९–४६
कलावन्त को हाथी देकर किसी बादशाह को लज्जित होना .	४०–४८
बहता पानी निर्मला पै दृष्टान्त	४१–४९
अपराधी वैश्यपुत्र का दृष्टान्त	४२–४९
इबराहीमअहमद की सेज का वर्णन	४३–५१
दाता और कृपण का दृष्टान्त	४४–५१
विद्यार्थी और पालकी म चढ़े अमीर का दृष्टान्त .	४५–५२
आम के आम, गुठली के दाम	

विषया	प्रदीपा पृ
जलते घर को देख कुआ खोदना .	४७–
गुम्मट परसे कूदने का दृष्टान्त	४८–
गये का शोच न करना	४९–
धन जाने पर आधा बाँट देना	५०–
दाता का देना भण्डारी का पेट फूलना	५१–
सूत न कपास कोरी से लठा-लठ का दृष्टान्त	५२–
(जो आये इस जहा में) इस पर दृष्टान्त	५३–
बादशाह को बीरबल से चार मनुष्य मागना .	५४–
गुणों से गौरव का होना .	५५–
राजा वीरविक्रमादित्य को अपराधी चार जनों के लिये दण्ड देना	५६–
उपमा से उपमान का अधिक होना	५७–
आपत्ति होने पर भी स्वभाव का नहीं बदलना	५८–
एकको युक्तियों से बहुतों को हरादेना	५९–
लुगाई से समझाये विकटखा का राजा के साथ दूसरे राजा से लड़ने को जाना	६०–
अपने हास्य से दूसरे का शोक	

विषया	प्रदीपा पृष्ठम्
पुत्रशोकग्रस्त जन को किसी साधु का समझाना .	६२—६६
दृढविश्वासी किसी फकीर का राजपुत्री से व्याह करना	६३—७१
अन्धेरनगरी चौपट्ट राजा का दृष्टान्त	६४—७३
वाक्यचतुर दलालों का दृष्टान्त	६५—७४
बादशाह अकबर की प्रशंसा	६६—७७
"न नीचो यवनात्परः" इस पर दृष्टान्त	६७—७८
अकबर शाह से कहे बीरबल का आले से सेव का उतारना	६८—८०
बीरबल की बुराई कर चतुरा को उनकी जगह पाना	६९—८१
कविवर कालिदासजी का वृत्तान्त	७०—९०
मछली बाँधे आते कालिदास से राजा का पूछना	७१—९१
फटीसीगुदड़ी लपेटे कालिदास को राजा को स्वाग देखलाना	७२—९३
"भास्करो भास्करः साक्षात्" इसपर दृष्टान्त	७३—९८
राजा रूपसेन व महामन्त्री वीरवर का वृत्तान्त	७४—१०२
चूडामणि तोता से सुन राजा रूपसेन का चन्द्रावती से व्याह करना व तोता मैना का संवाद होना .	७५—१११
अपनी कन्या व्याहने को हरिदासको चार वरों को वरना	७६—११४
धर्मशील राजा और अन्धक नाम मन्त्री का चरित	७७—११८
चम्पकेश्वर राजा की कुमारी के व्याह का वृत्तान्त	७८—१२०
राजा गुणाधिप व राजकुमार चिरमदेव का उपाख्यान	७९—१२३
"सत्ये नास्ति भयं क्वचित्" पर चोर का दृष्टान्त	८०—१२५
जैनमतावलम्बी राजा गणशेखर के राजकुमार धर्मध्वज का उपाख्यान	८१—१२८
मन्त्री को राज्य सौंप वल्लभ नरेश का आठो पहर आराम करना	८२—१३२
देवस्वामी के पुत्र हरिस्वामीका लावण्यवती से व्याह करना	८३—१३४
तपस्या करते किसी राजर्षि को अतिथि के लिये लीद देना व मरकर लीद पाना	८४—१३६
वरणीधर नरेश का चोर का घर घेर राक्षस से डरकर भागना	८५—१४०
सुविचारनाम नरेशकी राजकुमारी चन्द्रप्रभाका चरित्र .	८६—१४६
राजकुमार जीमूतवाहन को उपकार के लिये अपना जीव देना .	८७—१५३

विषया.	प्रदीपा पृष्ठम्
रत्नदत्त सेठ की पुत्री के वियोग से राजा का मरना ...	८८–१५७
'देवो भूत्वा देव यजेत्' पर दृष्टान्त ...	८९–१६१
वनवती नायक गौरीदत्त वैश्य की पुत्री मोहनी का चरित्र..	९०–१६६
चित्रकूटनगराधिप रूपदत्त राजा का उपाख्यान ...	९१–१७१
सुन्नी नाम वैश्यकी भार्या अनङ्गमञ्जरी से कमलाकर ब्राह्मण का मिलना ...	९२–१७४
मृतक ज्येष्ठपुत्र के वियोग से मरते गोविन्दशर्मा को विष्णुशर्मा का उपदेश देना व उस के शय्याचतुर, भोजनचतुर, स्त्रीचतुर तीनो पुत्रों का उपाख्यान	९३–१७८

इति दृष्टान्तप्रदीपिनीद्वितीयभागस्य सूचीपत्र समाप्तिं पफाणेति शम् ॥



दृष्टान्तप्रदीपिनी सटीका ॥

द्वितीयभागः ॥

सार्वविषयिको निबन्धः ॥

तत्र प्रथमः प्रदीपः ॥

अज्ञानतो वञ्चनतां गतं स्वकं भक्तं हरिर्दर्शन
ातनोति हि ॥ प्रवञ्चिते साधुवरे प्रपन्थिना प्रेतेऽपि
सद्यो निजदर्शनं ददौ ॥ १ ॥

किसी साधु से एक ठग ने कहा कि तुमने भगवत् का
र्शन भी किया ? वह सुन कुछ न कहसका तो ठग बोला
आव तुम्हें मैं झट से हरि के दर्शन कराऊं ऐसे कह उसे श्म-
शान में लेगया वहां एक महाभयंकर प्रेत रहता था वहां इसे
बैठाकर कहा कि तू नहाय धोय स्वच्छ हो एक धोती अंगोछा
मात्र धारण कर आंख मूंदकर वैठा रहु तुझ से हरि आकर मि-
लेंगे वह तो वैसेही वैठगया और उस ठग ने उनकी चीज वस्तु
सब उठाई सोही वह प्रेत आया और साधु को पकड़के खाने
लगा तो साधु ने आंख खोली सोही वह प्रेतरूप तो भगा
और वहांहीं चतुर्भुजरूप से प्रकट हो हरि ने निज दर्शन देके
उस साधु को कृतार्थ किया उधर उस प्रेत ने उस ठग को एक

किलकार से मार के खालिया हरि की भक्ति का यह प्रताप है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिवन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ॥

राजा और पण्डित का दृष्टान्त ॥

स्वकर्मविहितं द्रव्यं समायात्यप्रदत्तकम् ॥
राजा श्रुत्वा कथां मुद्रामात्रतोदाद्धनं महत् ॥१॥

निजकर्मविहित अर्थात् अपने प्रारब्ध में लिखा द्रव्य विना दिया भी आपही से अपने पास चला आता है जैसे एक पण्डित ने राजा के पास जाय के कथा बांचने को कहा तो राजा बोला महाराज ! आप क्या लेवेंगे वह बोला जो प्रारब्ध में है वह आजावेगा तब राजा ने विचारा कि हम इस को १) रुपया ही देंगे देखें अधिक कैसे मिलेगा निदान उसकी कथा पूरी होने पर राजा ने एक रुपयाही चढ़ाया ब्राह्मण कुछ न कह सका और वह रुपया लेजाकर मोदी को दिया उसके ५) रुपये खुराक के उठे थे इन्हों ने अपना सत्य २ हाल कहा तब वनियें ने कहा महाराज ! जो आप के पास एकही रुपया आया तो मेरे पांच क्योंकर पूरे हों ब्राह्मण बोला भाई मेरी पोथी रखले तब उसने दया में आकर कहा नहीं हम अपना पांच रुपये का रुक्का कथा पर चढ़ाते हैं और आप कल्ह यहांहीं भोजन करना उधर राजा ने चढ़ाया तो एक रुपयाही था पर उस ब्राह्मण के अपमान होने से वहुत दुःख पाया तो पण्डितों से उसका प्रायश्चित्त पूछने लगा उन्हो ने कहा कि वहुत सा धन

गुप्तदान करना तो तुर्तही राजा ने सौ अशर्फ़ी एक लौकी (घीया) में भरवाकर एक भिक्षुक ब्राह्मण को दी वह लेकर घर गया तो उसकी स्त्री ने झुँझलाकर कहा कि कहीं से अन्न लाव जिससे पूरेपड़ें इसे कहीं पैसे धेले की वेचलेना वह बेचने को चला और उधर उस वनियें का नौकर पण्डितजी के लिये शाक लेने को निकला तो ब्राह्मण के हाथ में लौकी देख बोला बेचैगा वह बोला हां इसीलिये आया उसने पैसे में वह ली और झट आय पण्डितजी को दी उन्हों ने उसे सँवारी तो उसमें सौ अशर्फ़ी निकलीं पण्डितने बांधलीं और वह भिक्षुक ब्राह्मण फिर दूसरे दिन राजा के महल के नीचे से पुकारता निकला तो राजा ने उसे बुलाय पूछा कि लौकी कैसी बनी थी उसने लाचार हो कहदिया कि हे महाराज! मैंने तो उसे स्त्री के कहने पर अन्न के लालच एक पैसे में उस मोदी के नौकर को वेच दी तब राजा उस हाल को जाना और पण्डित जी को बुलवाकर पूछा उन्हो ने (स्वकर्मविहितं द्रव्यम्) यह श्लोक पढ़ा तो राजा ने सुन प्रसन्न होके उनको सौ अशर्फ़ी और दीं॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धेद्वितीयः प्रदीपः॥ २॥

अथ तृतीयः प्रदीपः॥

एकादशी को अन्न न खाना इसपर दृष्टान्त॥

एकादश्यां तु पापं हि चान्नमाश्रित्य तिष्ठति॥
तस्माज्जनैर्न भोक्तव्यं दृष्टान्तोऽत्र न भोजने॥१॥

एकादशी के दिन पाप, अन्न में आकर रहता है इससे जनों को उस दिन अन्न नहीं खाना चाहिये क्यों न खाना क्या कारण इस पर दृष्टान्त श्रीविष्णुजी से धर्म उत्पन्न भया तिस करके सब धर्मात्मा भये धर्मराज को काम न रहा तो विष्णु जी से जाय पुकारे कि हमें काम नहीं तो विष्णुजी ने बड़ा शोचकिया उनके शोच करते २ पृष्ठभाग से एक पसीने की बूंद पड़ी उससे अधर्म उत्पन्न हुआ तो उसे विष्णुजी ने मृत्युलोक में भेजा तब बहुत पापीजन भये यमराज को काम करते २ भोजन का भी अवकाश न रहा तो फिर पुकारा कि अवकाश नहीं तब विष्णुजी ने अधर्म को मृत्युलोक में से हटाया वह फिर वहां पहुँचा तो विष्णुजी बोले यहां वैकुण्ठ में तेरा काम नहीं ब्रह्मा के पासजा वह ब्रह्मलोक में गया वहां ब्रह्माजी ने खेदा कि यहां कथावार्त्ता होती तेरा काम नहीं फिर वह कैलास में भी गया तो शिवजी त्रिशूल लेकर दौड़े तब तो फिर विष्णुजी ही के पास आकर कहनेलगा कि आप से उत्पन्न हुआ अब मैं कहां जाऊं तब विष्णुजी ने विचार करके कहा कि तू सब दिन मृत्युलोक में रहु और एकादशी के दिन अन्न में रहाकर इससे अन्न न खाना चाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः ॥

हजार रुपये के श्लोक का दृष्टान्त ॥

मनुष्यभाग्यं पिहितं न जाने स्यात् कदोदितम् ॥

लज्जाभङ्गो न कर्तव्यः कर्तव्यं रक्षणं ह्रियः ॥ १ ॥
शतं विहाय भोक्तव्यमिति स्यान्निश्चिता मतिः ॥
कृतवैरे न विश्वासो न वस्तव्यं तु तत्र वै ॥ २ ॥

एक वैश्य का पुत्र कमाने को गया राह में एक साधु मिला दोनों चले रात को एकत्ररहे तो वैश्यपुत्र ने कहा महाराज ! कोई बात बताओ जिससे मैं कमालाऊं उन्होंने कहा बचा हमारे एक श्लोक के हज़ार २ रुपये लगते हैं, वह बोला इतने हीं देऊंगा तब साधु ने ("मनुष्यभाग्यं पिहितं न जाने स्यात् कदोदितम्"—मनुष्य का भाग्य ढकाहुआ होता अर्थात् किसी को मालूम नहीं होता है न जाने यह कब उदय होजावे) यह दो पद बताये और पांच सौ रुपये उससे लिये फिर उस साधु ने उसे ("लज्जाभङ्गो न कर्तव्यः कर्तव्यं रक्षणं ह्रियः"—किसी की लज्जा भंग न करनी किंतु उसकी लाज रखनीही चाहिये) यह बताकर पांच सौ रुपये लिये फिर उसने ("शतं विहाय भोक्तव्यमितिस्यान्निश्चितामतिः"—सौ काम छोड़के पहले भोजन करना यह निश्चय मति रखना) बताकर पांच सौ लिये फिर ("कृतवैरे न विश्वासो न वस्तव्यं तु तत्र वै"—जहां वैर हो तहां विश्वास और निवास नहीं करना) यह बताया, फिर वह साधु कहीं चला गया और वह जाय दूसरे ग्राम में बड़े शहर के निकट रहा वहां से उसने निज नौकर को रसोई का सामान लेने शहर में भेजा वहां वह पहुँचा रात होगई थी फाटक बन्द पाये तो बाहरही पड़रहा अकस्मात् वहां का राजा मरगया और वहां यह विचार ठहरा कि राजा का मुख्यदा-

यभागी कोई है नहीं इससे जो कोई प्रातःकाल प्रथम फाटक पर आजावे उसेही राजा बनादेवें. निदान प्रातःकाल लोग फाटकपर आये तो उसके नौकर को खड़ा देखा झट लेचले वह बोला मैं तो आटा लेने आया हूं उन्हों ने कहा तुम्हीं से हज़ारों आदमी आटा ले उदरपूर्ण करेंगे यह कह लेजायके झट गद्दीपर जा बैठाया फिर तो वह महाप्रतापी हुआ तो नौकरों से बोला कि फाटक के सामने गांव में हमारा एक नौकर है उसे लेआकर बाग़ में उतारो और उसकी प्रीति से सेवा करो और जो कुछ उसे चाहिये सोही खज़ाने से दिवाओ उन्हों ने उसे उतार तैसीही सेवा की वह बेचारा अपने नौकर की चिन्ता में रहा निदान एक वेर दोनों का सामना हुआ तो वैश्य उसे देख के हँसा तब उसने कहा जो किसी से तू ने कहा तो बुरा हाल होगा तूही अपने को नौकर बताना तो वह वैसेही रहा एक दिन उस राजा की स्त्री किसी घोड़ेवाले (सईस) से कुकर्म कररही थी उसने उनको देखा तो उसे (लज्जाभङ्गो न कर्तव्यः) यह पद याद आया तो उन्हें अपने दुशाले से ढक दिये तब उस स्त्री ने विचारा कि यह हमारी बुराई करेगा तो झट दुशाले समेत राजा के पास जायपुकारी कि तुम्हारा वह नौकर जो मुफ्त का खाता है उसने मुझ से ठाढ़ करके कुकर्म करना चाहा यह उसका दुशाला है मैं छुटाकर आई हूं राजा ने वह दुशाला पहिचान के उसके मारने का विचार किया तो उसे एक पत्री देके कहा कि यह फलानी जगह देआव उधर उनसे कह भेजा कि तुम्हारे पास पत्र लेकर आवे उसे मारदेना वह पत्र लेकर चला तो रसोई तैयार थी

उसे झटही (शतं विहाय भोक्तव्यं) पद याद आया तो भोजन करनेबैठा और उसी (सईस) ने विचारा कि न जाने इस पत्र में क्या इनाम का काम है तो उस पत्र को लेकर आप भगा आगे जातेही काम आया राजा ने इस बात का ब्यौरा मँगवाया तो (सईस) मरा सुना तब तो उस मूर्ख राजा ने विचारा कि यह ऐसा चतुर है तो न जाने हमारी क्या २ खराबी करैगा अब इसे मारही देना अवश्य है उधर उसने बाकी रहे (कृतवैरे न विश्वासो न वस्तव्यं तु तत्र वै) यह दो पद याद आये तो वहां से बहुत सा माल लेके चल दिया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ॥

साधुका दृष्टान्त ॥

परघातविचारेण स्वीयघातः प्रजायते ॥
साधुं मारयमाणःस्वपुत्रग्रीवां यथाच्छिनत् ॥ १ ॥

पराया घात विचारने से अपनाही बुरा होजाता है जैसे एक साधु द्वारकाजी को जाता था उसके पास सौ अशर्फ़ी थीं तो जहाज़वाले ने उसे पहिचान के मारने का विचार करके ऊपर के रखने पर एकान्त भेज दिया दैववश उसके लड़के को गर्मी लगी वह ऊपर जाय सोया उस साधु को नीचे उतार दिया आधीरात को वह दुष्ट साधु को मारना विचार के ऊपर चढ़ा और झटही तलवार से शिर उसका उतार लिया अशर्फ़ी न मिलीं तो चांदने से देखा तो पुत्र का शिर है

तब तो हाय २ पुकार रोता पीटता साधु के चरणों में जा गिरा और उनसे हाल अपने मनोरथ का कहा साधु सुनके बड़े पछिताये कि देखो हमारे शरीर के हेतु इसका पुत्र मरा हरीच्छा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ॥

गुरु का दृष्टान्त ॥

अप्रदीक्षितसम्पर्काद्दोषोऽतो गुरुमाश्रयेत् ॥
अदीक्षितो यथा विप्रो गजयोनौ यथाऽपतत्॥१॥

विना दीक्षा किये अर्थात् जिसने गुरु न किया उसके संग रहने से भी दोष होता है जैसे एक कृष्णदत्त ब्राह्मण था उस के घर श्रीनारदजी आये वह घर न था उसकी स्त्री ने उनकी यथाविधि सेवा की तो नारदजी ने प्रसन्न हो कहा धन्य है तुम्हारे गुरु को जिसने ऐसा उपदेश दिया तब तो वह घबरा कर बोली महाराज ! गुरु तो मेरे नहीं है यह सुनतेही नारद जी उदास हो भ्रमखा गिरे फिर सचेत हो बोले कि तुझ निगुरी के हाथ का अन्न जल हम ने ग्रहण किया न जाने हमारी कौन गति होगी फिर तो वह चरणों में गिर रो २ प्रार्थना करने लगी हे महाराज ! मेरा उद्धार करो जल्दी चेली कीजिये नारदजी ने शीघ्र उपदेश दिया कि निगुरे के संग कभी खाना पीना बैठना सोवना न चाहिये इत्यादि बताकर नारदजी तो चलेगये और उसका पति आया तो उसने कहा

अलग ही रहो मैं निगुरे के साथ निवास कभी न करूंगी ब्राह्मण चकित हुआ कि यह क्या नारद घर में आघुसा वह बोली अब तो जब आप गुरु करलेवेंगे तभी दूसरी बात होगी ब्राह्मण, गुरु करने का विचार करतारहा दैववश मृत्यु होगई तो वह द्रविड़देश के राजा की पुत्रीहुई और वह उसी राजा के घर हस्ती जन्मा दोनों को ज्ञान पूर्वजन्म का बनारहा तो वह उसे जाकर कहा करती कि देख तूने गुरुदीक्षा नहीं लिया इस से हम तुम दोनों को जन्म लेना पड़ा नहीं दोनों सत्यलोक को चलेजाते यह सुनतेही हाथी जी में बहुत लज्जित हुआ और उस पुत्री का स्वयम्बर ठहरा उसके पिता ने देश २ के राजा बुलवाये वह उस व्यवस्था को देख बड़ा दुःख पाया और चरना पीना कई दिन पहले से छोड़दिया तो उस स्वयम्बर के उत्साह में राजा को हाथी का बड़ा भारी शोच उत्पन्न हुआ क्योंकि वह हाथी ज्ञानवान् होने से मनुष्य की तरह समझता था तब तो राजा उदास हो बोला कि हमें हाथी का बड़ा सन्देह है तो पुत्री ने कहा कि आप कुछ सन्देह न कीजिये इसकी चिकित्सा मैं करती हूं यह कह हाथी के पास जाय बोली कि तू घबरा नहीं मैं तेरेही गले में फूलमाला डालूंगी हाथी यह सुनतेही चरनेलगा तो राजा बहुत प्रसन्न हुआ और बड़ी धूम के साथ पुत्री का स्वयम्बरोत्साह तैयार किया निदान पुत्री ने सब राजाओं का तिरस्कार करके अपने पूर्वजन्म के पति हाथीही के गले में माला डाली यह आश्चर्य्य देख सब हाहाकार करनेलगे कि पुत्री भोली है फिर उसने वैसाही किया तो राजा बोला प्रारब्ध इस पुत्री की फिर तो

स पुत्री ने निजगुरु श्रीनारदजी का आवाहन किया वे तुरन्त आये और यथाविधि से उस हस्ती को मन्त्रोपदेश किया वह हस्ती का शरीर तज सुन्दर मनुष्य होगया सब लोग अचम्भे में रहगये गुरु प्रताप ऐसा है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ॥

हत्याकारी का दृष्टान्त ॥

प्रकुर्वन् स्वशरीरेण देही वध्यो न संशयः ॥
पापमिन्द्रे रोपयित्वा दुःखयभूत्पाणिकर्तने ॥ १ ॥

जो निज शरीर के किसी भी अवयव अर्थात् पैर से शिर तक किसी अंग से भी पाप हो वह देहवान् पुरुषही को दण्ड दिया जाता है जैसे किसी दुष्ट ने गऊहत्या की उसको कैड़ किया तो उसने कहा कि मैंने यह हत्या हाथोंसे की तो भुजों का स्वामी इन्द्र है इससे इन्द्र को हत्यालगेगी हमें क्या तब तो यह हाल समझ सर्कार ने उसके दोनों हाथ कटवा दिये और कहा कि ये इन्द्रही के हाथ कटे तेरा क्या ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे सप्तमः प्रदीपः ॥ ७ ॥

अथ अष्टमः प्रदीपः ॥

रामाधार पण्डित का दृष्टान्त ॥

स्वनयमेवाप्नुयात्सिद्धिं विपरीतमपि कृतम् ॥
विश्वासेन हरेरामाधारे सिद्धिर्यथाभवत् ॥ १ ॥

जो निज विश्वासयुक्त हरिके आश्रय होकर काम करे वह उलटा भी किया ईश्वरकृपा से सिद्ध होजाता है जैसे रामा-धार ब्राह्मण से राजा ने प्रश्न किया कि हमारे हाथ में क्या है ? तो उस सीधे ब्राह्मण ने घबराकर कहा(रामासरे हम जानें 'किया' है) त्योंहीं राजा ने विचारा कि मैंने सब राज निज हाथ में रहने अर्थात् वशमें करनेका प्रश्न किया है कि सब काम काज मेरेहाथ में आजावे सोही पण्डितजी ने हाथ में किया अर्थात् काज बताया है तब तो पण्डितजी को बड़े सन्मान से अपने पासरक्खे तो और लोग इनसे द्रोह करनेलगे तो इन्हें सीधेजान बोले कि आज तुम राजा की पगियाँ उछाल देओ तो हम जानें कि राजा तुम्हारे वश में है उसने भरी कच-हरी में राजा की पगड़ी उछाली तो उसमें एक सर्प सबको दिखाई दिया सब लाचार हुए पण्डितजी का बड़ा सन्मान हुआ फिर उन्हों ने कहा आज राजा को कचहरी से बाहर उठाकर पटकदे तो हम जानें फिर भी उसने वैसाही किया तो रामप्रताप से कचहरी की कड़ी गिरी कई मनुष्यों के चोट लगी तब पण्डितजी का और भी बड़ाही सन्मान हुआ कि पण्डितजी न होते तो राजा का मरण होजाता फिर तो उन्हों ने राजा से कहदिया कि शिकार खेलने में पण्डितजी बड़े चतुर हैं शेर की शिकार में इनको संग लेचना तो राजा लेगया और जब सिंह आया तो राजा डर के भगगया और पण्डितजी औसान पाय एक वृक्षपर जाचढ़े वह सिंह नीचे खड़ा हो ऊपर को मुँह करके दहाता दैववश भयकरके उसके हाथ से भाला छूटकर शेर के मुँहमें पड़ा शेर मरगया उसने

परीक्षा के लिये उसपर एक डाली तोड़ डाली तो मराजान उनरके शहर में आय रौला किया कि हमें शेर के पास अकेला छोड़ तुम सब भग आये वहां हमारा राम बिन रक्षक कौन था वह मरा पड़ा है उसे उठालेआओ लोग जाय लेआये और राजा ने उनको अपना (दीवान) बनाया ॥ इति ॥ तैसेही एक वैद्यराज ने निजगुरु से हर्र सर्वगुणकार्यसाधक सुनी तो उसी का आश्रय लेकर वैद्य बनचला, एक रोगी को देखा उसको हर्र बताई उसके उदरव्याधि थी दस्त होकर आराम होगया फिर एक कुम्हार ने आय पूछा पण्डितजी मेरे गदहा का पता नहीं तो पण्डितजी को हर्र सिद्ध था कहा कि पांच हर्र घोटकर पीले उसने पी तो दिशा की शंका भई गढ़े में गया तो वहां गदहा मिलगया एकबेर राजा पर शत्रु ने चढ़ाई की तो राजा ने पण्डितजी की शरण ली उन्होंने कहा कि पांच २ हर्र तुम सबजने पीलेओ उसने सबसेना को आज्ञा दी उन्हों ने पी तो यह ब्योरा उस शत्रु की सेना में भी पहुँचा तो उन्हों ने बहुतसी हर्रें पीं तो इधर वालों को तो एक २ दो २ ही दस्तहुए और उन सबोंको दिशा जाते सुधि न रही तो राजा ने धावाकर उन सबों को जीत लिया ॥ इति ॥ दृष्टान्त ॥ एक बनियां बनियानी, गंगा न्हाने गये राह में एक ब्राह्मण मिला तो बनियानी ने उससे (पालागन) करी तब वह बोला अच्छा आज तेरेही भोजन करेंगे वैश्य ने कहा ले और (पालागनकर) अब याहि जिमानो परैगो लाचार घर लेगये पैर धोय भोजन कराया उसने उठकर फिर पैर धोये तो उसका लड़का बोला अरी मा! यह

तो फिर पैर धोवने लगा, वह बोली बेटा अब मुझे खाओ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धेऽष्टमः प्रदीपः ॥ ८ ॥

अथ नवमः प्रदीपः ॥

दूती का दृष्टान्त ॥

दुष्करं कुरुते कार्य्यं दूती नात्रोद्भुतं यथा ॥
राज्ञा हतं मयूरं या वैश्यं सम्यग् व्यजिज्ञपत् ॥१॥

दूती, कठिन भी कार्य्यको सिद्ध करदेती हैं जैसे एक वैश्य का मोर उड़कर राजा के महलपर जाय बैठा उसकी गर्भवती रानी ने कहा इस मोर के भक्षण करने में मेरा दोहद (ओौ-जना) है राजा ने उसे शीघ्र पकड़वा तैयार करवाकर भोजन करवाया उधर उस साहूकार ने बड़ा प्रयत्न उसके ढूंढ़ने का किया तो दूती बुलवाई वह सर्वत्र होती राजा के यहां भी पहुँच मोर भक्षण करने के गुण वर्णन करनेलगी तो रानी ने उसे पास बुलाकर कहा कि मैंने मोरभक्षण किया है इसका फल कह तब उसने (भाग्यवान्) पुत्र होने का समाधान किया और उससे पूरा २ पतालेकर वैश्य के पास आई सब हाल कहा तो वह बोला कि मुझे प्रत्यक्ष दिखावे तब मैं जानूं तब दूती ने एक ढोल में उसे मढ़वाय डोमनी होकर तहां गई और राग गानेलगी कि साखी सुनले ढोल वहूका बोल सु० अंतरा मोर आयो फिर कहा कियो । मोहिं पकड़ला राजा दियो ॥ सु० १ फिर क्या पाल्यो पिंजरे डार । नाहीं खायो ताहि बनार ॥ सु० २ काहे निष्फल जीव नशाय । लग्यो ओौजना रह्यो न

जाय ॥ सु० ३ ज्ञानिनि याको भेद बताय । शुक्लाम्बर देहूं इहिठाय ॥ सुनले ढोल बहू का बोल ४ यह सुनतेही शीघ्र ढोल फाड़के वैश्य, बाहर निकला और रानी को गिरफ्तार कर राजा के पास जाय अपने मोर का दावा किया राजा ने बहुत सा धन देना कहा पर यह न माना लाचार हारकर राजा को उसे अपना दीवान बनाना पड़ा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे नवमः प्रदीपः ॥ ९ ॥

अथ दशमः प्रदीपः ॥

हत्वा नृपं पतिमवेक्ष्य भुजङ्गदष्टं देशान्तरे विधिवशाद्गणिकास्मि जाता ॥ पुत्रं पतिं समधिगम्य चितां विहाय शोचामि गोपगृहिणी किमिदं च तक्रम् ॥१॥ (तथा चोक्तं विवाहवृन्दावने) मूर्त्तौ क्रूराः स्वात्त्रिराशौ तु पापाः कुर्य्युर्योगं कार्मुकं कन्यकास्मिन् ॥ हत्वा कान्तं कामिनं तं विषाद्यैर्वेश्या रामं रेरमीति स्वरीत्या ॥ २ ॥

जिसके लग्न में क्रूरग्रह हों और २।३ राशि में भी तो यह (कार्मुक) योग होता है इसमें विवाही अपने पति को विषादि देके मारकर आप वेश्याभई कर्म करती है इसपर (दृष्टान्त) कहते हैं एक स्त्री भाग्यवान् घर में सब सुख भोग-विलास करती थी अकस्मात् उसका एक यवन से दुःसंग हो-गया वह उससे ऐसी रमी कि अपने पति को भोजन में विष देके मारकर पुत्र को तहां छोड़ा उसके साथ चली फिर जहां

तहां रहते कुकर्म करते दैववश वह यार मरगया उसने और किया तो वह भी कहीं चलागया तव वह वेश्याभई अनेक परपुरुषों के साथ जारकर्म करनेलगी भावीवश वही उसका पुत्र सौदागरी करता उस शहर में आया और उसे स्वरूपवती देखकर उसके मकान में आय चढ़ा उसके साथ सुख भोग किया फिर आपस में बहुत प्रेम होनेपर उसने पूछा कहां से तशरीफ़ लाई हैं वह बोली न पूछिये में महाहत्यारी हूं पतिको मार यार पाया यार मरा और किया और भी निकलगया तो वेश्या भई अव यह दशा है आप भी बतलाइये वह सव विचार उसे पहिचानके बोला कि मैं महाही हत्यारा तेरा पुत्र हूं पहिचान ले यह कहतेही देखते २ उसकी चूंची से दूध की धार चली उससमय दोनों बेचेत होगये देह में चेतभया तो पण्डितों से पूछा उन्हों ने आज्ञा माता के सामने चिता में जल जाने की दी यह वहांही चितालगाय माता के सामने जल-गया तव वह दुःखभरी वियोग से तपी वृद्धभई फिर ग्वालि-नियों में दही बेचनेजाती एक दिन उसके शिर से गोरस की मटकी गिरके फूटगई तो उसने कुछ शोच न किया तव उन्हों ने कहा कि तू कैसी धीर है जो दिनभर की कमाई खोय शोच नहीं करती तव उसने यह श्लोकपढ़ा और सव निज व्यथा सुनाई वे सुन चकित हो राम २ कहनेलगीं ॥ इति ॥ एक (साधु) ने निज शिष्य से कहा तू खेत में से सिरा, फली तोड़ लाव और कोई आवेगा तो मैं तुझे प्रभातीराग से समझाता हूं जव देखा कि दो आदमी सामने आते हैं तो गानेलगा प्र-भाती (बड़जा साध दराड़े वड़जा, आयगया संसारी व०

इति) और जब देखा चलेगये तो फिर बोला उसी राग के अन्तरे से जैसे (निकला साध दराड़ामांसैं ऊठगया संसारी। तोड्या २ सब लेआइये है भोजन की त्यारी । बड़जा साध दराड़ै बड़जा इति) जब कि किसान ने खेत में सरसराहट देखा तो लट्ठ ले २ कर आखड़े हुए तो तिन्हें तीनों कोनों में खड़ेदेख समझाता है उसीराग से जैसे (पेटपलिणिया है जा साधू पड़ी जीवपरघारी । पूरब पश्चिम उत्तर रुकिरहि दक्षिण दिशा तुमारी । ब० इति) सोही वह तैसेही दक्षिण की राह से निकल चला किसान देखतेही रहे एकसमय नारदजी सत्य-भामा के घर पहुँचे उसने इनकी पूजाकी और पूछा कि हम ने पूर्वजन्म में कोई भारी पुण्य किया था जिससे श्रीकृष्ण महा-राज मिले अब भी कोई ऐसा उपाय बतलाइये जिससे यही कृष्णजी मिलैं तो नारदजी बोले तुम इन्हीं कृष्णजी का दान करो तो फिर भी इन्हींको पावोगी तब कहा कि आप शीघ्र दान करवालीजिये तो नारदजी बोले लेवै कौन किसी भडरिया (डकोत) को बुलाकर देदेवो तब हाथ जोड़ बोली महाराज! आपही लेलीजिये तब तो नारदजी ने झट संकल्प ले कृष्ण जी से जा कहा महाराज! लँगोट लगाकर हमारे साथ होइये तब तो कृष्ण; घबराये और सत्यभामा भी बोली कि महा-राज! अगले जन्म में पानेके लिये दानकिया और आप अभी लियेजाते हो ॥ इति ॥ मारनेवाले से जिवानेवाला प्रबल है जैसे एक व्याध ने कबूतर के ऊपर बाण मारा और उस वृक्ष के कोटर से सर्प निकलकर उसी कबूतर को खाने आता था और ऊपर से शिकरा भी उसीपर झपटा तो दैवयोग से वह

बाण सर्पको वेधकर शिकरे के लगा और वह सर्प झुंझलाकर व्याधपर गिरा उसे काटखाया ऐसे वे तीनों मरे और कबूतर जीवता रहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे दशमः प्रदीपः ॥ १० ॥

अथैकादशः प्रदीपः ॥

यतो यतो धावति दैवचोदितं मनोविकारात्मक माप पञ्चसु ॥ गुणेषु मायारचितेषु देह्यसौ प्रपद्य मानः सह तेन जायते ॥ १ ॥ स्वप्ने यथा पश्यति देहमीदृशं मनोरथेनाभिनिविष्टचेतनः ॥ दृष्टश्रु ताभ्याम्मनसाऽनुचिन्तयन् प्रपद्यते तत्किमपि ह्यप स्मृतिः ॥ २ ॥

यतोयतोधावति, पर तीन दृ० पहिले “ यं यं वापि स्मरन् भावं” कह कर लिख आये हैं। अब स्वप्ने यथापर कहते हैं कि एक भड़भूंजा, भाड़ झोक रहा था उसके आगे से राजा की सवारी निकली तो उसने देखकर पश्चात्तापकिया कि देखो मैं राख में सना बैठा और राजा इस ठाठ से जाता है यह कहते २ उसकी आंख लगगई तो तुर्तही स्वप्न में राजाहोगया सुन्दर रानी के साथ सुख से रमणकर रहा था इतने में दो ग्राहक आय बोले अरे भड़भूंजे भाड़भूंज तैयार कर वह स्वप्न के आनन्द में मग्न था कुछ सुधि न भई तो उसकी भड़भूंजी ने आकर उसके दो लातमारी और कहा अरे दई मारे तोहि सूझै नहीं ये दोय ग्राहक कबके खड़े हैं तब तो घबड़ाकर

(हायरानी २) कहता उठा तब भड़भूंजी बोली निपूते कवै मैं पड़ी सौक रानी और भाड़ में पड़ा तू दाने भूंजे दाने जिस से पेटभरै भड़भूंजा सुन पछताय २ भूंजने लगा ॥ तथा एक की सगाईभई उसके चाव २ में कुंए के ढानेपर सोगया तो स्वप्न में विवाह भया और गौना भी होगया बहू आई और दोनों साथ सोये तो बहू ने कहा जरा सरकना तो सरकता हूं कहकर धम्म से कुंए में गिरकर मरगया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निवन्धे एकादशः प्रदीपः ॥ ११ ॥

अथ द्वादशः प्रदीपः ॥

आयुर्वल का दृष्टान्त ॥

आयू रक्षति मर्म्माणि ह्यायुरन्नम्प्रयच्छति ॥
भक्षयित्वापि तु विषं राजासीज्जीवितो यथा ॥ १ ॥

आयुर्वल इस शरीर की रक्षाकरै और आयुही जीवरक्षक अन्नोपान देताहै जैसे राजा विष खाकर भी जीतारहा (दृष्टान्त) एकराजा के पास दो परिडत गये राजा ने पूछा आप क्या २ पढ़े हैं तो एक बोला मैं ज्योतिष पढ़ा हूं दूसरे ने कहा मैं वैद्य-राज हूं तो राजा ने ज्योतिषी से पूछा हमारी अवस्था कितनी है उसने कहा ७५ वर्ष की तो राजा ने केवल उनकी परीक्षा के लिये वैद्यराज से कहा कि आप के पास विष है वह बोला हां है तो राजा ने मांगा तो उसने दूनी मात्रा दी राजा लेजाके खागया तो शरीर में दाह उठी तब निकल चला एकपहाड़ की जड़ में झरना झरता था उसके नीचे शिरलगाकर बैठारहा

ऐसेही तीनपहर बीते तो शीत ने सताया तो तहां से चला एकप्रेत जलता था उसकी अग्नि से तापा फिर क्षुधा लगी तो ज़ल में से मछली निकाल उसी अग्नि में भूनकर खाई तो विष उतरगया सावधान हो निजराजगृह में आया तो ज्योतिषी ब्राह्मण को प्रसन्न होकर बहुत सा धनदिया फिर वैद्यराज से पूछा कि उस विष का कोई उतार (इलाज) भी आप के पास लिखा है उसने कहा हां कदाचित् कोई झरने के नीचे जा तीनपहर बैठे फिर प्रेत के धुआं से तपै और उसी अग्नि में पकाकर मत्स्य भोजनकरै तो तुरन्त आरोग्य होजाता है। राजा सुन बहुतही प्रसन्न हुआ और उन दोनों का दरिद्र दूर करदिया अच्छे पुरुष यथार्थ विषयपर प्रसन्न होते हैं॥ इति॥ तथा एक बादशाह को कुष्ठबाधा भई तो उसने प्राणत्याग श्रेष्ठ समझकर विष खालिया फिर उसकी दाह उठी तो बिन ढका जल गिलास में धरा था उसमें सर्प गरल डालगया उसे उठाकर बेसुधि से पीगया तो (विषस्य विषमौषधम्) के अनुसार उसका विष उतरगया तो आराम हुआ तब वैद्योंसे पूछा कि जो विष खाकर बचा चाहै तो क्याकरै। उन्हों ने किताब में लिखा सुनाया कि अगरचे सांप के गरल का पानी पी लेवे तो आराम होवे राजा को वैद्यकशास्त्र का बड़ा विश्वास हुआ इति॥ तथा हमारी गऊ का बछरा उसीसमय जन्मताही कुंए में गिरा तो दैववश उसके आगे के पैर कुंए के किसी छेद में अटक रहे तो वह नीचे के खुर फड़फड़ाता रहा मालूम होतेही धीर वीर निर्भय हो (श्रीगंगासहायजी) तुर्तही उस कुंए में उतरे और उस बछरे को निकाला तो

ईश्वर की कृपा से उसका एक बाल भी टेढ़ा न भया शीत ऋतु थी अग्नि से तपाया तो शीघ्रही उछलने कूदनेलगा इति (आयूरक्षति म०) तथा एक ब्राह्मण ने क्वाथ की औषध के भ्रम से तमाकू का क्वाथ बनाकर पीगया तो आराम हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे द्वादशः प्रदीपः ॥ १२ ॥

अथ त्रयोदशः प्रदीपः ॥

द्विजो यमो मिलित्वाऽथ ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥
सकृद्धाविगृहे यान्ति सद्यो द्विजमृतिर्भवेत् ॥ १ ॥

एकब्राह्मण ने विचारा कि कोई रीति से मैं अमर होऊं तो यमराज के पास जायके कहा मुझे अमर करदीजिये यमराज बोला यह मेरे वश की बात नहीं आओ ब्रह्माजी के पास चलें वहां गये तो ब्रह्माजी भी न कहसके तो वे भी बोले चलो विष्णुजी के पास फिर विष्णुजी समेत सब शिवजी के पास गये शिवजी ने भी कहा हमारा वश नहीं यह तो भावी के हाथ है चलो भावी विमाता के घर चलें वहां पहुँचे तो ब्राह्मण को बाहर बैठाकर आप भीतर गये और (विमाता) से सब वृत्तान्त कहा उधर उस ब्राह्मण के प्राण निकलगये तो (विमाता) बोली तुम तो उसे मारने को लाये थे वह तो मरापड़ा है किसे अमर करवाते हो देखो उसके मस्तक में मैंने क्या लिखा है उन्हों ने झट जाय देखा तो मरापड़ा और उसके माथे में (द्विजोयमोमिलित्वाथ ब्र०) यह श्लोक लिखा है अर्थात् ब्राह्मण, यम, ब्रह्मा, विष्णु और

महेश्वर ये मिलकर (भावी—विमाता) के घर जावें तभी इसके प्राण निकलजावें यह देखतेही चारों चकितसे होरहे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे त्रयोदशः प्रदीपः ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशः प्रदीपः ॥

निजक्षयेण शत्रोश्च क्षयश्चापि प्रजायते ॥
मत्स्यघातप्रजारेण बकघातोयथाऽभवत् ॥ १ ॥

अपने कुल का कुछ नाश होनेपर अपने घाती का भी घात नाश होता है जैसे एक बगला नित्य मछली खाता और उस बगले के बच्चों को एक सर्प उस वृक्ष के कोटर में से निकल कर खाजाता था वह दुःख उसने मछलियों से कहा वे बोलीं हमको लेजाकर सर्प के बिल से नौले के बिल तक हमारी पंक्ति लगा दो वह हम को खाता २ उस सर्प को भी जायखावेगा उसने वैसाही किया तो वह नौला चला और मछलियों को खाते २ उसेन सर्प को भी जाय खाया और उसके बच्चों को भी पूरे किये तथा उसका घोंसला भी तोड़ गिराया और बच्चों के खाने की ताक में आता रहा तब बगला महाहीदुःखी रहतारहा बुराई करने का यह फल है जो कोई दूसरे का कुल नष्ट किया चाहै तो उसका कुल भी शीघ्रही नष्ट होजावेगा इसमें संशय किसी को कभी भी नहीं करना चाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुर्दशः प्रदीपः ॥ १४ ॥

अथ पञ्चदशः प्रदीपः ॥

कुर्यात्सन्मन्त्रियुक्तोऽसौ राजा सत्कार्यमन्यथा ॥
कुकार्य्यं कुरुते हंसशुकाभ्यां सहितो यथा ॥ १ ॥

जो राजा श्रेष्ठमन्त्रियों से संयुक्त होता वह तो सुकर्म करता है और दुष्टमन्त्री युक्त हो तो वह कुकर्मही करता है जैसे एक वनराज सिंह के यहां हंस शुक दीवान थे क्योंकि जो जिस काम से सर्वथा अलग हो उसी को उस कामपर रखना यह नीति है इसी नीति को उदाहरणसहित दिखाते हैं कि एक बेर उस सिंह के घर पाहुना-(अतिथि) आये तो सिंह ने अपने प्राचीन मन्त्री गृध्र शृगाल आदिकों से उनके सत्कार करने के लिये मांस मांगा तो उन्हों ने उसे खाय लुटाय और सजातियों को भुगताय दिया था तो वे सुनकर कुछ न कह सके तब सिंह ने क्रोध करके कहा कि मैं ऐसे २ भारी शिकार मार २ के तुम्हारे पास लाय २ धरता रहा हूं वे कहांगये तब तो वे अतिथि बोले स्वामिन् ! जिसकाम से जो सर्वथा अलग हो उसे उस कामपर रखना यह नीति है तिससे तुम इन सबों को निकाल कर (शुक-हंसों) को मन्त्री बनाओ तैसेही उनको मन्त्री बनाये तो एक ब्राह्मण उधर चलागया सिंह ने सामने से देखा तो जीभ निकाल २ हर्षनेलगा कि देखो कैसा शिकार मेरे लिये चलाआता है तब शुक हंस मन्त्रियों को उसके पासभेजे उन्हों ने ब्राह्मण को देखतेही दण्डवत् करके पूछा कि, हे महाराज ! आप किधर आगये हो ब्राह्मण बोला लड़की के विवाह की चिन्ता में आया हूं वे बोले यहां तो वन-

का राजा सिंह रहता है जीवते चलेजावो तो बड़ी बात है
वह सुनतेही डरता कांपता रोनेलगा तो बोले अच्छा हम
राजा को समझाते हैं फिर (यद्भाव्यं तद्भविष्यति) जो होना
है वह होगा यह कह सिंहके पास जाय बोले कि, हे महाराज !
एक बहुत श्रेष्ठ ब्राह्मण आप के पास आया है उसका दर्शन
करो और उसकी इच्छा पूर्णकरो तो सिंह ने प्रणाम किया
और पूछा कि, हे महाराज ! क्या इच्छा है ? उन्हों ने पुत्री का
विवाह कहा तब सिंह ने पांच सौ रुपया दिये वह लेचला फिर
कुछकाल में हिला २ चलकर वहां पहुंचा तो फिर वहां काक
शृगाल मन्त्री होगये उन्हों ने देखतेही प्रसन्न हो सिंह से कहा
कि, हे महाराज ! ब्राह्मण का मांस बड़ा कोमल और पवित्र
होता है इसके भोजन से हमारा आप का बड़ा कल्याण होगा
यह कह ब्राह्मण को लेचले सिंह ने उसी ब्राह्मण को देखतेही
यह दोहा कहा ॥

दो० । हंसा सर में जा बसे, सूवा गिरिहिं सिधार ॥
जाव विप्र घर आपने, कोहि सिंह को प्यार ॥ १ ॥

यह सुनतेही ब्राह्मण चुप हो चलाआया इससे राजा की
बुद्धि मन्त्रियों के आधीन रहती है ॥ एक ब्राह्मण आजीविका
के लिये चला तो उसे कहीं कुछ काम न मिला तो लाचार
होकर एक सर्प की बांबी पर जाय पाठ किया तब सर्प नि-
कला और १) रुपया पुस्तक पर चढ़ाया ब्राह्मण फिर दूसरे
दिन गया फिर उसने १) रुपया चढ़ाया ऐसेही नित्यजाता १)
रुपया लातारहा एकदिन उस ब्राह्मण के खेद हुआ तो पाठ
न होने का शोच किया तो उसका पुत्र बोला पिता ! क्यों

शोच करते हो मैं सब काम करलाऊंगा तब वह पोथी बगल में दबाय चला और उस सर्प को पाठ जाय सुनाया उसने वैसेही १) रुपया चढ़ा दिया वह लेआया और मन में विचार किया इस सर्प की बांबी में न जाने कितने रुपये भरे हैं एक २ की कबतक आशा करैंगे इससे इस सर्प को मारदेना जिसमें वह सब रुपये मिलैं सोही दूसरेदिन बगल में एकडण्डा भी ले-गया ज्योंहीं सर्प निकला त्योंहीं उसने डण्डा फटकारा सर्प बचाकर बिलमें जाघुसा और रुपये आने से बन्द रहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे पञ्चदशः प्रदीपः ॥ १५ ॥

अथ षोडशः प्रदीपः ॥

गीता पर दृष्टान्त ॥

गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ॥
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता ॥ १ ॥

और शास्त्र विस्तार से क्या है सुन्दर गीताही गान करना जो साक्षात् कमलनाभ (श्रीकृष्णचन्द्रजी) के मुखारविन्द से निकला (दृष्टान्त) एक ब्राह्मण गीता पढ़नेको काशीजी गया वहां बारह वर्ष पढ़कर आया तो एक राजा के यहां प-रीक्षा भई वह राजा बड़ा विवेकी था तब बोला कि, हे महा-राज ! आपने बहुत अच्छी पढ़ी पर कुछ कसर है आप ये रु-पये लेकर फिर जाइये गीता पढ़िये वह गया और बहुत काल तक पढ़ी तब तो उनको और २ ही अर्थ मालूम दिये फिर आया तो राजा बोला अब भी कुछ कसर है फिर जाइये वह

फिर गया तव तो उसको गीता का पूरा २ अभिप्राय मालूम भया तव तो वहां आवना तो भूला और पर्वत की राहली तहां जाय गुफा में बैठ समाधिस्थ हो ध्यान करनेलगा जव बहुत काल बीता तो राजा ने उसके आने का बड़ा संदेह किया तो घर से चल काशी पहुँच उसका पता लगाया तो लोग बोले कि उसने सीधी राह पर्वत की लीहै तव राजा जाय पर्वत की गुफा में उसे एकाग्र मन (यथा दीपो निवातस्थः) जैसे आड़ मे धरा दीपक तैसा देखकर वोला अव आप को गीता आई उसने राजा के प्रेमवश से आंख खोली और बोला हां राजन्! तुम्हारे उपदेश से अव आई पर अव मुझ से मत बोलो भजन मे विक्षेप होता हैमैं तुम्हारे उस प्रेम से तुम से इतना बोला हूं यह सुनतेही राजा की भी हृदयदृष्टि खुलगई तो आप भी समाधि लगाय तिसके पास वैठा ॥

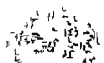
इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिवन्धे षोडशः प्रदीपः ॥ १६ ॥

अथ सप्तदशः प्रदीपः ॥

सार्वविषयिक निवन्ध में ॥

गीतापर दूसरा दृष्टान्त ॥

जैसे एकराजा से महापाप वनिआया तो उसकी रानी ने कहा मैं आप से स्पर्श नहीं करूंगी इससे आप गीता पढ़ो तव उद्धार होगा राजा गीता पढ़आया तो रानीने परीक्षा के लिये राजा के देखते २ एक सईस के कन्धेपर हाथ धरा राजा देखतेही उसे क्रोध कर मारने दौड़ा रानी ने कहा कि, हे राजन्!



अभी गीता आई नहीं है फिर जाइये पढ़िये तब फिर पढ़कर आयो तो मूकवत् रानी के नीचेही भूमिपर बैठ गया जब रानी ने उसी सईस के ऊपर हाथधरा तो राजा कुछ न बोला तब जाना गीता आई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्या मिश्रनिबन्धे सप्तदशः प्रदीपः ॥ १७ ॥

अथ अष्टादशः प्रदीपः ॥

समयानुसारिणी बुद्धिः ॥

इसपर यह दृष्टान्त है कि जैसे एक ब्राह्मण अपनी पुत्री के विवाह की चिन्ता में चला तो एक सर्प ने उससे प्रसन्न होकर कहा कि तू राजा से कहदे अब की अकाल पड़ैगा तो तुझ को १०००) रुपये मिलेंगे आधे इधर दे जाना वह गया और कहा तोवैसाही हुआ तब रुपये मिले तबतो उसने विचारा कि अब सर्प को देने क्यों जायँ चलो खावें तब तो खाये पीये फिरभी बुभुक्षित हुए तो स्त्री के भेजे उसी सर्प पै गये उसने कहा अबके अकाल, अचाल दोनों बताना तो २०००) मिलेंगे फिर वह लाया तो वि० उस सर्प को मार देना जिसमें सब रुपये बचें फिर भी बुभुक्षित हो वहीं गया तो कहा कि अब सुभिक्ष बताना उसने बताया तो ४०००) मिले तो उसने ५००) तो अपने रखलिये और ३५०० सर्पको दिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिबन्धेऽष्टादशः प्रदीपः ॥१८॥

अथ ऊनविंशः प्रदीपः ॥

चुटकुले ॥

किसी साधु को एक वेश्या ने निज वश में किया तो वह उसे धूनी के पास बैठी देखके बोला ऐ तुम कहां बैठी हो तुम्हारे ये रंगरँगीले दावन राख में होंगे वह बोली वल्ला आप की अमोल्य तपस्याही इस राख में मिलगई तो मेरे कपड़ों की क्या फिक्र करते हो इति ॥ कोई मनुष्य आठ रोज के लिये राजा बनाया गया तो नवेंरोज उसे उठानेलगे तो उसने ९ दिन का हिसाब बताया कि एतवार १ सोम २ मंगल ३ बुध ४ बृहस्पति ५ शुक्र ६ शनि ७ आज एतवार ८ कल फिर सोम९ भाई इन आठ दिनों से बाहर तो कोई भी रोज है नहीं निदान वही राजा रहा इति ॥ पहले समय में तो यह जन पाषाण की मक्खी था जो दुःख शोक कुछ भी न था फिर बीचे के समय में मोह मक्खी शहदपर था लालचसे उसे न छोड़ता और अबके समय नाकमल (रीर) की मक्खी है जो बृथा लालच पर फँसाये है ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे ऊनविंशः प्रदीपः ॥ १९ ॥

अथ विंशः प्रदीपः ॥

शास्त्रस्य सूक्ष्मागतिः॥

एक पण्डित का दृष्टान्त ॥

एक ज्योतिषी पण्डित के बालक होनेवाला था उसने उस की आधानकुण्डली सेही सब लग्न की विधि मिला रक्खी

थी जन्म होने के समय उसने पड़दे के भीतर निंबू रखादिय
और कहा कि जन्म होतेही यह निंबू इधर फेंकदेना ज
जन्म हुआ तो उसने वह निंबू अपने हाथ रुधिर से सने थे ध
कर फेंका तब उतनेही विलम्ब से उनकी गणित में लग्न वि
पय में कई अंशों का भेद पड़गया तो पण्डितजी उस लड़के
को व्यभिचार से भया निश्चय करके घर से निकलके औ
एक राजधानी में जायरहे उधर वह लड़का भी पढ़ लिखक
पण्डित भया तो माता से पूछा सच कहु पिता कहां है उसने
सब हाल कहा वह भी चला वहां पहुँचा तो उसी के पिता ने
राजा से कहा था कि आज एक आकाशसागर से मच्छ इस
ठौरपर गिरेगा उसने विचारके कहा कि इस ठौर से आगे वह
पर गिरेगा वहां हौद जलका भरवा दीजिये तब गिरने के स
मय वह पण्डितजी का कहा भूमिपरही गिरा उस समय सबके
नेत्र शंका से चकित थे किसी को सुधि न थी और वह मच्छ
गिरतेही उछला और उसी हौद में जा डुबका तब सबोंने उस
पण्डित के लड़के की बात को मुख्य रक्खी तो वह पण्डित
बोला भाई हमारे गणित में तो यही स्थान आया था पर यह
फरक कैसे रहा तुम्हारी विधिमिली यह क्या बात है पुत्र बोला
पिता महाराज फरक कुछ नहीं विधि तुम्हारी ही मिली विचा
रने का फरक है कि जो चीज आकाश से गिरती वह उछलती
भी और अपना आश्रय चाहैगी सो वह मच्छ तुम्हारे बताये
ठौर पर गिरा और उछला भी फिर हौद में जा डुबका तब तो
वह पिता उसके साथ हुआ राह में एक पनिहारन पानी भरके
लिये जाती थी तो पण्डित ने कहा इसके पति की खबर मैं

की आवेगी उसने कहा नहीं सौ १००) रु० आवैंगे वह बोला कैसे तो कहा इसका घड़ा चुवता है इससे इसकी चूनर जल भीगी लाल मंगलरूपी रंग छोड़रही है इति ॥ एक पण्डित कथा वांचता जो चढ़ता सो उलटा लौटादेता तब एक धनी वैश्यने दशतोड़े चढ़ाये और लोगों से भी बहुतसे चढ़वाये तब पण्डितजी ने उन्हें चुपचाप उठाके रखवा लिये और उनकी निछावर में तुलसीदल दिया तो वह बोला पण्डितजी ! रुपये तो कहा भाई रुपये इतनेही और चढ़वाओ वे तुम लेलेना निदान बनियां मुँहमूंदे रहगया इति ॥ एक पण्डित ने कथा बांची कुछ न आयो तो मरने का स्वांगभर १००) रुपये का दुशाला लिया फिर (यहां नहीं मरें) यह कहकर चल दिया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे विंशः प्रदीपः ॥ २० ॥

अथ एकविंशः प्रदीपः ॥

(जहां हरिभक्त समाज तहां सब तीर्थ विराजैं) दृष्टान्त ॥

एक साधु को नियम था कि गंगानहाये जन का दर्शन करलेवे तभी भोजनकरे तो एक ऐसे देश में चलागया जहां कोई भी गंगानहाया न मिला तब तीन दिन उसे निराहार वीते तब तो एक सन्त समाज देखपड़ा वहां जाय पूछा तो वहां भी उसने कोई न पाया तब तो वहांही पड़ारहा फिर रात को देखा कि एक गऊ बड़ी दुर्बल आकर उस भूमि में लोटी फिर चंगी हो सुन्दरी स्त्री भई और निज लोक को चली गई फिर एक बैल आया वह भी लोटा चंगा हो पुरुष बनके

लोटपधारा फिर एक काली गौ आई वह भी लोट पधारी तो यह चरित्र देख उस साधु ने उन्हों से पूछा कि यह क्या आश्चर्य्य है तब वे बोले कि पहले तो गोरूप गंगाजी आईं जो निज पाप धोय सन्तसमाज चरण भूमि में लोट निज लोक को गईं और फिर काली गौ यमुनाजी थीं वह भी लोटगईं फिर बैल पुष्कर जी थे वह सुन चकित हुआ और तहांही रहते प्रसाद करनेलगा हरिभक्तों का यह प्रताप है ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे एकविंशः प्रदीपः ॥ २१ ॥

अथ द्वाविंशः प्रदीपः ॥

दो० तुलसी रामप्रतापते, मिटिगे काल दुकाल ॥
नारी सेती नर करैं, ऐसे दीनदयाल ॥ १ ॥

दृष्टान्त । एक राजा के लड़की हुई उसने राजा के लड़की का टीकालेने के लालच से उसे लड़का बताया विवाह हो गया जब द्विरागमनभये निश्चयहुआ कि यह लड़की है तब लोग उसके पीछे २ मारने को दौड़े दैवयोग से वह भागा २ श्रीतुलसीदासजी के चरणों में जायपड़ा उन्हों ने कहा बच्चा अमर रहु वह बोला महाराज ! मैं तो बच्चा नहीं बच्ची हूं और ये मुझे मारने आते हैं तुलसीदास ने रामचन्द्रजी से प्रार्थना की तो वह बच्चाही होगया लोग खिसिया कर चलेगये ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे द्वाविंशः प्रदीपः ॥ २२ ॥

अथ त्रयोविंशः प्रदीपः ॥

दो० तुलसी उत्तम जानकर, सती नवायो शीश ॥
अमर सुहाग सहीभयो, निश्चय विस्वावीश ॥ १ ॥

दृष्टान्त। एक स्त्री सती होती थी तो वह सब शृंगार किये पति के साथ जाती थी राह में तुलसीदास मिले तो इन्हें उत्तम जान नमस्कारकरी उन्हों ने अमर सुहागिन रहु ऐसी अशीष दी तो वैसाही हुआ पतिसमेत निज घरको आई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे त्रयोविंशःप्रदीपः ॥ २३ ॥

अथ चतुर्विंशः प्रदीपः ॥

(वह पानी मुलतान गया) दृष्टान्त ॥

एक समय गोरक्षनाथ, कबीरजी, कमाली उनकी बेटी ये रैदास जी के डेरेपरगये सब पियासे थे उनसे पानी मांगा उन्हों ने अपनी जूती डुबोने की कठौतीपानीभरी उनके आगे धरी इन दोनों ने उसमें अशुद्ध जल जानकर पीने से इन्कार किया परन्तु कमालीजी उसे "मनचंगा तो कठौतीमें गंगा" समझ कर पानकर गई त्योंहीं उसेआगे पीछे की सब सूझने लगगई कुछकाल में वह मुलतानवाले के यहां विवाही गई दैवयोग से वहां एक बेर गोरक्षनाथजी चलेगये परीक्षा के लिये भिक्षापात्र का पाताल फोड़दिया जो २ भिक्षा उसमें घाले वही पाताल में चलीजावे निदान कमालीही उनके पास गई और उनके फूटे पाताल को बन्द किया तो वह भिक्षा से भरगया और और

भी जो २ भिक्षा उसमें घली थीं वह सब उस पात्र में से उझल आई सबों ने देख बड़ाही आश्चर्य किया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिबन्धे चतुर्विंशः प्रदीपः ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशः प्रदीपः ॥

(व्याह में बीजको लेखो)

चौ० गूजरि वेष धार मैं गई। चार महीना खायो दही ॥
अपनो लिख्यो आपही देखो। किसो व्याह में बीजकोलेखो॥१॥

एक वैश्य विवाह करके विदेश को चला गया और वहां निज व्यापार में मग्न रहा घर की सुधि न रही बहुत से पत्र मा बापों ने भेजे पर वह न आसका तो उसकी स्त्री आज्ञा ले उस देश में गई और पति के पास भुलावा देकर रहनेलगी असोकि उसने गूजरी का वेष बनाया और दही उस वैश्य को दे आया करती वह भी उसके मिष्टदधि तथा स्वभाव से ऐसा रचा कि रात्रि दिन उसही से रमण करता रहा जब गर्भ रहा तब वह उसकी अँगूठी प्रियजान लेके उससे आज्ञा मांग अपने घर आई समय पर लड़का उत्पन्न हुआ तो उस वैश्य के पास पुत्र होने का पत्र गया तब उसने बहुतही आश्चर्य माना कि मैं तो यहां बैठा हूं मेरे पुत्र क्योंकर हुआ निदान जब उस लड़के का विवाह निश्चय हुआ तब तो उसे लाचार विदेश से आनाही पड़ा वहां विवाह की तैयारियां होरही थीं इधर यह शोक में बैठा कि किसका व्याह करते हो यह लड़का किस का है पहले यह तो निश्चय होजाय तब सब

समझाया पर इस की समझ में किसी की भी न आई निदान उस बहू ने ही जाकर ऊपर लिखीहुई (गूजरिवेष धार मैं गई) यह सुनाई और वहही अँगूठी दी तब तो वैश्य को सब ज्ञान होगया तुर्तही पुत्र का मुख चूम छाती से लगाया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिबन्धे पञ्चविंशः प्रदीपः॥ २५॥

अथ षड्विंशः प्रदीपः॥

(नंगी भली कि छींके पांव) दृष्टान्त॥

जैसे एक कुटिला स्त्री, निज जेठ अर्थात् पति के बड़े भाई से आसक्त थी, एक दिन उसके देवर पति के छोटे भाई ने स्नान करते उसे नंगी देखली तो वह बड़ी क्रुद्ध हो उसे गालियां देने लगी और अन्न जल छोड़ बैठी पति ने तथा उसके जेठ ने बहुत सा समझाया पर इसने किसी की एक न मानी निदान उसकी ननँद जो उस व्यवस्था को अच्छे प्रकार से जानती थी कि अर्द्धरात्रि को यह मेरी खाट के ऊपर से छींके पर पांव रखकर जेठ के पास जाया करती है वह उसके पास आय बोली भाभी खालो पीलो कुछ बात नहीं देवर ने नंगी देखी तो वह भी (द्वितीयोवरः—देवरः) पति के समानही गिना जाता है तब तो वह बहुतही रिसाकर बोली बैठी रहु कि मुझे आज तक किसीने मुँहखुले भी न देखा और देवर ने मेरा सर्वथा पड़दा फांस किया मैं मारे लज्जा के मरी जाती हूं खाना पीना किसे सुहाता है तब तो ननँद ने अवसर पाय के खुलासा अर्थ इस साखी से सुनाया॥ बारहवर्ष पिहिर रही। अपने मन की मनहीं रही॥ अबहीं लग्यो कहन

को दाँव (भाभी) नंगी भली कि छींके पांव ॥ यह सुनतेही वह चुपचाप हो उससे बोली कि किसी से कुछ न कहना मैं अभी खाये पीये लेती हूं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे षड्विंशः प्रदीपः ॥ २६ ॥

अथ सप्तविंशः प्रदीपः ॥

यद्यज्जाग्रति कुर्वीत कार्य्यं स्वप्ने तथाचरेत् ॥
यथा कथां तु शृण्वानो वैश्यो वस्त्रमपाटयत् ॥ १ ॥

यह मनुष्य जिस २ काम को जाग्रत् अवस्था में अर्थात् सचेत हुआ व्यापारादि में करता है उसही का ध्यान उसे स्वप्न में भी रहता है (दृष्टान्त) जैसे एकवैश्य—बजाज कथा सुन रहा था तो उसे कुछ निद्रा आने लगी त्योंहीं वह बजाजी व्यापार की कृत्य का संस्कार उसके मन में समाया तो पण्डित जी का डुपट्टा ही लटक रहा था शीघ्र उसके दो करदिये कहा ' चोनी के वक्त पौनेही आठ आने देवो ' यह देख सब श्रोता जन हँसी के मारे लोट गये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे सप्तविंशः प्रदीपः ॥ २७ ॥

अथ अष्टाविंशः प्रदीपः ॥

न व्यवसितो विचलते वचसाभ्युपतापितोपिधीरोयः ॥ अनुतापितः पुरोधा न जहौ नियमं स्वकं स्वान्तस्थम् ॥ १ ॥

जो व्यवसायवाला-निश्चयवान् अर्थात् दृढ़विश्वासी जन है वह किसी करके कटु भयानक वचन आदि से उपतापित दुःखी किया वा डरायागया भी चलायमान नहीं होता है (दृ-ष्टान्त) जैसे किसी पुरोहितको कहीं से एक गऊ मिली उसने न बेचने तथा दूसरे को न देने के नियम से ली थी तो वह रात्रि भये पुरोहित से बोली कि तू यहां से मुझे कहीं पहुंचादे नहीं तेरा पुत्र मरैगा वह बोला जो भवितव्य है वह होगा मैं आप को कभी अलग न करूंगा तो उसका पुत्र मरा वह नहीं घब-राया फिर बोली कि तेरी स्त्री मरैगी उसने कहा मरने दे वहभी मरगई निदान वह फिर बोली कि अब तेरा भी काल निकट आगया तू मुझे निकाल उसने उत्तर दिया कि माता धन्य-भाग्य इसदुःख से पीछा छूटै और भी बहुत से लोग आपस में चर्चा करते थे कि फलाना ऐसी हत्यारी गऊ लेआया कि उस ने सब कुटुम्ब को मार दिया और उसकी भी तैयारी है पर वह उस गऊ को घरसे नहीं खोलता है और इसके जो हितू थे वे इसे आआकर कहने लगे कि इस गऊका ध्यान छोड़देवो वह बोला ध्यान छोड़ूं तो कहां रहूं त्रिलोकी में कहीं ठौर है? तुम कोई मत बोलो मुझे ध्यान करनेदो (गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः। गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसा-म्यहम्) अर्थ गऊ मेरे अगाडी और गऊ मेरे पिछाड़ी हों तथा मेरे हृदय में गौवें हों ऐसे मैं गौओं में ही वसारहूं निदान इस प्रकार ध्यान करते २ कालप्रभु भी आनपहुंचे तो गऊ के दृढ़ विश्वास तथा ध्यान करनेके फलसे सहजही बातें करते उसके प्राण निकलगये जब वह वैतरिणी पर पहुँचा तो वही गऊ

उसके आगे आय बोली हे पुत्र ! मेरी पुच्छारूप नौका के आश्रय हो दुस्तर इस वैतरिणी से पार उतरो यह कह वह उसे लेगई और निज प्रतापसे उसे स्वकीय धाम गोलोकको पठाया इति ॥ तथा एक चोर ने कीचड़ में फँसी हुई मरती गऊ को दयाकर निकाली थी कभी उसमें भारीभीड़ पड़ी यहांतक कि राजाने उसे शूली चढ़ाना कहा वह जब चढ़ाया गया तो उसी गऊने अलक्षित हो निज सींगों का आश्रय अर्थात् तिसके नीचे सहारा लगाया तो शूली ढीली होने से उसके प्राण न निकले फिर शूली को दृढ़कर लटकाया तब भी न मरा तो पूछा रे तेरी जान क्यों नहीं निकलती वह बोला जान किसकी निकले मुझे तो शूली की शूल भी मालूम नहीं होती मैं तो झूला जैसे झूलरहा हूं मुझे गायने सींगों पर उठारक्खा है यह सुन सब जने गऊ वहीं प्रत्यक्ष न देखकर चोर के चरणों में गिरे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धेऽष्टाविंशः प्रदीपः ॥ २८ ॥

अथ ऊनत्रिंशः प्रदीपः ॥

नर्तुर्ग्रीष्मादीष्टश्च इष्टः पुष्टः स्वयं विधात्रा यः ॥
वैश्ये यथा कथाभूद्व्रजेदेवस्वोचितां वृत्तिम् ॥ १ ॥

ऋतु जो ग्रीष्म आदि हैं वे अच्छी नहीं किन्तु जो विधाता से स्वयं स्वेच्छापूर्वक अर्थात् आपही से पोषण पालन किया जावे जैसे कथा भई अर्थात् वैश्य में वृत्तान्त बीता (दृष्टान्त)

एक वैश्य ने अपने पुत्र का विवाह किया बहू आई तो उससे पूछा कि ऋतुओं में ऋतु कौन सी अच्छी है तो उसने विचारा कि हम भाग्यवान् हैं खसखस के बँगले के जंगले में से शीतल २ पंखे की पवन आती रहेगी इससे कह दिया कि अजी गर्मी अच्छी है तो वैश्यने पुत्रसे कहा बहू निकम्मी आई इससे तू और विवाहकर उसने और किया फिर उस बहूसे पूछा उसने विचारि गर्मी बुरी मानी गई तो हम भाग्यवान् मनों रुई ओढ़े बिछाये रहेंगे इससे सर्दी अच्छी बताई तो वह भी पसन्द न भई तब तीसरा विवाह भया उसने सोचके चौमासा वर्षाऋतु ठीक बताई तब सेठ ने कहा पुत्र बहुवें तो तीनों काम की नहीं तू यातो चौथा विवाह कर नहीं वैसेही संसारी समय देख उसने उचित जान पिता के कहने से चौथी व्याही तो उसने उत्तर दिया कि ऋतु यौवन आये वह ही अच्छी है साहूकार यह सुनतेही प्रसन्न हो लगा बधाई बजवाने निदान बहुत समय बीते दैववश वह निर्धन भया और देश से निकल चले तो तीनों बहुवें तो जो सर्दी, गर्मी, वर्षा बतानेवाली थीं पहलेही बिगड़ती समय में कहीं २ किसी के साथ चलीगई वह चौथी बहूही उनके साथ चली चलते २ एक शहर आया तो लगी भूख कलेजा चाटने तो बहू बोली ससुरेजी से कहो कुछ यत्न करें भूख के मारे मरेजाते हैं वह सुन बोला नये शहर में आये हैं कुछ ब्राह्मण या भिखमँगे तो हैं नहीं जो भीख मांगें किसी से मेल होगा तब यत्न होवे तब उस बहू ने उससमय को दुस्सह जान अर्थात् कब इसकी मुलाकात भई कब अन्न मिले निदान एक मणिरत्न निज गुप्त उसे निकालकर दिया कि इसे

बेच अन्न लेआओ बहू से ले उसने बनियें की हाटपर मणि दिखाई तो वह भी सीधा जन था बोला चीज तो अच्छी है मन नाज लेजा वह लेकर चला तो समय के फेर से उस के जी में यही आया कि इस नाज से तेरा महीना भर निकलेगा वहां चार मनुष्य इसे आठ रोज मेंही खा बितावेंगे तो लेके एक गली में चलागया उधर वे सब राह देखरहे तब निराश हुए बहू ने एक मणि सासु को और देके भेजी वह भी उसही बनियें से धौन नाज ले उसी मति से गली को चली तब हारकर उसने एक लाल और दे कहा कि मा बापों की तो थाह पाई अब तू तो ठिकाने आना वह पसेरीभरही नाज में बेचले गली को चला वह बेचारी लाचारी शर्म की मारी बहुत देर राह देखती रही निदान उसने लज्जा को त्याग तुर्त मरदाना वेष कर बाजार चली और एक लाल निकाल १००००) को बेच नौकर मुनीम रख कोठी में हुंडी की दूकान खोली और सिपाही साथ ले उस बनियें की दूकानपर गई उससे वे लाल मांगे तो उसने डरते कांपते वे तीनों देदिये अपना नाज व्याज सहित सवाया लेलिया कई दिन बीते उसके सासु श्वशुर शिर पर ईंधन बोझा लादे मरते चले आते थे इसने उनको पहिचान बुलाकर इनका बोझा उतराया और बाल कटवा नह्वा वस्त्र पहिराय भोजन पै बैठाये आप हवा करनेलगी जनाना वेष हटाने पर इन्हों ने भी उसे पहिचानी तो नीचा मुंह कर लाचार हुए फिर पुत्र को याद कर २ रोने लगे तो वह बोली चिन्ता न करो वह भी तुम्हारी तरह कभी इसी राह से चला आवेगा सोही वह (घास लेओ २) करता उसी राह से आ

पहुँचा झट बुलाय उसको भी मेल में मिलाया सब सुख से रहने लगे इससे बनी सराहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे ऊनत्रिंशः प्रदीपः ॥ २६ ॥

अथ त्रिंशः प्रदीपः ॥

विक्रीणीत न जीवं जीवन्महदुपकृतिं करोति यथा ॥
गर्भे धृतोऽपि पुत्रो भूत्वा पित्रोर्न्यवारयद्दुःखम् ॥ १ ॥

मनुष्य मनुष्य को कभी न बेचै जो जीवै तथा पास रहै तो यह जीव अपना बड़ा उपकार करता है जैसे वैश्य से गर्भ में ही बेचे गये निजपुत्र ने उन मा बापों के दुःख को निवारण किया अर्थात् उनकी कुदशा को सुधार उन्हें सुखी सम्पन्न किये (दृष्टान्त) एक वैश्य ने निज विपत्तिसमय में अपनी स्त्री का गर्भ धरोहर धरदिया उसके बदले मे ८००) रुपये ले आया जन्म होतेही पुत्र को वह धनी लेगया वहां वह पला समर्थ हो व्यापार करने लगा तो उसके यारबाश (मोलड़) कहा करते तो एक दिन दैवयोग उसे निज धरोहर होने का लेख देखपड़ा तो तुर्त आठ सौ रुपये की विधि मिलाय उसे दे आप चल दिया एक शहर में गया वहां उसके जन्म पहले वाले मा बाप लकड़ी ला २ कर एक बनियें की गोदाम में डालाकरते और चबेना चाब फिर लकड़ियों को चलेजाते उस वैश्य के कोई भारी काम था उसने बहुत सा इंधन इनसे गिरवा रक्खा था दैववश जहां से ये लकड़ी लाते वहां एक संजीविनी का भी वृक्ष था उसकी लकड़ी बहुत सी उसमें चली

ज़ाती थी तो इन्हें भरोटा धरे आते देख संजीविनी उसमें प- हिचान बोला क्या लेओगे वे बोले चबेना लेतेरहे सो आप दे दीजिये उसने गिरवाय उनको ठीकसमझ दिनभर का भोजन चार आनेदिये उन्हों ने प्रसन्न हो ले धन्यवाद दिया कि हम तो वृथाही ।) का धन भोजनमात्र में डालते रहे उसने सुन पता पूछा वहां गये तो उसने सब मोल लकड़ियों का उसे दे लिवा लाया और मा बाप से बोला कि मजूरो ! इन लकड़ियों में अमोल्य रत्न यह देखो (संजीविनी) है इस व्यापार को देख प्रसन्न हो निजपुत्र को प्रेम से देखा तो उसकी मा के स्तनों से दुग्ध की धार बही यह अनुमान से मा बाप निश्चय कर उनके चरणों में गिरा और सारी निज कथा कही ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३० ॥

अथ एकत्रिंशः प्रदीपः ॥

श्रुत्वा दृष्ट्वा विजानाति ज्ञानी मूर्खस्तु मुह्यति ॥
यथा कथां सुश्रुण्वान आजं दुःखमथास्मरत् ॥ १ ॥

ज्ञानीजन तो कथा को सुन तथा कथादि आचरण देख कर ज्ञान को प्राप्तहोता है और अज्ञानीजन मोहित होजाता है (दृष्टान्त) जैसे एक ग्रामीणजन कथा में आयबैठा और रोनेलगा पण्डितजी कथा कहतेरहे वह रोतारहा तो पण्डित ने विचारा कि कोई यह बड़ाही प्रेमी श्रोताजन है जो इसका कोमलचित्त कथा की ओर पिघल रहा है तब सब बोले भाई तेरा प्रेम हम से अपने मुख से कुछ कहता नहीं रोताही रोता

है इसका कारण कहु तब तो वह बहुतही रो २ कर कहने लगा भाइयो पण्डित की दाढ़ी हिलती देख २ के मुझे मेरे मरेहुए बकरे की याद आती है इसमारे रोता हूं यह सुन सब के सब श्रोता जन खिलखिला उठे और पण्डितजी विचारे हारे लज्जित होरहे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे एकत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३१ ॥

अथ द्वात्रिंशः प्रदीपः ॥

कनकात्कनकं शतधा मादकतामावहेत्तदाधिक्यात् ॥ मायासक्तो द्रव्यं पित्रा संचितमथो वैश्यः ॥ १ ॥

कनक नाम सुवर्ण, कनक–धतूरे से भी विशेष मादक–मदकारक होता है जैसे (दृष्टान्त) एक वैश्य के घर वृद्ध अवस्था में पुत्र हुआ वह लगा बधाई बजवाने जब वह समर्थ हुआ तो लगा जूआ खेलने रण्डीबाजी करने निदान ऐसेही सब संचित धन ठिकाने लगाया फिर चोरी कर २ वेश्याओं को देतारहा निदान वेश्याओं ने विचारा कि यह नया भँडुवा नित्य चोरी कर २ लाता है ऐसा न हो कभी हमें भी फँसादे ऐसा सोच उन्हीं ने इसे मदिरा पियाय मुंह बन्द करके मारडाला॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे द्वात्रिंशः प्रदीपः ॥ ३२ ॥

अथ त्रयस्त्रिंशः प्रदीपः ॥

पयःपात्रसहस्रेषु ज्योतिरेकोऽवभासते ॥

तथैक आत्मा सर्वत्र वस्तुतो भासते विभुः ॥ १ ॥

जैसे हज़ारहों जल के पात्र घड़े आदि भरे हों और ज्योति: सूर्य्य चन्द्रमा का तेज उन सबों में भासमान होता है तैसे ही एक परमात्मा सर्वजीव तथा वस्तुओं में भासित (प्रकाशमान) होता है जैसे (दृष्टान्त) किसी तीर्थ के निकट मठ, मठ में कई एक 'रामानुजीय' रामावत, नीमावत, उदासीन, नानकपन्थी, दादूपन्थी, साधु बैठे आपस में मतवाद का विवाद करते थे कि कोई किसी की बात को न मानता था अपने २ पन्थ की चौड़ाई बड़ाई करते थे निदान जब झगड़ते तोंबे खप्पर फूटने की दशा पहुँची तो उनमें से एक अवधूत बोला भाई क्यों वृथा वाद करते हो इसको समझो ॥

दो० घट घट में मूरति वही, लाल जु नहीं विवेक ॥
जैसे फूटी आरसी, खण्ड खण्ड मुख एक ॥ १ ॥

यह सुनकर सब के सब प्रसन्न होगये जैसे सांझसमय पक्षी बोलते २ चुप हो सोरहे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे त्रयस्त्रिंशःप्रदीपः ॥ ३३ ॥

अथ चतुस्त्रिंशः प्रदीपः ॥

कृपणोपि द्रवीभूतचित्तो धृष्टनिषेवितः ॥
भूयाद्यथा गायकेन मोदितो बह्लदाह्नम् ॥ १ ॥

अत्यन्त कृपण भी हो पर वह धृष्ट पुरुष करके सेवितकिया अर्थात् निरुत्तर कियागया द्रवीभूत-कोमल चित्तवाला अर्थात् दानी होजाता है जैसे किसी कृपणधनी के पास कहीं से एक कलावन्त आयबैठा तो उसने कुछ गाया तो उसने भी

(वचने किं दरिद्रता) अर्थात् बातों की भी कसर क्यों रक्खें सराहने में क्या लगता है सोही सराहता रहा इतने में नौकर ने आवाजदी कि भोजन तय्यार है तो कलावत की आफ़त देख बोला मेरे शिर में दर्द है ठहर जरा सोकर खाऊंगा सो रहा थोड़ीदेर मुंह ठहरकर दम घड़ २ लिया तो कलावत भी उस फैल को समझकर पगायतों के नीचे पड़रहा कुछ देर में वह मुंह निकाल बोला अरे वह जंजाल गया भी तो कलावत ने उत्तर दिया बलैंयालेऊं यह बलाय तो चरणों में लगी बिन खाये कब हटेगी यह सुन लज्जित हो कुछ देनापड़ा ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे चतुस्त्रिंशःप्रदीपः ॥ ३४ ॥

अथ पञ्चत्रिंशः प्रदीपः ॥

बिन्दुर्मुक्ताफलं स्वातौ कर्पूरं कदलीदले ॥
संगतेःफलतो भूयाद्विषं सर्पमुखे तथा ॥ १ ॥

दो० स्वातिबूंद सीपी मुकत, कदली भयो कपूर ॥
कारे के मुख विषभयो, संगति शोभा शूर ॥ १ ॥

अर्थात् स्वाति नक्षत्र विषे सीपी में तो पड़ाबूंद मोती होजाता है और वही केलेके दल में कपूर होजावे और वही बूंद संगति के फल अर्थात् पास रहने के प्रभाव से सर्प के मुख में गिरने से विष होजाता है इससे सज्जनों की संगति उत्तमफलदायक होती है ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे पञ्चत्रिंशःप्रदीपः ॥ ३५ ॥

अथ षट्त्रिंशः प्रदीपः ॥

लम्पटे नहि धर्तव्यं धनं क्वापि विजानता ॥
स्नानमात्रे धनं सर्वं लम्पटेन विनाशितम् ॥ १ ॥

लम्पट—मिथ्यावादी कपटी जन को कभी धन नहीं सौंपना चाहिये जैसे किसी सीधे सादे जन ने एक को बीस रुपये देकर कहा तुम ये रुपये लियेरहो मैं अभी स्नान करके लिये लेता हूं यह कह स्नानको गया और झट गोता लगाय आयमांगे तो उसने कहा भाई तेरे रुपयों का तू मुझ से हिसाब ले ले वह बोला अभी देते तो देर न हुई हिसाब कैसा? ऐसेही उनका विवाद होनेलगा सौ पचास लोग इकट्ठेहुए लोगों ने कहा भाई तैंने इसके रुपये किस हिसाब से दबाये? वह बोला लेखालीजिये प्रथम जिससमय इसने गोतालगाया तो मैंने जाना डूबगये तो पांच रुपये दे आदमी इसके घर भेजा फिर यह निकला तो पांच में आदमी कर उसके घर कुशलपत्र भेजा और पांच वधाई में दिये रहे पांच कि मुझ से लिखतम लिखालीजिये वातही क्या है हारमानी झगड़ा टूटा वह विचारा हारकर बोला अच्छा भाई भरपाये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे षट्त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३६ ॥

अथ सप्तत्रिंशः प्रदीपः ॥

ग्रामीणाः पूर्वदेशीया इति मत्वा नृपेण सा ॥
पृष्टा तु गणिका रात्रौ मलशङ्कां समादिशत् ॥ १ ॥

पूर्वदेश के पुरुष स्त्री बड़े ग्रामीण—गवाँर होते हैं यह वि-

चार एक राजा ने निज दरवार में नृत्यसमय वेश्याओं से रात्रि विषय में अर्थात् रात्रि कितनीरही यह पूछा तो पश्चिमवाली ने तो कहा महाराज रात्रि थोड़ीरही है तो पूछा तैंने कैसे जाना तो बोली नथ के मोती ठण्ढे लगते हैं तैसेही दक्षिणवाली ने थोड़ी रात्रिरही बतायके पान मीठालगता है कहा और उत्तरवाली ने दीपक की ज्योति मन्द बतलाई और पूर्ववाली से जो पूछा तो उसने झट प्रकटही कहदिया कि मोहिंका हगास लागो है इससे जानो राति थोरही है यह आलाप सुनतेही सव सभा खिलखिला उठी ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मिश्रनिबन्धे सप्तत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३७ ॥

अथ अष्टत्रिंशः प्रदीपः ॥

शतं दक्षा एकमता भवन्ति हि यथा वने ॥
कुण्डे घटशताज्ञाके जलं सर्वैर्निपातितम् ॥ १ ॥

सौ सयाने एक मत अर्थात् किसी सूने गुप्त अरक्षित काम में सौ भी चतुरजन एकमत अर्थात् वैसाही करनेवाले होजाते हैं जैसे एक राजा ने परीक्षा के लिये सौ मनुष्यों से कहा तुम सब एक २ घड़ा दुग्ध का भर २ कर अलग २ उस कुण्ड में रात को डाल आवना तो उन सवों ने यही विचारा कि जहां निन्नानवे घड़े दूध के पड़ेंगे वहां मेरे एक जल के घड़े को कौन देखेगा निदान यही विचार २ करके सवों ने उसमें जलही का घड़ा भर २ कर डाला राजा ने जाय देखा तो जलही है तब सबको बुलाय २ तंगकरके पूछा तो प्रत्येक ने यही कहा कि, हे महाराज ! मारें या छोड़ें मैंने यह जाना कि

निन्नानवे दूध के घड़ों में मेरा एक पानी का घड़ा कहां देख पड़ेगा राजा ने शिक्षा सत्य जानली ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिबन्धेऽष्टत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३८ ॥

अथ ऊनचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥

ईश एकोऽवगन्तव्यो नानामतनिविष्टकैः ॥
भिन्ने काचे यथामूर्तिर्भिद्यते वस्तुतोऽपृथक् ॥ १ ॥

दो० घट घट में मूरति वही, लाल जु नहीं विवेक ॥
जैसे फूटे काच में, भिन्न भिन्न मुख एक ॥ १ ॥

अर्थात् नानाप्रकार के मतवादी जनों को वह ईश्वर एकही सर्वत्र जानना चाहिये जैसे फूटे हुए काच में मुख अलग २ देखपड़ता है यथार्थ में वह एकही है (दृष्टान्त) एक मठ में कई सम्प्रदायवाले नानामतवादी अपने २ मत की बड़ाई कररहे थे हरएक अपने को बड़ा और दूसरे को छोटा बताता था इसमें उनका बहुतही विवाद बढ़गया यहांतक कि खप्पर तोंबे भिड़ २ फूटने की नौबत आन पहुंची तो दैववश वहां कहीं से विचरते २ जड़भरतजी सरीखे अवधूतजी आ निकले उन्हों ने इनका विवाद मिटाने के लिये शान्तिपूर्वक ऊपर कहे श्लोक का आशय दोहा पढ़ा सब सुन २ कर शून्य होरहे कोई भी कुछ न बोलसका सांझसमय भये पक्षियों के समान चीं २ करते सबके सब चुपचाप हो बैठे ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्रनिबन्धे एकोनचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ३९ ॥

अथ चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥

देयं पश्वादि कस्मैचिद्रक्षितं भोजनादिना ॥
अरक्षितः करी दत्तो राज्ञो लज्जाप्रदोऽभवत् ॥ १ ॥

किसी को कोई पशु आदि धन जो देवे तो उसके भोजन आदि की रक्षा-सहायपूर्वक देवे नहीं तो लज्जा होती है जैसे बादशाह ने कलावत को हाथी दिया फिर भूखा मरने पर वह लज्जाकारक हुआ (दृष्टान्त) लाड़कपूर कलावत ने एक वेर बादशाह के सामने बहुत अच्छा गाया तो उन्हों ने रीझकर इन्हें एक हाथी देदिया ये लेआये वर्ष दिन होगया तो उन्होंने उसका आहार जाकर देखा तो बड़ाही आश्चर्य कर चकित हुये कहनेलगे कि यह बड़ीही बला गले में डालदी न किसी को दे सकें न कुछ कहसकें इसने हज़ारों मन चारा चर-डाला और चरैगा जो इसीतरह पर चरता रहा तो कोई दिन में शिर के बालतक चाटजावेगा इससे क़ोई उपाय कियाचाहिये यह विचारकरके उन्हों ने हाथी के गले में अपना ढोलक तँबूरा बांध के सरे बाज़ार से निकाला सर्वत्र धूमधाम हुई किसी ने बादशाह से भी जाय कहा कि आप का हाथी ढोलक तँबूरा बांधे फिररहा है यह सुनतेही क्रोधकर उस हाथी को पकड़-वाया और उनको बुलाकर कहा अबे तुम को यह हाथी चढ़ने के लिये दियागया था फिर अब यह तुमने क्या मँगतोंवाला मक्कार फैलाया है तुम लायक सजाके हो इतना सुनतेही दोनों भाई खड़े हो हाथबांध बोले हजूर एकदिन भी चढ़ने की सौर सौगंद हैं आप के यहां से लेगये उसीदिन से इसे तालीम हो रही है बड़े यत्न से मारपीट ज्यों त्यों कर २ के इसे अपना

सारा हुनर सिखलाया है अब इसे शुभ शकुन से बाहर निकाला है तो यह समर्थ भया अब गाय बजायके अपना भी पेट भरैगा और हम को भी खानेभरे का ला २ कर दिया करेगा इसीलिये पूत सपूत पालकर हुनर सिखाकर किये जाते हैं बादशाह इस अवसर की कही इनकी सुहावनी बानी सुनकर बहुत खुश हुए उसके खाने दाने का इंतिजाम किया उनको और भी बहुत सा इनाम दे बिदा किये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र. निबन्धे चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४० ॥

अथ एकचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥

वहज्जलं निर्मलं हि बद्धं दुर्गन्धवद्भवेत ॥
तथा नैकत्र तिष्ठन् हि साधुः सौख्यं समश्नुते ॥ १ ॥

दो० बहता पानी निर्मला, बँधा गँधीला होय ॥
साधूजन रमता भला, दाग न लागे कोय ॥ १ ॥

बहताहुआ जल निर्मल होता है बँधा जल दुर्गन्धवाला होजाता है तैसेही साधुलोग रमते विचरतेही भले कहाते हैं (दृष्टान्त) एक बनियां किसी वन में चलागया उसे वहां एक साधु मिला उसे दण्डवत कर पूछा बाबाजी कहां से आये तो उसने कहा बच्चा हिंगलाज, ज्वालामुखी, हरद्वार, कुरुक्षेत्र करके तो आया हूं और काशी हो गंगागोदावरी का मेला कर सेतुबन्धरामेश्वर को जाऊंगा यह सुन बनियां बोला बाबाजी क्रोध न करना मैं एक बात कहता हूं साधु बोला दो कहो तो कहा महाराज ! हमलोग गृहस्थी जो देशविदेश फिरें तो कुछ चिन्ता नहीं पर आप सरीखे साधु महात्माओं

को कौन से धेवते का भात भरना है जो इधर उधर मारे २ भ्रमते फिरते हौ इसके उत्तर में साधु ने ऊपरकहे श्लोक का आशय दोहा कहा उसे सुन वह चुप हो चलागया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्र निबन्धे एकचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४१ ॥

अथ द्विचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥

कृतेऽपराधे निर्मुक्तः पुनस्तत्कर्तुमीहते ॥
वैश्यपुत्रो यथा मुक्तो मुहुर्बन्धनमाप्तवान् ॥ १ ॥

किसी को अपराध करनेपर विनादण्डआदि किये उसे छोड़ देवे तो वह फिर वैसाही कुकर्म करता है जैसे एक वैश्य के प्रियपुत्र था वह कोई अपराध करके राज्य में जाय बँधा उसके पिता ने झटही बहुत से रुपये खर्चकर छुड़वालिया तो उसने फिर वैसाही कर्म किया फिर बँधा फिर छुटाया ऐसेही उसका पिता उसे छुटाता २ हैरान होगया तो उसके मित्र ने कहा कि अबकी इसको कुछ दिन मत छुटाओ यही उपाय इसमें ठीक है उसने जब वैसाही किया तब तो वह पुत्र लाचार हो बोला कि मैं फिर ऐसा काम कभी न करूंगा मेरे पिता से कहो मुझे छुटावें निदान पिता ने फिर छुटवाया तबसे उसने फिर वैसा काम नहीं किया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेद्विचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥ ४२ ॥

अथ त्रिचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥

भोगान्भुञ्जन्नीशदत्तान्नाशिनो ना विशङ्कितः ।

निःशङ्कमासीद्भुञ्जाना दासी राज्ञा तु ताडिता ॥
हसिता रुदिता चापि तद्वैराग्यं समादिशत् ॥ १ ॥

मनुष्य को चाहिये कि भक्ष्य भोज्य आदि भोगों को ईश्वर से दिये प्राप्त समझकर शंकित हुआ अर्थात् ईश्वर को याद करताहुआ भोगे निःशंक न रहै जैसे निःशंक भोगती दासी स्वामीकरके ताड़ित कीगई फिर हँसी रोई और निजस्वामी को वैराग्य उत्पन्न किया (दृष्टान्त) सुनाजाता है कि इब्राहीम अहमद की सेज सवामन फूलों से सँवारी जाती थी एक दिन बांदी ने सेज बनाकर अपने जी में विचारा कि इस बिछौनेपर सोने से जी को न जाने कैसा सुख होता होगा यह शोच इधर उधर देख वह जो उसपर लेटी तो सुख पाते नींद आगई एकपहर बीते बादशाह भी आया वह फूलों में ढक गई थी तो जान न सका आपभी आयसोया दो घड़ी में जो उसने करवट ली तो उसे बड़ा खौफ़हुआ डर पुकारा तो बहुतलोग जगआये और धूम मची तो बांदी जगउठी तो बादशाह ने क्रोधकर उसके सौ कोड़े लगवाये तो उसने पचास तो हँस २ कर और पचास रो २ कर खाये यह कौतुक देखकर बादशाह ने पूछा रंडी हँसी कैसे फिर रोई भी यह बतला क्या माजरा है। तब वह बोली हजूर सुनिये। आपके इस सुखसेज के शयनरूप आनन्द के आगे कोड़े क्या चीज हैं इस से तो मैं हँसी और बीच में मुझे यह भी अफ्सोस आगया कि जब दो घड़ी में सोने सेही इतना दण्ड दियागया तो जो उसपर नित्य २ निःशंक सोते रहते हैं उनका क्या हालहोगा न जाने ईश्वर कितने हजारवर्ष उन्हें क्या आपत्ति भुगतावेगा इस

अफसोस से रोई इस प्रसंग को सुनतेही बादशाह चकित होगया और शोच समझ उस सेज को तज धरती में सोता तथा फकीरी लेली ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे त्रिचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥ ४३ ॥

अथ चतुश्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥

सदा दाता विजयते कृपणश्चावसीदति ॥
कदश्वश्चेद्रणे जेता सदश्वे को व्ययस्तदा ॥ १ ॥

दाता की सदा जय होती है और कृपण दुःख पाताहुआ पराजित होता है जो कदश्व–टट्टूही संग्राम को जीतले तो ताजी तुर्की घोड़े को कोई क्यों दाम खचैंगा (दृष्टान्त) किसी अमीर के दो पुत्र थे एक दाता दूसरा कृपण तो वह दाता तो अच्छा २ खाता खवाता बड़े २ शूरवीरों को रखता और वह कृपण सस्तेभाव का नाज कम खाता खवावता और धुनिये जोलाहे कमकीमत के ओछी जाति के नौकर रखता एकबेर उनपर दुश्मन की चढ़ाई हुई तो उस अमीर के साथ तो सब खानेपीनेवाले लोग शस्त्रले २ मरने मारने को उद्यत हुए और उस कृपण के साथी नमकहरामी कर २ के कई छिप २ कर भगगये कई रोके शस्त्रले खड़े हो थर २ कांपते रहे सोही उस शत्रु ने निर्बल देख इसका सब धन छीन लिया इसपर कहनावत है कि "जो जीते टट्टू संग्राम। क्यों खरचे ताजी को दाम" इससे मनुष्य को उदार रहनाचाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुश्चत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥ ४४ ॥

अथ पञ्चचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥

कथं हिलसि भोश्छात्र इति पृष्टोऽवदत्स ह॥
विद्याब्धौ रत्नलाभार्थं दुष्प्राप्ये संकुचामि भोः॥१॥

किसी विद्यार्थी से निज संथा घोखते हिलते देखके कहा भाई हिलता क्यों है॥

दो० झुकत झुकत विद्यारथी, कह बूढ़े कहु वार॥
मैं तोसे पूछों सखे, याको कौन विचार॥१॥

इसके उत्तर में विद्यार्थी ने ऊपर के श्लोक का अर्थ कहा॥

दो० शास्त्र समुद्र अगम्य है, अपने बैठ करार॥
रतन लेन को झुकत हौं, झिझकत देख अपार॥१॥

यह सुन चौबे चुप हो चलागया इति॥ तथा एक अमीर पालकी में बैठा नौकर से अपना अंग दबाता जाता था उसे देख एक सखीने अपनी सहेली से यह दोहा वर्णनकिया जैसे॥

दो० चढ़े पालकी जात हैं, सेवक लीने संग॥
कबके हारे ये सखी, पड़े दबावत अंग॥१॥

इसके उत्तर में उसकी चतुर सहेली ने यह दोहा सुनाया॥

दो० तीर्थधाम बहुधा किये, निशिदिन भ्रमे विसंग॥
तबके हारे ये सखी, पड़े दबावत अंग॥१॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे पञ्चचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः॥४५॥

अथ षट्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥

आम्रस्य चाम्रं बीजस्य निष्क्रयः स्यात्सुबुद्धितः॥
यथा वैश्यः सदुद्योगं कुर्वन् सौख्यमवाप्तवान्॥१॥

आम के आम और गुठली के दाम अपनी श्रेष्ठबुद्धि से

व्यवहार करने में होते हैं जैसे वैश्य के पुत्र ने श्रेष्ठ व्यवहार किया उसमें उसको सुख प्राप्त हुआ (दृष्टान्त) एक बनिया सदा भड़साल भराकरता किसीदिन उसके बड़े भाई ने आकर कहा कि भैया तुझे इसमें क्या लाभ होता है तू कुछ और कमाई क्यों नहीं करता है जिससे अधिक लाभ हो। वह बोला भाई! इसमें भी आम के आम गुठली के दाम होते हैं और क्या लाभ होगा उसने कहा मैं कुछ नहीं समझा बुझाकर कहो उसने कहा कि इस सीधे व्यापार में मैं लाभ समेत अपने दाम उठाता हूं और बचता है सो वर्षभर भलीभांति खाता हूं यह सुन वह समझ बूझ चुप हो चलागया इससे मनुष्य ऐसा व्यवहार करे जिसमें बहुधा हानि न होवे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेषट्चत्वारिंशत्तमःप्रदीपः॥ ४६॥

अथ सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः॥
आत्मा श्रेयसि तावदेव विदुषा कार्य्यःप्रयत्नो महान्
संदीप्ते भुवने हि कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः॥१॥

जबतक यह शरीर स्वस्थ नीरोग है और जबतक वृद्धापन से दूर अर्थात् बुढ़ापा आने से पहले और जबतक इन्द्रियों की शक्ति नहीं हतीगई अर्थात् समर्थ होते और जबतक आयुर्बल का क्षय न हो और जबतक आत्मा भलेकर्म में है तबतक ही विद्वान् को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष विषय में महान् प्रयत्न करनाचाहिये और जहां घर के जलते समय कुआं खोदना है

वहां फिर उसका फल कैसा (दृष्टान्त) एकदिन तो ढाढ़ी बच्चे एक हथियारबन्ध दूसरा निहत्था दोनों घर से चले राह में इनकी कहीं गाने के विषय में विदाई मिलने पर हिस्सा बांटने में तकरार पैदाहुई तो बहुत विवाद होते लोग जमा हुए तो किसी ने निहत्थे से कहा अजी साहब ! आप इतना झगड़ते हैं जरा खयाल तो कीजिये कि यह हथियारबांधे खड़ा है यदि इसने कोई वार आप पर करदिया तो फिर आप क्या इसके शिर से अपना ढोलक तँबूरा देमारेंगे आप के पास तो कोई हथियार भी नहीं दीखता तब तो ढाढ़ीजी कुछ और भी रिसाकर बोले अजी वाह ! आप यह क्या बकथ कर रहे हैं दो रुपये मेरी पाकट में हैं उनको तुड़ाकर अभी छुरीले धार चढ़वाय वैसा ठुकवाकर लेआता हूं उससे इसका कलेजा फाड़डालूंगा यह सुनतेही सब बोले अरे मूर्ख ! यह अभी तेरा फैसला एकही तलवार के वार में किये देता है अरे देख (संदीप्ते भुवने हि कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः) यह समस्त श्लोक पढ़कर इसका अर्थ समझाया तब इसको ज्ञान हुआ कि हथियार पास का तथा अवसर का पैसा गांठ का विद्या कण्ठकी इत्यादि सब सत्य है यह विचार चुप होरहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४७ ॥

अथ अष्टचत्वारिंशत्तमःप्रदीपः ॥

अशक्यकार्यं कर्तव्यं वाक्चातुर्यं विजानता ॥
यथाकृतं माथुरेण राज्ञा स सहसार्चितः ॥ १ ॥

जो कभी किसी को अशक्य न कियाजावे ऐसा काम क

रने का संकट आनपड़े तो वहां वचन की चतुराईही से काम चलता है जैसे चौबे ने किया तो वह राजा करके पूजा गया (दृष्टान्त) राजा सवाई जयसिंह ने मथुरा मे अब्दुलनबीखां की मसजिद की गुमटी की, ऊंचाई देख करके कहा कि कोई इसके ऊपर से कूदे उसी को सहस्र रुपये इनाम दिये जावें यह नियम सुन किसकी सामर्थ्य उस महाभारी गुम्मटपर से कूदने की होसकती थी निदान एक चौबे महाठठोल सुन रहा था इससे न रहागया तो वह अपने घरजाय बुढ़िया सौवर्ष की उसकी मा थी उसे लेगया तो इसे देखतेही राजा ने कहा इसे कौन लेआया है चौबे बोला मैं लाया हूं याहू गुमटी परसों कूदेगी सहस्र रुपया लेवेगी राजा ने कहा इतने जवानों में तो किसी की सामर्थ्य है नहीं यह मरनचली डोकरी कूदैगी? तब उसने कहा महाराज! जब किसी की भी सामर्थ्य नहीं तो आप को एक जीव की हत्यालेनी इससे इसही का बलिदान देवो यह सुन राजा बड़ाही प्रसन्न हुआ और बोला चौबेजी को सहस्र रुपये देदेवो॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेऽष्टचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४८॥

अथ ऊनपञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥

गते शोको न कर्तव्यः स कार्यो हि पुनर्गमे॥
यथा पुनर्गमभ्रान्त्या भीतो वैश्योऽरुदद्भृशम्॥१॥

मनुष्य गये का शोच न करे किन्तु फिर वह न आय जाय सके ऐसा यत्नकरे एक किसी वैश्य की छातीपर से सोते चूहा चलागया वह उससे चमक उठा और दुहाई तिहाईकर कीक

मार२ रोने लगा लोग जमा हुए तो बोला मेरी छातीपर से चूहा चलागया लोग बोले क्या अंदेशा है सो कहा मुझे बड़ा भारी भय है आजसे यह राह निकली कल्हको सर्प इसीराहसे निकलेगा मुझे यह शोच है यह कह२के फिर रोनेलगा लोग चुपहो चलेगये इससे कोई बात किसी प्रकार से कुछभी हानिकारक हुई हो उसका शोच न करे किन्तु उसके फिर न होने का यत्न करे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे ऊनपञ्चाशत्तमःप्रदीपः ॥ ४९ ॥

अथ पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

यदि द्रव्यं गतं पश्येद्विभज्येत तदार्द्धकम् ॥
दत्त्वार्द्धं स्वं ररक्षासौ अर्द्धमेव स्वकं धनम् ॥ १ ॥

जो धन जाता जानिये आधा दीजे बांट (दृष्टान्त) एक महाजन का गुमाश्ता कहीं से रोकड़ लिये चलाआता था राह में इसे धाड़ी मिले वे धन छीननेलगे तो यह बोला भाई ठाढ़ क्यों करते हो राजीरजा से आधा धन लेलेओ उन्हों ने शोचा खुशी से मिला आधाही सही पीछे का कुछ खौफ न रहा यह विचार लेगये आधा उसने लाय मालिक को सौंपा उसने पूछा तो कहदिया सारा जाता था चोरों के हाथ से बचाकर लाया हूं स्वामी बोला तू आधा लाया यह भी कमाई मेंही है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे पञ्चाशत्तमःप्रदीपः ॥ ५० ॥

अथ एकपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

दाता दद्यादथाध्यक्षस्योदरार्त्तिःप्रजायते ॥
दत्ते द्रव्ये यथाध्यक्षो न शीघ्रं प्रददौ यतः ॥ १ ॥

दाता देवे और भण्डारी का पेटफूलै जैसे किसी वैश्य से किसी याचक को सौरुपये इनाम दियेगये तो रोकदिया उसे कालवाद, यह कर टालदेवे वह बहुतादिन भटकहारा और वह काल २ ही करतारहा आखिर उसने हारकर एकदिन उसके आगे यह साखी पढ़ी जैसे (पलक पक्षकी घड़ी महीना चारघड़ी की साल अरे तेरी कव आवेगी काल) यह सुन लाचार हो उसने रुपये गिनदिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निवन्धे एकपञ्चाशत्तमःप्रदीपः ॥ ५१ ॥

अथ द्विपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

सूत्रं नैव तु कर्पासं कुविन्देन विरोधिता ॥
भूमिर्नैव धनं नैव विवादस्तु तदा वृथा ॥ १ ॥

सूत न कपास और कोरी से लठालठ घर की धरती न धन वृथाही विवाद करना (दृष्टान्त) जैसे दोजने एकके खेत के पास से हो निकले तो आपस में बोले भाई जो यह जमीन हाथ लगै तो क्या करो वह बोला आधी २ बांट काम में लावें फिर एक बोला मै तो अपनी में फुलवारी लगाऊंगा दूसरे ने कहा मैं गाय भैंस चराऊंगा तव वह बोला भाई भला मान या बुरा मैं अपनी में तुझे चराने नहीं देऊंगा उसने कहा अपनी दीवार वनाले वह बोला मैं क्यों वनाऊं तेरा नुक्सान तू वना इसी में उनकी हाथापाई हुई और लोग आये पूछा तो सव झगड़ा सुनाया लोग इन्हें मूर्ख वता २ कर चलेगये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निवन्धे द्विपञ्चाशत्तमःप्रदीपः ॥ ५२ ॥

अथ त्रिपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

यत्रागतास्त्रिलोके किंचित्त्ववाप्य याताः ॥
एके वयं विमूढा असुमप्यपोह्य याताः ॥ १ ॥

जो आये इस जहाँ में कुछ वे कमाचले। एक हम हैं बेसलीके दिल भी गवाँ चले ॥ किसी ठौर वैठे कई साहूकार अपनी २ कमाई का वृत्तान्त कहरहे थे वहां एक ठठोल पुराना सोहदा आनिकला वह ठैर इनकी बातें सुन ऊपर के श्लोक के आशय में (जो आये इस जहां में) यह शैर बोला तो वे सब अपनी २ बातों की सुधि विसरा इसे देख दयालु हुए और कुछ द्रव्य भी इसको दिया इति ॥ इस शैर का उल्था श्लोक के साथ प्रायः प्रतिशब्द ही है जैसा किसी कामी ने कामिनी से निज वियोग की व्यथाविषयक शैर कही और कवि ने उसको प्रतिशब्द में उल्थाकर प्रकाशित की जैसे रसिक वाक्य है ॥

श्लो० आधीनोस्मि तेहं त्वद्याजीवं ततः किम्।
शैर–तावे में हूं तेरे मैं तो अब जीवूं तो फिर क्या।
खड्गादधस्तु कश्चित् प्राणं दधौ ततः किम् ॥
खाँड़े तले तो किसने जो दम लिया तो फिर क्या ॥

और भी किसी कामी ने कामिनी से कहा है जैसेः—

भवत्कृते खञ्जनचञ्चलाक्षि! शिरोमदीयं यदि याति यातु ॥ दत्तानि पूर्वं जनकात्मजार्थे दशानने नापि दशाननानि ॥ १ ॥

हे खञ्जनपक्षी समान चञ्चल, चपललोचनवाली ! तेरेलिये मेरा शिर जो जावे तो जावो अर्थात् तेरी प्राप्ति मे मेरा शिर

कटै तो बेधड़क कटजावो इसमें कुछ शोच व आश्चर्य्य नहीं क्योंकि पहले जानकी के काज, दशमुख रावण ने निज दशों मुख भी तो कटवा देदिये हैं इत्यादि प्रसंगविषयक गद्यपद्य रचनासंग्रह भी यत्र तत्र निवेदित है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्रनिबन्धे प्रतिशब्दानुवादोनामत्रिपञ्चाशत्तमःप्रदीपः॥ ५३॥

अथ चतुष्पञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥

शूरं भीतं तु लज्जालुं निर्लज्जन्तु तथैव च॥
समानयेति मन्त्र्युक्तःसर्वाढ्यामानयत्स्त्रियम्॥ १॥

बादशाह ने बीरबल से कहा तू मुझे चार मनुष्य जो शूर-वीर, कायर, लाजवान् और निर्लज्ज ये लादे तो इसे सरस्वती सिद्ध थी विचार से ध्यानकिया तो समझकर एक स्त्री को ले आया और बादशाह के आगे पेश की बादशाह चकित हो कहनेलगा इसे क्यों लेआया यह बेचारी अबला क्या काम देगी हमें चार मनुष्यों से चारही काम लेने हैं तो बीरबल ने कहा हजूर इसमें चारोंगुण इकट्ठेही हैं सँभाल लीजिये तो कहा बताव तो बीरबल इसके गुण वर्णन करनेलगा यह वेश्या की जाति है पर जिसकाल यह सुसराल में रहती है तो मारे लाज के गला खोलकर अच्छी तरह बोलती भी नहीं और जब ब्याह में गालियां गाती है तो इसका बाप भाई भतीजे खड़े बाजा बजाते यह निर्लज्ज गाती है और जब अपने स्वामी के पास बैठती है तो रात को अकेली घर के कोठेमें भी नहीं जाती कहती मुझे अकेले डर लगता है और शूरवीर ऐसी है कि जिससमय इसकी किसी से आंख लगजाती है तो अँधेरा

चोर डाकू के डरको कुछ न समझ चाहे जहां चली जाती है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे चतुष्पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५४ ॥

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

गुणाज्जायेत गुरुता न संपत्त्यादितो यथा ॥
पूर्णश्चन्द्रोऽपि पूर्णायां द्वितीयासदृशो नहि ॥ १॥

गुण से बड़ापन होता है कुछ संपत्तिआदि होने सेही नहीं जैसे पूर्णिमा को चन्द्रमा परिपूर्ण भी है पर वह द्वितीया के चन्द्रमा के समान उत्तम प्रियदर्शन नहीं गिना जाता है (दृष्टान्त) किसी स्थान में कई मनुष्य कह रहे थे कोई कहता मनुष्य गुण से बड़ा कोई कहता उत्तम कुल में जन्मलेने तथा संपत्ति आदि युक्त होने से बड़ा कहलाता है इसमें एक कवीश्वर आय निकला तो उसने ऊपर के श्लोक का आशय यह सोरठा पढ़ा जैसे ॥

सो० गुणसों गौरव होत, नहिं सम्पति न सहायसों ।
पूनो चन्द्र उदोत, द्वितिया की सरिबरि नहीं ॥

यह सुन सब प्रसन्न होकर चुप होरहे कवियों की वाणी मधुर हितकारक सुहावनी होती है जैसे और भी किसी सीधे सादे पण्डित ने यह ॥

भोजनं देहि मे राजन् घृतशाकसमन्वितम् ॥

आधा श्लोक बनाया फिर और बनाने की शक्ति न हुई तो कालिदासजी ने उसे ॥

माहिषं च शरच्चन्द्रचन्द्रिकाविशदं दधि ॥ १ ॥

यह कहकर श्लोक का उत्तरार्ध पूर्णकर उस सीधे सादे पण्डितको देदिया ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे पञ्चपञ्चाशत्तमःप्रदीपः ॥ ५५ ॥

अथ षट्पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥
यथा राज्ञा कृते दण्डे लज्जालुः कथितो मृतः॥१॥

एक दिन राजा वीरविक्रमादित्य के यहां चार मनुष्य एक ही चोरी आदि अपराध में पकड़ेगये राजा ने उन चारों को दण्ड ऐसे दिया कि एक को तो एकान्त में लेजाके कहा फिर ऐसा काम न करना दूसरे को धिक्कारदे दो चार गाली काढ़ के निकाला और तीसरे के धौल जूतियां लगवाईं और चौथे का काला मुँह कराकर गधे पर चढ़ाय नगर के चारों ओर घुमा निकाला तब कामदारलोग आपस में बहुतही मसकौट करतेरहे कि इनका अपराध तो एकही है और राजा ने दण्ड अलग २ दिया यह क्या कारण है निदान जब बुद्धि लाचार हुई तो हाथ जोड़ पूछा श्रीमहाराज ! यह दण्ड कैसा है तो राजा ने कहा तुम इसकी परीक्षा करो तो वे उनके ताक में गये तो जिसको कहा कि फिर ऐसा काम न करना वह तो जातेही जहर खाकर मरगया और जिसे गालियां दी थीं वह शहर छोड़ भागा और जूतियों पिटनेवाला बेशर्मी से छिपकर रहा और जिसका कालामुँह गधेपर सवार था उसका हाल सुनिये कि वह नगर का चौफेरा देता था कि राह में उसका घर आगया तो उसने अपनी औरत को बुलाकर कहा रंडी

थोड़ा पानी ले आव वह बोली भडुवे रोटी न खाताजा तैयार है तो वह बोला थोड़ा सा शहर फिरना बाक़ी है फिर अभी आकर खाता हूं गर्म पानी भी रखना नहाकर शकल सुधारूंगा मुंशीलोग यह इन्साफ ठीक २ देखकर राजा को धन्यवाद देते अपने २ घरआये और वहांपर यह साखी भी सुनने में आई कि (रागी बागी पारखी पुनि नारी अरु न्याव इन पांचों के गुरु भले उपजें अंग स्वभाव)॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निवन्धे षट्पञ्चाशत्तमःप्रदीपः॥ ५६॥

अथ सप्तपञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥

उपमातो ह्युपमानं समधिकमिति सम्परिज्ञाय॥
तद्भोज्ये मिष्टजलं ददौ समाधाय युक्तं सः॥ १॥

उपमा से उपमान अधिक योग्य गिनाजाता है यह निश्चय करके सेवकने निज स्वामी को भोजनके समय घृत के स्थान में मीठा जल–शर्बत दिया जैसे (दृष्टान्त) एक विद्यार्थी बड़ा कृपण था उसके घर एक प्रिय अतिथि चलाआया उसने अपने भोजन में से आधी खिचड़ी उसे परोसदी वह बोला यार ज़ाफ़त क्या आफ़त करदी रोटी भी न की वह बोला सुन भाई इस खिचड़ी के दाने खेत में बोये जाते तो न जाने कितना नाज होता मैंने तुम्हारे लिये इतना नुक्सान किया है वह रिसाकर बोला जो सहा सोही सही पर घी बिना खाऊं क्या तेरे शिर के साथ तब यह लाचार हो पैसा ले घीवाले के पास गया उससे बोला भाई घी अच्छा देना वह बोला ऐसा ले चरबी की जात तो उसने सुन कहा चरबीही लावेंगे वहां

चरवीवाले से कहा अच्छी देना वह बोला ऐसी ले जैसी व-रफ तो वरफवाले से जा बोला अच्छी देना वह बोला ऐसी सफ़ेद खांड़ के समान ले तो वह एक पैसे की खांड़ को गया कहा अच्छी देना वह बोला ऐसी ले अमृत समान तब तो वह अमृत की खोज में गया तो किसी बुद्धिमान् मनुष्य ने कहा भाई खांड़ जल में मिलाले अमृत होगया बस वह पैसे की खांड़ले जल में मिला शर्वत बनाय कटोरा भरकर लेगया वह महाक्रोध किये ठंढी खिचड़ी लिये बैठा उसे गालियां दे रहा था इसे देख और भी भभका कि घी के एवज पानीही भरलाया क्या वह बोला चुप बैठे रहो तीन चार निचोड़ों मेंसे यह महातत्त्व निश्चय कर लाया हूं (उपमानोपमेययोरुपमानं बलीयः) इस परिभाषा से सिद्ध है इसे पी आप शीतल हो-इये वह विचारा लाचार हो चुप रहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे सप्तपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५७ ॥

अथ अष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥

न जहाति स्वभावोऽस्यां वार्त्तामापद्गतोपि च ॥
मृतभ्रात्रोऽपि वैश्योऽसौ व्याघ्रंकृतितोऽशुचत्॥१॥

बाजा मनुष्य आपत्ति में भी हो पर निज स्वभाव की वार्त्ता-चेष्टा को नहीं बदलता है जैसे वैश्य के भाई को भी व-घेरे ने मारलिया वह जानकर भी उसके पास जाय बोला कि अरे तैंने मेरे भाई को किस हिसाब से खाया वह घुर्राकर इस के पीछे भी भगा तो कहा बस भाई भरपाये " घुर्रर " हि-साब से खाया ॥ तथा दो फारसीनवीस जंगल में जाते थे इन

को राह में डाकुओं ने आरोका तो ये बोले बता भाई क्या मामिला है वे बोले अबे जो है सो डालदे यही मामिला है तो वे बोले भाई सुनो लाम क़ाफ़ का तो काम नहीं आइस्ते से कार्रवाई करो वे बोले अबे दो लट्ठ फोड़ देते हैं यही ज़बरदस्त कार्रवाई है तो ये लाचार हो बोले तो कहदीजिये कि यह सीनेजोरी अदालते कार्रवाई मामिला है वे इनकी लाफ़ का जबाँ से खुश हो प्रसन्न हुए और इन को छोड़ दिया इससे बुद्धिमान् जन निज सीधा सादापन कभी नहीं बदलते इसी से वे सज्जन कहाते हैं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे ऽष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥ ५८॥

अथ ऊनषष्टितमः प्रदीपः॥

एकोपि युक्तया तु बहून्पराजयाति हि क्रमात्॥
एकः कृषीवलो युक्तया चतुरोवशमानयत्॥ १॥

एक भी मनुष्य हो वह युक्ति से बहुतों को हरासकता है जैसे एक खेतवाले ने चार मनुष्यों को क्रम से वश में किये अर्थात् उनको निकाल खेत बचाया (दृष्टान्त) एक ज़मींदार के खेत में चार मनुष्य ब्राह्मण, रजपूत, बनियां, नाई ये आय घुसे खेतवाला आगया देखकर विचारा कि जो कुछ कहूंगा लडूं तो ये अकेला जान मुझ को मारें पीटेंगे यह विचार इन के पास आय राम २ कर बोला महाराज! तुम ब्राह्मण-गुरु, रजपूत-गुरुभाई, बनियां-महाजन, इन तीन मनुष्यों की तो कुछ बात नहीं पर भला इस नाईकेने क्या समझकर मेरा खेत बिगाड़ा है इसका न्याव तुम्हीं विचारो यह बात सुन वे

सब चुपहोरहे तब तो इसने नाईके से सिगरे गन्ने छीन लिये और जूतियां मार निकाल दिया। फिर इनसे कहा ब्राह्मण! तुम गुरु, ये गुरुभाई, हमारा तुम्हारा दोनों का द्रव्य एकही है पर इस बनियें ने क्या समझ कर मेरा खेत बिगाड़ा है। इसका तुम्हीं विचार करो जो हम तुम इसके यहां से कभी रुपये उधार लावें तो यह अपना ब्याज छोड़ देगा यह भी सुन वे चुप रहे तो इसने बनियें को भी कण्ठ पकड़ (चल लेडे) कह निकाल बाहर किया फिर इन दोनों से बोला क्यों जी तुम दोनों में भाई बराबर का हम रजपूत हैं तो क्या आप के समान हुआ चाहता है बराबरी सधचुकी बस देखलिया तुम्हारा भलापन यह सुन भी वे चुपाये तो रजपूत को भी भाई साहब (यह रास्ता है) कह निकाला ब्राह्मण से कहा महाराज! कृपा करो यह सुन वह भी चिरंजीव, कहकर चला गया इधर उधर के लोग यह वृत्तान्त समझ कहनेलगे कि यह बड़े अचरज की बात है जो चार जनेपर एक मनुष्य प्रबल रहे तब उनमें से एक बोला भाई क्या तुमने यह कहावत नहीं सुनी है कि 'युग फूटा नर्द मारीगई, यह सुन सब चुप चाप रहे इससे मनुष्य को युक्ति से रहना चाहिये॥ तथा जैसे एक गीदड़ ने हाथी को मामा कह साथ ले जा दलदल कीच में फँसा मारा और काढ़ने के मिस हू २ कर सैकड़ों अपने संगियों को बुला फारडाला इत्यादि कई दृष्टान्त हितोपदेशादि के पूर्वभाग में है॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे ऊनषष्टितमः प्रदीपः॥ ५९॥

अथ षष्टितमः प्रदीपः ॥

नाकाले म्रियते कश्चिद्रोगे युद्धादिकेऽपि च ॥
चक्रिकाया यथा धान्ये पिष्टेऽपिष्टम्प्रशिष्यते॥१॥

अकाल में अर्थात् अवश्य नाश समय निमित्त विना कोई भी मरता नहीं है जैसे चक्की में नाज पिसनेपर भी विना पिसाही रह जाता है (दृष्टान्त) किसी राजा के यहां विकटखां नाम कलावत गाने वजाने में वहुत प्रतिपन्न हुआ आठ पहर उसकी संगति में रहता एक दिन उस राजा पर कोई वैरी चढ़आया तो उसने भी लड़ने की वरावरी की और अपने साथियों को हथियार घोड़े वाटे उसका राजा ने विकटखा से भी कहा तुम भी शस्त्रशाला से हथियार और घुड़शाल से घोड़ा अपना मनमाना लेलो, कल तुम्हें भी हमारे साथ लड़ने को चढ़नाहोगा इस वात के सुनतेही उसका तो जी सूखगया पर मारेलाज के वहुत अच्छा कह, घोड़ा, हथियार चुनले किसी छल से वह अपने घर आया और जोरू से कहनेलगा कि इस नगर से अभी भागचलो नहीं तो कल राजा के साथ मरने को जानाहोगा वड़ी चिन्ता है वह स्त्री वड़ी चतुर थी वोली जो लड़ाई में जाता वह विन काल नहीं मरता है यह कह उस ने चक्की में चने दलकर दिखलाये और कहा कि देख जिस भांति इसमें दलने पर भी दाने समूचे रहगये हैं तैसेही लड़ाई में भी गया विन मौत मरता नहीं फिर भी वह वोला तो इन में जो २ पिसगये उन्हीं में मैं भी हूं उसके इस हेठापन को देख वह स्त्री झुंझला कर वोली कि जो तू ऐसी स्वामी के साथ कृतघ्नता करेगा तो मैं भी तेरे साथ न रहूंगी यह सुन लजाय

निरुत्तर हो लाचार राजा के पास जानापड़ा और जैसे तैसे हथियार लगा घोड़े पर चढ़ भोरही राजा के साथ हुआ पहुँचा लड़ाई पर तो जिसकाल दोनों दल लड़ाई में लड़ने को तुल २ कर खड़े हुए और लगा मारू बजने तो और गोली गोला बाण दोनों ओर से चलने और इसका घोड़ा भड़कने तो विकटखां मारेडर के कांपनेलगा और राजा से बोला महाराज! हौं गिरत हौं, पर राजा यह समझा कि यह कहता है कि मैं शत्रु के दल पै गिरों तो बोले ऐसा काम न करो मेरे हाथी के साथ अपना घोड़ा रक्खो दो तीनबार राजा से उसने कहा और राजा ने यही उत्तर दिया निदान घोड़ा वैरी के दल में उसे लेहीगया तब विकटखां ने कटि से डुपट्टाखोल फिराया इससे उस राजा के लोग लड़ने से रहगये और इसके पास आये कहा तू क्या संदेशा लाया है वह अवसर पाय बोला मुझे घोड़े से उतारो तो कुछ कहूं उन्हों ने तुरन्त इसे घोड़े पर से उतारा तब यह बोला कि तुम किसलिये लड़ते हो जिस रीति का व्यवहार तुम चाहोगे वैसाही हमारा राजा मानलेवेगा तब उस वैरी ने कहा दशलाख रुपये दे और अपनी बेटी हमारे लड़के को व्याहदे हम यही चाहते हैं वह बोला यह बात हमारे राजा को स्वीकार है मैं इसका उत्तर कल देजाऊंगा तुम निश्चिन्त रहो इस बात के सुनतेही प्रसन्न हो उस राजा ने इसे भारी खिलअत और बहुत से रुपये दे बिदाकिया और तभी से लड़ाई बन्दरक्खी दूसरे दिन भोर होतेही जब यह राजा फिर लड़ने को खड़ाहुआ तो उस राजा ने संदेशा भेजा कि कल तो तुम्हारा मनुष्य हमें दश

लाख रुपये बेटी देना स्वीकारकर लड़ाई बन्द करवागया है ये क्या छोरों की सी लड़ाई है तब राजा ने आज्ञा की कि कौन गया देखो तो लोग निश्चयकरके बिकटखां को हाथों हाथ लेगये और कहा किस के हुक्म से तू मनौती करआया वह बोला आज्ञा क्या चाहिये जो इस घोड़ेपर चढ़ेगा वही मनौती करेगा यह सुन सबने कहा किस हिजड़े को साथ लेलिया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे षष्टितमःप्रदीपः ॥ ६० ॥

अथ एकषष्टितमः प्रदीपः ॥

दुःखितस्य स्वहास्योक्त्या शोकं ह्यपनयेद् बुधः ॥
यथा स मोदयामास शोचन्तं महिषीं मृताम् ॥ १ ॥

बुद्धिमान् निज हास्य उक्ति से दूसरे का शोक निवारण करदेवे जैसे किसी की भैंस मरगई तो वह शोच कररहाथा तो एक ठठोल पड़ोसी उसके पास आबैठा और बोला भाई हमें तुम्हें कालीचीज से लहनाही नहीं है मेरी भी एक काली हँड़िया फूटगई तभी से शोच लगरहा है यह सुन उसको हँसी आगई और भैंस का शोच कम हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामिश्र
निबन्धे एकषष्टितमःप्रदीपः ॥ ६१ ॥

अथ द्विषष्टितमःप्रदीपः ॥

स्वस्वाभिमतविज्ञानं ददन्ते साम्प्रदायिकाः ॥
यथा ते पुत्रशोकार्तं स्वस्वज्ञानं ददुः पृथक् ॥१॥

सम्प्रदायी–साधुजन निज २ मत के समानही ज्ञान देते हैं जैसे किसी पुत्रशोकवाले को उन्हों ने पृथक् २ निज २ मत के

मान ज्ञान दिया (दृष्टान्त) एक कोई दुखियाजन पुत्रके शोक
वैठा था तो इसके पास कोई साधुजन आयबैठे और अपने २
त के समान ज्ञान देतेभये तो उनमें से पहला बोला ॥

(वह वेनवां पन्थवाला था)

शैर–दीद दुनिया का दम बदम कीजे।
किस्कि शादी व किसका ग़म कीजे॥

(फिर दूसरा बोला वह वैरागी था)

दो॰ साधो या संसार में, सभी वटाऊ लोग॥
काकोकरै मनावनो, काको कीजै शोग॥ १॥

(तीसरा संन्यासी बोला)

दो॰ आये हैं सो जायँगे, राजा रंक फकीर॥
एक सिंहासन चढ़चले, दूजे बँधे जँजीर॥ १॥

(चौथा योगी बोला)

दो॰ योगी था वह उठगया, आसन रही विभूति॥

यह सुन उसने निज शोक दूर किया अथवा जैसे चार वर्ण
क चार साधुओं ने निज २ मत की साखी कही जैसे प्रथम
ाह्मण ने अपने मतलब की कही जैसे राम नाम लड्डवा
ोपाल नाम घी। कृष्णनाम खीर खांड़ घोल घोल पी १
ूसरा क्षत्रिय था उसने रामनाम शमशेर बनाकर कृष्ण
टारा बांधलिया। हरीनाम की ढाल बांधकर यम का द्वारा
ीतलिया २ तीसरा वैश्य बोला राम मेरे पूंजी कृष्ण मेरे धन।
ूधोही हरिनाम से लाग्यो मोरामन ३ चौथा शूद्र बोला जाति
ाँति पूछै नहिं कोय। हरिका भजै सो हरिका होय॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे द्विषष्टितमः प्रदीपः॥ ६२॥

अथ त्रिषष्टितमः प्रदीपः ॥

पुरुषार्थे दृढो यःस्याद्दैवं तस्यापि सिद्ध्यति ॥
बादशाहस्य पुत्री हि फकीरेण विवाहिता ॥१॥

जो पुरुषार्थ करने में दृढ़विश्वासवान् हो उसका दैव प्रा-
रब्ध भी सीधा होजाता है जैसे बादशाह की लड़की फकीर से
विवाहीगई थी (दृष्टान्त) एक सिपाही लिखा पढ़ा ...
रूसकर उदासी होगया और लगा देश२ फिरने किसी नगर के
पौर पर ऊपरली चौखटपर कुछ लिखा था सो लगा बांचने तो
इसने उसमें एककोने यह लिखा देखा कि (हिम्मतमर्दां मदद
खदा) इस वचन के पढ़तेही वह क्रोधकर बोला कि इस नगर
की पौरपर यह झूठ लिखा है इससे इसके भीतर न जानिये
क्या कुछ होगा यह कह नगर में न गया उलटा फिरा तो कि-
तनीएक दूर जाय आपही शोचा कि मैंने विना परखाये किसी
के लिखे को झूठ बताया यह बड़ा अन्याय किया इतना समझ
फेर फिरा और चटाई बिछा उसी पौर पर जा बैठा कि बाद-
शाहकी लड़की को मैं ब्याहूंगा तो उसको वहां तीनदिन विना
अन्न जल के निकले तब तो नगर के लोग आय खाने पीने को
पूछने लगे तो इसने किसी को भी कुछ उत्तर न दिया निदान
बादशाह आपही वजीर कामदार बहुत से उसके पास आये
और कहा साईं साहब ! फ़रमाइये आप की क्या मुराद है तो
बोला बादशाह की लड़की ब्याहूंगा वे सुनकर चुप हो चले
बादशाह के पास गये उस मुरादको प्रकट न कहसके तो पत्रपर
लिखकर बताई तो बादशाह बहुत घबराया बेगम के पासगया
वो बड़ी चतुर थी उसने कहा फकीर से कहदेओ कि सवासेर

मोती अविद्धलादे हमारे यही रीति है उससे लड़की की गोद भरे और व्याह ले जो सच्च अजमती है तो उसको लड़की देने में दोष नहीं जो झूठा पाखण्डी है तो सुनकर चलाजावेगा वे फकीर के पासआये और कहा तो उसने सुन उस शिक्षा को विचारके कहा कि (हिम्मतमर्दां मदद खुदा) कुछ बात नहीं अभी ले आता हूं यह कहके चला समुद्र पास पहुँचा वहां अथाह समुद्र भरा लहरें लेरहा था तो लगा यह (हि० मर्दां म० खु०) कह हाथो से पानी उलीचने निदान तीन दिन रात बीते समुद्र भी रूपधारके आय बोला साईजी क्या चाहते हो बोला सवासेर मोती तो उसने तुरन्त लादिये ये बादशाह के पास आया उसको लड़की ब्याही गई॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे त्रिषष्टितमःप्रदीपः॥ ६३॥

अथ चतुःषष्टितमः प्रदीपः॥

अन्धकारपुरे नैव वसनीयं विजानता॥
शिष्यः शूले रोपितोऽथ गुरुणा मोचितोवसन्॥१॥

अन्धेरनगर में ज्ञानी जनको नहीं रहना चाहिये जैसे दो जने गुरु, शिष्य विचरते २ अन्धेरनगरी में आ उतरे तो उस के दरवाजेपरही यह लिखा था कि॥

चौ० अंधेरनगरी चौपट्टराजा। टकेसेर भाजी टकेसेर खाजा॥

तो यह लिखा बांचतेही गुरु ने कहा बच्चा इस नगर में जाना न चाहिये जहां टकेसेर भाजी-शाक और टकेही सेर खाजा-खजला मिठाई है तो ऐसे नगर में न जानें क्या २ अन्याय होता होगा तो गुरु ने तो वहां बाहरही डेरा लगाया

और चेला बोला बाबाजी मैं तो जाऊंगा देखना सो भूलना क्या है गुरु बोला जा भाई देख हम भी बाहर सेही देखते हैं निदान चेला चला भीतर गया तो घी खांड़ टके सेर आटा दाल भाजी सब टके सेरही बिकता देख इसकी आंखें चोहदा उठीं कहीं २ से दोचार पैसे मांग सब सौदा खरीद लेजाय गुरु के पास रख कहा बाबाजी सब चीज टकेसेर बड़ाही आनन्द है गुरु बोला भाई कुछ दिन देख सब फल मिलजायगा इसही प्रकार वह नित्य २ लाता गुरु को खिलाता खातारहा गुरु कहता भी रहा बचा चलदेओ सधचुकी पर वह न माना निदान वह वहां रह खा २ कर ऐसा मोटा हुआ कि पहिचानने में भी नहीं आता था ऐसेही रहते २ एक दिन राजा के पास कोई चोरी का मुकद्दमा आगया तो उस चोर को शूली पर चढ़ाने का हुक्म हुआ तो उसे शूलीपर लेगया दैवयोग से वह शूली मोटी और चोर पतला था तो न चढ़सका तब रपोट हुई तो तुरन्तही हुक्म हुआ कि किसी मोटे मनुष्य को लाकर शूली चढ़ा दो चोर बरी है तब तो लोग चले २ चेले के पास आय बोले यह खूब खा २ कर मोटाया है ऐसा शहर भर में कोई भी न मिलेगा यह कह इसे लेगये यह भी लाचार में चला गया पहुँचा तो शूली को देखतेही देवताओंको मनाने लगा हाय २ गुरुजी सत्य कहते थे एक दिन फल मिलेगा सो आज समय आया अरे देवतो ! कोई सहाय करो गुरुजी पहुँचियो २ मैं मारा जाता हूं फिर आपका वचन न टालूंगा अब इस संकट से बचावो ऐसेही पुकारते २ गुरुजी भी रौला सुन कहीं से चले आये तो विचार करके उपाय रच

बोले भाई हम आगये हैं यह अलभ्य लाभ लेंगे लोग बोले बाबाजी क्या लाभ है बतलावो तो सही तब कुछ न बोले तो कोतवाल ने कहा हमैं तो बताओ तो उसके कान में धीरे से कहा २४ वर्ष तपकरने का फल आज इस शूली मे चढ़ने से मिलसकता है यह सुनतेही वह झटचला चेले के गले से फांसी निकाल गले में डालनेलगा तो दीवान ने कहा नहीं हम अलभ्य लाभ लेंगे तू उतर इतनेमें महामन्त्री आय पहुँच बोला नही यह काम हमारा है निदान वहां का राजाही अलभ्य लाभ का रौला सुन आया लोग अलग हुए और आप सबके देखते शूलीपर चढगया और चारघड़ी में जानदेगया इससे जिस राजा के नगर में न्याय न हो तहां न रहै न जाने उसपर क्या अन्याय आपड़े ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुःषष्टितमःप्रदीपः॥ ६४ ॥

अथ पञ्चषष्टितमः प्रदीपः ॥

दलाला वादचतुरा नावज्ञेया यथा हि ते ॥
राज्ञाधृताथ स्वोक्त्या ते मुक्तास्तेनार्थपूरिताः॥१॥

दलाललोग बड़े वाक्यचतुर होते हैं उनकी कभी अवज्ञा तिरस्कार करना नहीं जैसे एक राजा के यहां किसी ने यह अर्जी दी कि कोई दे कोई ले दलाललोग बीच में पड़कर नाहक दोनों थोकों में हानि करते और अपना काम चलाते तमाम दुनिया को लूट २ खाते हैं तो इसपर हुक्म हो सब दलाललोग बुलाये गये पूछा गया तुम किसबात की दलाली करते हो कहो सब बात की तो हमारा सौदाकर इसमें दलाली

करो तो वे विचार २ कर कभी कलम हाथ से धरें कभी उठावें तो कहा क्या विचारते हो मोल तोल क्यों नहीं करते हो तो बोले हजूर मोल कररहे हैं पर तोल में आप और सब सादे जनों के समानही हैं पर रत्ती का फरक है वह रत्ती नहीं मिलती इससे आप का मोल नहीं निकल सकता फिर कोई ग्राहक कौन कैसे लगै यह सुन सरकार प्रसन्न हुए और उनको इनाम दीगई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे पञ्चषष्टितमःप्रदीपः ॥ ६५ ॥

अथ षट्षष्टितमः प्रदीपः ॥

अकबर की प्रशंसा ॥

आमेरोरासमुद्रादवति वसुमतीं यः प्रतापेन सद्यो दूरेगाः पाति मृत्योरपिकरममुचत्तीर्थवाणिज्य वृत्त्योः ॥ अप्यश्रौषीत्पुराणं जपति च दिनकृन्नाम योगं बिभर्ति गङ्गाम्भोभिन्नमम्भो नहि पिबति जयत्यकब्बरो बादशाहः ॥ १ ॥

अकबरशाह बादशाह जो सुमेरु से लगा समुद्रपर्य्यन्त पृथ्वीकी रक्षाकरता निज प्रताप से युक्त गौओं को मृत्यु से बचाता और तीर्थयात्रा वणिज व्यापार का करलेना जिसने छोड़दिया और जिस ने पुराण श्रवणकिये और दिनकर सूर्य के नाम जपता तथा योगाभ्यास करता और जो गंगाजल से इतर जल नहीं पीता ऐसा अकबर बादशाह जय को प्राप्त हो अर्थात् सर्वोपरिवर्तमान अचलराज्याधिकारी होवे १ ऐसे अकब्बरशाह के दरबार में वजीर महामन्त्री हमारे यहां के नार·

नवलनिवासी श्रीयुत वीरबलशर्मा हुए गौड़ ब्राह्मण के पुत्र थे इनका वहां जाने का ऐसे प्रसंग हुआ कि एकबेर बादशाह ने दश गाड़ी मँगाने का हुक्मदिया तो परवाने में दश गाड़ी भर के भेजदेओ यह लिखभेजा और (कलई) का नाम नहीं लिखा तो वह रुक्का तहसील में किसी से सिकरा नही सबने शोचलिया पर किसी की बुद्धि न चली निदान वीरबल भी नित्य जाता था पहुँचा तो वह रुक्का आगेधरा गया तो इसने शोच समझके यही निश्चय किया कि आजकल वर्षा समय है हजूर ऊपर चढ़ेहोंगे तो कलई पानी के मारे फीकी होगईहोगी इससे वही मँगाई है यहां यही वस्तु उत्तम होती है इससे यही भेजदेनी चाहिये यह बात सबके मनमान गई तो वहीभेजी तो बादशाह ने अभीष्ट वस्तुभरी देख उसी वक्त हुक्म दिया कि भेजनेवाले को शीघ्र ले आओ ऐसाही हमें वजीरचाहिये तब तो तुर्तही हरकारा चला यहां पहुँच बोला कलई भेजनेवाले पुरुष को बुलाया है यह सुनकर सबने हर्ष कर वीरबल को उसके साथ भेजा जातेही बादशाह ने देख प्रसन्न होकर वजीर बनाया तभी से इनका संग बहु प्रसंग विदितहुआ और वीरबल की स्त्री भी इधरही के पास की एक जमींदारे गांव की थी यह प्रसंग ऐसे हुआ कि एक बेर वीरबल सादेवेष घर को आता था तो एक गांव में ठहरा तो पियासाभया एक ब्राह्मण के घर में गया तो वह ब्राह्मणी बड़ी चतुर थी इसने जो पानी मांगा तो यह पानी ले उसमें कुछ मीठामिला थोड़े तिनुके भी डाललाई इसको दिया यह तिनुके देखके बोला कि ये ऊपर से मिलाये मालूम होते हैं

इनका कारण कहो तो वह बोली लाला तुम ताव से जल्दी२ चलेआते हो अभी जो जल पीवोगे तो विगाड़करेगा इस से इन तिनुकों के निकालने के वहाने से आप का खून च- लने से जो ताव खारहा है वह ठंढा होजावेगा तो जल आप को कुछ विगाड़ नहीं करसकेगा बस वीरवल इस चतुराई वाक्य को सुनतेही वड़ा प्रसन्न हुआ और मनहीमन विचार नेलगा कि धन्य है इस स्त्रीजाति की बुद्धिमानी और दया- लुता को ऐसी स्त्री जिस घर में हो वहां अज्ञान दुर्दशा का प्रवेश कभी नहीं होवे पर जो मेरे कुछ प्रारब्ध कर्म अच्छे हैं तो इसकी कुक्षि से जन्मी पुत्री भी ऐसीही बुद्धिमान् होगी वह मुझ को विवाहीजावे तो अपने भाग्य को सराहूं यह वि- चार वहां उसके घर सोरहा तो वह ब्राह्मणी भी इसे देख मन में विचाररही थी कि ऐसा सुन्दर वर मेरी पुत्री को मिले तो अहोभाग्य है सोही उसका पति भी घर आगया तो दोनों ने विचारकर उसे जगाकर विवाहके लिये पूछा तो वह बोला यही इच्छा कर २ मैं सोया था सोही भगवत् ने पूर्ण की तो तुर्तही उसने टीका वीरबल के करदिया और कुछदिन में धू- मधाम के साथ यथाविधि से इसके साथ निज पुत्री का व्याह बड़ी धूमधाम से किया तो यह स्त्री ऐसी चतुर थी कि जो२ प्रश्न वादशाह ने किये और जिन २ का उत्तर वीरबल से न होसका उन २ का उत्तर वह आप करती थी जैसे वादशाह को किसी ने कहदिया कि अमुक रोग में भैंस का दूध गुण- दायक है वह वीरबल के लाये आसक्ता है तो इसे हुक्म हुआ कि कहीं से भैंसे का दूध तलाश करके लाओ नहीं तुम को

दण्ड होगा यह सुन चुपहो चला घर में जाय चिन्ता करने लगा कि यह असम्भव वस्तु इसके लिये कहां से कैसे लाई जावे नहीं तो वह दुष्ट दण्ड देवेगा इस विचार में इसको छः महीने बीते और दिन २ शोच में रहते २ इसका शरीर पीला पड़गया तो स्त्री ने पूछा आप को क्या चिन्ता है तब उसने बादशाह की आज्ञा कह सुनाई वह सुनतेही बोली स्वामी आप ने मुझ से पहलेही क्यों न कहदिया वृथाही इतने दिन चिन्ता कर २ निजदेह को दुर्बल किया अब चिन्ता न करो बादशाह से कहदीजिये उड़ती चील्ह का सूत्र लादीजिये उस के बिना काम अटक रहा है यह सुन बादशाह चुप होरहे फिर भैंसे का दूध नही मांगा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेषट्षष्टितमः प्रदीपः ॥ ६६ ॥

अथ सप्तषष्टितमः प्रदीपः ॥

न नीचो यवनात्परः ॥

यवन से परे कोई और नीच नहीं इस पर दृष्टान्त एक दिन बादशाह ने बीरबल से पूछा कि कहो सबसे नीच जाति कौन है वह संकोच करके बोला कि हजूर आप के आगे प्रत्यक्ष नहीं कहसकता कल्ह आप को दिखाही देऊंगा यह कह कर चला आया और सांझ समय सर्वत्र डौंड़ी पिटवाई कि जितनेभर भंगी हैं सब हाजिर हों वे सब मुसल्मान किये जावेंगे यह आज्ञासुन उन सबो ने पंचायती करके यह विचार निश्चय किया कि यहां से भग और कहीं जाय बसना पर दीन से बेदीन नहीं होवेगे यह कह २ सबों ने सवेरा होतेही

अपने २ खाट बिछौने गधे भैंसोंपर लाद २ कर आम खास के नीचे होकर निकलने की राह ली तो उनका रौला सुन बादशाह बोले यह काहे की धूम है लोगों ने कहा भंगी निकल २ कर जाते हैं कहा क्यों? क्या चाहते हैं पूछा जावे पूछा तो वे सब बोले दोहाई हजूर की हम मुसल्मान होना नहीं चाहते आप का देश छोड़ और कहीं जा बसते हैं यह सुन बादशाह बहुत लज्जित हुए और अपने प्रश्न का उत्तर पाया इसी प्रकार एकदिन शैर करते तमाकू के खेत में गधा खड़ा देख बोले देख बीरबल इसको गधा भी नहीं खाता तो कहा जनाब इसको गधों नेही छोड़ी है और सभी के योग्य बड़ीही यह प्रियकारक वस्तु है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेसप्तषष्टितमः प्रदीपः॥ ६७ ॥

अथ अष्टषष्टितमः प्रदीपः॥

एकसमय अकबरशाह ने आले में एक सेब फल रखकर बीरबल को बताया कि यह सेब तुम्हारे लिये रक्खा है उत्तार लेओ बीरबल ने जब बैठे २ ऊंचा होकर उसे उतारा तो बादशाह ने इसकी गुदा में अँगुली से चेष्टा करके हँसदिया फिर यह छेड़ पकड़ली कि हर बात में कहते कि बीरबल! आले में का सेब तो बीरबल ने भी उस छेड़के मिटाने के लिये यत्न किया सोकि वह बादशाह से पहले नंगा होकर पाखाने में जायछिपा और बादशाह जो गये तो यह खाऊं २ कह उसके पीछे दौड़ा और आगे का द्वार आय रोका तो बादशाह घिग्घाकर बोला अय बलाय तू मुझे जानेदे तो उसने कहा

न जाने देऊंगा तो बोला जाने भी देगा किसीतरह तो बोला गुदा में थुकवाले तब जानेदेऊंगा निदान हार झखमार लाचारहोकर बादशाह को बीरबल से गुदा में थुकवानाही पड़ा जब सवेरा होतेही बादशाह कचहरी में आये और बीरबल से कहा (आले में का सेब) तो बीरबल ने भी कहा कि देखा (पाखाने का देव) बादशाह शर्माकर चुपहोरहा इति॥ एक बेर बादशाह ने पूछा बीरबल! भोजन उत्तम क्या? तो कहा खीर फिर छः महीने बाद कभी जंगल में शिकार को गये एक बटकी छांह में बैठ फिर पूछा कि (ऊपर क्या) तो कहा जनाब शकर तब कहा छांह मे काहेकी में बैठा है तो बोला बे और कोई देखना यहसुन बादशाह प्रसन्नहुआ इति॥ एकबेर कचहरी में एक मनुष्य घोड़ा बेचने आया तो तारीफ़ करके इनसे ५००) रु० लेगया कईदिन बाद याद आया तो बोले वह घोड़ा लेकर न आया तो बीरबल ने पूछा उसका नाम भी पूछा तो बोले नाम तो नहीं जानते तो कहा तुम बड़े उल्लू हो जो बिना नाम ग्राम पूछेही रुपये देदेते हो तब बादशाह रिसाकर बोले भलाजी जो वह घोड़ा लेआया तो? तो फिर वह चूतिया जो बिनजाने पूछे रुपये लेगया फिर रुपये लेकरआवे मेरा तो एक उल्लू खालीजाने का नहीं है बादशाह सुन चुपहोरहे इति॥ एकबेर बीरबल से पूछा कि हथियारों मे हथियार क्या है तो कहा जहांपना औसान, तो कहा हथियार भी तो कहु तो बोला हजूर हजार हथियार भी धरे हों पर औसान न हो तो किस काम के हैं तो इस बात को याद रख इसने बीरबल पर हाथी बेधड़क छुटवादिया तो उससमय

वीरवल को यही औसान आयो कि एक कुतिया इसके पास बैठी थी उसकी टांगपकड़ उठाय फेंकके हाथी के शिर से मारी तो हाथी उसके (कॉयँ) शब्द को सुन चमकके उलटा फिर ऐसा भगा कि कितनेही आदमी मारे इति ॥ एक तसवीर में शेर का कान मनुष्य के हाथ में पकड़ा देख वीरवल से कहा देखलो आदमी कैसी शै है तो जवाबदिया जनाव इ… नेवाला भी तो आदमीही है बादशाह सुनकर बोले सच है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निवन्धेऽष्टषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६८ ॥

अथ ऊनसप्ततितमः प्रदीपः ॥

एकसमय बादशाह की कचहरी में वीरवल का बहनजा… चतुरा गया और वीरवल की बुराई कर कहनेलगा कि मे… मामा को क्या आता है यदि मैं उनकी जगह में रहजाऊँ त… आप का उनका काम देदियाकरूं बादशाह बोले अच्छा सवे… की कचहरी में तूही रह जब वीरवल आया तो उसे जवा… हुआ कि तुम्हारा काम देदेवेगा आप जाइये तो उसने कह… अच्छीबात है सोही बादशाह ने पूछा तेरा नाम क्या है त… कह (चतुरा) तो बोले जो चतुरा से कोई मूर्ख झगड़पड़े त… क्या करे वह सुन कुछ न कहसका और चुप होकर चल… लगा तब बादशाह ने कहा या तो इसका जवाब शामत… लाना तुमको मोहलत दी है नहीं फांसी रखदिया जायगा तौ… सवेरेही की कचहरी में जवाब न देकर सरकार का बड़ाभा… नुक्सान किया है तब तो धोती मेंही दस्त निकल पड़ा औ… डरता कांपता जैसे तैसे वीरवल के पास जाय पैरों में गि…

निजकथा कही तो वीरवल बोले क्या डर है घवरा नहीं तब आप कचहरी में गया तो बादशाह खफा होकर बोले वीरबल वह कौन अहमक चला आया था जरासी बात के कहने में चुप हो चलदिया तब वीरवल बोला कि हजूर ने क्या फरमाया था तो बोले कि कहा था किसी अहमक से कामपड़जावे तो क्या करे तब वीरवल बोला कि हजूर जवाब हो तो गया कि चुप हो रहे यह सुन बादशाह खुश हुए और वीरबल को इनाम दी ऐसे २ बहुत से प्रसंग हैं वीरबलनामेआदिग्रन्थों में देखने यहां ग्रन्थ बढ़ने की शंका से संक्षिप्त थोड़े सेही लिखे हैं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे ऊनसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ६९ ॥

अथ सप्ततितमः प्रदीपः ॥

कालिदासो गिरां सारं कालिदासः सरस्वती ॥
चतुर्मुखो यथा साक्षाद्विदुर्नान्ये तु मादृशाः ॥ १ ॥

कविवर श्रीकालिदासजी गीर जो वाणी है तिसके सार तत्त्वरूप हैं और कालिदासजीही साक्षात् सरस्वती हैं ऐसे चतुर्मुख ब्रह्माजीही जानते हैं और मुझ समान मन्दमति कोई क्या जानेंगे यह मल्लिनाथ कविश्रेष्ठजी की टीका की आदि मे उक्ति है ॥ और भी एकसमय निज २ कवित्त में विवाद करते दण्डी और कालिदासजी की मध्यस्थ आय सरस्वती जी उनके विवादनिर्णय में यह वाक्य बोलीं (कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी पुनः पुनः) अर्थ कविदण्डी है कविदण्डी है कविदण्डी है इस में संदेह नहीं यह सुन दुःखपाकर क्रोध से कालिदासजी बोले कि (अहंरण्डे अहंरण्डे) हे रांड़ में हूं २

तब सरस्वतीजी यथार्थ कह बोलीं कि (त्वं तु मद्रूप एव हि) अर्थ तू तो मेरा स्वरूपही है ऐसे इस सरस्वतीजी के वचन से निश्चय निर्णय होगया कि कालिदासजी साक्षात् सरस्वतीही हैं इसपर इनकी कथा विस्तार से कहीजाती है एक राजा के घर कन्या अति उत्तम गुणोंवाली उत्पन्न भई वह चौदह विद्या निधानभई जब व्याहहोने योग्य भई तो उसके पिता ने उसका नाम भी विद्याही रक्खा था और यह प्रतिज्ञा की कि जैसी यह गुणवती है ऐसाही सर्वगुणसम्पन्न इसके लिये श्रेष्ठवर देखनाचाहिये यह आज्ञा देकर उसने नाई पुरोहित भेजे वे जहां तहां भटकते फिरे पर उसके समान वर कहीं नहीं पाया तब तो वे लाचारहुए और यही विचारकिया कि अब इसके लिये कोई महामूर्खही देखनाचाहिये इस विचार में चले तो वन में एक लड़का बकरी चरायरहा था उसे वस्त्र आभूषण दिखाकर बोले आव हमारे साथ चल तुझ को ये पहरावेंगे तो वह बोला मैं बकरी घर छोड़कर आता हूं यह कहकर चलागया उन्हों ने कहा यह तो ज्ञानीसा है इसे बकरी घर छोड़ने की चिन्ता है इससे आगेचलें तो चले आगे जाकर दूसरा लड़का देखा तो वह बकरी चरायरहा और जिसवृक्ष की डाली पर बैठा उसीही को काटरहा था तो इसेदेख बोले कि यह ठीक है ऐसे विचार उसे वस्त्र आभूषण भोजन दिखाया तो वह देखतेही बकरियों को वहांही छोड़ और कुल्हाड़ी हाथ से फेंक उनके साथ होलिया वे प्रसन्नहुए लेचले राह में इसे नहवाय खवाय पहिराय तैयारकिया और उससे कहा तेरी परीक्षा होगी तो तुझ से पूछेंगे कि (अजीर्णे किं वदौषधम्) अजीर्ण में कहो

क्या औषध है तब तू कहना (वारि) अर्थात् जल है सोही वह वारि २ ऐसे यादकरतारहा और राजा की सभा में पहुँचा तो इससे (अजीर्णे किं वदौषधम्) यह प्रश्न हुआ तो इसको वारि के स्थान में (चारि) ऐसा यादरहा तो इसने चारि कहदिया तब तो वे बोले कि यह क्या उत्तर हुआ तो पुरोहित ने बात सहारकर कहा कि ठीक कहा अजीर्ण में औषध चारि वस्तु शयन निद्रा पन्था वारि, ये चारि हैं यह सुनतेही सब बड़े प्रसन्नहुए और विद्या के साथ इसका विवाह भी होगया फिर वे दोनों महल में एकान्त शयन स्थान में गये वहां विद्या ने इसके आगे सब पुस्तकें धरीं तो ये सबको देख २ कर अच्छा कह २ कर धरतारहा वह बोली कुछ पढ़के सुनाइये तो पढ़ना सुनना क्या था मौनहोरहे तब तो इसने जानलिया कि हाय इसको कुछ नहीं आता है इस मूर्खपति से तो विनापति के विधवाही रहना भला है यह विचारकर इनको खिड़की की राह से नीचे धकादेकर डालदिये ये जो गिरे तो नीचे एक प्राचीन मन्दिर भगवती का था उस देवी पर इनकी जिह्वा कटकर गिरी तो देवीजी प्रसन्नहो बोलीं (वरंब्रूहि २) यह किसने अर्धरात्रिसमय निज जिह्वा चढ़ाकर मेरा पूजन किया मैं उसपर बड़ी प्रसन्न हूं तो इन्हों ने समझा कि यह पूछती है तुझ को किसने गिराया यह विचार (विद्या) ऐसा कहा जा तेरे मुखमें चतुर्दशविद्या निवासकरें तो तिस समय से ये चौदहविद्यानिधान कालिदासजी भये तो लगे शास्त्रार्थ करने तब तो सर्वोत्तम कविराज भये राजा विक्रमादित्य की सभा में ये सर्वोपरि अध्यक्ष विद्वान्‌रहे एक दिन राजा

इनको साथले शिकार को गया तो तहां साँझ होगई तो राजा को रानी का मुख देखकर भोजनकरने का नियम था तो कालिदासजीने उससमय राजा की दया विचार सरस्वती का ध्यानकरके रानी का चित्र लिखा राजा उसे ज्यों का त्यों देख जांघपर तिल का चिह्न निहार समझा कि यह मेरी रानी से अवश्यही संग करता है नहीं इसे तिल क्योंकर मालूम होता यह शोच घर आकर आज्ञा की कि कालिदास को लेजाकर मारआओ यह राजा की दुराज्ञा सुनतेही नगर में कोलाहल मचगया और पण्डितों ने कुछ देकर बधिकों के हाथ से इन्हें बचाया एक पण्डितने निजपुत्री बनाकर रक्खा। किसी दिन राजा शिकार को गया वहां रात्रि होगई तो वहां एक वृक्ष के नीचे ठहरा उसपर एक वानर चढ़ाबैठा था बोला भाई यहां सिंह आवेगा तो तुझे खाजायगा इससे तू भी इस वृक्षपर आजा तो राजा उसके पास जायबैठा वानर ने कहा सो लेओ तो सोया तभी सिंह आया वानर से बोला कि इस मनुष्य को डालदेव में फिर तुझ से वैर नहीं रक्खूंगा वानर बोला ऐसा नहीं हो-सकता तैंने बारहवर्ष वैररक्खा और चौबीसवर्ष रक्खे तो क्या होना है और जो कुछ हो तो होवै पर मैं आये अभ्यागत को अपने बदले में तुझे बलिदान कभी नहीं देऊँगा निदान सिंह बहुतही हैरान होकर चलागया पर वानर ने ऐसी कुमति न विचारी इतने में राजा जगा तब वानर ने साराहाल सिंह के आने का कहा और प्रार्थना की कि कभी ऐसा तू न विचार लीजियो वह बोला कभी नेकी के साथ बदी होसक्ती है ? तू निर्भय सोरहु मैं जागरहा हूं इसके विश्वासपर वह सोरहा तो

सिंहआया और राजा से बोला तू इस वानर को गेरदे मेरा इसका बहुत दिन का वैर है सो सफल होगा तो राजा बोला चल २ कभी ऐसा होसक्ता है? तब सिंहने कहा हे राजन्! तेरी इस वनचारी वानर के गेरदेने में तो कुछ हानि नहीं और न गेरने में महाही हानि है क्योंकि मैं तेरे इस घोड़े को खाऊंगा मुझ को तो एक जीव की बलि लेनीही है इसमें तूही हानि लाभ विचार ले तब तो राजा ने कुमतिवश से यही विचारा कि यथार्थही इस वानर के गेरदेने में तो कुछ ऐसी हानि नहीं देख पड़ती पर घोड़े को जो यह खाजायगा तो सरासरही पांचसौ रुपये के घोड़े का नाश है यह विचार सोतेहुए वानर को धक्का दिया तो वानर की जाति चपल होतीही है वह सँभलकर उस से भी ऊंचा हो बैठा सिंह तो लजाय मुख मोड़ चलागया और राजा नीचा मुख किये चित्र के समान वहीं होरहा आंख मिलाने और बोलने की सुधि न रही निदान वानर नेही (अरे तेरी करणी तेरी राह। मेरी करणी मेरी राह) ऐसा कहकर उसे उतारा पर वह लजकायी जाने में भी सकुचाया तब वानर ने इसको (श्वा, से, मी, रा) यह समस्या कहकर घर की ओर किया तब तो यह (श्वासेमीरा २) कहता नगर की ओर हुआ लोग इसके पीछे २ (राजा पागल होआया) कहते भगे तो इसे पकड़कर महल में लेगये वहां भी यह हरएक बात में (श्वासेमीरा) ही कहतारहा तो लोग लाचार हुए और विचार लिया कि जब (श्वासेमीरा) इस समस्या का अर्थ अलग २ इसे बताया जावे तभी यह होश में आवेगा तो पण्डितों को बुलवाकर कहा (श्वासेमीरा) का अर्थ करो तो किसी से

उसका अभीष्ट अर्थ न हो सका तब तो सबों को (कालिदास जी) का स्मरण हुआ कि विन उनके इन इस समस्या के पदों का अर्थ कौन करे यह कहकर सबके सब हा ! कालिदासजी २ कह कर पुकारे वह वृद्ध ब्राह्मण पण्डित जिसने उनको पुत्री बनाय छिपाकर रक्खे थे वह बोला जो उनकी जान बख्शी जावे तो मैं हाजिर करूं लोग बोले जान क्या आप को और इनाम बख्शी जावेगी तो ब्राह्मण उनको लेआया वे कोने में एकान्त पड़दा करके स्त्रियों की भांति जाय बैठे और राजा से बोले क्या हाल है तो उसने वही (श्वासेमीरा) कहा तब बोले अलग २ कहो तब तो राजा ने कुछ सचेत होकर (श्वासे-मीरा) कहा तो अर्थ किया कि (मीरा) मीर जो प्रमाणदायक श्रेष्ठ पुरुष हैं वे (श्वासेएवसन्ति) श्वास लेतेही हैं अर्थात् उन सत्पुरुषों का श्वास लेनाही जीवन है वे जब चाहें तब श्वास रोक ब्रह्माण्ड में प्राण चढ़ाय परमधाम को जासक्ते हैं तात्पर्य्य यह कि उनके मरने में तो कुछ लगता नहीं है और तुम्ह स-मान मित्रद्रोही पातकी तो अभी बहुत दिन पाप भोगेंगे इस स्वांग भरने से क्या है यह अपूर्व अर्थ सुनतेही राजा की आंखें खुलगईं और फिर (श्वासेमी-रा) कहा तो अर्थ किया कि अमी-पुरुषाः ये जन जो (रा) दानी हों तो (श्वासे-सन्ति) जीवन में परायण हैं अर्थात् जो दानकरें तब तो इनका जी-वन सफल है नहीं तो ये सब (श्वाऽऽसे) श्वा-श्वान उसके आसे स्थान में हैं अर्थात् जो दान सत्कार भलाई न करें तो वे कुत्ते के समान जीते हैं, यह अर्थ सुनतेही राजा ने इनके चरण आय पकड़े और फिर पूछा कि, श्वासेऽमीरा तो अर्थ किया

कि अमीराः—पुरुषाः अर्थ अम जो रोग तद्वत् अमी अर्थात् रोगी तिस अमिन्—रोगी को जो औषधादि राति—ददाति देवे सो अमीर ऐसे जो अमीर जन जीवन देनेवाले हैं वे (श्वासे) श्वास में हैं अर्थात् उन्हीं का जीवन सफल है अथवा अमीर—जो वैद्यजन हैं वे (श्वासे २) श्वास २ में औषधि देते हैं अर्थात् रोगी की सांस जवतक आस समझकरके बराबर उपाय करते हैं और तूने अच्छे वीछे वानर को मरासमझ ढकेलना विचारा तो तेरी क्या गति होगी यह सुनतेही राजा कम्पायमान हो इनके लपटगया और गद्गद वाणी से फिर पूछा (श्वा, से मीरा) तो कहा कि (श्वाऽसे मीरा) श्वा—श्वान, तो हैं वह आसे—आसन अर्थात् स्थान ठहराने में अमीर—वैद्य है कुत्ते की जीभ में अमी होता है उससे व्रण आदि रोग जाते हैं इस से वह भी तुझ से अच्छा जो जीवदान देता है यह सुनतेही राजा बोला कि आप ने मेरा अभीष्ट कह सन्देह निवृत्त किया और चरणों में साष्टांग प्रणाम कर फिर पूछा कि अब आप कृपाकरके इन अक्षरों को अलग २ प्रत्येक अक्षर का भिन्न २ विस्तार अर्थ करके इन चारों अक्षरों को मेरी जिह्वा से छुटाइये यह कह फिर (श्वा से मी रा) कहा तो प्रथम (श्वा) पर यह श्लोक कहा॥

श्वासःसारःशरीरस्य वाचासारो महीपते॥
वाचश्चलन्ति ये मूढास्ते नरा नारकाःखलु॥१॥

इस शरीर के श्वासही सार बलरूप है और वाचा वाक् वाणी भी सारही है यहां वाचा वाक् जैसे निशा दिशा हों तैसे ही जानना भागुरि आचार्य्य के मत से और हे राजन्!

जो जन (वाचः) वचन से चलजाते विचलजाते अर्थात् अपने वचन को पलटजाते हैं वे निश्चयही नर नरकभागी होते हैं यह अर्थ सुनतेही राजा ने वह (श्वा) तो छोड़दिया और (सेमीरा २) कहतारहा तो फिर कालिदास ने यह कहा ॥

सेतुबन्धे कृतं यद्वै यद्रामेश्वर एव वा ॥
तत्सर्वं क्षयमाप्नोति वाक्याद्विचलिते नरः ॥ २ ॥

जो सेतुबन्ध में किया उत्तम कर्म्म दानादि है और जो रामेश्वरजी में किया पुण्यादि कर्म है यह सब वचन से विचल जाने से पुरुष का क्षीण होजाता है यह सुन फिर वह (मीरा२) ही कहता रहा तो उसपर कालिदास ने यह श्लोक कहा जैसे ॥

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च यश्च विश्वासघातकः ॥
त्रयो वै नरकं यान्ति यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥ ३ ॥

मित्रद्रोही कृतघ्न किये को हतने विगाड़नेवाला और जो विश्वासघात करनेवाला जैसे तैंने वानर से किया है ये तीनों नरक में जाते हैं जबतक सूर्य्य चन्द्रमा हैं इतना सुन वह (रा२) ही कहता रहा तो फिर कालिदास ने कहा ॥

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिदमात्मनः ॥
पश्चात्तापयुतस्त्वं वै प्रायश्चित्तं समाचर ॥ ४ ॥

हे राजन् ! तू अपने इस संवाद को वारंवार स्मरणकर तथा मन में पश्चात्ताप कर २ के अर्थात् पश्चात्ताप से भी पाप की शुद्धि धर्म्मशास्त्र में लिखी है इससे युक्त होकर तू यथाविधि इस पाप की निवृत्ति के लिये प्रायश्चित्तविधान कर यह सुनते ही राजा ने कालिदासजी को निजकण्ठ से लगाया और फिर उनको पूर्ववत्सर्वोपरि विराजमान किये इसीप्रकार राजा से

इनका बहुतकाल संगरहा और बड़े २ आश्चर्य उपाख्यान इनके हैं जैसे एकसमय की वार्ता है कि कालिदासजी लोक रीति से रसिक भी थे तो एक प्रिया के पास जाया करते और उसी के पास राजा भी जाया करता तो राजा को मालूम होगया पर ये कविराज उनके कहने से कब कायल होते थे तो उन्हों ने उस वेश्या से कहा कि कालिदासजी आवें तो तू कहना स्वामी ये बाल तुम्हारे मुखपर के मुछ को चुम्बन समय में बुरे लगते हैं तब उसने वैसाही कहा तो कालिदास बोले प्यारी अभी मुड़ाकर आता हूं मुड़ालिये प्रातःकाल कचहरी में गये तो लोगों ने पूछा क्या कारण तो कहा हमारी पितामही की सुनानी आई है फिर राजा ने वह समस्या बताय उनपर आक्षेप करके यह श्लोक ॥

कालिदासः कविश्रेष्ठः कस्मिन् पर्वणि मुण्डितः ॥

कालिदासजी श्रेष्ठ कवि किस पर्व में मुड़े यह कहा तो कालिदासजी ने जानलिया कि राजा ने जानकर यह आक्षेप किया है तो बोले इसका उत्तर कल्ह कहेंगे फिर उस वेश्या से बोले कि राजा को गधेकी बोली अच्छी आती है तू बुलवाना तो वह रूठ बैठी सांझ को राजा गया तो कहा अलगही रहिये कारण पूछा तो कहा कि आप पहले गधे की बोली बोल दीजिये राजा ने जानलिया कि कालिदासजी पहुंचे तो घनी ही समझाई पर वह कब मानती थी निदान लाचार हो हुचू२ कहनाही पड़ा सबेरे कचहरी में कालिदासजी ने आय ॥

गर्दभा यत्र गायन्ते तस्मिन् पर्वणि मुण्डितः ॥ १ ॥

जहां गधे गाते हैं उसी पर्व में मुड़े यह अर्धश्लोक उत्तर में

कहा तो सब सुनकर सन्न होगये राजा ने सकुचायके नीचे मुँह करलिया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७० ॥

अथ एकसप्ततितमः प्रदीपः ॥

तथा एकबेर कालिदासजी स्नानकरके चले आते थे तो धोती में मछली बांध आसन लपेटके बगल में दबाये चलेआते थे तो राजा ने देखकर पूछा ॥

कुक्षौ किं मम पुस्तकं सजलता केयं रसोद्भावना
गन्धः केति सराक्षसाहतिभवोद्गाथाभवो भाव्यते ।
इत्थं सम्प्रतिदर्शयेति गदितो राज्ञा तु तं दर्शितं
सद्यो वाक्पयातदेवविमलं सत्पुस्तकं निर्बभौ ॥ १ ॥

राजा ने पूछा कुक्षि में क्या है तो बोले हमारी पुस्तक है राजा बोला तो फिर जल से क्यों टपक रही है तो कहा यह कथा का रस झररहा है फिर कहा गन्ध कैसा मृतक का सा आता है तो कहा राक्षस मारेगये इस कथा का गन्ध है इत्यादि कहकर फिर राजा ने कहा तो दिखादीजिये फिर दिखाया तो सरस्वती की कृपा से पुस्तक ही होगई इति ॥ राजा भोज की सभा में यह नियम था कि कोई नया श्लोक बनाकर लेजावे उसको लाख रुपये मिलें तो एक साधारण पण्डित दरिद्री थे उनकी स्त्री बोली तुम भी तो कोई श्लोक बनाकर लेजाओ लोग लाख रुपये ले२ कर आते हैं हमारे यहां अन्न का संदेह होरहा है फिर यह विद्या किस काम आवेगी तो ब्राह्मणी के कहने से उसने ॥

भोजनं देहि मे राजन् घृतशाकसमन्वितम् ॥
हे राजन्! मुझ को भोजन दे उसके साथ घृत और शाक भी दे यह साधारण आधा श्लोक बनाकर लेचला तो राह में कालिदासजी मिले पूछा आज कहां तो बोले राजा को श्लोक सुनाने जाते हैं तुम भी कवि हो, सुनके इसे सुधार लेवो कालिदास ने सुना तो कहा भाई यह तो आधाही है इसमें दो पद ये ॥

माहिषं च शरच्चन्द्रचन्द्रिकाविशदं दधि ॥ १ ॥
और भैंस का दधि भी साथ दे जो शरद् के चन्द्रमा की चांदनी के समान कान्तिमान् निर्मल है यह और लगाय वह लेगया राजा को सुनाया राजा ने पिछले दो पद सुनके जानलिया कि इसको कहीं कालिदासजी मिलगये नहीं उनके विना सामने कहे अगले पदों को पिछले पदोंकरके अति रसीले कौन बनाता निदान लक्ष रुपये ब्राह्मण को दिये ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेएकसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७१ ॥

अथ द्विसप्ततितमःप्रदीपः ॥

तथा एक दिन राजा ने कहा कालिदासजी तुम बड़ेभ्रष्ट हो वे बोले हम भ्रष्ट के कहे का बुरा नहीं मानते इसपर उन्हों ने फटी सी गुदड़ी लपेट राजा को यह स्वांग दिखाया ॥

भिक्षो! कन्था श्लाघते नाहि नहि शफरीजाल मत्स्यान् किमत्सि इति ॥

अथवा। भिक्षो! मांसनिषेवणं प्रकुरुषे किं तेन मद्यं विना मद्यं चापि तव प्रियं किमधुना वाराङ्गना

भिः सह ॥ वेश्याप्यर्थरुचिः कुतस्तव धनं चौर्य्येण द्यूतेन वा चौर्य्यं द्यूतपरिग्रहोऽपि भवतो भ्रष्टस्य कान्या गतिः ॥ १ ॥

तो राजा ने कालिदासजी को फकीर बने यवनों के घर में भिक्षा मांगते देखकर कहा अरे भिक्षुक ! तू क्या मांस भी भक्षण करता है तो कालिदासजी बोले मद्य विना खाली मांसही से क्या होता है ? राजा-तो मद्य भी तुझे प्रिय लगता है ? कालिदास-हां २ साथ में वेश्याजनों के ॥ राजा-तो फिर धन तेरे पास कहां है ? कालिदास चोरी कर या जूआ खेलकर लाता हूं इतनी सुन राजा बोला अरे ! तेरे में इतने बड़े भारी गुण हैं तो कालिदासजी बोले हे राजन् ! भ्रष्टजन की और क्या गति है इति ॥ तथा एकसमय चार लुच्चे विन पढ़े ब्राह्मणों ने भी निज भाषा में हाथी को देखकर यह साखी बनाई ॥

आगे पीछे पूछा हालै । जाणें रात अंधेरो चालै ॥
कोटी हूंणा मोटा पाय । जाणें अंधेरो मूली खाय ॥ १ ॥

इसमें एक ने तो सूंड़ देखकर प्रथमपद बनाया दूसरे ने कालादेख दूसरा बनाया और तीसरे ने पांव देखकर तीसरा बनाया और चौथे ने दांत देखकर चौथा बनाया तो ये लेकर सुनानेचले तो राह में कालिदासजी बोले आज किधर कृपा की तो बोले राजा को श्लोक सुनाने जाते हैं तू कह तो बोले हमें सुनावो तो सुनाया तब चौथे पद को अतिही असभ्य देख वहां ॥ बांध्यो सोहै राजदुवार ॥ यह लगाया तो उन्हों ने जब कहा तो सुनकर सभा के सबजन हँसने लगे फिर ठठोली से कहा कि चौथे पद में जरा कसर रही तब उन्हों ने कालि-

दासजी को बताकर कहा यह इसने ऐसी तैसी करवाई फिर अपना चौथा (जाएँ अंधेरो मूली खाय) कहा तो सब बोले यह ठीकहै ऐसा कह राजा ने उनको भी सौ रुपये दिये इति॥ इसी प्रकार से इनका बहुत सा प्रसंग है थोड़ा सा विज्ञप्तिमात्र यहां लिखा और अन्यत्र प्रसिद्ध है विस्तार की भय से नहीं लिखते हैं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे द्विसप्ततितमः प्रदीपः॥ ७२॥

अथ त्रिसप्ततितमः प्रदीपः॥

भास्करो भास्करः साक्षात्॥

भास्कराचार्य्य साक्षात् भास्कर सूर्य्यही हैं इसपर इनका इतिहास है श्रीभास्कराचार्य्य पूर्वअवस्था में ब्राह्मण के पुत्र थे जन्मतेही इनका पिता मरगया माता पालन करती रहीये गुरुजी से पढ़ने जाया करते वे इनकी पाटीपर (ॐ नमः सिद्धम्) यह लिखदिया करते ये उसे वहां याद करते तथा लिखते और घर आकर भूलजाते फिर वही लिखाते घोखते फिर भूलजाते लिखवाते ऐसेही इनको बारहवर्ष उस (ॐ नमः सिद्धम्)ही के पढ़ने लिखने में व्यतीत हुए माता जानती रही कि यह नित्य २ नया २ लिखवाता और सीखलेता है ऐसेही फिर दैवयोग से लीलावती के स्वयंवर का पत्र इनके गुरु के पास भी आया तो वे विद्यार्थी साथ लेगये ये भी उनके साथ हो लिये वहां पहुंचे तो सभा भी भारी धूमधाम से सजीहुई थी जिधर तिधर बड़े २ राजा महाराजा विद्वान् निज २ विद्यार्थियों के ठट्टलिये बैठे आपस में अनेकप्रकार से शास्त्रार्थ कर

रहे थे ये भी उनमें जा बैठे तो सब शिष्यों का तो ध्यान सभा की सजावट तथा लीलावती की शोभा देखने पर था और इन महात्मा का तो केवल गुरुजी के चरणकमलही में भ्रमर समान लगा था तो ये उनके चरणोंही को निहारते रहे और लीलावती मानो साक्षात् विद्या सरस्वती वा रम्भा लक्ष्मी हो पुष्पमाला लिये निज योग्य पति को चीन्हने के लिये सभा में आई और क्रम से सबकी ओर दृष्टि करतीरही लोगों ने अनेकप्रकार की चेष्टा निज अभीष्ट के लिये करी जैसे किसी ने कमल का फूल भौंरे सहित दिखाकर बताया कि मैं तुझपर इसी तरह लुभायमान रहूंगा और कोई दूसरे की ओर हाथ धर पीछा फेर झुकता था कि मैं तेरे साथ ऐसेही पासों से खेला करूंगा तो तिस ने तिन सबों को मूर्ख जानकर अर्थात् भौंरा अज्ञानी लोभी अकाल मरता मूर्ख और (अक्षैर्मादीव्येत्) इस वेद की आज्ञा से पासे खेलना अयोग्य जान तिन सबों को त्यागदिये और इनके पास जो कुछ भी चेष्टा नहीं करते और एक दृष्टि लगाये श्रीगुरुचरण सरोज की गन्ध के लाभ के कारण लोभी होरहे इनकी ओर निहारती वह वहांहीं चित्र की पुतली के समान कुछ काल स्थित रही लोगों ने बहुत सी चेष्टा की और आपस में चर्चा भी की कि यह किस मूर्ख के पास जा ठहरी है पर उसने किसी की कुछ भी न सुनी और इनसे बोली कि आप से मैं कुछ पूछा चाहती हूं वे बोले क्या कहती है कहु तब उसने (शास्त्रेषु कःसारः) अर्थ सब शास्त्रों में साररूप वस्तु क्या है; यह सर्वविषयगर्भित, प्रश्न किया तो इन्हों ने इसे अपना बहुत दिन से पढ़ा (ॐ) यह अक्षर सुना दिया

तो उसने विचारा कि देखिये कैसे भारी विद्वान् हैं जो मैंने तो कुल्हिया में हाथी लाने के समान सर्वशास्त्र सारांश एकही वाक्य से संक्षिप्त करके पूछा और इन्हों ने अतिसंक्षिप्ततर एकही अक्षर से उसका उत्तर कहदिया सो यथार्थ है कि सर्वत्र (ॐ) अउम् इन तीन अक्षर ब्रह्मा, विष्णु, महेश वा जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति अथवा विश्व तैजस प्राज्ञ इत्यादिरूप से ॐकारमात्रही सब जगत् है जैसे रामगीता में श्रीरामजी ने कहा है ॥

पूर्वं समाधेरखिलं विचिन्तयेदोंकारमात्रं सचराचरं जगत् ॥ तदेव वाच्यं प्रणवो हि वाचको विभाव्यते ज्ञानवशान्न बोधतः ॥ १ ॥

हे लक्ष्मण! समाधि के पहले यह सब चर अचर जगत् ॐकारही से उत्पन्नहुआ है ऐसाजाने यह जगत् तो वाच्य और प्रणव ॐ यह वाचक है सो ज्ञानवश से जानाजाता है कुछ जाननेमात्र सेही नहीं किंतु अभ्यास से इति ॥ इत्यादि से मुझ को ज्ञातहुआ कि आप परिपूर्णही विद्वान् हैं पर मैं एक प्रश्न और भी आप से करना चाहती हूं तो ये बोले दो कर तब तो फूलीअंग में न समाई और (इदं जगत्सदसद्वा) अर्थ यह जगत् सत् सत्य वा असत्य है इति॥ यह वेदान्तविषयिक प्रश्न किया तो उन्हों ने उसके उत्तर में अपना पढ़ा लिखा हुआ दूसरा अक्षर (न) यह कहा तो उत्तर हुआ कि (न सत् मायाकल्पितत्वात् असत् अपि न ब्रह्मरूपत्वात्) अर्थ सत् नहीं है मायाकरके रचित होने से और असत् भी नहीं है ब्रह्मरूप होने से "सर्वं खल्विदम्ब्रह्म नेह नानास्ति किंचन" इति ॥ अर्थ सब जगत् ब्रह्मरूप है इसमें नानापन—भेद नहीं है

इस उत्तर से वह निरुत्तर हो बोली मैंने वेदान्त के गर्व से जो आप से प्रश्नकिया उसका भलीभांतिही उत्तरपाया पर तब भी मैं निर्लज्जता से और प्रश्न करती हूं यह कह फिर उसी विषय में (-तर्हीदंकिम्) तो फिर यह क्या है जो प्रत्यक्ष भासमान हो रहा है तो तीसरा अक्षर "मः" कहा तो समाधान होगया कि यह 'मः' मा अस्यास्तीति मः—मायासहितो जीव इत्यर्थः । अर्थ मा—माया जिसके हो सो (म) अर्थात् यह मायासहित जीव है इसने माया के आश्रय होकर सब जगत् को भासित कररक्खा है तब तो वह बोली कि मैं निश्चिन्तहुई और आप मेरे पति होचुके यह कहकर माला गले में डालदी और प- रीक्षा में किसी प्रकार की कसर न रहे इससे कहा महाराज ! इसका उत्तर और कह दीजिये यह कह कि मायातमनेन— इस प्रश्नोत्तर का फल क्या है तो इन्हों ने भी निजशेषरहे (सिद्धं) ये दो अक्षर इकट्ठे ही कहदिये तो फल होगया कि (सिद्धं) यह सिद्धमन्त्र है अर्थात् 'ॐ' आदि का विचार करने से सिद्ध—मुक्तरूप हुआ ब्रह्म को प्राप्त हो यह जीव जन्म मरणरूप इस संसार से छूटजाता अर्थात् मोक्षरूप परमश्रेष्ठ फल पाता है इत्यादि समाधान निज बुद्धि सेही विचार कर वह चुपहोरही और विवाह भी इनके साथ धूमधाम से हो- गया फिर गुरुजी के चरणों में आकर दण्डवत् प्रणाम किया तो गुरुजी चिरंजीव यह अशीष दी और कहा भाई तेरे परि- श्रम तथा गुरुभक्ति के प्रताप से इसके साथ विवाह तो हो- गया अब तेरा जीवन प्रारब्ध के आधीन है पर मैं तुझ को यह यत्न बताता हूं जबतक तू मौन रहैगा तबतक नहीं मारा

जावेगा (मौनं सर्वार्थसाधनम्) अर्थ मौन रहने से सब अर्थ सिद्ध होते हैं इससे तू मौनधारण करले तो गुरु की आज्ञा से ऐसाही किया राजपुत्री के साथ महलों में रहनेलगे मौन रहे तो उसने जाना-मुझ मन्दमतिवाली दासीपर कृपा करके कभी बोल भी लेवेंगे यह विचार इनकी नित्य २ नई २ सेवा करतीरही इसीप्रकार बहुत काल बीते एक दिन उनको ऐसा बुलाव लगा कि बिन बोले रहा न गया तो बोले आज रोटी कब करोगी तो तिसने सुना कि स्वामी कुछ कहते हैं तो झट दौड़ इनके पास आय बोली स्वामिन्! क्या आज्ञा है तो इन्हो ने भूखा मरना विदित किया तो बोली स्वामिन्! निजकृत ग्रन्थ की दो पंक्तियाँ शुद्ध करनी रही हैं फिर अभी आपके लिये भोजन तैयार करती हूं तब ये बोले कि लाव ये पंक्ती हमही शोधलेंगे तब तो तिसने निजजीवन धन्यमाना कि अहोभाग्य बहुतसमय परिश्रम करके बनाये अक्षर मेरे स्वामी के दृष्टिगोचर होंगे यह कहती निज भाग्य को सराहती झट भोजन तैयार करती भई और उधर उन्हों ने उसका बनाया ग्रन्थ सब आद्योपान्त शोधडाला इसप्रकार कि जहां २ उसमें (ॐ नमः सिद्धम्) ये अक्षर देखपड़े उनको तो यथावत् रहने दिये बाकी सब ग्रन्थभर पर लेखनी फेरदी और आप भोजन करनेको गये और उसने भी चाव २ से आकर निजग्रन्थ देखा तो शुधाशुधाया लोपलाप सफाचट्ट पड़ा है देखतेही उसने ॐ नम आदि से जानलिया कि इनको इन पांच अक्षरों से अधिक और कुछ आता नहीं है-हाय २ इन पांच अक्षरों केही वश होकर मैं सर्वथा ठगाई गई हाय २ अब क्या करूं ऐसे पति से तो बेपति

विधवाही रहना भला है यही विचारकर पेट में दर्द २ करके पुकारी और कहनेलगी कि फलाने कुयें का जल आप लायके पिलावो जब आराम होवे तब वे पानी लेने को चले तो आप भी उनके साथ हो ली कि वहांहीं पीलेऊंगी जिससे चक पड़ेगी कुयें पर पहुँच जो लोटा फांसा तो तिसने उनको कुयें में ढकेल दिया वे गिरे और शिर फूट रुधिर निकलके एक मूर्ति उसमें देवी की थी उसपर गिरा तो वह बोली (वरंब्रूहि२) वर मांग२ इस कुयें में मेरी रुधिर से पूजा की है तब तो इनको विद्या ही की इच्छा थी सो प्रार्थना की देवी ने तथास्तु कह वर दिया तो समस्त विद्या स्फुरण भई तब तो इन्हों ने पहले उसके बनाये ग्रन्थ का पाठ किया और फिर उस पर निजभाष्य रचकर कथन करनेलगे तो वह ऊपर बैठी थी उसने सब सुना तो पश्चात्ताप करनेलगी कि हाय ये तो वेही साक्षात् भगवान्‌रूप विद्वान्‌हैं मेरे सत्य देखनेको इन्हों ने यह चरित्र रचा है यह कह शीघ्रही बड़ा यत्न करके कुयें मेंसे निकाल और हाथजोड़ नीचा मुखकर गद्गद वाणी से बोली कि क्षमाकरो २ आपका मुझसे बड़ाही अपराध कियागयाहै वे बोले नहीं२ तैंने हमारे पर बड़ाअनुग्रह किया तेरे प्रसाद से हमारा कल्याण होगया फिर वह पछताय हाय खाय बोली कि अब मेरी कौन गति होगी वे बोले भगवान् भला करेंगे निदान वे दोनों फिर यथावत् रहने लगे वे भास्कराचार्य्य भये और यह लीलावती विख्यात भई इसी के नाम से जहां तहां सम्बोधन दे कहा लीलावती ग्रन्थ बनाया सो प्रसिद्ध है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां ॐनमःसिद्धं प्रतिपादनंनाम त्रिसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७३ ॥

अथ चतुःसप्ततितमःप्रदीपः ॥

धन्यः स्वामी सेवकार्थेऽसुदाता धन्यश्चासौ सेवकस्तद्विधोऽभूत् ॥ धन्या नारी प्राणदात्री च पत्युर्धन्यः पुत्रः पितृवश्यो हि यः स्यात् ॥ १ ॥

वह स्वामी वा राजा धन्य है जो निज सेवक के अर्थ प्राण देदेवे और वह सेवक भी धन्य है जिसने स्वामी के अर्थ प्राण दिये ॥ तथा वह स्त्री भी धन्य है जो पति के हित प्राणदेती और पुत्र भी धन्य है जो पिता के वश्य हो प्राण देवे (दृष्टान्त) जैसे एक वर्धमान नगरी और वहां का राजा (रूपसेन) नाम था और वीरवर नाम से उसका महामन्त्री था वह अत्यन्त दयालु और स्वामिसेवा में परायण था वह रात्रि को राजा के पास से अपने घर को जाता था दैववश राजा के कुछ मन में आई तो बिन कहे उसके पीछे होलिया तो क्या आश्चर्य्य हुआ कि उस मन्त्री को एक अतिसुन्दरी स्त्री जो सोलह शृंगार किये रोती मिली उसने पूछा देवी तू कौन है क्यों रोती है तो बोली मैं राज्यलक्ष्मी हूं मेरा स्वामी यह राजा योगिनी के बलिदान में दिया जावेगा इससे अकालमृत्यु शीघ्र पावेगा तब तो वीरवर ने पूछा हेदेवि! कुछ ऐसा भी उपाय है जिससे राजा बचै और सौ वर्ष जीवे तो वह बोली पूर्व ओर एक देवी का मन्दिर है जो तू उस देवी को अपने पुत्र का शिर निज हाथ से काटकर भेट करै तो राजा सौवर्ष जीवे निज राज्यकरे किसी प्रकार का कोई फिर घात न होवे यह बात सुनतेही वीरवर अपने घर को आया राजा उसके पीछे २ रहा उसने निज स्त्री से सब हाल कहा उसने सुन पुत्रको जगाया और कहा बेटा

राजा तेरा शिरदेने से बचैगा तौतो राज्य भी यथावत् रहैगा यह सुन वह बोला माता एक तो आप की आज्ञा दूसरे स्वामी का काम तीसरे यह देह देवता के काम आवे तो इससे अच्छी कोई और बात नहीं है धर्मशास्त्र की भी आज्ञा है कि पुत्र निजवश का और शरीर नीरोग, लाभवाली विद्या, चतुर मित्र, आज्ञा में नारी ये पांच वस्तु मनुष्य को सुखदेनेवाली हैं और वे आज्ञाकारी नौकर, खोटाराजा, कपटीमित्र, कुमार्गिणीस्त्री ये चार वस्तु दुःखदायक होती हैं इससे इस काम में विलम्ब न करिये फिर उसने निज स्त्री से कहा कि तू प्रसन्नता से देती है? तब बोली मैं बहुत प्रसन्न हूं मुझे बेटा बेटी भाई मा बाप किसी से काम नहीं मेरी गति तो तुम्हीं से है शास्त्र की भी आज्ञा है कि नारी न तो दान न व्रत तीर्थादि से शुद्ध होती है किन्तु लँगड़ा, लूला, गूंगा, बहिरा, अंधा, काना, कोढ़ी, कुबड़ा जैसा उसका स्वामी हो उसका उसही की सेवा करने से धर्म है इससे जो विमुख है वह स्त्री नरक में पड़ती है जिसे मनुष्य से स्वामी का काम हो उसी का जीना सफल है और उसी से दोनों लोक में यहां वहां भला होता है इतना सुन उसकी पुत्री ने भी कहा कि जो माता पुत्री को विष दे और पिता पुत्र को मारे राजा सर्वस्व छीनले तो फिर किसकी शरणलेवे जो विचारा है उसमें देर न करो ऐसा विचार कर वे चारों देवी के मन्दिर को गये राजा भी छिपकर पीछे २ गया वे वहां पहुँच देवी की पूजाकर हाथ जोड़ वीरवर ने कहा हे देवि! मेरे पुत्र की बलिदेने से राजा की सौ वर्ष की अवस्थाहोवे इतना कह एक खांड़ा ऐसा मारा कि लड़के का शिर भूमि में गिरा भाई

का मरना देख उसकी प्यारी बहन ने निज कण्ठ में ऐसा खड्ग मारा कि रुण्ड से मुण्ड अलग हो गिरा बेटे बेटी को मरेदेख वीरवर की स्त्री ने भी ऐसी तलवार मारी कि धड़ से शिर भिन्न हुआ तो तिन तीनों का मरनादेख वीरवर ने विचारा कि जब लड़के लड़की स्त्रीही मरगये तो जीना और नौकरी करना किस अर्थ है यह कहके एक शमशेर गर्दनपर ऐसी मारी कि तन से शिर न्याराहुआ फिर तो तिन चारों का मरनादेख उस राजा ने निज मन में विचारा कि मेरे लिये इसके कुटुम्बभर की जानगई अब ऐसे राजकाज को भी धिक्कार है कि जिससे एक का सर्वस्व नाश हो और एक राजकाज करै यह विचार राजा ने जो खांड़ा मारनाचाहा सोही देवी ने प्रत्यक्ष हो आप हाथपकड़ा और कहा कि पुत्र! मैं तेरे साहसपर प्रसन्नहुई जो तू मुझ से वरमांगै सोही देवों राजा ने कहा माता जो तुम प्रसन्नहुई हो तो इन चारो को जीवदान देवो देवी बोली तथास्तु यह कह पाताल से अमृत लायके उनपर छिड़का वे चारों खड़े हुए तो फिर आधा राज राजा ने उस वीरवर को दिया जिसने निज स्वामी के हेतु कुटुम्ब को बलिदान दिया था और धन्य है उस राजा को जिसने राज्य और निजजीवन का कुछ भी लालच न किया इतना कह वेताल बोला हे विक्रमादित्य राजन्! मैं तुझ से यह पूछता हूं कि उन पांचो में किसका सत सरस अधिक हुआ तो राजा ने कहा उस राजा का सत अधिक हुआ वेताल बोला किस कारण तो कहा कि स्वामी के लिये निजजीव देना तो सेवक का धर्म है पर राजा ने जो निजसेवक के लिये निजराज छोड़

जान को उनके समान समझकर उनपर न्योछावर करनाचाहा इससे राजा का सत अधिक हुआ इति॥ आदि यहां पर कुछ प्रसंग उपयोगी दृष्टान्त वेतालपञ्चविंशतिग्रन्थ का संग्रह है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्र निबन्धे स्वामिसेवकधन्यताप्रतिपादनोनाम चतुःसप्ततितमःप्रदीपः॥ ७४॥

अथ पञ्चसप्ततितमःप्रदीपः॥

स्त्रीपुंसोर्दुष्कृते साम्ये योषिद्दोषाधिका यथा॥ पुरुषो न तथा प्रोक्तो धर्माधर्मविवेचनात्॥ १॥

स्त्री पुरुषों के दुष्कर्म–खोटापन की समता–बराबरी में अर्थात् दोनों कुकर्मी हों तहां स्त्री अधिकदोषवाली कही है तैसा पुरुष नहीं कहा उसे धर्म अधर्म का विवेक होने से जैसे (दृष्टान्त) भोगवतीनगरी का राजा (रूपसेन) और एक (चूड़ामणि) तोता उसके पास था एक दिन राजा ने उस तोते से पूछा तू क्या जानता है तोता बोला मैं सब कुछ जानता हूं तब राजा ने कहा जो जानता है तो बता हमारे योग्य सुन्दरी स्त्री कहां है तब तोते ने कहा महाराज! मगध-देश में मगधेश्वर राजा है उसकी पुत्री चन्द्रावती के साथ आप का विवाह होवेगा वह अतिरूपवती सुन्दरी है यह बात सुन फिर एक चन्द्रकान्त ज्योतिषी को बुलाकर पूछा तो उस ने भी शास्त्र के अनुसार वैसाही बताया कि इस दिशा में चन्द्रावती नाम कन्या है उससे विवाह होगा यह बात सुन निश्चयकर राजा ने ब्राह्मण को बुलवा सब समझा राजा मग-धेश्वर के पास भेजा और यह कहा कि हमारे ब्याह की पक्की

करआओ हम आप को प्रसन्न करेंगे। यह बात सुन प्रसन्न हो ब्राह्मण विदा हुआ और उधर मगधेश्वर की बेटी के पास एक (मदनमञ्जरी) मैना थी उसीभांति उसने भी पूछा कि मेरे योग्य सुन्दर वर कहां है तो उसने भी कहा कि भोगवती का राजा रूपसेन है वह तेरा पति होगा निदान इनदोनों के मनही मन प्रीति बढ़ी देखते २ वह ब्राह्मण भी पहुँचा और राजा से संदेशा कहा उसने भी उसकी बात मानी और अपना ब्राह्मण बुलवा उसके हाथ टीका और सब वस्तु उस व्यवहार की सौंप उसही के साथ भेजा और यह कहदिया कि हमारी तर्फ से जाकर राजा से विनती करो और राजा के तिलक करके जल्दी चलेआओ जब तुम आओगे तब व्याह की तैयारी करेंगे फिर ये दोनों ब्राह्मण यहां से चले और कुछ दिन में राजा रूपसेन के पास जाय पहुँचे सब हाल कहा यह सुनतेही राजा प्रसन्न हो तैयारी करनेलगा और चन्दरोज में उसके देश पहुँचा और शादीकर दान दहेज ले राजा से विदा होके चला तो राजकन्या ने भी वह मदनमञ्जरी का पिंजरा साथ ले लिया राजा रानी निजदेश में पहुँचे और एकान्त महल में रहने लगे तोता मैना का पिंजरा टँगाहुआ था तो राजा जी में विचार रानी से बोला कि हम तुम जैसे केलि करते हैं तैसे येभी आपस में एकत्र रहैं तो अच्छा है यह कह उनको एक पिंजरे में रखदिये तो तोता मैना से कहनेलगा कि दुनिया में भोगही उत्तम है जिसने जगत् में पैदा हो भोग भोगा नहीं उसका जन्म वृथाही है इससे तू मुझे भोग करनेदे यह सुन मैना ने कहा कि मुझे पुरुष की इच्छा नहीं है उसने

पूछा किसकारण तो बोली कि पुरुष पापी अधर्मी दगाबाज कपटी स्त्रीहत्यारे होते हैं तब तोते ने कहा कि नारी भी दगा बाज झूठी अज्ञान लालची हत्यारी होती हैं जब ऐसे दोनों आपस में झगड़ने लगे तो राजा ने पूछा तुम क्यों झगड़ते हो मैना बोली महाराज ! पुरुष पापी हो स्त्रीघात करते हैं इस लिये मुझे पुरुष की इच्छा नहीं मैं एक बात कहती हूं सुनिये कि मर्द ऐसे होते हैं ॥ इलापुर एकनगर है वहां का महाधन नाम एक सेठ था उसके औलाद नहीं होती थी इसलिये वह हमेशह तीर्थ व्रत करता व नित्य पुराण श्रवण करता हुआ ब्राह्मणों को बहुत सा दान दिया करता था निदान कुछसमय बीते बहुत काल में भगवत् की इच्छा से उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसने बड़ी धूम से उसकी शादी की ब्राह्मण भाटों को बहुत सा दानदिया और उसे पढ़ाया तो वह न पढ़ा और जुआ खेलना आपही सीखगया चन्दरोज में वह सेठ तो मर गया और यह खुदमुख्तियार हो दिन को तो जुआ खेलता और रात को रंडीबाजी करता इसीतरह कई वर्ष में उसने धन सब बिताया और लाचार हो देश से निकल खराब होता हुआ चन्द्रपुरनगर में जा पहुँचा वहां हेमगुप्त नाम साहूकार था उसके द्रव्य बहुत था यह उसके पासगया और अपने बाप का नाम निशान पता बताया तो वह सुनतेही प्रसन्नहुआ तो उससे उठकर मिला और पूछा तुम्हारा आना क्योंकर हुआ तब वह बोला कि मैं जहाज ले एक द्वीप में सौदागरी को जाता था और वहां जा उस माल को बेच और माल की भरतीकर जहाज भर निज देश को चला तो राह में एक ऐसा

तूफ़ान आया कि जहाज डूबगया और मैं एक तख्ते पर बैठा रहगया सो बहता २ यहां आय पहुँचा हूं पर शर्म आती है कि माल दौलत तो सब कहींहीं रहा परन्तु मैं इस वेष से शहर के लोगों को जाकर क्या मुँह दिखाऊँगा निदान ऐसी २ बातें जब इसने कहीं तो वह भी मन में विचारनेलगा कि मेरी चिन्ता भगवान् ने घर बैठेही मिटा दी ऐसा संयोग भगवत्कृपा से ही होजाता है अब देरकरनी उचित नहीं सबसे श्रेष्ठ यह है कि कन्या के हाथ पीले करदेवें कल्ह की कौन जानें ऐसा कुछ मन में विचार मन में मनसूबा बाँध सिठानी पास आय कहनेलगा कि एकसेठ का लड़का आया है जो तुम कहो तो रत्नावती का ब्याह उससे करदेवें वह भी सुन प्रसन्न हो बोली कि साहजी ऐसा संयोग भगवान्ही मिलाता है घर बैठे मन की कामना पूरी हुई इससे श्रेष्ठ यही है कि देर न करो शीघ्र पुरोहित को बुलाय लग्न शोधाय विवाह करदेवो तब उस सेठ ने ब्राह्मण को बुलवाय शुभ लग्न मुहूर्त्त ठहराय कन्यादान दिया बहुतसा दहेज भेट किया निदान जब ब्याह होचुका तो वहीं रहनेलगे फिर कितने एक दिन बीते साह की लड़की से कहा कि हम को तुम्हारे देश में आये बहुत दिन बीते और घर की कुछ खबर नहीं है इससे हमारा चित्त बहुत उदास रहता है यह हाल हम ने तुम से कहा तुम को उचित है कि यही हाल अपनी मातासे कहो कि वे राजीहो हमे बिदाकरें तो अपने शहर को जावें तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी चलो तब उसने निजमाता से कहा कि बालम देशको बिदा हुआ चाहते हैं अब तुम भी ऐसाही करो जो वे प्रसन्न हो कहते हैं तो सिठानी ने निज

सेठसे हाल कहा तब वह साह बोला अच्छा विदा करदेंगे क्योंकि बिराने पूतपर अपना कुछ जोर नहीं चलता उसकी इच्छा हो सोही करनी होगी यह कह बेटी से पूछा तुम ससुराल जाओगी या यहां रहोगी तो तिसने सुन कुछ न कहा और वह उलट फिर निजस्वामी के पास आय बोली कि मेरे मा बाप कहचुकेहैं अब बिलम्ब किसकाज कररहे हो तब तो तिसने फिर कहला-कर भेजा सोही साह ने जमाई को बुलाय बहुतसा द्रव्य दे विदा किया और लड़की को भी डोली में बैठाय दासी साथ दी तो चले २ एक जंगल में पहुँचे तब उसने साह की बेटी से कहा कि यहां चोरों का डर बहुत है सो तुम निजगहना सब हमें उतार देवो फिर लेकर पहनलेना तो उसने वैसाही किया तब तो उसने सब गहना ले कहारों को विदाकर दासी को मार कुयें में डाल करके उस स्त्री को भी कुयें में डालकर सब गहना ले अपने देश को सिधारा इतनेमें एक मुसाफिर उधरसे आ निकला तो तिस ने कुयेंमें से उसका शब्द रोने का सुना तो विचारा कि इस उद्यान वन में मनुष्य की सी शब्द की सुनाई कहांसे होरही है यह कहके कुयें की ओर आय झुकके देखा तो एक स्त्री रोती है उसने उसे निकाली और हाल पूछनेलगा तो वह बोली कि मैं हेमगुप्तसेठ की बेटी हूं मैं निजपति के साथ ससुराल जाती थी कि चोरों ने आ घेरा और दासी को मार मुझे कुयें में डाल चले गये और मेरे पति को गहने समेत बांधकर लेगये न जानें मारा या जीता छोड़ा तब तिस मुसाफ़िर ने सुन उसको धीरज देकर कहा तू न घबराव ऐसे कहकर उसके घर ले आया वहां सबों ने इससे हाल पूछा तो उसने वैसाही सबको सुनाया तब स१

कहनेलगे बाई तू न घबराव चोर धन के ग्राहक होते हैं कुछ जीव के नहीं तू धीरज धर कि तेरा पति फिर भी तुझ से आन मिलेगा तू निश्चय रख निदान वह जो गहना उस का लेगया था उसके वदले और गहना उस साह ने पुत्री को वनवादिया उधर वह गहना लेजाय फिर पूर्ववत् रंडीवाजी जूआ खेलने लगा तो कुछ दिन में वह भी सब धन खो हार झख मार जैसे का तैसा होवैठा जव अत्यन्तही दुःख पानेलगा तो एक दिन मन में विचारा कि अव ससुराल जाकर यह वहाना करैं कि तुम्हारे धेवता पैदा हुआ है उसकी वधाई देने आया हूं यह वात अपने जी में जमाकर चला कई दिन में वहां जायपहुंचा जव सेठ ने देखा कि घर में जाघुसूं इतनेही में उसकी स्त्री ने इसे देखलिया कि मेराही पति है पर ऐसा न हो कि यह शर्माकर लौटजावे इससे पहले उसे आय समझादिया कि घवराना मत मैंने यहां ऐसा २ कहदिया है तव तो वह होशियार हुआ और लोगों ने पूछा तो सव हाल वैसा सुनाया वे सव सुन चुपरहे और ससुरने इसे नहवाय भोजन करवाय वस्त्र आभूषण पहिराय सजाय फिर पहले के समान रखनेलगा निदान रहते २ फिर भी उस रंडीवाज जूआरी को जूयें रंडीवाजी की याद आई तो वह कुमति में आय उस सोतीभई अवला के कलेजे में छूरी मार सव गहना ले रात को भगगया इति । इतनी वात कह मैना वोली महाराज ! यह वात मैंने निजआंखों से देखी है सो कैसे मिथ्या होसकै (आंखों देखी पर्शुराम कभी न झूंठी होय) इससे पुरुष ऐसे निर्दयी हत्यारे होते हैं इससे मुझे पुरुष की इच्छा नहीं है आपही विचारिये कि उस रंडी वेचारी

लाचार अबला का क्या दोष था जो उसनिर्दयी ने ऐसी निठुराई की इतना वृत्तान्तसुन राजा चुपचाप हुआ चित्र के समान हो- रहा था कि यकायक तोते से बोला बतलावे रंडी में क्या दोष होता है तब तोता बोला महाराज ! अपनी २ कहानी गुड़ से भी मीठी होती है मेरी भी तो सुनिये जैसी रांड़ दगाबाज दारी हत्यारी होती हैं तोता बोला महाराज ! कंचनपुर नाम नगर है उसमें (सागरदत्त) सेठ उसके बेटे का नाम श्रीदत्त और एक नगर का नाम जयश्रीपुर वहां का (सोमदत्त) नाम एक सेठ था उसकी बेटी (जयश्री) वह उस सेठ के बेटे को व्याही थी वह किसी शहर में सौदागरी को गया था वह अपने मा बाप के घर रहती थी जब बारहवर्ष बीते और वह युवावस्था भई तो एकरोज निजसखी से कहनेलगी अय बहन ! मेरा यौवन योंही जाता है संसार का सुख मैंने आजतक कुछ भी नहीं देखा है यह बात सुन सखी ने कहा धीरज धर भगवान् ने चाहा तो अब वेगही तेरा पति तुझ से आन मिलेगा यह सुन वह कोप हो अटारीपर चढ़कर निहारने लगी देखा तो एक जवान चला आरहा है वह उसको यकटक देखतीरही और वह भी उसे देखतारहा निदान पास २ हुए तो इनकी चौनजरी हुई इसी से इनका प्रेम बढ़गया तब उसने सखी से कहा उसको तैं लिवालाव तब तो सखी वहां जाय उससे कहनेलगी कि सेठ की पुत्री जयश्री ने तुम को बुलाया है सो आप मेरे घर आना यह कह निजघर का पता बतादिया वह रात को वहां आया तो उसने ब्यौरा दिया तो वह बोली जरा ठहरजा घर के लोग सोजावें तब चलूं निदान सब सोगये और आधीरातका

अमल हुआ तव यह चुपके उठकर उसके साथ चली और एक क्षण में वहां पहुँची और वेधड़क दोनों ने आपस में भोग भोगा जब चारघड़ी रात बाकी रही तो उठकर निजघर आई और वह भी घर गया निदान कितनेही दिन वीते उसका पति भी विदेश से आया और ससुराल में लेने को आया जब इसने निज शौहर को निहारा तो सखी ने कहा कि क्या करूं कहां जाऊं जीव को चिन्ता के मारे चैन नहीं पड़ता मेरी भूख प्यास जाती-रही न ठंढा सुहावे न गर्म ग़रज़ शाम हुई तो उसकी मा ने एकान्त में पलँग बिछवाय उसे उसके पास सोने को भेजी तो वह भौंह चढ़ाय रिसभरी जैसे तैसे ठाट से गई और एक ओर मुँह करके पड़रही उसके स्वामी ने नई २ वस्तु जो उसके लिये लाया था दिखलाई पर उसने सीधा मस्तक न किया और उसी यार की याद दिल में समाईरही निदान यह भी वेचारा हारा थका था तो सोरहा जब आधीरात हुई तो वह वहां से चली और उस यार के पास पहुँची दैववश उसे सर्प डसगया तो वह मरा पड़ा था यह विरहअग्नि से जलती उसकी छाती से जाय लिपटी तब एक पीपल के वृक्ष में ब्रह्मराक्षस रहता था उसने देखा कि यह अवसर खाली चलाजाता है तो शीघ्र उसके देह में प्रवेश करके उससे संग किया और अतिआनन्द में आय उसकी नाक मुँह में नथसमेत काट लेकर उसी वृक्षपर जाचढ़ा वहां यह चरित्र एक चोर वैठा देखरहा था और यह भी देख घबराई सखी के पास आई और उससे सब हाल कहा तो सखी बोली अब विलम्ब न कर अपने पति के पास जा धूम मचादे कि इसने मेरी नाक काटी तो उसने वैसाही किया तब सब

लोग इकट्ठे हुए और उससे हाल सुन इससे कहनेलगे हे पापी, निर्दयी, हत्यारे ! तूने नाहक इसकी नाक क्यों काटी वह यह स्वांग देख चिन्ता कर कहनेलगा कि चंचलचित्त कालेसर्प का शस्त्रधारी शत्रु का विश्वास न करना और त्रियाचरित्र से डरना चाहिये कवीश्वर क्या वर्णन नहीं करसक्ता, योगी क्या नहीं जानता, मतवाला क्या नहीं बकता, रंडी क्या नहीं कर-सक्ती है, घोड़े का ऐब बादल का गर्जना त्रिया का चरित्र और पुरुष का भाग्य यह देवता भी नहीं जानते मनुष्य की तो क्या गति है निदान उसके बाप ने कोतवाल को खबर दी वहां से पियादे आये और इसे बांधकर कोतवाल के पास लेगये कोतवाल उसे राजा के पास लेगया और राजा ने उससे सब हाल पूछा तो तिसने कहा मैं कुछ नहीं जानता फिर सेठ की लड़की को बुलाकर पूछा तो तिसने साफ २ कहदिया और बोली कि आप पूछते क्या हैं प्रत्यक्ष में प्रमाण क्या है मेरी नाक कटी न देखलीजिये इसमें सुबूत की क्या ज़रूरत है फिर राजा ने कहा तू कसूरवार है तुझ को क्या सजा दीजावे वह बोला जो जीमें आवे सो करो तो राजा ने उसे शूलीपर चढ़ाने की आज्ञा दी तो इसे शूलीपर लेगये तब यह संयोग देख उस चोर ने अच्छीतरह से जानलिया कि अब बिन अपराध यह वृथा माराजाता है तो आप उसने दुहाई दी तब राजा ने उसे बुलाय पूछा तू कौन है तो बोला चोर हूं मैं इस मुकद्दमे को अच्छी तरह से जानता हूं तब तो राजा ने कहा तू सब सच २ कहदे क्या माजरा है तब सब हाल कहनेलगा और सारा हाल यथा-वत् कहके बोला महाराज ! नेक को पालना और बद को सजा

देनी यह धर्म सदा से चलाआता है इतनी सुन राजा ने तुर्त उस रंडी का काला मुँह करवा गधेपर चढ़ाय निजनगर के चारोंओर फिराकर मारी इतनी कह चूड़ामणि तोता बोला महाराज ! स्त्रियें भी ऐसी हत्यारी होती हैं इतनी कथा सुन वेताल बोला महाराज बतलाइये उन दोनों कुकर्मी स्त्री पुरुषों में अधिक पापभागी कौन हुआ तो राजा बोला स्त्री हुई तब वेताल बोला कैसे तो कँहा कि मर्द कैसा भी दुष्ट क्यों न हो पर उसे धर्म अधर्म का विचार रहता है और स्त्री को धर्म अधर्म का कुछ ज्ञानही नहीं रहता इससे उस नारी का बहुत पाप हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्रनिबन्धेपञ्चसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७५ ॥

अथ षट्सप्ततितमः प्रदीपः ॥

यदैकद्वित्रिभिःकन्याऽलाभि स्वस्वोपकारतः ॥
वैवाह्या युद्धकर्त्रा सा जीवं हुत्वाऽऽनयत्यसौ ॥ १ ॥

जब एक दो तीन वरों करके निज २ उपकार से कन्या प्राप्त करी गई हो तो वह फिर विवाही उसहीको जायगी जो उसे युद्ध करकेलाया हो क्योंकि वह उसे जीव होमकरके लाया है इसपर (दृष्टान्त) जैसे वे० पं० वेताल बोला अय राजा ! उज्जैन नाम एक नगरी वहां का महाबल राजा है और उसका एक हरिदास नाम दूत था उस दूत की बेटी का नाम महादेवी था वह अतिसुन्दरी थी जब वरयोग्य हुई तो उसके पिता को चिन्ता हुई इसका वर ढूंढ़ विवाह करदेना चाहिये निदान एक दिन उसने निजबाप से कहा कि पिताजी जो सब गुण जानता हो मुझे उसे दीजो वह बोला अच्छा ऐसेही वरसे तेरा विवाह

करेंगे ऐसा कहदिया फिर एकदिन दूत हरिदास से उसने कहा दक्षिण देश में (हरिचन्द्र) नाम राजा है उसके पास जाय मेरी ओर से कुशल पूछो और उसके समाचार लेआओ ऐसी इस राजा की आज्ञा पाय विदा हो उस राजा के देश में गया और उसके पास पहुँच निजराजा का सँदेशा कहा और उस के पास रहनेलगा निदान एक दिन उस राजा ने हरिदास से पूछा कि अभी कलियुग का आरम्भ हुआ या नहीं तब यह हाथ जोड़ कहनेलगा महाराज ! कलिकाल वर्त्तमान है क्योंकि संसार में झूठ बढ़ा और सत्य गया लोग मुँहपर कुछ कहते और कुछ करते हैं धर्म जातारहा पाप बढ़ा पृथ्वी फल कम देनेलगी राजा दण्ड लेनेलगे ब्राह्मणलोग लालची हुए स्त्रियों ने लाज छोड़ी बेटा बाप की आज्ञा नहीं मानता भाई भाई का एतबार नहीं करता मित्रों से मित्राई जातीरही स्वामी से लाभ उठगया सेवकों ने सेवा छोड़ी ऐसी २ जितनी बुरी बातें थीं वे सब होनेलगीं जब राजा से यह कहचुका तो सुन महल में च- लागया और हरिदास अपने घर आया तो वहां उसके पास एक ब्राह्मण आया और बोला मैं तुझ से एक चीज मांगने आया हूं वह बोला कहु तो कहा कि कन्या मुझ को अपनी ब्याह दे तब हरिदास बोला जिस में सब गुण हों उसे ब्या- हूंगा तब बोला मैं सब गुण जानता हूं तब तो तिसने कहा तू मुझ को कोई विद्या दिखावे तो जानें तब उस बँभनेटे ने कहा कि मैंने एक रथ ऐसा बनाया है उसमें यह सामर्थ्य है कि जहां जी चाहे तहां जाय उतारे तब हरिदास ने कहा उस रथ को सवेरे मेरे पास लेआइयो निदान वह भोर को रथ लेकर हरि-

स के पास आया फिर ये दोनों सवार हो उज्जैन नगरी में
ान पहुंचे पर वहां उनके आने से पहले किसी और ब्राह्मणके
टे ने इसके बड़े लड़के से कहा तू मुझे अपनी बहन व्याहदे मैं
ी सब विद्या जानता हूं तो तिसने सुन उससे कहा तुझही को
याहेंगे और एक ब्राह्मण के पुत्र ने उस लड़की की मा से कहा
ा कि तू अपनी बेटी मुझे व्याहदे मैं सब विद्या जानता हूं
ौर शब्दबेधी तीर मारता हूं यह सुन उसने भी कहा था कि
ुझे स्वीकार है निदान तब तो तीनों वर आनकर इकट्ठे भये
ब हरिदास ने मन में विचारा कि किसको दूं किसे न दूं इस
चिन्ताही में रहा और रातको एक राक्षस आनकर उस कन्या
को हरलेगया कहा है कि बहुतायत किसी भी वस्तु की अच्छी
नहीं अतिरूपवती सीता थी तिसे रावण ने हरी राजा बलि ने
बहुदान दिया तो पाताल पठायागया और रावण ने अतिगर्व
किया तो निजकुल खोवाया निदान जब भोर हुआ तो सब घर
के कन्या को न देख अनेकप्रकार की चिन्ता करनेलगे और
इस बात को सुनकर वे वर भी तीनों आये उनमे एक ज्ञानी
था उससे हरिदास ने पूछा हे ज्ञानिन्! तू बता वह कन्या कहां
गई तो उसने घड़ी विचार कर कहा तुम्हारी कन्या को ब्रह्म-
राक्षस विन्ध्याचल पर्वतपर लेगया है इसमें दूसरा बोला कि मैं
राक्षस को मारकर उसे लेआऊंगा तो तीसरा बोला हमारे रथपर
सवार होजाओ यह सुनतेही झट रथपर सवारहो चले और वहां
पहुंच उस राक्षसको मारकर कन्याको तुर्त लेआया फिर तो तिन
तीनों में विवाद हुआ तो तिसके पिता ने चिन्ता करी कि तीनों
का अहसान समान है किसे दूं इतनी कथाकह बेताल बोला

कहो राजा वह किसकी स्त्री हुई तो राजा बोला जो राक्ष
को मारकर लाया फिर बोला अहसान सबने किया तो कहा
उन दोनों ने अहसान किया उसका पुण्य हुआ और यह लड़
जीत जान झोककर लाया इससे उसी की स्त्री हुई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेषट्सप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७६ ॥

अथ सप्तसप्ततितमः प्रदीपः ॥

उत्तमाङ्गंशिरःप्रोक्तं सम्यक्शास्त्रेऽस्य योजनात् ॥
याऽऽसीत्स्त्रीपूर्वपुंसःसा परपुंसोयथाऽभवत् ॥ १ ॥

शास्त्र मे मस्तक को (उत्तमांग) नाम है सो यथार्थ है
क्योंकि केवल मस्तक केही जोड़देने से जो स्त्री प्रथम पुरुष की
थी वह जैसे अन्य दूसरे की होगई (दृष्टान्त) वेताल बोल
हे राजन् ! (धर्मपुर) नाम नगर है वहां का राजा (धर्मशील
और उसके मन्त्री का नाम (अन्धक) उसने एक दिन राज
से कहा कि, हे महाराज ! एक मन्दिर बनाय उसमें देवी :
मूर्त्ति पधराकर पूजा कियाकरो इसका शास्त्र में बड़ाही म
हात्म्य लिखा है तो राजा मन्दिर बना उसमें मूर्त्ति विराज
मान कर शास्त्रविधि से पूजा करने लगा इसी तरह जब कु
समय बीता तो एक दिन दीवान ने कहा कि, हे महाराज
निष्पुत्र का घर सूना, मूर्ख का हृदय सूना और दरिद्री क
सब कुछ सूना है यह बात सुन राजा देवी के मन्दिर में जा
हाथ जोड़ स्तुति करनेलगा कि हे देवि ! ब्रह्मा, विष्णु, महेश
इन्द्र ये आठ पहर सेवा करते हैं और तू ने महिषासुर चण्
मुण्ड रक्तबीज से दैत्यों को मार पृथ्वी का भार उतारा औ

तहां २ तेरे भक्तों पर भीड़ पड़ी तहां २ तू सहाय हुई और
यही आशा कर मैं भी तेरे द्वार पर आया हूं अम्बा मेरी इच्छा
पूर्ण करो इतनी स्तुति राजा जब करचुका तो देवी के मन्दिर
से आवाज आई कि राजा मैं तुझ पर प्रसन्न हुई वर मांग जो
तेरे मन में है तव राजा बोला हे मातः! जो मुझ पर प्रसन्न
हुई हो तो मुझ को पुत्र दीजिये देवी बोली जा तेरे पुत्र पैदा
होगा जो महापराक्रमी प्रतापी तव तो तिस राजा ने गन्ध,
अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि से देवी की पूजा की इसी
प्रकार से नित्य पूजा करता विन पूजा किये भोजन नहीं करता
था निदान कितने दिन पीछे राजा के एक लड़का उत्पन्न
हुआ तो तिसने वाजे गाजे से उस देवी की पूजा की इत्तिफ़ा-
क़न् किसी नगर से एक धोबी अपने मित्र को साथ लिये इस
शहर की तरफ़ चला आता था कि देवी का मन्दिर उसे देख
पड़ा उसने दण्डवत् करके इरादा किया कि सोही उसके सा-
म्हने एक धोबी की लड़की अतिसुन्दरी आई उसे देख मोहित
हुआ और देवी के दर्शन को गया और हाथ जोड़ दण्डवत्
प्रणाम कर प्रार्थना करी कि जो इस सुन्दरी को ब्याहूं तो
निजशीश तुझ पै चढ़ाऊं यह कह विनती कर दोस्त को
साथ ले निजनगर को गया जव वहां पहुंचा तो उसको उस
के विरह ने ऐसा सताया कि नींद, भूख, प्यास सव विसर
गई आठों पहर उसी के ध्यान में रहने लगा यह वुराहाल
उसका देख उसके वाप के पास जाय सव ब्योरा कहा उसका
पिता भी यह सुनकर भौचक होगया और चिन्ता करने
लगा कि इसकी दशा देख मालूम होता है कि जो उससे

सगाई इसकी न भई तो यह अपने प्राण त्याग देगा इससे
यही है कि उस लड़की से इसका व्याह करदीजिये।
यह बचै इतना विचार पुत्र के मित्र को साथ ले उस
में पहुंचा उस लड़की के पिता से जाकर कहा कि मैं
पास कुछ याचने आया हूं जो तू देवै तो मैं कहूं उसने
मेरे पास वह पदार्थ होगा तो मैं दूंगा तुम कहो इस त
से वचनवद्ध कर कहा तू अपनी लड़की मेरे पुत्र को दे
सुनके उसने भी उसकी वात प्रमाणकर ब्राह्मण को
दिन लग्न मुहूर्त ठहराकर कहा तुम लड़के को लेआओ
मैं भी लड़की के हाथ पीले करदेऊंगा यह सुन वह वहां
उठ अपने घर आ सब सामान शादी का तैयार करनेलगा
और वह भी वहां से अपने घर आ शादी का सामान तै
यार कर व्याहने को आया और विवाह कर बेटे बहू को
फिर अपने घर आया और दुलहा दुलहिन आनन्द से रह
लगे फिर कितने दिन वाद उस लड़की के पिता के यहां कु
शुभकर्म था तो वहां से न्योता इनको भी आया ये स्त्री पुरु
तैयार हो अपने मित्र को साथ ले उस नगर को चले ज
नगर के निकट पहुंचे तो वह देवी का मन्दिर नजर आय
तब उसकी वात याद आई तब तो वह निजमन में वि
चारने लगा और वोला मैं वड़ाही असत्यवादी अधर्मी
कि देवी से भी झूठ वोला इतनी वात मन में ठहरा मित्र
कहा तुम यहां खड़े रहो मैं देवी का दर्शन कर आता हूं औ
स्त्री से कहा तू भी यहां ठहर यह कह मन्दिर के पास पहुंच
तो कुण्ड में स्नानकर देवी के सम्मुख जा हाथ जोड़

वत् प्रणामकर खड्ग उठाय गर्दन पर मारा कि धड़ से शिर अलग होगया फिर कितनी देर पीछे उसके मित्र ने विचारा कि इसे गये बड़ी देर हुई अबतक फिरा नहीं चलकर देखा चाहिये तो उसकी स्त्री से कहा तू यहां खड़ीरहु मैं उसे सितावी लेकर आता हूं यह कह देवी के मन्दिर में गया तो देखता क्या है कि उसका शिर धड़ से जुदा पड़ा है यह हाल देख वह कहने लगा कि संसार बड़ा कठिन है यह कोई नहीं कहेगा कि इसकी स्त्री जो अतिसुन्दरी थी उसे लेने को इसे मारकर यह मकर रचा है इससे मरनाही भला है पर संसार में बदनामी लेनी ठीक नहीं है यह तालाव में स्नानकर देवी के सामने हाथ जोड़ प्रणामकर खांड़ा ले गले में मारा कि रुण्ड से मुण्ड जुदा होगया और वहां वह खड़ी २ उकताकर राह देख निराश होके ढूंढ़ती हुई देवी के मन्दिर में पहुँची तो देखती क्या है कि दोनों मरेपड़े हैं फिर इन दोनों को मरादेख उसने मन में विचारा कि लोग यह तो न जानेंगे कि आप से ये बलिलगे हैं यही कहेंगे कि रंडी काजिर थी बदकारी करने के लिये दोनों को मार आई है इस बदनामी से मरनाही भला है यही शोच सरोवर में गोतामार देवी के सम्मुख आ शिर नवाय तलवार उठाके दण्डवत्कर गर्दन में [illegible] देवी ने आ हाथ पकड़ा और कहा वर मांग [illegible] २ हूं वह बोली माता तुम प्रसन्न हो तो इन [illegible] देवी बोली कि तू इनके शिरों [illegible] खुशी के घबराय धड़से शिर [illegible] अमृत लाय छिड़क दिया

ये दोनों जी उठे और आपस में दोनों झगड़ने लगे कि वह कहे स्त्री मेरी है वह कहे मेरी है इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन् ! वह स्त्री किसकी हुई राजा ने कहा सूतशास्त्र में इसका प्रमाण लिखाहै कि नदियों में गंगा उत्तम है और पर्वतों में सुमेरुपर्वत श्रेष्ठ है और वृक्षों में कल्पवृक्ष अंग में मस्तक उत्तम है इस न्याय से जिसका उत्तम अंग है उसी की स्त्री हुई इतनी बात सुन वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका और राजा भी उसे बांध कांधेपर रखकर लेचला ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेसप्तसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७७ ॥

अथाष्टसप्ततितमः प्रदीपः ॥

चतुर्भिश्चतुरैर्लभ्या स्वस्वोपकृतिभिस्तदा ॥
सजातीयेन सोढाह्या ह्याकृतिग्रहणादिना ॥ १ ॥

जब चार चतुरवरों को कन्या प्राप्त हो तो तहां वह उसके सजातीय समान वर्णवाले को व्याहनी चाहिये (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन् ! (चम्पापुर) नाम एक नगर है वहां का (चम्पकेश्वर) राजा और रानी (सुलोचना) और बेटी (त्रिभुवनसुन्दरी) नाम सो अतिही सुन्दरी थी जिसका मुख चन्द्रमा के समान बाल कालीघटा से आंखें मृग कीसी भवें धनुष नासिका कीर की जैसी गला कपोत का सा दांत अनार से होठों की लाली कुंदुरू की सी कमर चीते की सी हाथ पांव कोमल कमल से रंग चम्पे का सा निदान उसके यौवन की ज्योति दिन २ बढ़ती थी जब वह जवान हुई तो राजा रानी निज जी में चिन्ता करने लगे और देश २ के राजाओं को यह

खबर दी कि राजा चम्पकेश्वर के घर में ऐसी सुन्दरि कन्या है कि जिसके रूप को देखके सुर नर मुनि मोहित होरहे हैं फिर तो मुल्क२ के राजों ने निज२ तसवीर लिखवा२कर भेजी राजा ने ले अपनी कन्या को दिखलाई पर उसके मन में एक न समाई तव तो राजा ने कहा तू स्वयम्बर कर तो तिस ने यह बात भी न मानी अपने बाप से कहा रूप बल ज्ञान जिसमें तीनों गुण पूर्ण समान हों उसी को मुझे देना निदान कितने दिन बीते तो चारों दिशाओं से चार वर आये तो तिन से राजा ने कहा तुम चारो निज २ गुण अलग २ वर्णन करो तब तो उनमें से एक बोला कि मुझ में यह विद्या है कि एक कपड़ा बनाकर पांच लाल को बेचता हूं जब उसका मोल मिलता है तो उसमें से एक मोल ब्राह्मण को दान देदेता हूं और दूसरा देवता की भेट करता हूं तीसरा अपने अंग लगाता हूं चौथा स्त्री के अंग लगाता हूं पांचवें को बेच रुपये ले नित्य भोजन करता हूं यह विद्या दूसरा कोई नहीं जानता है और मेरा जो रूप है सो जाहिरही है दूसरा बोला मैं जल थल के सब पशु पक्षियों की भाषा जानता हूं मेरे बल का दूसरा नहीं और सुन्दरता मेरी आप के आगे है तीसरे ने कहा मैं ऐसा शास्त्र जानता हूं कि मेरे समान दूसरा नहीं है शब्दबेधी तीर मारता हूं चौथा बोला मैं शास्त्रविद्या में एकही हूं मेरे समान दूसरा नहीं है और मेरा हुस्न आप के सामने है राजा इन चारो की बातें सुन निज जी में विचारने लगा कि कन्या किस को ब्याहूं ये चारो चतुर गुण में समान हैं यह शोच उसने बेटी पास जाय उससे चारों के गुण वर्णन किये वह सुन चुप होरही

ये दोनों जी उठे और आपस में दोनों झगड़ने लगे कि वह कहै स्त्री मेरी है वह कहै मेरी है इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन् ! वह स्त्री किसकी हुई राजा ने कहा सूतशास्त्र में इसका प्रमाण लिखाहै कि नदियों में गंगा उत्तम है और पर्वतों में सुमेरुपर्वत श्रेष्ठ है और वृक्षों में कल्पवृक्ष अंग में मस्तक उत्तम है इस न्याय से जिसका उत्तम अंग है उसी की स्त्री हुई इतनी बात सुन वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका और राजा भी उसे बांध कांधेपर रखकर लेचला ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेसप्तसप्ततितमःप्रदीपः ॥ ७७ ॥

अथाष्टसप्ततितमः प्रदीपः ॥

चतुर्भिश्चतुरैर्लभ्या स्वस्वोपकृतिभिस्तदा ॥
सजातीयेन सोढाह्या ह्याकृतिग्रहणादिना ॥ १ ॥

जब चार चतुरवरों को कन्या प्राप्त हो तो तहां वह उसके सजातीय समान वर्णवाले को व्याहनी चाहिये (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन् ! (चम्पापुर) नाम एक नगर है वहां का (चम्पकेश्वर) राजा और रानी (सुलोचना) और बेटी (त्रिभुवनसुन्दरी) नाम सो अतिही सुन्दरी थी जिसका मुख चन्द्रमा के समान बाल कालीघटा से आंखें मृग कीसी भौंवें धनुष नासिका कीर की जैसी गला कपोत का सा दांत अनार से होठों की लाली कुंदुरू की सी कमर चीते की सी हाथ पाँव कोमल कमल से रंग चम्पे का सा निदान उसके यौवन की ज्योति दिन २ बढ़ती थी जब वह जवान हुई तो राजा रानी निज जी में चिन्ता करने लगे और देश २ के राजाओं को यह

खबर दी कि राजा चम्पकेश्वर के घर में ऐसी सुन्दरि कन्या है कि जिसके रूप को देखके सुर नर मुनि मोहित होरहे हैं फिर तो मुल्क२के राजों ने निज२ तसवीर लिखवा२कर भेजीं राजा ने ले अपनी कन्या को दिखलाई पर उसके मन में एक न समाई तब तो राजा ने कहा तू स्वयम्वर कर तो तिस ने यह बात भी न मानी अपने बाप से कहा रूप बल ज्ञान जिसमे तीनों गुण पूर्ण समान हों उसी को मुझे देना निदान कितने दिन बीते तो चारों दिशाओं से चार वर आये तो तिन से राजा ने कहा तुम चारो निज२ गुण अलग२ वर्णन करो तब तो उनमें से एक बोला कि मुझ में यह विद्या है कि एक कपड़ा बनाकर पांच लाल को बेचता हूं जब उसका मोल मिलता है तो उसमें से एक मोल ब्राह्मण को दान देदेता हूं और दूसरा देवता की भेट करता हूं तीसरा अपने अंग लगाता हूं चौथा स्त्री के अंग लगाता हूं पांचवें को बेच रुपये ले नित्य भोजन करता हूं यह विद्या दूसरा कोई नहीं जानता है और मेरा जो रूप है सो जाहिरही है दूसरा बोला में जल थल के सब पशु पक्षियों की भाषा जानता हूं मेरे बल का दूसरा नहीं और सुन्दरता मेरी आप के आगे है तीसरे ने कहा मैं ऐसा शास्त्र जानता हूं कि मेरे समान दूसरा नहीं है शब्दबेधी तीर मारता हूं चौथा बोला में शास्त्रविद्या में एकही हूं मेरे समान दूसरा नहीं है और मेरा हुस्न आप के सामने है राजा इन चारों की बातें सुन निज जी में विचारने लगा कि कन्या किस को व्याहूं ये चारों चतुर गुण में समान हैं यह शोच उसने बेटी पास जाय उससे चारों के गुण वर्णन किये वह सुन चुप होरही

लाज की मारी कुछ भी न कहसकी और नीची गर्दनकर कुछ जवाब नहीं दिया ॥ इतनी बात कह वेताल बोला हे राजन् वह कन्या किसको ब्याहने योग्य है तो राजा बोला कि जो कपड़ा बनाकर बेचता वह जाति का शूद्र जुलाहा है और भाषा जाननेवाला वैश्य है और जो शास्त्र पढ़ा सो ब्राह्मण है और जो शस्त्रधारी शब्दबेधी तीर मारता है वह उसका सजातीय क्षत्रिय है यह स्त्री उसके योग्य है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेऽष्टसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७८ ॥

अथ ऊनाशीतितमः प्रदीपः ॥

सेव्यसेवकयोर्मध्ये सत्त्वाधिक्यंतु सेविनः ॥
सेवित्वेऽप्युपकारित्वाद्राजदूतेयथाऽभवत् ॥ १ ॥

स्वामी सेवक इन दोनों के मध्य में सेवक का सत्त्व भी अधिक होता है उसके सेवक होने से अर्थात् सेवक तो निज नौकरीमात्रही कर रहता है और यदि वह उपकार का काम करे तो आश्चर्य्य है जैसे राजदूत ने किया (दृष्टान्त) जैसे वेताल बोला हे राजन् ! (मिथिलावती) नाम एक नगरी है वहां का राजा (गुणाधिप) था उसकी सेवा करने को दूर देश से एक (चिरमदेव) नाम राजपुत्र आया वह रोज राजा के दर्शन करने को जाता था लेकिन मुलाकात नहीं होती थी और जितना धन वह लाया था सो सब वहां बैठकर खागया और वहां घर उसका वैरान होआया । एक दिन की बात है कि राजा शिकार को सवार हुआ और चिरमदेव भी राजा के पीछे था निदान उसनेही पुकारकर कहा

महाराज लोग सवारी के पीछे रहगये हैं और मैं आप के घोड़े के साथ २ घोड़े को कोड़ा मारे चलाआता हूं राजा ने यह सुनके घोड़े को रोका कि जिस में यह वरावर आया राजा ने उसे देख के पूछा तू किसवास्ते ऐसा दुर्बल होरहा है तब यह बोला कि जिस स्वामी के पास रहिये और वह ऐसा हो कि हजारों को पालता हो और अपनी खवर नहीं लेता उस का कुछ दोष नहीं किंतु उसके कर्म का दोष है जैसे दिन को सारा जहान देखता है परन्तु उल्लू को नजर नहीं आता इसमें सूर्य का क्या दोष है हैरत है मुझको कि जिसने माता के पेट में रोजी पहुंचाई थी जब कि हम पैदाहुए और दुनिया की चीज भोगने के लायक हुए अब वह खबर नहीं लेता न जानें सोता है या मरगया और अपने नजदीक माल दौलत चाहनी किसी बड़े आदमी से कि देते वक्त वह मुंह बनावे और नाक भौं चढ़ावे इससे जहर विष खाकर मरजाना भी अच्छा है पर ये छः बातें आदमी को हलका करदेती हैं एक तो खोटेनर की प्रीति, दूसरे विनाकारण की हँसी, तीसरे स्त्री से विवाद करना, चौथे असज्जन स्वामी की सेवा, पांचवें गधे की सवारी, छठे विना संस्कृत की भाषा। और ये पांच चीज विधाता मनुष्य के कर्म मे पैदा होतेही लिख देता है एक तो आयुर्बल दूसरे कर्म तीसरे धन चौथे विद्या पांचवें यश। महाराज! जबतक आदमी का पुण्य उदय होता है तो सब उसके दास बने रहते हैं और जब पूर्व पुण्य घटजाता है तब बन्धु वैरी होजाते हैं पर यह एकवात मुकर्रर है स्वामी की सेवा करनी कभी निष्फल नहीं होती है यह सुन राजा ने उन सब बातों

को गौरकर कुछ जवाब न दिया फिर उससे यह कहा कि मुझे भूंख लगी है कहीं से कुछ खाने को लाव चिरमदेव ने कहा हे महाराज ! यहां आपको भोजन मिलेगा यह कह जंगल में जाय एक हिरन मार लाय शीशे से चकमक निकाल आग सुलगा मांस पकाय राजा को खूब खिलाय आप भी खाया निदान जब राजा पेटभर चुका तो तिसने कहा हे राजपुत्र ! अब हमें नगर को लेचलो हमें मार्ग मालूम नहीं तो उसने राजा को नगर में ला उसके महल में पहुँचा दिया तब तो राजा ने उसकी चाकरी मुकर्रर करदी फिर वह राजा की सेवा में रहने लगा निदान एक दिन राजा ने उसे किसी काम को समुद्र के किनारे भेजा जब वह वहां पहुँचा तो तिसने एक देवी का मन्दिर देखा उसमें जाय देवी की पूजा की पर जब वह वहां से बाहरनिकला तब उसके पीछे से एक नायिका सुन्दरी आय उससे पूछनेलगी हे पुरुष ! तू किसलिये यहां आया है वह बोला ऐश के लिये आया हूं और तेरा रूप देखकर मुस्ताक हुआ हूं ॥ तो तिसने कहा जो मुझ से कुछ इरादा रखता है तो पहले इस कुण्डमें जाकर स्नानकर पीछे तूमुझसे कहे सोही मैं करूंगी वह यह सुनतेही कपड़े उतार गोतामार निकल देखै तो निज नगरमेंही खड़ा है यह अचरज देख लाचार हो अपने घरजा और कपड़ेपहिन राजा के पास आय सब वृत्तान्त कहा यह सुनतेही राजा बोला यार मुझे भी यह अचरज दिखा तब वे दोनों सवार हो वहां से चले कितने दिनों में वहां पहुँचे तो उसी देवी के मन्दिर में जाय पूजाकर आये तो वही नायिका एक सखी को साथ लिये राजाकेपास आनखड़ी

हुई और राजा का रूप देख मोहित हुई कहने लगी कि हे राजन्! मैं तुझपर प्रसन्नभई हूं इसीलिये नौकर के द्वारा मेरा तुम्हारा संयोग लगा है अब मैं आपकी दासी हूं जो आज्ञा हो वही करूंगी तो राजा ने इसमें मुख्यकारण राजपुत्र कोही समझ उसके उपकार करने के लिये इससे कहा कि तू उस राजकुँवर की स्त्री होजा तब वह बोली कि मैंने तो आप के ऊपर चित्त धरकर यह विचार किया है तब तो राजा बोला जो तू दासी हुई और सच्ची है तो यही कर तब तो वह वचनवश भई लाचार हो उसे यही अंगीकार करनापड़ा इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन्! उन दोनों में सत्त्व किसका अधिक रहा तो राजा बोला सेवक का तब वेताल बोला कि राजा का कैसे नहीं जिसने ऐसी सुन्दरी कामिनी निजनौकर को देदी जिसके न देने का कुछ भी डर न था तब राजा ने कहा कि राजाओं का तो उपकार करना परमधर्म है वे जानते भी हैं और नौकर जो कोई उपकार करे तो अचरज है इससे उसका सत्त्व अधिक है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्रनिबन्धेऊनाशीतितमः प्रदीपः॥ ७९॥

अथ अशीतितमः प्रदीपः॥

सत्ये नास्ति भयं क्वचित्॥

सत्य कहने में भय नहीं होता, इस पर चोर का (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! मदनपुर नाम नगर है वहां का वीरवर नाम राजा था और उसी देश में हिरण्यदत्त नाम एक बनियां जिसकी बेटी का नाम मदनसेना था वह एक दिन

वसन्तऋतु में सखी के संग अपने बाग़ में सैर करने गई और दैववश उसके आने से पहले (धर्मदत्त) सेठ का पुत्र भी (सोमदत्त) मित्र को साथ लिये वन को निहारने के लिये आया तो वह वहां से फिरताहुआ उसी फुलवाड़ी में आया तो तिसे देख मोहित हो मित्र से बोला जो मुझ से यह मिलै तो जीवन सफल हो और जो न मिली तो इस संसार में जीना वृथाही है वह ऐसी २ मित्र से बातें कह विरह से व्याकुल बेचेत होगया फिर सुध हुई तो जाय निधड़क उसका हाथ पकड़लिया और कहनेलगा कि जो तू मुझ से प्रीति न करेगी तो मैं तुझपर अपने प्राण दूंगा। ऐसा मत कीजो इस में दोष होता है तब उसने कहा तेरे विरह की आग ने मुझ को जलादिया अब बाकी क्या है अब मुझे धर्म अधर्म की लाज नहीं है इस पीर से मेरी सुध बुध सब जाती रही उसने कहा अब तो ऐसा नहीं हो सक्ता पर वचन देती हूं कि जब मेरा व्याह होगा तो पहले मैं तुझसे मिलजाऊंगी पीछे अपने घर रहूंगी यह वचन दे सौगंद खा वह अपने घर गई और वह अपने घर गया फिर उसका व्याह हुआ तो वह आधीरात को उससे मिलने चली सब शृंगार कर गहना पहने जाती थी कि राह में उसे एक चोर मिला वह बोला हे सुन्दरि ! तू इस आधीरात के समय गहना पहिने कहां जाती है वह सत्य २ बोली कि यह करार यार से किया था सो मैं अब उससे मिलने को जाती हूं चोर बोला मैं तेरा सब वस्त्र गहना छीनलेऊं तो तेरा सहायक कौन हो वह बोली धनुषधारी कामदेव राजा मेरा रक्षक है और इसी सत्यपर तू मुझे छोड़देवे तो यह गहनावस्त्र

सब में तुझे लाकर देदेऊंगी फिर मुझे क्या करना है तू मेरा शृंगार अब बिगाड़ नहीं यह सुन चोर चकित भया और उसके सत्यवचन पर विश्वास कर उसे छोड़ दी तो वह वहां पहुँची और उसे जाय जगाया वह अचेत सोता था तो चमककर उठ बोला हे सुन्दरि ! तू कौन है वह बोली मैं वही मदनसेना हूं जिसने तुझ से पहले मिलने का करार किया था तब तो उसको ज्ञान हुआ कि धन्य है इस सत्यपर तब उसने भी इसे हाथ जोड़ दण्डवत् करके बिदा करी फिर राह में चोर मिला तो उसे सब वस्त्र गहना उतारकर देने लगी तब तो तिसने भी इसके सत्यपर प्रसन्न हो वह न लिया फिर वह अपने पति के पास आई और सब बात समझाकर कही तो वह भी इसके सत्यपर प्रसन्न भया इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन् ! उनमें से किसका सत अधिक हुआ तो राजा ने कहा चोर का अधिक है फिर पूछा कैसे तो कहा उसने तो उसके पति कीभी शंका मानके उसको उलटी भेजी हो पर चोर ने निःशंक होनेपर भी छोड़ी इससे उसका सत अधिकरहा॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र-
निबन्धेऽशीतितमः प्रदीपः ॥ ८० ॥

अथ एकाशीतितमः प्रदीपः ॥

स्त्रीणां सुकुमारित्वे सत्त्वाधिक्यं भवेच्छ्रुतार्तायाः॥
स्त्रीणामभूत्त्रयाणां सत्त्वाधिक्यन्तु तस्याहि॥ १ ॥

स्त्री जब सुकुमार हो तो उनमें जो सुनकर पीड़ित हों उसका सत्त्व अधिक है जैसे तीनों सुकुमारियों में उस सुननेमात्र से पीड़ित हुईही का सत्त अधिकहुआ (दृष्टान्त) वेताल बोला

हे राजन्! गौड़देश में वर्द्धमाननाम एक नगर और (गणशेखर नाम वहां का राजा था उसका मन्त्री एक सरावगी अभयचन्द था उसके समझाने से राजा भी स्रावकधर्म में आया शिव की पूजा विष्णुपूजा और गोदान भूमिदान पिण्डदान जूआ और मदिरा इन सबको मनाकिया कि नगर में कोई करने न पावे और हाड़ गंगा में कोई न गेरै और इनबातों की दीवान ने भी राजा से आज्ञा ले सारे नगर में डौंड़ी पिटवादी कि कोई ऐसा काम करै उसका सर्वस्व छीन सजा दे शहर से निकाल दिया जावेगा एक दिन दीवान राजा से कहनेलगा हे महाराज! धर्म का विचार सुनिये जो कोई किसी का जीव लेता है वह अगले जन्म में उस हत्यारे का भी जीव लेता है इस पाप से संसार में मनुष्य का जीवन मरण नहीं छूटता मरता फिर २ जन्म लेता है इस जगत् में जन्म पाके धर्म बटोरना मनुष्य को उचित है देखिये काम, क्रोध, लोभ, मोहवश हो ब्रह्मा विष्णु महेश किसी न किसी का संसार में अवतार ले आते हैं बल्कि उनसे गाय अच्छी हैं जो राग, द्वेष, मद, क्रोध, लोभ, मोह से रहित हैं और प्रजा की रक्षा करे हैं और उसके जो पुत्र होते हैं वे भी जगत् के जीवों को बहुत तरह का सुख देते पालते हैं इससे देवता और मुनिजन सब गौ को मानते हैं इसलिये देवताओं को मानना अच्छा नहीं इससे हाथी से ले चींटीलों पशु पक्षी पर्य्यन्त हरएक जीव की रक्षाकरना धर्म है जहान में उसके सामने कोई धर्म नहीं जो नर बिराने मांस को खा अपना मांस बढ़ाते हैं वे नरक में जाते हैं उनके रोम २ के समान काल वहां पड़े सड़ते हैं इससे मनुष्य को

ह उचित है कि जीव की रक्षा करे जो लोग बिराना दुःख
हीं समझते और गौरव के मारे जीव मार २ खाते हैं उनकी
स पृथ्वी पर उमर कम होती है और लूले, लँगड़े, काने, अन्धे
ौर कुबड़े ऐसे अंगहीन हो जन्म लेते हैं जैसे २ वे पशु पक्षियों
ं अंगखाते हैं तैसे २ ही वे निजअंग गँवादेते हैं और मदपान
रने से भी महापाप होता है इससे मद्य मांस खाना पीना
चित नहीं इसीतरह से दीवान राजा को अपने मत का ज्ञान
ुनाय ऐसा निज जैनधर्म में लाया कि वह जो मन्त्री कहता
हही वह करता था और ब्राह्मण योगी संन्यासी से बड़े दर-
श आदि किसी को भी नहीं मानता था और इसी मत से
ाज्य करता था एक दिन काल के वश होकर मरगया फिर
सका बेटा (धर्मध्वज) राजगद्दीपर बैठा और राज्य करने
गा एक दिन उसने उसके कर्म देख नास्तिक भये उस अभय-
न्द दीवान को पकड़वा शिरपर सात चोटियां रखवा काला
ुँह कराकर गधेपर चढ़ाय डोंड़ी पिटवाकर नगर के चारोंओर
फिराय देश निकालादिया और निजराज्य निष्कण्टक किया
क दिन वह राजा वसन्तऋतु में रानियों को साथ ले सैरकरने
ो गया वहां एक बाग में बड़ा तालाब था और उसमे कमल
ूलरहे थे राजा उस सरोवर की शोभा देख कपड़े निकाल
स्नानकरने को उतरा और एक फूल तोड़ तीरपर आय रानी
े हाथ में देता था कि इसमें वह हाथ से छूटकर रानी के
ांवपर गिरा और उसकी चोट से रानी का पांव टूटगया तो
राजा घबराकर एकबारगी बाहर निकल उसकी औषध करने
गा कि इतने में रात हुई चन्द्रमा ने प्रकाश किया तो

चांदनी की ज्योति पड़तेही दूसरी रानी के शरीरभर में फफोले पड़ आये फिर अचानकही कहीं से गृहस्थी के घर में से मूशल की आवाज आई तो तीसरी रानी के शिर में पीड़ा हो आई कि उसके मारे वह गश खा गिरी इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन्! उनतीनों में अत्यन्त सुकुमार कोमल अंगवाली कौनसी रानी थी राजा ने कहा जिसके शिर में शब्द सुनने से भी पीर हुई इससे वहही सबसे सुकुमार है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्रनिबन्धे स्त्रीसुकुमारतावर्णनन्नामएकाशीतितमःप्रदीपः॥ ८१॥

अथ द्व्यशीतितमः प्रदीपः॥

अरक्षिता प्रजा राज्ञा नश्यतीति विचारयन्॥
मन्त्रीमृत्युमवाप्यासीत्तस्माद्रक्ष्यान्नृपेणसा॥१॥

राजाकरके अरक्षित भई प्रजा विनाश को प्राप्त होती है ऐसा विचारकर मन्त्री ने मृत्यु पाई इससे राजा को सर्वथा प्रजा की रक्षा करनी उचित है (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! पुण्यपुरनाम एक नगर और (बल्लभ) नाम वहां का राजा था और उसके मन्त्री का नाम (सत्यप्रकाश) और उस मन्त्री की स्त्री का नाम (लक्ष्मी) था उस राजा ने एक रोज निज दीवान से कहा कि जो राजा होकर सुन्दरी स्त्री न भोगै तो उसका राज्य करनाही वृथा है यह कह दीवान को राज्यकाज सौंप आप सुख से ऐश करनेलगा और निज राज्य की चिन्ता छोड़दी दिन रात आनन्द में मग्न रहनेलगा तो एकदिन वह मन्त्री अपने घर में बैठा था तब उसकी स्त्री ने पूछा कि स्वामी मैं इन दिनों में आप को दुर्बल देखती हूं तो

वह बोला मुझे रात दिन राज्य कीही चिन्ता रहती है इससे दुर्बल होरहा हूं और राजा राज्य तज आठों पहर अपने ऐश आराम में रहता है तब वह मन्त्री की स्त्री बोली हे पति! तुम ने बहुत दिनोंतक राज्यकाज किया अब थोड़े से दिनों के लिये राजा से विदा हो तीर्थयात्रा करो उसकी यह बात सुन वह चुपका होरहा जब वहां से उठा तो राजा के पास जा रुख़सत ले तीर्थयात्रा को चला जाते २ समुद्रतीर सेतुबन्ध रामेश्वर पै पहुँचा वहां जाय शिवजी के दर्शन कर बाहर निकला तो क्या देखता है कि एक कञ्चन का वृक्ष उस समुद्रमें से निकला जिसके ज़मुर्रुद के पत्ते, पुखराज के फूल, मूंगे के फल, तो वह अत्यन्त सुन्दर नजर आया और उस वृक्षपर अति सुन्दरी नायिका बीन हाथ में लिये मधुर २ कोमल स्वरों से गारही है फिर एक घड़ी बाद दरख्त उसी समुद्र में लोपलाप होगया यह तमाशा देख वह वहां से उलटा फिर निजनगर में आया और राजा के पास जाय हाथ जोड़ बोला कि हे महाराज! मैं एक अचरज देख आया हूं राजा ने कहा बयान कर तो दीवान ने कहा महाराज! अगले मनुष्य कहगये हैं कि जो बात किसी की अक़्ल में न आवे वह कहनी नहीं चाहिये पर यह मैंने निज आंखों से प्रत्यक्ष देखा है इससे कहता हूं कि हे महाराज! जहां श्रीरघुनाथजी ने समुद्र पर पुल बांधा है उस जगह देखता क्या हूं कि सागर में से सोने का दरख्त निकला तिसके जमुर्रुद के पात पुखराज के फूल और मूंगे के फलोंसे ऐसा लदा हुआ कि जिसका बयान नहीं होसक्ता और उसपर महासुन्दरी स्त्री बीन बजाय २ मधुरस्वर से गायरही

परन्तु एक घड़ी के बाद वह वृक्ष सिन्धु में छिपगया यह बात सुनकर राजा दीवान से बोला कि अब तू राजसँभाल मैं वहां जाता हूं यह कह अकेला समुद्र के किनारे चला कितने एक दिनों में वहां जाय पहुँचा और शिवजी के दर्शन को मन्दिर में गया जो पूजाकर बाहर निकला तो तहां वहही वृक्ष नायिकासमेत निकला तो तिसे देखतेही राजा समुद्र में कूद उसपर जाय चढ़बैठा तब वह नायिका इससे कहनेलगी कि हे वीरपुरुष ! तू किस कारण आया है ? यह बोला तेरे रूप के कारण आया हूं तो वह बोली जो तू काली चौदश को मुझसे न मिलै तो मैं तेरे साथ विवाह करूं तब राजा ने यह बात मानी तिसपर उसने वचन लेकर राजा के साथ विवाह किया निदान जब अँधेरी चतुर्दशी आई तो तिसने कहा हे राजन् ! आज तू मेरे निकट मत रह यह सुनकर राजा खड्ग हाथ में ले वहां से उठा और एक किनारे जाय छिपकर देखता रहा जब आधीरात हुई तो तहां एक देव आया और उसने आतेही गले लगाया यह देखतेही राजा खड्ग हाथ में लेके धाया और कहा अरे राक्षस, पापी ! तू मेरे सामने इस स्त्री के हाथ न लगा पहले मुझ से संग्रामकर और मुझे तभी तक भय था जबतक तुझे न देखा था अब मैं निर्भय हूं इतनी बात कह वह खाँड़ा निकाल उसके एक हाथ ऐसा मारा कि रुण्ड से मुण्ड अलग हो भूमि में गिर तड़फनेलगा यह हाल देख वह बोली कि हे वीरपुरुष ! तूने यह उत्साह महाभारी किया है कि इसके भय से बचाई आप सरीखे शूरवीर पुरुष सब ठौर नहीं होते जैसे लाल सब पर्वतों में नहीं होते सतवंत पुरुष सब

शहरों में नहीं होते चन्दन हरेक वन में नहीं होता हरेक हाथी के मस्तक में मोती नहीं होते हैं इससे आप बड़े अद्वितीय वीर हैं फिर राजा ने पूछा यह राक्षस किस लिये कृष्ण चतुर्दशी को तेरे पास आया था तब वह कहने लगी कि मेरे पिता का नाम विद्याधर है तिसकी मैं पुत्री हूं सुन्दरी मेरा नाम है और यह मुकर्रर था कि मुझ बिन मेरा बाप भोजन नहीं करता था एक दिन भोजन के समय मैं घर में न थी तब तो पिता ने क्रोधकर मुझे शाप दिया कि तुझे कालीचौदश को राक्षस सताया करेगा यह सुन मैं बोली पिता शाप तो तुम ने दिया पर अब मेरे ऊपर अनुग्रह करके इसकी अवधि भी कहिये तब कहा एक वीर पुरुष आकर उस राक्षस को मारेगा तिस शाप से तब तू छूटेगी सोही उस शाप से छूटी हूं अब मैं अपने पिता से प्रणाम करनेजाऊंगी तब राजा बोला जो तू मेरे किये उपकार को माने तो एक वेर मेरे घर चल मेरा राज्य देखो फिर पिता से मिलना वह बोली बहुत अच्छा जो मरजी आप की फिर राजा उसे साथ ले अपनी राजधानी में आया तब नौवत बजने लगी और नगर में खबर भई कि राजा आया तो घर २ बधाई मंगलाचार होनेलगे फिर तो तमाम नगर की मंगलामुखी आकर दरबार में मुबारकबादी देने आईं तो राजा ने बहुतसा दान दे बिदा किया फिर कई दिन बाद वह बोली मैं अपने पिता के यहां जाऊंगी राजा ने उदास हो कहा खुशी तुम्हारी जाओ तो राजाको उदास देख वह जाने से रहगई तो कहा हे महाराज! मैं न जाऊंगी फिर राजा ने कहा कि किस वास्ते तैने जाना मौकूफ किया तब वह बोली कि अब

मैं मनुष्य के आधीन होचुकी मेरा पिता गन्धर्व है अब मैं जाऊं तो मेरा आदर न करेगा यह सुन राजा बहुत प्रसन्नहुआ और लाखों रुपया दान पुण्य किया राजा के इस अहवाल के सुनने से दीवान की छाती फटी और मरगया इतनी बात कह वेताल बोला हे राजन्! किसलिये वह मन्त्री मरगया तव राजा ने कहा कि उस मन्त्री ने देखा कि राजा तो रात दिन ऐश असरत आनन्द करने लगा निज राज्यकाज की चिन्ता तजी प्रजा अनाथ हुई अब मेरा कहा कोई भी न मानेगा इसी चिन्ता से वह मरगया ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेद्व्यशीतितमः प्रदीपः ॥ ८२ ॥

अथ त्र्यशीतितमः प्रदीपः ॥

ब्रह्महत्यादिकं पापं कृतमप्यकृतं तथा ॥
समाक्रमेत्कथयितुस्तत्संसर्गी यतो हि सः ॥ १ ॥

ब्रह्महत्यादिक जो पाप है सो किया हो तथा न भी किया हो पर वह कहनेवाले अर्थात् उस पाप को किया बतानेवाले को अवश्यही लगता है इसपर दो दृष्टान्त हैं जैसे नहीं करने पर । वेताल वोला हे राजन्! (चूड़ापुर) नाम नगर है वहां का राजा (चूड़ामणि) जिसके गुरु का नाम (देवस्वामी) और उसके वेटे का नाम (हरिस्वामी) वह कामदेव के समान सुन्दर और शास्त्र में बृहस्पति के समान था और धन में कुवेर के वरावर और वह एक ब्राह्मण की वेटी को कि जिसका नाम (लावण्यवती) था वह उसे व्याह लाया उन दोनों में वहुत प्रीति भई । ग़रज़ एक दिन गर्मी के मौसम में रात के

समय चौवारे की छतपर दोनों सोते थे कि किसी प्रकार उस की स्त्री के मुँहपर से ओढ़नी उतर गई और गन्धर्व विमान में बैठा उड़ाजाता था अचानक उसकी नजर इसपर पड़ी तो वह विमान को नीचे उतारलाया और उस सोती हुई को विमानपर रखले उड़ा कितनी देर पीछे वह ब्राह्मण भी सोते से उठा तो देखता क्या है कि स्त्री नहीं है तब घबराया और वहां से उठकर तमाम घर को ढूंढ़ा जब इसे वहां भी न मिली तो सारी नगरी की गली २ और कूचा २ ढूंढ़ता फिरा पर पता कहीं नहीं मिला फिर निज जी में कहने लगा कि कौन लेगया कहांगई गरज़ जब बस न चलसका तो आख़िर लाचार हो अफ़सोस करताहुआ घर को आया और वहां उसे फिर दुबारा भी ढूंढ़ा और जब भी न पाया तब तो उस बिन सूना नजर आया तब बेचैनी और बेकली से व्याकुल हो हाय प्राणप्यारी २ कर पुकारनेलगा फिर तो तिसके वियोग से अति व्याकुल हुआ और गृहस्थी छोड वैराग्य ले लँगोटी बांध विभूतिमल मालाडालके नगर तजकर तीर्थयात्रा को निकला और नगर २ गांव २ तीर्थ करताहुआ एक नगर में दोपहर के समय पहुँचा जब भूख के मारे मरनेलगा तो ढाकके पत्तों का दोना बना हाथ में ले एक ब्राह्मण के घर जाय उससे कहा कि मुझे भोजन भिक्षादेओ गरज जब बेवश मनुष्य हो तब उसे धर्म जाते और खाते पीते विचार नहीं बनता और निरादर हो जहां से जो मिलता सो ही खालेता है जब उस ब्राह्मण से इसने भिक्षा मांगी तब उसने इससे दोनाले घर में जाय खीर से भर लादिया यह उस दोने को लिये तालाब के किनारे

पर आया और वहां एक वड़ का वृक्ष था उसकी जड़ पर दोना रखकर सरोवर में मुँह हाथ धोकर आया पीछे से उस वृक्ष की जड़ में से एक कालानाग निकलकर उस दोने में गल से गरल निकाल डालकरके चलागया तो वह दोना विष से भरगया था इसे यह हाल मालूम न था और भूख भारी लगीहुई थी तो आतेही खीर खाई खातेही विषचढ़ा तो इस ने उस ब्राह्मण से आकर कहा कि तैंने मुझ को विष दिया है अब मैं मरूंगा यह कह घूमकर गिरा और मरगया फिर उस ब्राह्मण ने इसे मुवादेख अपनी विवाहिता स्त्री को घर से निकालदिया और कहा हे ब्रह्महत्यारी ! तू यहां से जा इतनी बात कह वेताल बोला हे राजन् ! इनमें से ब्रह्महत्या का पाप किसको हुआ तब राजा बोला कि सर्प के मुखमें तो विष होताही है इससे उसे पाप नहीं है और उस ब्राह्मणी ने स्वामी की आज्ञा से भिक्षा दीथी इससे उसे भी पापनहीं है और ब्राह्मण ने उसे भूखा मरता समझकर भिक्षादी थी इससे उसेभी पाप नहीं है और उसनेभी विना जाने खीर खाई इससे उसको भी पाप नहीं है निदान इनमें से कोई किसी को पाप लगावै उस हीं के वह पाप लगता है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेत्र्यशीतितमःप्रदीपः ॥ ८३ ॥

अथ चतुरशीतितमःप्रदीपः ॥

तथा एक किसी वन में कोई राजर्षि तपस्या करता था वह सब का सन्मान करतारहता था तो एकदिन अर्धरात्र के स[illegible] कोई [illegible] अभ्यागत आय बोला मुझे भारी भूख

लगी है कुछ है सो ला तो तिससमय राजा के मुख से यही निकली कि भाई इससमय भोजन तैयार कहां धरा है सब खा पी कर सोगये मनुष्य की तो क्या कहैं घोड़ों ने भी चर कर लीदकरदी है अब तो यही है तब वह बोला लाव यहही ला तब तो तिस राजा ने कुछ तो रिस और कुछ हँसी भी करके वह लीद उसकी तरफ फेककर मारी तो वह धर्मराजकी पुरी में जाय जमा हुई कुछ काल में राजा जब मरा और धर्म-राज के पुर में गया तो तहां तिसके लिये थाल लगायेगये जिनमें नानाप्रकार के भोजन और जरा २ सी लीद भी प-रोसीभई तो तिस लीद को भी सब थालों में देखतेही राजा घिनाकर बोला कि यह लीद इस सब भोजन मे कैसे मिली है इसका क्या कारण है तब वहां वाले बोले कि, हे राजन्! अपना कर्म सँभालले लीद भी तैंने कभी किसी को दीही होगी इतना सुनतेही उसको वह बात याद आई तब तो हाय२ कर पछितायके कहनेलगा कि सहजही के ऐसा करने में पाप पल्ले बँधने लगा ऐसे कह यह अवकाश विचार बोला कि जो मुझे चार घड़ी जिन्दगी और मिलजावे तो मैं इस पाप से निबट आऊं तब उनके कुछ मन में आया तो इसकी चार घड़ी भर अवस्था बढ़ादी तब तो तहांही फिर आया वहां (राजा जी उठा २) लोग यों कहनेलगे और यह जी उठतेही प्रचण्डरूप होगया तो सब नौकरों को मार पीट नि-काला फिर सवारी सजाय आज्ञा की कि गुरु की पुत्री बहुत सुन्दर है उससे प्रीतिकरने के लिये चलेंगे तब तो शहर में बड़ाही रौला हुआ कि यह राजा जिया क्या यह तो मराही

भला था ऐसे राजा बिन हम सब बादसारेंगे उधर वह गुरुजी के घरजा पुत्री के चरणों में साष्टांग प्रणामकर और उसे पारितोषिक द्रव्य दे अशीष लेके फिर आय वैसेही मरगया और वहां पहुँचा तो उसको पापी २ कहने से उसकी वह भोजन की लीद सब पत्तलों से हटगई इससे पाप को किया कहनेवाले जनों को पाप लगता है और करनेवाला शुद्ध होजाता है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्र निबन्धेचतुरशीतितमःप्रदीपः ॥ ८४ ॥

अथ पञ्चाशीतितमःप्रदीपः ॥

पातालेऽपि वसन्तं च चौरं राजा वशं नयेत् ॥
यथा कृत्वा वशे चौरो राज्ञा शूलेऽवरोपितः॥१॥

तेजस्वी राजा पाताल में भी बसतेहुए चोर को वश में करलेता है जैसे राजा करके वश में किया चोर शूलीपर चढ़ायागया (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन् ! (चन्द्रहृदय) नाम नगर है वहां का (धरणीधर) राजा और उसकी नगरी में (धर्मध्वज) नाम सेठ था और उसकी बेटी का (शोभनवती) नाम था वह अतिसुन्दरी थी यौवन उसका दिन २ बढ़ता था और रूप उसका प्रकाशमान होता था इत्तिफ़ाकन् उस नगरी में चोरी होनेलगी जब चोरों ने नगर में बड़ी धूम मचाई तब सब इकट्ठे होकर राजा के पास जाय बोले कि, हे महाराज ! चोरी बहुत होनेलगी अब इस नगर में रह नहीं सकते तब राजा ने बहुतसे लोग चौकी पहरेपर बैठाये तब भी चोरी होतीहीरही तब तो फिर वे सारे साहूकार जायपुकारे तो राजा ने कहा मैं आप जाकर बन्दोबस्त करूंगा

इतना कह उनको तो विदा किये और राजा आधीरात के समय अकेला ढाल तलवार लिये निकल चला तो आगे जाय देखा तो चोर चलाजाता है राजा उसे मिला और पूछा तो वह बोला तू कौन है तो राजा ने कहा चोर हूं चोरी करने जाता हूं तब तो वह प्रसन्न हो बोला आओ दोनों मिलके चोरी करें यह कहके चले और एक महल में पैठे और वहां चोरी कर मालमताले नगर के बाहर निकल एक कुयें के पासजाय उसमें उत्तर कर राजा को दरवाजेपर खड़ा करके वह चोर पाताललोक में पैठ गया इतने में उस मकान में से एक दासी निकसी-उसने राजा से कहा हे पुरुष! तू कौन है इस दुष्ट के साथ कैसे चलाआया अब तुझ से भगाजावे तो भग नहीं वह आतेही तुझे मारदेगा राजा ने कहा मुझे राह मालूम न रही तू बताव तब तो तिसने उसे राह बताई तब राजा निज महल में आया फिर दूसरे दिन राजा ने सब निज सेना ले उसी कुयें की राह से पाताललोक में जाकर चोर का तमाम घर बाहर घेरलिया तो उस चोर ने किसी और राह से निकल उस नगरी के मालिक (देव) से कहा कि एक राजा मेरे मारने को आया है अब मेरी सहायता करो नहीं तुम्हारी पुरी से भगजावेंगे यह सुन प्रसन्न हो उस राक्षस ने कहा तेने मेरे भोजन का सामान किया है मैं तुझपर बहुत प्रसन्न हूं यह कहके चला और जहां राजा कटकलिये हवेली को घेरे खड़ा था वहां वह आय आदमी और घोड़ों को खानेलगा तो राजा उस राक्षस की सूरत को देखकर भगा और भी जिन लोगों से भागागया वे २ तो बचे और बाकियों को देव ने खाया

ग़रज़ राजा अकेला भागा जाता था कि चोर ने उसे मरवाने का विचारकरके सामने आय ललकारा कि तू अरे राजपूत होकर लड़ाई से भागाजाता है? यह सुनतेही राजा फिर खड़ा हुआ और दोनों सम्मुख हो युद्ध करनेलगे निदान राजा उसे वशकर उसे बांध नगर में ले आया फिर उसको नहवाय धुलवाय अच्छे २ वस्त्र पहिराय एक ऊंटपर बैठाकर ढँढोरिया साथदेकर सारी नगरी के फेरादेने को भेजा फिर उसे शूली पर चढ़ादेने का हुक्म दिया इसमें शहर के लोगों में से जो २ उसे देखते सो २ यही कहते थे कि इसी चोर ने आम नगर को लूटा है अब इसने निज कर्म का फल पाया है और वह चोर जब कि उस धर्मध्वज सेठ की हवेली के नीचे से गया था तब तिस सेठ की बेटी ने ढँढोरे की आवाज सुन निज दासी को भेजकर पूछा कि यह काहे की डौंड़ी बजती है तो वह बोली कि वह चोर था सो शूलीपर चढ़ाया जाता है यह सुनके वह भी देखने को दौड़ी और चोर का रूप देखतेही मोहित होगई और अपने बाप से आकर कहा कि तुम इस समय राजा के पास जाओ और उस चोर को छुटाओ। सेठ बोला कि जिस चोरने राजा का सब शहर लूटा है उसे वह कैसे छोड़ेगा जिसके लिये उस राजा का कटक भी कटगयाहै फिर वह बोली जो वह तुम्हारे सर्वस्व दियेपर भी छूटै तो उसे छुटाओ। यह सुन सेठ ने राजा से जाकर कहा कि, हे महाराज! आप मुझ से पांच लाख रुपये लेके उस चोर को छोड़ दीजिये तब राजा ने कहा इस चोर ने सारा शहर लूटा है और इसके सबब से तमाम लश्कर गारत होगया इसे मैं

किसी तरह से भी नहीं छोडूंगा जब राजा ने उसकी बात न मानी, तब लाचार फिर यह घर को आया और अपनी बेटी से कहा कि जितना कुछ कहने का धर्म था उतनाही मैंने कहा पर उसने एक न मानी इतनी देर में चोर को नगर की फेरी दिवाकर शूली के पास लाय खड़ा किया और चोर ने उस बनियें की लड़की का जो हाल सुना तो पहले खिलखिला कर हँसा और फिर रोया। लोगों ने उसे शूलीपर खैंचलिया और वह बनियें की बेटी उसके मरने की खबर पाकर उसी जगह उसके पास आई और चिताचुनी और उसमें बैठ चोर को शूली से उतारकर उसका शिर गोद में रखकरके जलने को बैठी चाहे कि इतने में वहां एक देवी का मन्दिर था उस में से देवीजी तुरन्त निकलकर बोलीं हे पुत्री! मैं तुझपर प्रसन्न भई हूं वरमांग तो वह बोली, माता जो मुझपर आप प्रसन्न भई हो तो पहले इस चोर को जीवदान देओ तो देवी जी बोली तथास्तु ऐसेहीहोवे, ऐसा कह पाताल से अमृत लाय छिड़कके उसे जिवाया इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन्! बतावो वह चोर पहले किस कारण हँसा फिर किस कारण से रोया? राजा ने कहा जिस कारण वह हँसा सो भी वायस मैं जानता हूं और जैसे वह रोया सो भी मालूम है। हे वेताल! उस चोर ने निज जी में विचारा कि यह जो मेरे लिये राजा को अपना सर्वस्व देती है तो मैं इसका क्या उपकार करूं यह समझकर तो वह रोया और फिर मन में विचारा कि मरने के समय उसने मुझ से ऐसी प्रीति की कि निज जीव को भी कुछ न समझा यह भगवान् की गति जानी

नहीं जाती है कि कुलक्षणों को लक्ष्मी दे, कुलहीन को विद्या दे मूर्ख को सुन्दरी स्त्री दे और पर्वतपर वर्षाकरे, यह विचार करके हँसा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मिश्र निबन्धेपञ्चाशीतितमः प्रदीपः ॥ ८५ ॥

अथ षडशीतितमः प्रदीपः ॥

व्यभिचारात्प्रजातोपि पितुर्नाम्नैव गण्यते ॥
विवाहादग्निसाक्षित्वाद्यथावृत्तं द्विजेऽभवत् ॥१॥

किसी के व्यभिचार से भी उपजा हो पर वह पिताही के नाम से गिनाजाता है क्योंकि पिता के साथ अग्नि की साक्षी से विवाह हुआ इससे (दृष्टान्त) जैसे किसी ब्राह्मण के विषय में वृत्तान्त बीता, वेताल बोला हे राजन्! (कुसुमावती) नाम नगरी है वहां का(सुविचार)नाम राजा जिसकी बेटी का नाम (चन्द्रप्रभा)था जब वह व्याहने योग्यहुई तो एक दिन वसन्त ऋतु में सखियों को साथ ले बाग में गई वहां एक ब्राह्मणका लड़का बीस बरस का जिसका नाम मनस्वी था एक वृक्ष के नीचे सोता था तो राजकन्या भी सैर करती वहां जहां वह सोता था आई तब वह भी हड़बड़ाहट से उठ बैठा और दोनों की नजर मिली तो कामातुर हो मूर्च्छा खाय गिरे तब राज-कन्या को तो हाथों हाथ सखियां लिवालेगई और वह लड़का वहांहीं पड़ारहा तब उस अरसे में वहां दो ब्राह्मण (शशी)और (मूलदेव) ये आनिकले तो उसे बेहोश पड़ा देखके कहा हे शशिन्! यह ऐसा बेसुधि कैसे पड़ा है मूलदेव बोला इसके नायिका ने निजभौंह की कमान बना नयनों के तीर मारे हैं

तो मूलदेव बोला भाई इसे उठाया चाहिये तब उस शशी ने कहा तुम्हें उठाने से क्या प्रयोजन है तब तो तिसने शशी का कहना नहीं माना और उसे पानी छिड़ककर उठाया और पूछा तेरी ऐसी दशा कैसे हुई है वह ब्राह्मण बोला क्या कहूं कुछ हाल कहा नहीं जाता पर दुःख जिसके आगे कहना जो दूर भी करदेवे नहीं तो कहने से क्या है वह बोला भला तू अपनी पीर हमारे आगे कहु तेरा उपाय किया जावेगा तब वह बोला अभी राजकन्या सखियों को साथ लिये यहां आई उसके देखने से मेरी यह दशा हुई है अब जो वह मिलेगी तो मेरा जीवन है नहीं उस बिन प्राण जायँगे तब वह बोला तू हमारे स्थानपर चल वहां हम तेरा यत्नकरेंगे यह कह उसे घर लेगया और वहां दो गुटके बनाय एक गुटका उस ब्राह्मण को देकर कहा जब तू इसे मुँह में रखलेगा तो बारहवर्ष की कन्या होजावेगा और मुँह से निकालतेही फिर मर्दही बनजावेगा यह सुनतेही उसने निज मुख में रक्खा तो वह बारह बरस की कन्या होगया और दूसरे गुटके को उस ब्राह्मण ने रक्खा तो वह आप असी वर्ष का बुड्ढा बनगया और ये दोनों उस कन्या के लिये राजा के पास गये तो राजा ने देखतेही आसन डालदिया तब ब्राह्मणने एकश्लोक पढ़कर राजाको आशीर्वाद दिया उसका आशय यह है कि जिस भगवान् की शोभा त्रिलोकी में फैलरही और जिसने वामन बन राजा बलि को छला और जिसने वानर साथ लेकर समुद्र का पुल बांधा जिसने पर्वत हाथपर रख इन्द्र के वज्र से ग्वालबाल बचाये सोही वासुदेव तुम्हारी रक्षा करें, यह सुन राजा ने प्रसन्न हो

पूछा हे महाराज ! आप कहां से सिधारे हो तब मूलदेव
बोला कि गंगापार से आया हूं और वहांही मेरा घर है
मैं अपने बेटे की बहू को लेनेगया था पीछे मेरे गांव में
पड़ी सो मैं नहीं जानता कि ब्राह्मणी और मेरा पुत्र
और अब मैं उन्हें ढूंढ़ने को जाता हूं इससे श्रेष्ठ यहहै कि
के पास इसको छोड़ जाता हूं मैं न आऊं तबतक इसे
यत्न से रखना । यह बात ब्राह्मण की सुन राजा निज
चिन्ता करनेलगा कि इस सुन्दर तरुणी स्त्री को किसतर
रक्खूं और जो न रक्खूं तो यह ब्राह्मण शाप देगा तो
राज्य भंग होजायगा यह विचार राजा बोला हे महारा
जो आज्ञाकरी सो मंजूर है फिर राजा ने निज पुत्री को बु
कर कहा बेटी इस ब्राह्मण के बेटे की बहू को अपने पास ले
के बहुत यत्न से रक्खो और सोते, जागते, खाते, पीते
पास से जुदी मत कीजो यह सुन राजकन्या उसका हाथ
कड़कर अपने महल में लेगई और रात के समय दोनों
सेज पर सोई और आपस में बातें करनेलगीं तो ब्राह्मण
बेटे की बहू बोली हे राजकन्या ! तू ऐसी दुर्बल किस दु
से होरही है तब वह कहनेलगी कि बहन एक दिन वस
ऋतु में सखी साथ ले बाग में मैं सैर करनेको गई थी त
एक कामदेव के समान सुन्दर ब्राह्मण का पुत्र देखा और
सकी मेरी चार २ नजरें हुई उधर वह बेहोश हुआ और
मैं भी बेसुधि हुई तो मुझको तो सखियां घरलेआईं और
सका हाल मालूम नहीं क्या हुआ और मैं नाम ठाम
नहीं जानती हूं आंखों में सूरत वही समारही है और

मे खाने पीने की भी कुछ रुचि नहीं रही है इस पीर से शरीर
।। दिन २ दुर्बल होनेलगा है यह सुन वह ब्राह्मण की बहू
ली जो तुझे मैं उससे मिलादेऊं तो तू मुझे क्या देवे तब
ह बोली कि मैं तेरी दासी हो रहूंगी यह सुन वह गुटका नि-
ाल फिर पुरुष होगया और यह देख कर शरमाई तब उस
ाह्मण के लड़के ने गन्धर्व विवाह की रीति से उसे व्याही
ौर हमेशा उसीतरह रातको मर्द और दिन को औरत बना
हता निदान छः महीनें पीछे राजकन्या के गर्भ रहा फिर
क दिन राजा निज कुटुम्बसमेत दीवान के घर शादी में
ाया वहां मन्त्री के बेटे ने उस स्त्रीवेषधारी ब्राह्मण के बेटे को
खों देखतेही मोहित होगया और अपने एक मित्र के पास
ाकर कहने लगा कि जो यह नारी मुझे नहीं मिलेगी तो
ं अपने प्राण तजूंगा इस अरसे में राजा भोजनकर कुनबे
मेत अपने घरआया पर मन्त्री के पुत्र की विरह की आग
े निपट कठिन अवस्था भई और अन्न पानी छोड़दिया यह
ेख उसके मित्र ने मन्त्री से जा कहा और दीवान ने यह
ाल देख राजा से जाय कहा कि हे महाराज ! उस ब्राह्मण
े बेटे की बहू की प्रीति में मेरे बेटे की बुरी हालत होरहीहै
ाना पीना छोड़दिया जो आप कृपाकर ब्राह्मण के बेटे की
हूको देदेवो तो उसकी जानबचै यह सुन राजा क्रोधकर बोला
रे मूर्ख ! ऐसी अनीति करना राजाओं का धर्म नहीं है एक
ानुष्य की चीज स्त्रीकी जाति जो सौंपगया फिर उसकी आज्ञा
िन दूसरे को देनी कैसे उचित है ऐसा कभी नहीं होसक्ता
ह सुन दीवान निराश हो अपने घर आया पर फिर उस

पुत्र का दुःख देखकर उसने भी अन्नजल छोड़दिया जब तीन दिन विन दाने पानी बीता तब सब कारबारियों ने इकट्ठे हो राजा से जा अर्ज की कि हे महाराज ! मन्त्री का पुत्र अब तो होरहा है और उसके मरने पर मन्त्री भी नहीं रहैगा इससे श्रेष्ठ यह है कि उस ब्राह्मण की बहू को मन्त्री के बेटे को ब्याह कर निज राज्य की रक्षाकरिये और कदाचित् वह आवे तो तिसे धन गाँव देदीजियेगा जो इसपर न राजी हो तो उसके बेटे का और ब्याहकर विदाकरदीजियेगा यह बात सुन रा ने उस ब्राह्मण की बहू को बुलाकर कहा तू मेरे मन्त्री के के पास जा तो वह बोली स्त्री का धर्म नष्ट होता है अतिरू वती होनेसे और ब्राह्मण का धर्म राजा की सेवाकरने से जा है और गऊ खराब होती हैं दूर की चराई से और अधर्म हो से धन जाता है इतना कह वह बहू फिर बोली कि,हे महाराज जो तुम मुझे मन्त्री के बेटे को देना चाहते हो तो उससे य बात ठहरादीजिये कि जो मैं उससे कहूं वह सोही करै तब उसके घर जाऊं राजा बोला कहो कि वह क्या करे तो उस कहा मैं ब्राह्मणी हूं और वह क्षत्रिय है इससे श्रेष्ठ यह है कि व पहले तीर्थयात्रा करआवे तब मैं उसके घर जाऊं यह बा सुन राजा ने मन्त्री के बेटे को बुलाके कहा कि तू तीर्थयात्र करआवो तब तुझ को मिलेगी तब उसने सुन कहा वह मे घरजा रहै और मैं तीर्थयात्रा को जाता हूं यह बात राजाने उ ब्राह्मणीसे कही कि तू उसके घरजारहै तब वह जावे तब वहवह जारही तब तो तिसने निज स्त्री से कहा कि तुम दोनों अच्छे तरह प्रेमपूर्वक से एक जगह रहना और विराने घर कभी

जाना इतनी सीख दे वह तो चलागया और उधर उसकी बहू (सौभाग्यसुन्दरी) उसका नाम था वह ब्राह्मण की बहू को साथले एक बिछौने पर सोईं तो बातें इधर उधर की होनेलगीं कितनी देर में उस दीवान की पुत्रवधू ने यह कहा हे सखी! इससमय मुझ को कामदेव ने ऐसा सताया है कि उसके मारे में मरीजाती हूं मेरा मतलब कैसे सिद्ध होवे तो वह बोली कि जो जी की चाहना मिटजावे तो तू मुझे क्यादेवे तो वह बोली मैं तेरी आज्ञाकारिणी दासी बनी रहूंगी तब तो तिसने निज मुख से वह गुटका निकाला तो तुर्त मर्द होगया हमेशह इसीतरह रातको पुरुष और दिन को नारी बनी रहती फिर तो तिन दोनों में बड़ीहीप्रीति बढ़ी इसीतरह से छः महीने बीते और मन्त्री का पुत्रभी आपहुँचा तो लोग सुन मंगलाचार करनेलगे इधर ब्राह्मण की बहू ने मुँह से गुटका निकाल खिड़की की राह से निकल चलदिया फिर कुछ काल में मूलदेव ब्राह्मण के पास जिससे वह गुटका लिया था जा पहुँचा और उससे सब वृत्तान्त कहा उसने सब बात सुन वह गुटका उससे ले उस शशी ब्राह्मण को साथ लिया और वे दोनों गुटके अपने २ मुख में रख एक तो बुड्ढा बना और एक उसका लड़का बना दोनो राजा के पासगये राजा ने देखतेही दण्डवत् प्रणामकर आसन दे बैठाये ये भी राजा को अशीष देके बैठगये और उसकी कुशल क्षेम पूछी फिर राजा ने इनसे कहा कि इतने दिन कहांलगे ब्राह्मण बोला महाराज! मैं इसी पुत्रको ढूंढ़ने गया था इसे खोजकर आप के पास लेआया हूं अब इसकी बहू को दे देओ तो अपने घर लेकर जाऊं तब

राजा ने लाचार हो हाथजोड़ सब वृत्तान्त कहा तो तब ब्राह्मण अतिप्रचण्ड हो क्रोधकर बोला कि यह कैसा व्यवहार है जो मेरे बेटे की बहू को किसी और को देदी अच्छा जो तुम नें किया इसका शाप लेओ तब राजा बोला हे देवता! तुम क्रोध मत करो जो कहो सो करूं तब ब्राह्मण बोला जो तू मेरे शाप से डरता है तो तू अपनी पुत्री मेरे बेटे को व्याह दे यह सुन राजा ने ज्योतिषी को बुलाय शुभलग्न मुहूर्त्तठहराकर उसके साथ निज पुत्री का व्याह विधि से किया यह व्याहकर दान दहेज सहित उसे लिये आता था तो यह खबर सुन वह मनस्वी ब्राह्मण भी आया और उससे झगड़ा करनेलगा कि मेरी स्त्री है मुझे दे तो तिस शशी ब्राह्मण ने कहा मैं अभी इसे पांच पंचों में व्याहकर लाया हूं यह मेरी है फिर उसनें कहा इसमें तो मेरा गर्भरहचुका है तेरी किस तरह है ऐसे आपस में विरोध होनेलगा तब तो मूलदेव ने इन दोनों को बहुत समझाया पर उनमे से कोई सा भी न माना इतनी कथा कहके वेताल बोला हे राजन्! वह स्त्री किसकी हुई तो राजा ने कहा वह स्त्री शशी नाम ब्राह्मण की भई तब वेताल बोला गर्भ तो तिस ब्राह्मण का रहा इससे उसकी भार्य्या हुई तब राजा ने कहा कि उस ब्राह्मण से गर्भरहा तिसको तो किसी ने नहीं जाना और वह उसे पांचपंचों में व्याह कर लाया इससे उसही की स्त्री हुई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्या मिश्र-
निबन्धे षडशीतितमः प्रदीपः ॥ ८६ ॥

अथ सप्ताशीतितमः प्रदीपः ॥

ददाति दुस्त्यजान्प्राणान् परार्थं दयया युतः ॥
ददौ स शंखचूडार्थं प्राणाञ्जीमूतवाहनः ॥ १ ॥

जो जन दयासहित होता वह पर उपकार के लिये निज प्राण भी देदेता है जैसे राजपुत्र (जीमूतवाहन) ने शंखचूड़ सर्प के जीव बचाने को निज प्राण दिये (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! हिमाचल नाम पर्वत तहां गन्धर्वों का नगर है और वहां का राजा (जीमूतकेतु) राज्य करता था उसने निज पुत्रप्राप्ति के लिये कल्पवृक्ष का आराधन किया तो तिसपर प्रसन्न कल्पवृक्ष बोला वर मांग जो तू चाहै सोही होगा तो राजा ने कहा मुझे पुत्र दो तब तिसने (तथास्तु) कहा फिर कितने दिन में राजा के एक पुत्र हुआ तो तिसकी बड़ीही खुशीहुई अच्छे २ ब्राह्मण बुलाय २ बहुत सा धन दे उसका नामकरण कराया और ब्राह्मणों ने उसका नाम (जीमूतवाहन) धरा जब वह पांच वर्ष का हुआ तो शिवजी की पूजा करनेलगा और सब शास्त्र पढ़के बड़ाही पण्डित, ज्ञानी, ध्यानी, साहसी, शूर, वीर हुआ। उससमय उसके बराबर धर्मात्मा कोई न था और जितने उसके राज्य में मनुष्य थे वे अपने २ धर्म में परायण थे जब वह जवान हुआ तो उसने भी कल्पवृक्ष की बहुतसी सेवा की तो कल्पवृक्ष ने अतिप्रसन्नहोके कहा कि जिस बात की तुझे चाहना है सोही मैं तुझे देऊंगा तो वह बोला जो आप प्रसन्न हुए हैं तो मेरी राज्य में जितने मनुष्य हैं उनसबका दारिद्र दूर करदीजिये और वे सब बराबर धनवान् होजावें जब कल्पवृक्ष

ने ऐसाही वरदिया तव सवलोग दौलत से ऐसे आसूदा हुए कि कोई किसी का कहना नहीं मानते थे और न कोई काम किसी का करताथा जब सबलोग ऐसे होगये,तो सवों ने ऐसा भी विचारकरलिया कि वे बाप वेटे तो सेवा पूजा में जम बैठे कोई उनका कहना नहीं मानता है तो अब सब राज्य हम हाथ में लेलेवें तव इन्होंने राजा को गाफिलदेख फौज ले के आय घेरा जब व्यौरा इसको मालूम हुआ तो पुत्र से कहने लगा कि क्याकरें तो राजकुमार वोला आप विराजिये मैं धर्म के प्रताप से अभी इनको मारे आता हूं तो राजा ने कहा हे पुत्र ! यह शरीर अनित्य है और धन प्राण अस्थिर हैं और मनुष्य जब जन्मलेता है तो तिसकी मृत्यु भी जन्मलेलेती है इससे अब सब राज्यकाज धर्म से धारण कीजिये ऐसे इस शरीर के कारण ऐसा भारी कुकर्म करना उचित नहीं है क्योंकि राजा युधिष्ठिर भी भारी भारतयुद्ध करके पीछे पछताये थे इतना सुन पुत्र ने कहा अच्छा राज्य ज्योतिषी को दीजिये और हम तुम तप करने वन में चलें यह विचार वे निज भाई बन्धुओं को बुलाय उनको राज्य काज सँभलाय आप बाप वेटे दोनों मलयाचल पर्वत पर गये और वहां जाय कुटी बनाकर रहनेलगे तो जीमूतवाहन की एक ऋषिके पुत्र से दोस्ती भई एक दिन दोनों उस पर्वत पर सैर करनेगये तो तहां एक कोई देवी का मन्दिर नजर आया वहां उसमें एक राजा की कन्या वीणा हाथ में लिये गानकररही थी तो तहां जीमूतवाहन और उस राजकन्या की चार २ नजरेंहुईं तो दोनों की लगन लगगई फिर राजकन्या तो लाज की मारी अपने घर

सिधारी और इधर यह भी ऋषि के पुत्र की शर्म के मारे
आया वह रातदिन दोनों गुलउजारों को बहुतही कठिन
ती प्रभात होतेही राजकन्या वीणाले देवी के मन्दिर को
और उधर वह भी सिधारा और उसकी सखी से पूछा कि
सकी कन्या है तब सखी ने कहा यह (मलयकेतु) राजा
पुत्री है (मलयावती) नाम है अभी कुमारीही है यह कह
र इनसे पूछा कहो प्रियपुरुष आप कहां से आये हो तो यह
हनेलगा कि विद्याधरों का राजा (जीमूतकेतु) है उसका
त्र हूं (जीमूतवाहन) नाम है राजभंगहोने से हम दोनों पिता
त्र तपस्या करने को यहां आये हैं फिर यह बात सखी ने सुन
स राजकन्या से कहा यह सुन वह बहुत दुःख पाय अपने घर
ो आई और रात को चिन्ताकर सोरही इसकी ऐसी दशा देख
सखी ने सारी बात उसकी मा से कही वह सुनतेही राजा के
सजाय बोली हे महाराज! आपकी कन्या वर के योग्यहुई अब
र इसका क्यों नहीं देखते हो यह सुन राजा ने निज पुत्रसे कहा
म इसके लिये सुन्दर वर देखो तो वह बोला हे महाराज! गन्धर्वों
ा राजा (जीमूतकेतु) तिसकापुत्र (जीमूतवाहन) है वे राज्य
ज दोनों पिता पुत्र यहां आये सुने हैं यहसुन मलयकेतु राजाने
हा यह कन्या जीमूतवाहन कोही व्याहूंगा इतना कह बेटे को
आज्ञादी कि जीमूतवाहन को उसके पिता से कहकर यहां ले
आवो यह हुक्म पाय उनके पास गया और उसके पिता से
हा कि अपने पुत्र को हमारे साथ करदीजिये हमारे पिता ने
कन्यादान देने को बुलाया है यहसुन राजा जीमूतकेतुने निज-
पुत्र को साथ करदिया तो वह वहां आया और जब विवाह

होचुका तब दुलहिन को और मित्रावसु उस शाले को
आया फिर तो तीनों ने राजा को दण्डवत् प्रणामकरी तो
को राजा ने भी अशीष दी वह दिन तो योंही गुजरा पर
होतेही चावसे दोनों ने मिल आनन्द किया फिर हा
दोनों राजकुमार उस मलयाचल की सैर को चले तो
जीमूतवाहनने देखा कि एक सफ़ेद ढेर ऊंचा सा लगा
तिसने उस शाले से पूछा कि यह धौला ढेर कैसा
है वह बोला पाताल लोक से करोड़ों नाग कुमार आते ह
गरुड़जी आकर तिनको भक्षण करते हैं यह उन्हींके
का ढेर लगा है यह सुन जीमूतवाहन ने निज शाले से
मित्र तुम जाकर भोजनकरो मैं इससमय नित्य नियम
मेरी पूजा का अब वक्त है यहसुन वह तो गया और
वाहन आगे को जो बढ़ा तो अचानक रोने की ।वाज
तो उसही को सुन धुन बांधकर चला २ वहां पहुंचा तो
कि एक बुढ़िया दुःख से व्याकुलभई रोती है उसके
रोने का कारण पूछा तो वह वोली कि शंखचूड़ नाम
बेटा है तिसकी आज बारी है उसे गरुड़ आकर
इससे रोती हूं तब बोला माता मत रोवै मैं तेरे पुत्र के
अपनी जान देदेऊंगा बुढ़िया बोली बेटा ऐसा मत
तूही मेरा शंखचूड़ है यह कहती थी कि इतने में
आनपहुंचा और उसने सुनके कहा हे महाराज! मुझसे द
बहुत पैदा होते हैं और मरते हैं पर आप सरीखे धर्मात्मा
वान् इस संसार में घड़ी २ में पैदा नहीं होते हैं इससे मेरे
अपने प्राण न दीजिये क्योंकि आप के जीतेरहने मे

दमियों का उपकार होगा और मेरा मरना जीना बराबर है
जीमूतवाहन बोला कि यह सत्पुरुषों का धर्म नहीं है जो
से कहकर न करें तुम जहां से आये वहांही जाव यह सुन
खचूड़ तो देवी के दर्शन को गया और गरुड़जी आकाश से
रे सो कैसे हैं कि पांव तो तिनके चार २ बांस बराबर हैं
र ताड़सी लम्बी चोंच पहाड़ के समान पेट फाटक की मा-
न्द आंखें और घटा से पर ऐसे उसने यकायक एक साथही
जा पर चोंच पसारी और राजापर दौड़ा तब पहिले तो
जपुत्र ने अपने तईं बचाया फिर दूसरी बेर वह चोंच में रख
को लेउड़ा और चक्कर मारनेलगा इतने में एक बाजूबन्ध
सपर राजकुमार का नाम खुदा था वह खुलकर राजकन्या
सम्मुख गिरा वह उसको देख पछाड़खागिरी जब एक
ड़ीबाद चेतहुआ तो तिसने सब वृत्तान्त अपने मा बाप से
हला भेजा वे यह विपत्ति सुनकर आये और वह गहना रु-
रभरा देख रोये फिर तो तीनों मनुष्य ढूंढ़ने को निकले तो
न्हें राहमें वह शंखचूड़ भी मिला तो तिन्हें बैठाकर अकेला
हांगया जहां राजकुमार को देखा था और देखकर पुकारने
गा हे गरुड़! हे गरुड़! यह तेरा भक्ष्य नहीं है शंखचूड़ तो
रा नाम है मैंही तेरा भक्ष्य हूं यह सुन गरुड़ घबड़ाकर गिरा
ौर जीमें सोचनेलगा कि इस ब्राह्मण वा क्षत्रिय को सताया
ह मैंने क्या कुकर्मकिया फिर राजपुत्र से कहा हे पुरुष!
च कहु तू किस लिये जान देता है राजकुमार बोला हे ग-
ड़जी! जो वृक्ष छाया तो औरों के ऊपर करते हैं और आप
प में रहते हैं और परउपकार वास्तेही फलते फूलते हैं आखिर

उनका काठ भी काम आता है इससे सत्पुरुषों का भी यही धर्म है जो यह देह किसी के काम में न आवे तो फिर इससे क्या प्रयोजन है जैसे जन ज्यों २ चन्दन घिसते त्यों २ दूनी सुगन्ध आती है और गन्ने को ज्यों २ छील २ काट २ टुकड़े करते हैं त्यों २ अधिक स्वाददेता है और कंचन को ज्यों २ जलाते हैं त्यों २ अति सुन्दर होता है ऐसेही उत्तम जो जन हैं प्राणजाने पर भी निजस्वभावको नहीं छोड़ते हैं उनको किसीने भला कहा तो क्या और बुरा कहा तो क्या है दौलतहुई तो क्या है और न हुई तो क्या? जो अबमरे तो क्या है और फिर मरे तो क्या है? जो जन न्याय की राह में चलते हैं और राह में पांव नहीं देते वे स्वर्ग पाते हैं और जिस शरीर से कुछ उपकार न हो उसका जीना निष्फल होता है और जिनका जीवन बिराने अर्थ है उन्हींका जीवन सफल है यों तो कौआ कुत्ता भी अपना जी जिवाता है जो ब्राह्मण गौ मित्र स्त्री के खातिर जीव देदेते हैं सो निश्चय स्वर्गवास पाते हैं तब तो तिसके वचन सुन गरुड़जी बोले जग में सब जीव जान की रक्षा करते हैं पर अपना जीवदे दूसरे का जीव बचानेवाले विरलेही हैं यह कह कहा हम तेरे साहसपर प्रसन्नहुए हैं अब वरमांग यह सुन जीमूतवाहन ने कहा हे देव! अब तो आप प्रसन्नहुए हो तो अब से नागों को मत खाना और जो खाये हैं उन्हें जिला दो यह सुन गरुड़जी ने जा पाताल से अमृतलाय उस ढेरीपर छिड़का तब सब नाग जागउठे और इससे कहा हे जीमूतवाहन! मेरे प्रसाद से तेरा गयाभया राज्य भी तुझको फिर मिलेगा यह कह गरुड़जी निज स्थान पधारे और शंखचूड़

अपने घरको गया और जीमूतवाहन वहांसे चला तो राह में उसका श्वशुर औरसास और स्त्री मिली फिर उस समेत अपने बापके पासआया और यह हाल सुनके उसके चचा और चचेरे भाई औरभी भाईलोग सभी लोग मिलके आये और पांवों पड़ तिन्हें लेजाय तिनकेराज्यपर बैठाया इतनी कथा कह वेताल ने पूछा हे राजन्! इनमें से किसका सत अधिक हुआ तो राजा बोला शंखचूड़ का वेतालने कहा कैसे राजा बोला कि गयाहुआ भी शंखचूड़ फिर जीवदेने को आया और गरुड़ के खानेसे इसे बचाया फिर वेताल बोला जिसने परायेलिये जान दी उसका सत अधिक क्यो न हुआ राजा बोला जीमूतवाहन जाति का क्षत्रियहै उसे तो जी देने का अभ्यास होरहाहै और इससे उसको जीवदेना कुछ कठिन नहीं था और उसे कठिन था॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे सप्ताशीतितमःप्रदीपः॥ ८७॥

अथ अष्टाशीतितमःप्रदीपः॥

राजा मन्त्री सती ह्येषु त्रिषु प्रज्वलितेषु च ॥
सत्त्वाधिक्यं भवेद्राज्ञो मन्त्र्यर्थे जीवदानतः॥ १ ॥

राजा रानी मन्त्री इन तीनो के किसी नियम से सतीहोने आग्नि में जलजाने पर राजा का सत अधिक होता है क्योंकि उसने मन्त्री के काज निज जानदी मन्त्री का तो यह धर्महीहै (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! (चन्द्रशेखर) नाम नगर है वहां का रहनेवाला रत्नदत्त सेठ था उसके एकबेटी थी उसका नाम उन्मादिनी था जब वह यौवनवती हुई तब उसके बाप ने वहां के राजा से जाकर कहा हे महाराज! मेरे घरमे एक

वह दासी है और उसके हेतु आप इतना कष्टपावैं इससे आप आज्ञादीजिये कि वह हाजिर होवे यह बात सुन राजा निपट क्रोधकर बोला कि बिरानी स्त्री के पास जाना महाही अधर्म है यह बात क्या तूने कही क्या मैं अधर्मी हूं जो अधर्म करूं बिरानी स्त्री माता के समान होती है और बिराना धन मिट्टी के समान जानना भाई मनुष्य जैसा जी अपना समझै तैसाही दूसरे का समझना फिर बलभद्र बोला वह मेरी दासी है जब मैंने उसे किसी और को दी फिर बिरानी स्त्री कैसे रही फिर राजा ने कहा कि जिस काम करके इस संसार में कलंक लगे वह काम करना नहीं चाहिये फिर सेनापतिने अर्ज किया कि हे महाराज! मैं उसे घर से निकाल और ठौर रख वेश्या बनाय लाऊंगा तब कलङ्क क्यों लगेगा तब बोला जो तू उस सती को वेश्या बनावेगा तो तुझे मैं महादण्ड देऊंगा यह कह राजा उसकी याद में दश दिन चिन्ताकर मरगया फिर बलभद्र सेनापति ने गुरु से जाकर पूछा मेरा स्वामी उन्मादिनी के कारण मरा मुझे अब क्या करना चाहिये सो आज्ञा कीजिये तब तिसने कहा कि सेवक का धर्म है निज स्वामी के अर्थ जीवदान दे देवे यह सुन वह वहांहींगया जहां राजा को जलाने के लिये लोग लेगये थे जितनी देर में राजा की चिता तैयार हुई तितने में तिसने भी स्नान पूजनकर जलने की तैयारी की जब जलने की तैयारी भई लोगों ने आग लगादी तब यह चिता के पास गया और सूर्य्य के सामने हाथ जोड़कर कहने लगा हे सूर्य्यदेवता ! मैं मन वचन कर्मकरके यही कामना मांगता हूं कि जन्मरमें इसी स्वामी को पाऊं और तुम्हारे गुण

गाऊं इतना कह दण्डवत्कर आग में कूदपड़ा यह खबर सुन कर उन्मादिनी भी गुरु के पास गई और उनसे सब बात कहके पूछा हे महाराज ! स्त्री का क्या धर्म है तब बोले कि पिता ने निज कन्या के ताईं जिसको दी हो वह उसही की सेवा करने से कुल शीलवती कहाती है जो नारी निज जीते स्वामी के आगे व्रत तप करती है वह उस स्वामी की उमर कम करती है और अन्तकाल में वह नारी नरक में पड़ी सड़ती है उत्तम यह है कि कैसाही हीन स्वामी हो उसही की सेवा करने से इसकी मुक्तिहोती है और जो नारी श्मशान में सती होने की कामनाकरके जातीभई जितने पैर धरती में धरती है उतनेही अ.श्वमेध यज्ञों का फल मिलता है इसमें कुछ सन्देह नहीं है और सती होने के समान कोई धर्म नहीं है यह सुनतेही वह भी दण्डवतकर घर में आई और स्नान ध्यान कर बहुतसा दान दे चिता पास जाय परिक्रमाकर बोली हे नाथ ! मैं तुम्हारी जन्म २ मे दासी हूं इतनाकह यह भी आग में जाबैठी और जलगई इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन् ! इन तीनों में किसका सत अधिक हुआ तब राजा बोला उस राजा का वेताल बोला किसतरह राजा का तो कहा कि जिसने सेनापति की दीहुई स्त्री को छोड़ी और फिर आप उसही के लिये निजजान दी धर्म रक्खा और स्वामी के लिये सेवक को जान देना तो उचितही है और पति के लिये सती होना भी स्त्री का धर्मही है इससे राजा काही सत अधिक है ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेअष्टाशीतितमःप्रदीपः ॥ ८८ ॥

अथ ऊननवतितमःप्रदीपः॥

"देवो भूत्वा देवं यजेत" इति श्रुतिः॥

"देवरूप होकर देवता का यजन-पूजन करे" यह वेद-वाक्य है अर्थात् जिस देवता का आराधन करे तो तिसही के रूप हो एक चित्त से ध्यानकरे तब वह देवता सिद्ध होता है नहीं तो जरा भी दुचित्तता होने से सिद्ध नहीं होता है जैसे (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! (उज्जैन) नाम नगरी का (महासेन) नाम राजा था उसके राज्य में बसनेवाला (देवशर्मा) ब्राह्मण जिसके बेटे का नाम (गुणाकर) था वह बड़ाही जूआरी हुआ यहांतक कि जो कुछ उस ब्राह्मण का धन था सो सब जूयें में हारगया तब तो सारे कुटुम्ब के लोगों ने इसको घर से निकालदिया और उससे कुछ बन न आया लाचार होकर वहां से चला तो कितने दिनों में एक शहर में आया वहां देखता क्या है कि एकयोगी धूनीलगाये बैठा है उसे दण्डवत् कर वहां बैठगया तो योगी ने इससे पूछा कि कुछ खायेगा तब बोला कि हे महाराज! जो कुछ दोगे तो क्यों न खाऊंगा तब तो योगी ने एक आदमी की खोपड़ी में अन्नभर के दिया तो तिसने देखकर कहा कि इस कपाल का अन्न नहीं खाऊंगा तब योगी ने मन्त्र पढ़ा तो एक यक्षिणी हाथ जोड़ इसके आगे आय खड़ीहुई और बोली जो आज्ञा हो सोही करूं तो योगी ने कहा इस ब्राह्मण को अच्छा भोजन दे तब तिसने एक अच्छा मन्दिर बनाय उसमें सामान सब सुख के रखकर उसे वहां से साथ लेगई और एक चौकी पर बिठाय भांति २ के भोजन व्यंजन पकवान थाल भर २

उसके आगे धरे तब उस ने मनमाना भोजन किया और फिर पानदान उसके सम्मुख धरा और केशर चन्दन गुलाब में घिस २ कर उसके बदन में लगाया फिर अच्छे २ वस्त्र सुगन्धों से वासित कर पहिराय फूल माला गले में डाल पलँगपर ला बिठाया इतने में सांझहुई तो वह भी उसके पास सेज पर आ बैठी तब तो तिसने सारी रैन चैनउड़ाया जब भोर हुआ तो यक्षिणी अपने घर गई और योगी के पास आकर बोला कि, हे महाराज! वह तो चलीगई अब मैं क्या करूं योगी बोला भाई वह तो विद्या के बल से आई थी और जिसे विद्या आती है उसी के पास रहती है तब इसने कहा स्वामी मुझे विद्या बताइये तो मैं इसे साधूं तब तो तिस योगी ने इसे मन्त्र बताया और कहा कि इसे चालीसदिन जल में बैठ जप सिद्धकरले उसने वैसाही किया तो कितने प्रकार के भय उसके नजर आये पर वह न डरा फिर योगी के पास आकर बोला कि, हे महाराज! कर लिया फिर योगी बोला अब आग में बैठके कर तब तो तिसके जी में निज घर का मोह होगया तो बोला पहले मैं घरवालों से मिल आऊं फिर सिद्धकरूंगा तब योगी ने कहा तेरी मर्जी जा सिधार तबतो यह निज घर आया तो लोग आय २ इसको गले लगा २ रो २ कहने लगे कि हे निर्दयी! तू अबतक कहां था हे पुत्र! ऐसे कहा है जो निज पतिव्रता स्त्री को तजदेता है वह उसे चाहती और वह उसे नहीं चाहता वह चाण्डाल के समान होता है और कहा है कि गृहस्थ धर्म के बराबर कोई धर्म नहीं है और घरवारी के बराबर इस संसार में कोई सुख देनेवाला

नहीं है और जे माता पिता की निन्दाकरते हैं वे अधम नुष्य हैं और उनकी गति कभी नहीं होती है ऐसा ब्रह्माजीने कहा है तब गुणाकर बोला कि यह शरीर रक्त और मांस से बनाहुआ है सो कीड़ों की खानि है और स्वभाव इसका ऐसा है कि जो इसकी एक दिन खबर नहीं लो तो इसमें दुर्गन्ध हो सड़ता कीड़े पड़जाते हैं जे इस ऐसे शरीर से प्रीति करते हैं वे मूर्ख हैं और जे इससे हित नहीं करते वे पण्डित हैं और इस शरीर का यही धर्म है कि बार २ जन्मलेता है और मरता है ऐसे इस शरीर का क्या भरोसा कीजे इसे बहुतेरा पवित्र कीजे पर यह पवित्र नहीं होता है जैसे मल मूत्र करके भरे घड़े को बाहर से कितना ही धोवो पर वह धोने से शुद्ध नहीं होता और कोयले को कितने ही रगड़ो पर वह कालापन नहीं तजता है इतना कहके फिर बोला कि किसकी माता किस का पिता है किसकी स्त्री और किसका भाई है इस संसार की यही गति है कि कितनेही इसमें जन्मलेते और कितनेही मर२ जाते हैं और जे यज्ञ योग करनेवाले हैं और जे अग्नि को ईश्वर जान मानते हैं और योगी जन निज मन में ही हरि को चीन्हते हैं इससे इस ऐसे गृहस्थधर्म को मैं नहीं मानता मैं तो योगाभ्यासही करूंगा इसने इतना कह घर से बिदा हो योगी के पास जाय अग्नि में भी बैठके मन्त्र साधा पर यक्षिणी नहीं आई तब तो योगी से कहनेलगा कि क्यों नहीं आई तो योगी बोला तुझे विद्या नहीं आई इतना कह बेताल बोला हे राजन् ! उसे विद्या क्यों नहीं आई राजा बोला वह साधक दुश्चित्ता था इस से न आई मन्त्र एकचित्त करने से सिद्ध होता

है दुचित्त से नहीं होता और ऐसा भी कहा है कि जे दान से हीन हैं उनकी कीर्त्ति नहीं होती और जे सत से हीन हैं उन्हें लाज नहीं आती है और जे न्याय से हीन हैं तिन्हें लक्ष्मी नहीं मिलती है और जे ध्यान से हीन हैं उनको भगवान् नहीं मिलते हैं फिर वेताल बोला कि जब वह आग में बैठगया तो दुचित्ता कैसे? राजा बोला कि जब वह कुटुम्ब से मिलने आया तब योगी ने जाना कि दुचित्ता है इससे इसे सिद्ध न होगा इस कारण उसे सिद्ध न हुआ और यह भी लिखा है कि कितनाही पराक्रम मनुष्य करे पर कर्म उसके साथही रहता है ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धेऊननवतितमः प्रदीपः ॥ ८९ ॥

अथ नवतितमः प्रदीपः ॥

गोलकेन गयायां वै पिण्डे दत्ते करत्रयम् ॥
निःसृतं पितुरेव स्यादधिकारस्तु कर्मणि ॥१॥

गोलक जो बाप के मरने के पीछे व्यभिचार से उत्पन्न हो ऐसे सुतकरके गयाजी में पिण्ड दियागया तो तीनों हाथ अर्थात् बाप का और उत्पादक का और पालक राजा का ये तीनों हाथ एकबार निकले तो तहां बापही को उस कर्म में पिण्डदेने का अधिकार है (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! (कमलपुर नाम) नगर और (सुदक्ष) नाम राजा और उसके नगर में (धनार्थी) नाम सेठ भी रहता था उसकी पुत्री का नाम (धनवती) था छोटी उमर में उसकी शादी एक (गौरीदत्त) वैश्य से करदी थी कितने दिन पीछे एक लड़की उसके हुई उसका नाम (मोहिनी) था जब वह कईएक वर्ष

की हुई तब उसका बाप मरगया और उस बनियें के भाई बन्धुओं ने उसका सर्वस्व छीनलिया वह लाचार हो अपनी बेटी का हाथ पकड़ अँधेरीरात में अपने बाप के घर को चली थोड़ी एक दूरजाय राह भूल एक मरघट में जा निकली वहां एक चोर शूलीपर टँगा हुआ था तो लाचार इसका हाथ उस के पांवपर लगा इतने में वह कहनेलगा कि मुझे किसने दुःख दिया है तब वह बोली मैंने जान कर दुःख नहीं दिया है मेरी तकसीर माफकर उसने कहा दुःख सुख कोई किसी को नहीं देता है जैसा विधाता कर्म में लिख देता है तैसाही पुरुष भोगता है और जे जन कहते हैं यह काम हम ने किया वे निपट नादान हैं क्योंकि मनुष्य तो तागेरूप कर्म में बँधे हैं वह जहां २ चाहता तहां २ ही खैंच लेजाता है विधाता की गति कुछ जानी नहीं जाती क्योंकि मनुष्य निज जी में तो कुछ विचारे और वह औरही कुछ कर देता है यह सुन धनवती बोली हे पुरुष ! तू कौन है उसने कहा मैं चोर हूं मुझ को तीसरा दिन शूलीपर चढ़ेहुआ है और जान नहीं निकली तब यह बोली कि किसकारण तो कहा कि मैं बिन ब्याहा हूं जो तू निज कन्या को मुझे ब्याह दे तो करोड़ अशर्फी देऊं मशहूर है कि पाप का मूल लोभ और दुःख का मूल नेह है जो इन तीनों को छोड़े सो सुख से रहै पर यह हर किसी से छूट नहीं सके निदान अन्तकाल लोभ लालच की मारी लाचारी विचारी हत्यारी धनवती ने कन्या उसको देदेने की इच्छाकरी और पूछी मैं यह चाहती हूं कि तेरे पुत्र हो पर किसतरह होगा इसपर कहा कि यह जब जवान उमर होगी तो तब एक सुन्दर

ब्राह्मण को बुलवा उसे सौ अशर्फ़ी दे उससे पुत्र उत्पन्न करवा-
वना यह सुनतेही धनवती ने उसको शूली से गिर्द चार बेर फिरा
दी यही शादी की तो चोर ने कहा कि पूर्व की ओर इन्दर कुयें
के पास एक वट का वृक्ष है उसकी जड़ में वे अशर्फ़ियां गड़ी हैं तू
जाकर सँभाल ले यह कहते २ ही उसकी जान निकली तब वह
वहां से चली और वहांही जाय उसमें से थोड़ी सी अशर्फ़ियां ले
अपने मा बापके घर गई उसने यह वृत्तान्त कह उनको निज
स्वामी के देश में लाई फिर एक बड़ी सी हवेली बना उसमें
रहने लगी और वह लड़की दिन २ बढ़ती रही वह जब यौव-
नवती भई तो एक दिन कोठे पर चढ़ी राह निहार रही थी
कि एक जवान ब्राह्मण उधर से आय निकला और यह उसे
देख काम के वश हो सखी से बोली हे आली! इस पुरुष को
तू मेरी मा के पास ले आव यह सुन वह उस ब्राह्मण को उस
की मा के पास ले आई वह उसे देखकर बोली कि हे ब्राह्मण!
मेरी बेटी जवान है जो तू इसके पास रहेगा तो तुझे सौ अ-
शर्फ़ी देऊँगी यह सुन वह प्रसन्न हो बोला बहुत अच्छा रहजा-
ऊंगा ऐसे वे बातें करते थे कि सांझ होगई उसे अच्छा २ भो-
जन दिया उसने ब्यालू किया सो मसल मशहूर है कि भोग
आठ प्रकार का होता है एक सुगन्ध दूसरे वनिता तीसरे वस्त्र
चौथे गीत पांचवें पान छठे भोजन सातवें सेज और आठवें
आभूषण ये सबही वहां मौजूद थे ग़रज़ जब पहर रातगई तो
तिसने रंगमहल में जाय उसके साथ सारी रैन चैन में काटी
जब भोरहुआ तो अपने घर गया और यह उठकर सखियों
के पास आई तब उनमें से एकने पूछा कहो दोस्त के साथ क्या २

मौज उड़ी तब उसने कहा सखी सुन जब कि मैं उसके पास गई तो एकाएकी डर सा मालूम दिया और जब उसने निज करकमल से मेरा हाथ गहा तब मैं उसके वश होगई और जब उसने मुझसे सोकर मनमाना काम किया तब तो मैं मस्त ऐसी हुई कि कुछ सुध न हुई क्या हुआ मैं कह नहीं सक्ती ऐसे कहा है कि एक नामी दूसरे शूरमा तीसरे चतुर चौथे सरदार पांचवें सखी छठे गुणवान् सातवें स्त्रीरक्षक हो ऐसे पुरुषको नारी इस जन्म में तो क्या उस जन्म में भी नहीं भूलती हासिल यह है कि उसी रात को गर्भ रहा जब कि दिन पूरे हुए तो एक लड़का पैदाहुआ छठी की रात को तिसकी मा ने सपने में देखा कि एक योगी जिसके शिरपर जटा माथे पर चन्द्रमा उज्ज्वल भस्म लगाये श्वेत यज्ञोपवीत श्वेत कमलों के आसन पर बैठा सफ़ेद सांपों की सेली पहने गले में मुण्ड-माला डाले एकहाथ में खप्पर और दूसरे में त्रिशूल लिये हुए महाभयावनी सूरत बनाये उसे सोंहीं आ कहने लगा कि कल आधीरात के समय इसको एक पिटारे में रख हज़ार मोहर उसके साथ रख राजद्वार पर रख आ यह कहतेही सुनके चौंकउठी और भोरभये उसने निज माता से सब बात कही यह सुन दूसरे दिन उसकी माता उसीतरह पिटारे में रख उस लड़के को राजा की ड्योढ़ीपर धरआई और उधर उस राजा को भी स्वप्न आया कि एक पुरुष दशभुजा पांच शिर एक २ चांद हरएक शिर में तीन २ आंखें दांत बड़े २ त्रिशूल लिये अति डरावनी सूरत किये इसके सामने आन बोला हे राजन्! तेरे द्वारपर पिटारे में एक लड़का है उसे तू ले वही तेरे

राज्य का मालिक होगा इतना सुनतेही राजा की भी आंखें खुलगई तब रानी से सब वृत्तान्त कहा फिर वहां से उठ दरवाजेपर जाकर देखा कि पिटारा धरा है ज्योंहीं पिटारे को खोलकर देखा तो उसमें एक लड़का और हज़ार अशर्फ़ी का तोड़ा है तो तिस लड़के को निकाल लिया और द्वारपाल से बोला इस लड़के को निकाल फिर महल में ले जाय रानी की गोद में दिया इतने में प्रभात भया तो राजा ने बाहर आ पण्डितों को बुलायके कहा कि कहो इस लड़के के क्या २ लक्षण हैं तब तो तिन पण्डितों में से सामुद्रिक जाननेवाला ब्राह्मण बोला कि हे महाराज! इसमें तीन लक्षण तो प्रत्यक्ष राज्य भोगने के दीखते हैं एक तो बड़ी छाती दूसरे ललाट तीसरे बड़ा चेहरा सिवाय इसके हे महाराज! जो बत्तीस लक्षण पुरुष के होते हैं सो सब इसमें हैं इससे निस्संदेह यहही आप के राज्य को करेगा यह सुन राजा ने प्रसन्न हो निज गल से मोतियों का हार उतारकर उस ब्राह्मण को दिया और सब ब्राह्मणों को भी बहुत सा दान दिया फिर राजा ने कहा इसका नाम रक्खो तब पण्डितों ने कहा हे महाराज! आप गँठजोड़ा बांध बैठिये और लड़के को गोद में लेलीजिये और मंगलामुखियों को बुला मंगलाचार कराओ तब हम शास्त्ररीति से नामकरण करें यह सुन राजा ने दीवान को आज्ञादी कि जो ये कहें सोही करो तो दीवान ने सारे नगर में उसीसमय लड़के होने की डौंड़ी फिरादिया तब सब आये और मंगलाचार होने लगे तब राजा रानी लड़के को गोद में लेकर बैठे तब एक ज्योतिषी ने शास्त्र के अनुसार उसका नाम (हरदत्त) रक्खा

और वह दिन २ बढ़नेलगा निदान वह नौवर्ष की उमर में छः शास्त्र और चौदह विद्या पढ़कर परिडत हुआ इसमें भगवान् का चाहाहुआ कि राजा रानी मरगये और वह राजगद्दी पर बैठा और धर्मसे राज्य करनेलगा कितने दिन वीते वह चिन्ता करनेलगा कि मैंने मा वाप के जन्म लेकर वृथाही खोया उनके निमित्त कुछ न किया मसल है कि जे दयावान् ज्ञानी हैं उनका वैकुण्ठ में वास होता है और जिनका मन शुद्ध नहीं तिनका जप, योग, व्रत, तप सब वृथाही हैं और जे श्रद्धा हीन डिम्भ से श्राद्ध करते हैं तिनका किया कर्म निष्फल होता है और उनके पितर निराश हो चलेजाते हैं यह राजा ने शोच समझकर विचारा कि अब पितृकर्म किया चाहिये यह विचारकर हरदत्त गयाजी में गया और जाकर फल्गू नदी के तीर जाय पिण्डदान देनेलगा कि उस नदी में तीनजनों के हाथ निकले तो तब वह देख जी में घबराकर बोला कि किसके हाथ में पिण्ड देऊं इतनी कथा कह वेताल बोला कि हे राजन् ! इन तीनों में किसको पिण्ड देना चाहिये तब राजा ने कहा कि चोर को देना तब फिर वेताल बोला किस कारण राजा ने कहा कि उस ब्राह्मण का बीज तो मोल लि- यागया और राजा ने हजार अशर्फ़ी ले पाला इससे उन दोनों को अधिकार नहीं हुआ ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे नवतितमःप्रदीपः ॥ ९० ॥

अथ एकनवतितमःप्रदीपः ॥

पितृभ्यां विक्रीतो राज्ञा खड्गेन घातितो बालः ॥

शरणंकंसमुपेयाद्दैवंचेच्छेद्बलिंस्वीयम् ॥ १ ॥

जो बालक मा बाप करके बेचागया और राजा ने खड्ग से उसका शिर उतराया और जो देव आप बलिलेना चाहता है तो तब वह बालक किसकी शरण जावे (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजन्! चित्रकूट नाम नगर वहां का राजा (रूपदत्त) नाम वह एक दिन अकेला सवार हो शिकार को चला तो भूला २ एक महावन में जानिकला वहां जाय देखता क्या है कि एक बड़ातालाब है उसमें कमल खिलरहे और भांति २ के पक्षी कलोलें कररहे हैं तालाब के चारों ओर वृक्षों की गहरी २ छांह में ठंढी २ हवा सुगन्ध के साथ आरही थी यह भी धूप का सतायाहुआ था तो घोड़े को एक दरख्त में बांध उसका जीनपोश बिछाय कर बैठगया फिर एकघड़ी बीती तो एक अतिसुन्दरी यौवनवती ऋषिकन्या वहां फूल लेने को आई उसे फूल तोड़ते देख राजा काम के वश हुआ जब वह फूल चुन निज स्थान को चली तब राजा बोला यह तुम्हारा कैसा आचार है हम तुम्हारे आश्रम में अतिथि आये और तुम हमारी सेवा न करोगी वह यह सुनके खड़ीरही तब राजा ने कहा कि शास्त्र यह कहता है जो उत्तम वर्ण के घर कोई नीच चाण्डाल भी अतिथि आजावे तो वह पूजनीय है और चोर हो या जूआरी शत्रु हो व पितृघातक पर जो वह निज घर आवे तो तिसकी भी पूजाही करनी उचित है क्योंकि अतिथि सबका गुरु है जब राजा ने ऐसा कहा तो वह खड़ी हुई और फिर तो दोनों नजर मिलाने लगे कि इतने में मुनि भी आगया तो राजा ने तिसे तपस्वी देख नमस्कार

करी तो तिसने भी (चिरंजीव) यह कहके आशीष दी पीछे मुनि ने राजा से कहा कि किस कारण यहां आये हो राजा ने जवाब दिया कि, हे महाराज ! शिकारकरने को आया हूं तब वह बोला कि किसलिये यह महापाप करता है ऐसा कहा है कि जन एक जन्म में तो पाप करता है और अनेक जन्म उसका फल भुगतता है तब राजा ने कहा कि हे मुनिजी ! मुझपर दयाकरके धर्म का विचार कहो तब वह मुनि बोला कि, हे महाराज ! सुनिये जो जीव तृण जल खा पी वनवास करते हैं तिनको मारने से बड़ा अधर्म होता है और पशु पक्षी मनुष्य इनके पालन का बड़ा धर्म है और ऐसा कहा है कि जो भगवत् की शरण आये उसे वे निर्भय करदेते हैं सो महादान का फल लेते हैं और ऐसा कहा है कि क्षमा बराबर धर्म नहीं और संतोष के समान सुख नहीं है मित्रतातुल्य धन नहीं और दया के सम धर्म नहीं जे नर निज धर्म्म में सावधान हैं और धन गुण विद्या यश प्रभुता का अभिमान नहीं करते और जे जन निजस्त्री से संतुष्ट हैं सत्यवादी हैं वे अन्तकाल में मुक्ति पाते हैं और जे जटाधारी दयाहीन निरायुध को हनते हैं वे नर नरक में पड़े सड़ते हैं और जो राजा रय्यत के दुःख दायियों को दण्ड नहीं देता है वह भी नरक भोगता है और जो राजपत्नी या मित्र की स्त्री या कन्या या आठ नौ महीने के गर्भवाली से भोग करते हैं वे महानरक में पड़ते हैं ऐसा धर्मशास्त्र में लिखा है यह सुन राजा ने कहा कि हे महाराज ! आजतक जो पाप किया सो किया पर फिर भगवान् ने चाहा तो अब मैं ऐसा काम नहीं करूंगा तब तो तिस राजा के ऐसे कहने पर

प्रसन्नहुए मुनिने कहा कि मैं तुझपर प्रसन्नहुआ तू अब वरमांग तो तिसने शीघ्रही याचना की कि जो महाराज आप मुझपर प्रसन्नहुए हो तो अपनी कन्या मुझ को दीजिये तबतो अति-दयावान् तिस मुनि ने निज कन्या का उसके साथ गन्धर्ववि-वाह करदिया और आप स्थान को गया फिर राजा उस कन्या को ले अपने नगर को चला कि आधीदूर राह में सूर्य्य अस्त हुआ और चन्द्रमा उदय हुआ तब राजा एकठौर घने से दरख्त देख वहां उतर घोड़ा जड़ में बांध आप ज़ीनपोश बिछाय दोनों सोरहे दोपहर रात के समय एक राक्षस आय राजा को जगाकर कहा कि हे राजन्! मैं तेरी स्त्री को खा-ऊंगा राजा ने कहा ऐसा मतकर जो तू मांगे मैं सोही तुझे दूंगा तब बोला हे राजन्! जो तू सात वर्ष के ब्राह्मणके लड़के का शिर काटकर देवे तो मैं इसे नहीं खाऊं तब तो तिस राजा ने निज प्रयोजन के लिये कहा कि मैं ऐसाही करूंगा आज के सा-तवें दिन तू मेरे नगर में आइयो इसीतरह राजा को वचनवद्ध कर राक्षस अपने स्थान को गया और भोरभये राजा भी म-हल में पधारा मन्त्री ने सुनकर बहुत सी दास्यता की और भेट दी तो राजा ने वह सब वृत्तान्त कह कहा कि सातवें दिन वह आवेगा तबमन्त्री बोला कि आप चिन्ता न करो भगवान् भला करेंगे इतना कह मन्त्री ने एक सवामन सोने का पुतला बन-वाकर उसमें जवाहिर जड़वाय एक छकड़े में रखवा चौराहे में खड़ा करवाकर उसके रखवालों से कहा कि जो कोई इसे दे-खनेको आवे उससे यही कहो कि जो ब्राह्मण अपने सात वर्षके लड़के का शिर काटकर राजा को दे सो सोनालेवे यह कह

कर चलाआया फिर लोग जो उसे देखने को आते थे उनसे चौकीदार यही कहदेते थे तब दो दिन तो योंहीं बीते तीसरे दिन तिसी नगरी का एक दुर्बल सा ब्राह्मण जिसके तीन बेटे थे उसने यह बात सुन नगर में आय ब्राह्मणी से कहनेलगा कि एक पुत्र अपना राजा को बलिदेने के लिये दिया जाय तो सवामन सोने का जड़ाऊ पुतला मिले यह सुन ब्राह्मणी बोली कि छोटे लड़के को न दूंगी तब मँझला लड़का बोला कि पिता मुझ को दीजिये उससे कहा अच्छा फिर वह ब्राह्मण बोला संसारमें धनही मूल है और धनहीनको सुख नहीं और दरिद्री हुआ तो तिसका संसार में आना वृथा है इतना कह मँझले लड़के को लेजा चौकीदारसे कहा कि यह लो और उस पुतले को लेके घरआया और उस लड़के को लोग मन्त्री के पास ले गये और सातवें दिन वह राक्षस भी आय पहुँचा तो राजा ने चन्दन,अक्षत,पुष्प,धूप,दीप, नैवेद्य,पान, फूल से इसकी पूजा की और उस लड़केको बुलवा खड्ग हाथ में लेकर बलि के लिये तैयारहुआ तोवह लड़का पहिले तो हँसा फिर रोया फिर राजा ने ऐसा खड्ग मारा कि धड़ से शिर न्यारा होगया सच है जो ज्ञानीजन कहगये कि दुःखकी खानि स्त्री है और यहही विपत्ति का घर और साहस की गिरानेवाली मोह की करनेवाली धर्म की हरनेवाली ऐसी जो विष की जड़ हो उसे उत्तम किसने कहा है और ऐसा कहा है आपत्ति के लिये धन की रक्षा करनी और धन देके स्त्री की रक्षाकरे और धन स्त्री देकर निज जीव को बचावे इतनी कथा कह वेताल बोला हे राजन्! मरनेमें आदमी रोता है वह क्यों हँसा राजा बोला वह यों हँसा

कि बालक अवस्था में मा रक्षा करती है और बड़ा होनेपर पिता तिसकी रक्षा करता है तथा प्रजापर दुःख हो तो तिसे राजा दूरकरे यह तो संसार की रीति है और मेरा यह हाल है कि माता पिता ने तो धन के लोभ से मुझे बेचदिया और राजा खड्गले मारने को तैयार हुआ और देवता आप बलि लेता है दया इन तीनों में किसी को न आई कहो किसकी शरण जाऊं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेएकनवतितमः प्रदीपः॥ ९१॥

अथ द्विनवतितमः प्रदीपः॥

व्यभिचारेऽपि विरहान्मृतौ यो नारिपूरुषौ॥
दृष्ट्वा स्वामी म्रियतेचेत्सत्त्वाधिक्यं तु तस्य हि॥१॥

—व्यभिचार कर्म में आपसमें वियोग होने के कारण से मर गये स्त्री-पुरुष इन दोनों को देखकर उस स्त्री का वैवाहिक पति जो मर जावे तो तिसका सत अधिक होताहै (दृष्टान्त) बेताल बोला हे राजन्! (विशाल) नाम नगर वहां का (विपुलेश्वर) नाम राजा था तिसके नगर में (अर्थदत्त) नाम बनियां उस की बेटी का नाम (अनंगमंजरी) था उसकी शादी कम्बलपुर में (सुश्रीनाम) बनियें से करदी थी वह कुछ दिन बीते समुद्र पार बनिजकरने को चलागया और उधर यह जवान हुई तो एक दिन निज कोठे पर चढ़ी तमाशा देखती थी कि एक ब्राह्मण का लड़का (कमलाकर) उधर से आया तो इन दोनों की चार २ नजरें हुईं तो तब मोहित हो बेसुध हुए घड़ीभर में उनने तो सुरतसंभाल राहली और उधर वह उसकी जुदाई

की पीर से मरीजाती थी इतने में सखी ने आनकर इसे उठाई पर इसे कुछ अपनी सुधि न थी फिर उसने इसपर गुलाब छिड़का और सुगन्ध सुँघाई इतने में उसे होश हुआ तो बोली कि हे कामदेव ! महादेव ने तुझे जलाकर भस्म भी करदिया पर तू तब भी बुराई से नहीं चूकता है और बिन अपराधहारी बिचारी लाचार अबलाओं को आनके दुःख देता है ये बातें कररही थी कि इतने में सांझहुई और चांद नजर आया तब तो चांदनी की तरफ देखके बोली कि हे चन्द्रमा ! तेरी किरणों में अमृत बताते हैं आज वह भी मेरे कर्म का विषही होगया फिर सखी से कहा कि मुझे यहां से उठाकर लेचलो क्योंकि मैं मरीजाती हूं इस चांदनी से मेरे शरीर में आग लगती है तब वह उसे उठाकर चौबारे में लेगई और कहा कि ऐसी बात कहते तुझे लाज नहीं आती है तब तिसने कहा हे सखी ! मैं सब जानती हूं पर विरह की आग से ज्यों २ जलती हूं त्यों २ मुझे यह घर जहर नजर आता है तब सखी बोली हे आली ! तू खातिरजमा रख मैं तेरा दुःख दूरकरूंगी इतना कह वह सखी तो अपने घरआई और इसने निज जी में विचार किया कि इस शरीर को प्यारे के कारण तजदेना चाहिये और दूसरा जन्म पाय तिसे पायके सुख भोगना यह विचार गले में फांसी डार उसने चाहा कि इसे खींचूं इतने में सखी आपहुँची तो तिसने झट उसके गले से फांसी निकालली और कहा कि जीने से सब कुछ होता है मरने से कुछ नहीं होता है तब वह बोली कि ऐसे जीने से मरनाही भला है सखी ने कहा कि तू एक घड़ी सुस्ता कि मैं उसे जाकर ले

ाती हूं इतना कह वह वहां गई और देखा तो वह भी
सी के विरह से व्याकुल होरहा है और उसका मित्र तिसपर
लाव जल लाकर छिड़करहा है और केले के कोमल २ पत्तों
हवा कररहा है तिसपर भी वह विरह की आग में जलाही
ला पुकारता है और मित्र से कहता है कि जहरला जिसे
खाकर प्राण तजूं और निज प्यारी से जाय मिलूं इसकी
ह अवस्था देख उसने निज जी में कहा कि कैसाही साहसी
ण्डित चतुर विवेकी धीर मनुष्य हो पर कामदेव उसे एक
ण में विकल करदेता है इतना मन में विचार सखी ने उससे
हा कि अय कमलाकर तेरी अनंगमंजरी ने कहा है कि तू
आकर मुझे जीवदान दे इसने सुनतेही कहा कि यह तो ति-
सने मुझे जीवदान देहीदिया इतना कहकर उठ खड़ाहुआ
और सखी इसे अपने साथ लियेहुए अपनी सखी उसकी प्रिया
के पास आई यह वहां जाकर देखे तो वह मुई परी है फिर
इसने भी उसे देख आह का ऐसा नअरः मारा कि उसके साथ
इसका दम निकलगया और जब सुवह हुई तो तिसके घर के
लोग इनको मरघट में लेगये और चिता चुन उनके आगल-
गाई थी कि इतने में उसका खाविंद भी परदेश से मरघट की
राह आ निकला तब आपलोगों के रोने की आवाज सुनकर
यह वहांगया तो देखता क्या है कि इसकी स्वकीया स्त्री पर-
पुरुष के साथ सती होती है तब तो तिसने यह चरित्र देख
उसके विरह में आय आप भी उसही आग में कूदपड़ा और
जलकर मरगया यह अचरज देख नगर के लोग बोले कि
ऐसा कभी न देखा न सुनाथा इतनी कथा कह बैताल बोला

हे राजन्! इनतीनों में कौन कामी और किसका सत हुआ तब राजा बोला तिसका खाविंद अधिक कामी क्योंकि जिसने निज नारी को और के लिये मरी देख प्रेम में मग्नहुआ इससे उसका सत अधिक है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेद्विनवतितमः प्रदीपः ॥ ९२ ॥

अथ त्रिणवतितमः प्रदीपः ॥

शयने चतुरश्चतुरो
वासःसप्तपुटान्तःस्थं केशंयोऽभिजानाति ॥ १

भोज्य भोजनचतुर और स्त्रीचतुर और शयन (सेज) इन तीनों चतुरों में शयन चतुरही चतुर अत्यन्त [illegible] गिना जाताहै जो सात पड़तों के भीतर के केश को ज[illegible] तिसपर (दृष्टान्त) वेताल बोला हे राजा विक्रमादित्य! धर्मपु[illegible] नाम नगर वहां (धर्मज) नाम राजा राज्य करता था उसके नगर में (गोविन्द) नाम ब्राह्मण जिसके षट्शास्त्र पढ़े और सब कर्मों में सावधान था उस ब्राह्मण के हरिदत्त, सोमदत्त, यज्ञदत्त और ब्रह्मदत्त ये चार पुत्र थे वे भी बड़े पण्डित और चतुर और पिता की आज्ञा में परायण थे कितने एक दिनों पीछे उसका बड़ा बेटा मरगया तो तिसके वियोग से वह भी मरनेलगा तो तिस समय वहां के राजा का पुरोहित (विष्णुशर्मा) आनकर समझानेलगा कि यह मनुष्य जिस समय माता के गर्भ में आता है तो पहले वहांही दुःखपाता है फिर जन्म में और बालपन में दुःखपाय जवानी में काम के वश हो प्रियतम के वियोग में दुःख पाता है फिर वृद्धपन में

पने शरीर के निर्बल होने से महाही दुःख सहता है, ग़रज़
स संसार में जन्मलेने से बहुतही दुःख पाता है और सुख
ड़ा मिलता है क्योंकि यह संसार दुःख का कारण है अगर
ोई दरख़्त की फुनगीपर जा बैठे वा पहाड़ की चोटीपर
ा चढ़े या पानी में घुसरहे वा लोह के पिंजरे में छिपरहे अ-
वा पाताल में जाछिपे पर तब भी काल उसे नही छोड़ता
और पण्डित, मूर्ख, धनवान्, निर्धन, ज्ञानी, अज्ञानी,
लवान्, निर्बल कैसाही कोई होवे पर यह सर्वभक्षक काल
किसी को भी नहीं छोड़ता है तमाम कम से कम सौ वर्ष
ी मनुष्य की अवस्था रहगई तिसमें से भी आधी तो रात
ो सोने से जाती है और आधी से आधी बाल और वृद्धपन
ें बीतती है शेष जो रही सो विवाद वियोग संयोग में गुजर
ाती है और जीव जो है वह जल के तरंग की तरह चंचल
ै इससे इस मनुष्य को सुख कहां से हो । इस संसार में सत्य-
ादी मनुष्य मिलना कठिन है और दिन २ देश उजड़ते हैं
ाजा लोभी होते हैं पृथ्वी मन्द फल से फूलती है और चोर
ुराचारी पृथ्वीपर कुकर्म करते हैं और जप, योग, व्रत, तप
स संसार में थोड़ा रहा है राजा कुटिल लालची ब्राह्मण और
सबलोग लुगाई के वश होरहे हैं स्त्री चंचल प्रबल होरही पुत्र
पिता की निन्दा करता और मित्र शत्रुता करता है और
देखो जिसका मामा कन्हैया और पिता अर्जुन ऐसे तिस
अभिमन्यु को भी काल ने नहीं छोड़ा और जिससमय म-
नुष्य मरता है तब सब लक्ष्मी आदि वस्तु घरही में रहती हैं
और मा, बाप, जोरू, लड़का, भाई, बन्धु कोई काम नहीं

आता है भलाई बुराई पाप पुण्यही साथ जाता है और कुटुम्ब के लोग उसे मरघट में लेजा जला देते हैं और इधर दिन होता फिर रात होती है इधर चांद छिपा उध उदय होता है ऐसेही जवानी जाती है और वृद्धपन आता इसीतरह काल बीता जाता है पर तब भी इस मनुष्य ज्ञान नहीं होता देखो सतयुग में मान्धाता ऐसे राजा हुए जिनका यश सारे संसार में फैलगया और त्रेता में (श्रीराम चन्द्रजी) हुए जिन्हों ने समुद्र का पुल बांधकर (रावण को मारा) और द्वापर में राजा युधिष्ठिर ने ऐसा राज्य किया कि जिसका यश आजतक लोग गातेहैं पर काल ने उनको भी नहीं छोड़ा इससे इस संसार में कुछ सार नहीं है इससे अब आप कोई पुण्य काम कीजिये तब तो विष्णुशर्मा ने विचारकर बेटे से कहा कि मैं यज्ञ करता हूं तुम समुद्र से जाकर कछुआ ले आओ यह पिता की आज्ञा पाय वे धीवर के पास गये और एक रुपया दे कहा कि एक कछुआ पकड़लादे तब उसने कछुआ ला दिया तो तिनमें से बड़े भाई ने मँझले से कहा भाई तू इसे उठा ले जो मैं इसे उठाऊंगा तो मेरे हाथों में दुर्गन्ध होजावेगी क्योंकि मैं भोजन में चतुर हूं तो मुझ से भोजन नहीं किया जावेगा फिर मँझला बोला मैं स्त्री रखने में चतुर हूं और छोटे ने कहा मैं सेज में चतुर हूं तो तीनों आपस में विवाद करनेलगे तो झगड़ते २ राजा के पास गये राजा से द्वारपाल ने अर्ज किया कि तीन ब्राह्मण दरवाजे पर खड़े हैं तब राजा ने उनको अन्दर बुलवाकर कहा कि किसवास्ते झगड़ते हो तब वे बोले कि हम तीनों तीन काम में चतुर हैं

हमारा न्यावकरो तब राजा ने तिनकी परीक्षा करने के लिये भोजनचतुर से कहा कि ठहरो और निजभण्डारी को बुलाय कर कहा कि भांति २ के व्यंजन और पकवान बनाकर इस ब्राह्मण को भोजन करवावो यह सुन रसोइये ने जाय रसोई तैयारकर भोजनचतुर को थालपर लेजाय बैठाया और इसने ग्रास उठाया और चाहा कि मुँह में लेऊं पर इसी में उसको ऐसी दुर्गन्ध आई कि छी २ कर हाथ धो खड़ाहोगया और राजा के पास आया तो राजा ने पूछा तुम ने सुख से भोजन किया वह बोला महाराज ! कुछ नहीं खाया उसमें दुर्गन्ध आती थी फिर राजा ने कहा कि दुर्गन्ध का कारण कह उस ने कहा महाराज ! मरघट की भूमि के चावल थे मुरदे की बास उसमें आती थी इस कारण न खाया यह सुन राजा ने उस रसोइये को कहा कि ये किस गांव के चावल थे उसने कहा (शिवपुर) के राजा ने कहा वहां के किसान को बुलावो तो उसने वहां के ज़मींदार को हुज़ूर में बुला हाजिरकिया राजा ने पूछा चौधरी ! ये चावल किस भूमि में के थे उसने कहा कि महाराज ! मरघट की भूमि के हैं। यह सुन राजा ने उस ब्राह्मण से कहा कि तू सचही भोजन में चतुर है इसमें सन्देह नहीं फिर स्त्रीचतुर को बुलाय अलग मकान में पलँग बिछवाय सामान मौज के रखवाकर कहा आराम कीजिये तब वे दोनों बातें करते एकसेजपर सोये और मुसकराकर उसने चाहा कि एक बोसालेऊँ सोही उसे मुँह में से बासआई तो वह मुँह हटाय पीठ देकर सोरहा और राजा झरोखे में से सब हाल देख रहा था फिर राजा निज महल में जाय आराम

से सोया भोर होतेही उठ उस ब्राह्मण को बुलाय पूछा कि तुम ने रैन चैन से गुजारी? वह बोला महाराज! बड़ेही दुःख से काटी है राजा ने कहा कौन कारण से तो वह बोला इसके मुंह में बकरी की बासआती थी इसके मारे मरनेलगा तब तो राजा ने उस दाई को बुलाकर पूछा कि यह औरत तू कहां से लाई थी तिसपर उसने जवाबदिया महाराज! यह मेरी बहन की बेटी थी जब तीनमहीने की हुई तब इसकी मा मरगई और मैंने इसे बकरी का दूध पिला २ कर पाली है यह सुन राजा ने उस ब्राह्मण से कहा कि सचमुच तू नारीचतुरही है फिर तो तिस सेजचतुर को बुलाया और उसके लिये सुन्दरसेज बिछवाई और उसपर अच्छे २ बिछौने करवाय फिर उसे सुवाया वह सोया तो लेटतेही आहकरी प्रभात होतेही राजा ने पूछा सुख से सोया वह बोला महाराज! आह २ करते इन आंखों से रैन काटी है तो कहा क्यों तौ तिसने जवाब दिया महाराज! उस सेज की सातवीं तह में एक बाल था सो चुभता रहा उसके मारे मुझे रैनभर नींद न आई यह सुन राजा ने उस सेज की सातवींही तह को देखा कि एक बाल उसमें लगा है तब तो तिसे भी राजा ने कहा कि तू सर्वोपरि सेजचतुर है और तिन तीनो को बहुत सा इनाम देकर बिदाकिये, । इतनी कथा कह बेताल बोला हे राजन्! इन तीनों में सेअधिक चतुर कौन है तो राजा ने कहा कि सेजचतुर अधिक है जिसने सातवीं तह में वह बाल बताया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतायां दृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्रनिबन्धे बेतालपञ्चविंशतिसारवर्णनोनामत्रिणवतितमःप्रदीपः॥६३॥

दृष्टान्तप्रदीपिनी सटीक

प्रथम भाग

प्राचीन भगवद्भक्तों के उपदेश
मय दृष्टांत

संग्रहकर्त्ता

पण्डित देवीसहाय शुक्ल

लखनऊ

[illegible] द्वारा

नवलकिशोर प्रेस में मुद्रित और प्रकाशित

सन् १९[illegible] ई०

छठीबार

दृष्टान्तप्रदीपिनी के प्रथमभाग का सूचीपत्र।

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
	अथाभिमानघ्ननिबन्धः—	
१	अर्जुन, गरुड़ और अञ्जनी का अभिमान दूर होना	४
२	कर्ण से अर्जुन का अभिमान दूर होना	७
३	अर्जुन को मुहूर्तमात्र माया दिखलाना	८
४	शिवजी की दयालुता का निरूपण	६
५	दुर्योधन को महाभिमान करना	१०
	अथ भक्तिनिबन्धः—	
१	गोपी आदि अनेक भक्तिनिष्ठों का कीर्तन	११
२	गज और ग्राह की कथा	१२
३	गोपियों के विरह का वर्णन	१३
४	हरिभक्त एक वैश्य का दृष्टान्त	१३
५	व्याध और बकरे का संवाद	१४
६	वैश्यभक्त का इतिहास	१६
७	द्रौपदी व अम्बरीष से दुर्वासाका अभिमान भङ्ग होना	१७
८	त्रिलोकचन्द्र सुनार का वर्णन	२०
९	राजा और वैश्यपुत्र का भय दूर करना	२३
१०	कृष्णभक्त नव्वाब का दृष्टान्त	२४
११	अजामिल का कथानक	२५
१२	वेश्यागामी द्विजपुत्र का दृष्टान्त	२६
१३	अर्धभक्त कबीर व सर्वभक्त कमाल का कीर्तन	२६
	अथ कार्पण्यनिबन्ध—	
१	नियम की दृढ़ता में दमड़ची का दृष्टान्त	२८
२	जाट, ब्राह्मण का दृष्टान्त	२६
३	दान देते पछताते कृपण वैश्य का निरूपण	३०
४	एक मूंजी सेठ की कथा में नारियल की भेंट करना	३०
५	हरिविमुख कृपण की कथारूप अमृत का विष होजाना	३२
६	मथुरामें व्यापारकरते किसी सेठ के मुनीम का दृष्टान्त	३२
	अथ औदार्यनिबन्धः—	
१	कबीर, शाहजहां बादशाह और कमाल की महिमा	३३
२	राजा बलिके समान किसी दानी का न होना	३४
३	महादानी कर्ण का दान सर्वोपरि जानना	३५
४	देव समूह पूजक रन्तिदेव का इतिहास	३५
५	महाराजाधिराज रघुराजा की महिमा	३५
६	उदार दानियों का उदाहरण	३६
	अथ बधिरनिबन्धः—	
१	महादुःखदायक बहिरापन	३६
	अथालस्यघ्ननिबन्ध—	
१	रात्रि में बहू को बीमार देख मा का आलसी बेटा को पुकारना	३७
२	दीपक बुझादेने में आलसी सेवक का आँख मीच लेना बतलाना	३६

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
	अथ मत्तनिबन्धः—	
१	नशेबाज़ को अपनी भूली वस्तु नहीं सम्हालना ..	३६
२	एक पोस्ती को स्त्री से खाट बिछाने को कहना ...	४०
३	नशेबाज़ को अपनी व पराये की न सुधि रहना ...	४०
४	भङ्गबाज़ों का दृष्टान्त ...	४१
५	मत्त में सिद्धता होनेसे द्रव्य की प्राप्ति ..	४२
	अथ मूर्खनिबन्धः—	
१	बागमें सैर करते चार मूर्खों का दृष्टान्त .	४३
२	ससुरालमें गये मूर्खस्वामी का वृत्तान्त	४५
३	मूर्खजनता का निरूपण ...	४६
४	मूर्खमूर्ख की मूढ़ता	४७
५	'ज़रा दर्पण लाना'	५०
६	किसी को चौबे से दर्पण लाने को कहना ...	५०
७	किसी से लखाई लक्षणा को मूर्ख का न समझना ...	५१
८	बहुतों से समझाये हुए मूर्ख का न समझना ...	५१
९	मूर्ख को हानि, लाभ, कार्य और अकार्य को नहीं जानना	५१
१०	शठ को अपनी शठता न छोड़ना ..	५२
११	गुरु और चेले का दृष्टान्त	५२
	अथ चातुर्य्यनिबन्धः—	
१	ज्ञान से उपजे बल का वर्णन	५४
२	हाथी को देख ज्ञानी गीदड़ का विचार करना ...	५५
३	बकरी के बुद्धिबल से सिंह का मरना ...	५६
४	मेंढक और चिड़ी की बुद्धि से हाथी का अन्धा होकर मरना ...	५७
५	सुन्दर वेश से जनका पूजित होना ...	५७
६	चलतेके पीछे चलते संसारी जनों का दृष्टान्त	५८
७	मनुष्योंको सर्व वस्तुओं का संग्रह करना ...	५८
८	मनुष्यों को निज स्वभाव वृत्तिसे ही वर्तना	५९
९	बुद्धि से ही विद्या का सफल होना	५९
१०	निज युवावस्था देनेसे प्रेत का स्त्री होजाना ...	६१
११	मायिकके प्रसंग में अयाचक द्विज का वृत्तान्त	६२
१२	कथामें कुछ न पाकर पण्डित को झूठेही मरजाना	६४
१३	सब ज्ञानों से बातों के ज्ञान का बड़ा होना ...	[illegible]
१४	मित्र के कहने से धनी को अपने नौकरोंको मकाई का कुन आदि खिलाना ...	[illegible]
१५	साठ अशरफीवाले साधु का दृष्टान्त	[illegible]
१६	हठ्ठू और पप्पू का वृत्तान्त	[illegible]
१७	बादशाह और जुआरी का दृष्टान्त ...	[illegible]
१८	योगायोग बतलाने वाले ज्योतिषी का दृष्टान्त ...	[illegible]
१९	मन्त्रिविरोधी वैश्य के जीते मरे का दृष्टान्त .	[illegible]
२०	भेड़िये से डरी बकरी को गाना सुनाना.. ...	[illegible]
२१	घुप्पकी कोठरी बनानेके लिये राजा को मन्त्री से कहना	

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
२२	बैकुण्ठ का विमान देखने को राजा से मन्त्री का कहना	७५
	अथ निर्णयनिबन्ध.	
१	निर्णय करनेवाले को ईश्वर जानना	७७
२	चोर की दाढ़ी में तिनके का दृष्टान्त	७८
३	किसी चतुर को सब जनों को एक-२ छड़ी दे दो अंगुल बढ़ने को बतलाना	७९
४	दयावान् दाताओं को चोरों को भी कुछ दे देना	७९
५	गन्धी का दृष्टान्त	८०
६	शहद में द्रव्य के छिपाने वाले किसी जन का रोगियों से निर्णय होना	८०
७	जल में चिकनई आने से हलवाई के द्रव्य का निर्णय	८१
८	वृक्ष की जड़ में द्रव्य गाड़ने वाले का पत्तियों से निश्चय होजाना	८१
९	थैली काटने वाले का दफ़ुगर से निर्णय होना	८१
१०	दोनों से अलग किये द्रव्य का दोनों सेही निश्चय होना	८२
११	चोरी का दृष्टान्त	८२
१२	किसी काश्तकार को दैव योग से राज्य मिलना	८२
१३	प्रसन्न होकर कुछ को किसी के लिये एक मोती देना	८३
१४	एक लड़के पर दो माताओं का झगड़ना	८४
१५	एक सेर कलेजे के मांस की शर्त पर जुआरी का निर्णय	८४
१६	विदेशी दो जनों की अशर्फियों का निर्णय	८४
	अथ मिश्रनिबन्ध.	
१	किसी दिन रात्रि में श्रीकृष्ण का राधा के घर जाना	८५
२	झुमिया वेश्या और गङ्गाधर का दृष्टान्त	८६
३	शंख और ढपोड़शंख का वृत्तान्त	८६
४	स्त्री के चेले का दृष्टान्त	८७
५	नेकी का फल बदी होना	८८
६	राम के घर न्याय है पर देर में होना	८९
७	निरपेक्षी महात्मा एक साधु का वृत्तान्त	९०
८	तेली के लड़के का दृष्टान्त	९१
९	व्यभिचारी बाबा की दीक्षा से मृत्यु होना	९२
१०	अजूबा मछली को देख राजा को बहुत सा धन देने पर तैयार हो जाना	९२
११	अँधियारी में अन्धे को दीपक ले पानी भरने जाना	९३
१२	बनिये के थापमार छुवे पर आठआना जुमाना	९३
१३	धनी होने पर पराया सुख न सहना	९४
१४	चौबे लोगों का दृष्टान्त	९४
१५	बैल की पीठ पै चढ़े खाते जाते देख किसी का मने करना	९५
१६	कबरें खोदने के लिये बादशाह का चौबों को लगाना	९५
१७	दो चालाकों का दृष्टान्त	९६
१८	अनजान गँवार से हमेशा बचे रहना	९७

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
१६	अशुद्धतामें किसानका वर्णन	६७
२०	घण्टाकर्ण राक्षसका वृत्तान्त	६७
२१	गूजरी और पण्डित का दृष्टान्त	६८
२२	माता, पिता की सेवा में तपस्वी का दृष्टान्त	६६
२३	राजा के साक्षीभूत राम से रक्षित सती का वृत्तान्त	१०१
२४	एक के साधे सबों का सधना	१०२
२५	पति के पैर चापती किसी सती का दृष्टान्त	१०२
२६	शठकी शठता को शठही का जानना	१०३
२७	शठके प्रति शठताही करना	१०३
२८	दो तोताओं का दृष्टान्त	१०४
२६	बिना विचारे काम नहीं करना	१०५
३०	सहसा काम नहीं करना	१०६
३१	अपनी बेटी के घर किसी कुटिल द्विजका भोजन करना	१०६
३२	पितृभक्ति में सात व्याधों का दृष्टान्त	१०७
३३	शीशपे लकड़ी धरे किसी लकड़िहारे का मौत मांगना	१०६
३४	एक वैश्य पुत्र का योगी से योग सीखना	१०६
३५	क्षुधार्त को शय्या आदि न भाना	११०
३६	शालग्राम शिला की उत्पत्ति	१११
३७	लाठीके खो जाने पर किसी ब्राह्मण का शोक करना	११२
३८	'पाप का' बाप, इसमें वेश्या का दृष्टान्त	११३
३६	रक्षा के विषय में राजा चन्द्रहास का इतिहास	११४
४०	करे तो डर न करे तो डर इस पर दृष्टान्त	११८
४१	चतुर स्त्री का दृष्टान्त	११६
४२	दो लड़कियों का दृष्टान्त	१२३
४३	माली का दृष्टान्त	१२४
४४	वेश्यागामी को गिरा पुष्प कृष्णार्पण करना	१२५
४५	राजा युधिष्ठिर व एक साधु का दृष्टान्त	१२५
४६	कोली और परमहंस का दृष्टान्त	१२६
४७	यती परमहंस का दृष्टान्त	१२६
४८	रानी को किसी यती की परीक्षा लेना	१२७
४६	अपक्वचित्त योगी का योगाभ्यास सीखना	१२७
५०	श्रीगङ्गाजी की महिमा	१२८
५१	युधिष्ठिर की राज्य में भूखे ब्राह्मण को थाल चुराना	१३०
५२	दो स्त्री वाले वैश्य का इतिहास	१३०
५३	अहीर का दृष्टान्त	१३१
५४	अन्तमता सो मता इसपर दृष्टान्त	१३२
५५	मरते समय किसी साधु का सारंगी सुनना	१३२
५६	मरते समय किसी साधु का शिष्यों से घण्टा बजने को कहना	१३३
५७	झूला झुलाकर किसी वेश्या का स्वर्ग जाना	१३३
५८	हरिवेषधारी किसी कपटी का पूजित होना	१३४
५६	किसी से बताया सत्कर्म का फलदायी होना	१३४
६०	अपना किया आपही भोगना	१३४

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
६१	रस में भेली का दृष्टान्त	१३५
६२	ऋष्यश्रृङ्ग का दृष्टान्त	१३५
६३	ब्राह्मण का दृष्टान्त ..	१३६
६४	परिडतसे नव्वावको सन्ध्या सिखलाने को कहना	१३७
६५	नव्वावको परिडत से धर्म पूछना	१३७
६६	किसी ब्राह्मण से कालिदास को राजा के पास चलने को कहना	१३८
६७	पिशाचिनी तृष्णा का वर्णन	१३८
६८	तीन अर्थवाले श्लोकका वर्णन	१३९
६९	चोरी निकालने का दृष्टान्त	१४०
७०	अज्ञानी को अपना पराया भेद मानना ...	१४०
७१	धर्म की सूक्ष्मगति पर दृष्टान्त	१४१
७२	मूर्ख ब्राह्मण का दृष्टान्त	१४२
	अथ ईश्वरप्रेमानिवन्धः—	
१	दृढ़भक्ति में मामा भानजे का दृष्टान्त	१४४
२	क्षमा में साधु वैश्य का दृष्टान्त	१४५
३	देवाजी ब्राह्मण का दृष्टान्त	१४७
४	भुवनसिंह का दृष्टान्त	१४६
५	कोढ़ी राजा का एक जोड़ा हंस मँगाना	१४६
६	कमधुज भक्त का दृष्टान्त	१५०
७	जयमल राजा का दृष्टान्त	१५०
८	श्रीधरस्वामी कोरामरक्षा से निजरक्षा करना	१५१
९	कुमार्गगामी भक्त का भी भगवान् से रक्षित होना	१५२
१०	चोर का दृष्टान्त	१५२
११	गणेशदेई रानी का दृष्टान्त	१५३
१२	कृष्णदासजी का दृष्टान्त	१५३
१३	शङ्कर व्यास शुकजी की कथा	१५४
१४	"व्यासो नारायणः स्वयम्" इसपर दृष्टान्त	१५५
१५	श्रीशुकदेव का साक्षात् शिव होना	१५६
१६	जयदेव कवि का इतिहास	१५७
१७	चतुर्भुज भक्त का दृष्टान्त ...	१६२
१८	भगवान्दासजी का दृष्टान्त	१६३
१९	चतुर्भुज राजा का दृष्टान्त	१६४
२०	लालाचार्य भक्त का दृष्टान्त	१६५
२१	मधुकर भक्त का दृष्टान्त ..	१६६
२२	क्षत्री के पुत्र का दृष्टान्त	१६७
२३	पादपद्माचार्यजी का दृष्टान्त	१६६
२४	घाटम चोर का दृष्टान्त	१६९
२५	चतुरदासजी का दृष्टान्त ...	१७१
२६	किसी द्रव्यार्थी का दृष्टान्त	१७२
२७	अलहजी का दृष्टान्त	१७३
२८	पृथ्वीराज का दृष्टान्त	१७४
२९	धनाभक्त का दृष्टान्त	१७५
३०	दो लड़कियों का दृष्टान्त	१७७
३१	नामदेवभक्त का दृष्टान्त	१७९
३२	सन्तदासभक्त का दृष्टान्त	१८५
३३	साक्षीगोपालजी का दृष्टान्त	१८६
३४	गजपति का दृष्टान्त	१८७
३५	सदनकसाई भक्त का दृष्टान्त	१८८
३६	कर्मानन्दजी का दृष्टान्त	१९०
३७	कूल्ह, अल्ह का दृष्टान्त	१९१
३८	जगन्नाथजी का दृष्टान्त	१९३
३९	रामदासजी का दृष्टान्त ...	१९३
४०	दयावान्साहूकारका दृष्टान्त	१९५
४१	राजाशिवि का दृष्टान्त	१९६
४२	राजा मयूरध्वज का दृष्टान्त	१९७
४३	राकाकुम्हार का इतिहास	१९९
४४	केवलरामजी का दृष्टान्त ...	२०१
४५	हरिव्यासजी की कथा .	२०१

प्रदीप	विषय	पृष्ठ
४६	पुरुषोत्तमपुरी के राजा का दृष्टान्त	२०३
४७	सुरेश्वरानन्दजी की कथा	२०४
४८	श्वेतद्वीपनिवासी भक्तों का दृष्टान्त	२०५
४६	अन्तर्निष्ठराजा का दृष्टान्त	२०७
५०	वशिष्ठजी का इतिहास	२०८
५१	विश्वामित्रजी का इतिहास	२०६
५२	भरतजी का इतिहास	२१०
५३	ज्ञानदेवजी का दृष्टान्त	२११
५४	लड्डूस्वामी का दृष्टान्त	२१२
५५	परशुरामजी का दृष्टान्त	२१३
५६	राका बाका का दृष्टान्त	२१४
५७	श्रीधरस्वामी का दृष्टान्त	२१५
५८	माधवदासजी का इतिहास	२२१
५६	नारायणदासजीका दृष्टान्त	२२३
६०	जीव गोसांईजी का दृष्टान्त	२२४
६१	सुरसुरीजी का दृष्टान्त	२२७
६२	हरिवंश की कथा	२२८
६३	हनुमानजी का दृष्टान्त	२२८
६४	नरहर्य्यानन्द का दृष्टान्त	२३०
६५	प्रेमनिधि का दृष्टान्त	२३१
६६	आशकरणजी का दृष्टान्त	२३३
६७	पीपाजी का इतिहास	२३५
६८	श्रीरङ्गजी का दृष्टान्त	२४३
६६	खड्गसेन का इतिहास	२४४
७०	रैदासजी का इतिहास	२४५
७१	कर्माबाई का इतिहास	२४८
७२	गुञ्जामाली का दृष्टान्त	२४०
७३	त्रिपुरदासजी का दृष्टान्त	२५२
७४	जनकपुरके साधु का दृष्टान्त	२५३
७५	युधिष्ठिर आदिकों का इतिहास	२५४
७६	मीराबाईजी का इतिहास	२५८
७७	करमैतीजी का इतिहास	२६३
७८	नरसीजी का इतिहास	२६५
७६	हरिदासजी का इतिहास	२७६
८०	रत्नावली का इतिहास	२७६
८१	बिल्वमङ्गल का इतिहास	२८४
८२	सूरदास मदनमोहन का इतिहास	२८८
८३	कील्हदासजी का दृष्टान्त	२६१
८४	केशवजी का इतिहास	२६२
८५	अम्बरीषकी रानीका दृष्टान्त	२६४
८६	शबरी का इतिहास	२६५
८७	विदुर और उनकी भार्या का इतिहास	२६६
८८	राजाभक्तदास का इतिहास	३०१
८६	विट्ठलदासजी का इतिहास	३०२
६०	कृष्णदासजी का दृष्टान्त	३०५
६१	माधवदासजी का इतिहास	३०६
६२	नारायणदासजीका इतिहास	३०७
६३	लीलानुकरण का दृष्टान्त	३०८
६४	मुरारिदासजी का इतिहास	३१०
६५	गदाधरभट्टजी का इतिहास	३१३
६६	रतवन्ती का इतिहास	३१६
६७	जसूधर का इतिहास	३१७
६८	कृष्णदासजी का इतिहास	३१८
६६	अलखरामजी का इतिहास	३१६
१००	ग्रन्थकारवंशवर्णन	३२०

इतिश्रीदृष्टान्तप्रदीपिनीप्रथमभागस्य सूचीपत्रं समाप्तिं पर्फाणोति शम् ॥

भूमिका

देखिये इस शास्त्रसमुद्र में कैसे २ दृष्टान्तरूप अमूल्य रत्न
रे हैं जिनके आनन्द के आगे रत्नाधीश जौहरी आदि भी
ुच्छ समझे जाते हैं क्योंकि उन रत्नों को तो डर वहुत रहता है
रन्तु इन रत्नों को कुछ भी डर नहीं है । परन्तु क्या करें वे
त्न जहां तहां कही २ ठौर स्थित थे, इसलिये विद्वान् ग्राहकजन
नको क्रम से एकत्र नहीं देखके अत्यानन्द को नहीं प्राप्त होते
। इसलिये इस अल्पबुद्धि शुभचिन्तक ने वहुतसे ग्रन्थादिकों
ं से इन रत्नों को चुन २ कर तथा शिष्टजनो के मुखसे यथोक्त उप-
ोगी अत्यन्त चमत्कृत रोचक 'इतिहास रत्नों' को सुन, तिन-
नवों को एकत्रकर क्रम से जिस २ प्रकरण के जो २ थे तिनको
हां २ क्रम से लगाकर जिसमें ग्राहकजनों को देखने में श्रम न
ो इस रीतिपर लगादिये हैं। तिन को समस्त विद्वानों के आ-
न्द के लिये वहुशिष्टजनप्रेरित सद्गुणग्राहक (मुंशी नवल-
केशोरजी) ने लेकर निज व्यय से स्वीय यन्त्रालय में छपवाकर
कट किया ऐसे उत्तम ग्रन्थों को निज प्रवन्ध से छपवा २ कर
उक्त मुंशीजी जगत् में यशोधन वर्षाते हैं इससे ये यशश्शरीरी
अजर अमर जानने इस विषय मे एक दोहा भी कहा है ॥

दो० जो जगमें प्रमुदितगुणी, प्रकटकरतगुणसोर ॥
सोजग में युगयुगजिवो, यशतननवलकिशोर॥१॥

समस्तविद्वानों का कृपापात्र जगत् का पूर्णहितैषी
शुक्लोपनामक पण्डित देवीसहाय शर्मा,
नारनवलीयः ॥



श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ दृष्टान्तप्रदीपिनी सटीका प्रारभ्यते।

प्रथमो भागः ।

ॐ गणाधिपतये नमः । हेरम्बोऽम्बाथ वेधो हरिपशुपतयो भास्कराद्या ग्रहा ये पञ्चाऽमी लोकपाला अथ दश विदिता दिक्प्रपा ये महान्तः ॥ मेषाद्या राशयश्चाऽश्विमुखवरमुखा याश्च नक्षत्रतारा योगा विष्कुम्भकाद्यास्सकलसुरवराः पान्तु मामत्र नूनम् ॥ १ ॥

वस्तुनिर्देशात्मकत्वेन ग्रन्थप्रशंसा ।

सुमङ्गलितमङ्गला विविधमङ्गलाचारिणी सुहृद्धृदयहारिणी मतिमतां मतौ चारिणी ॥ हृदे हृदि विहारिणी निखिलनिजजनोद्धारिणी मयाद्य परितन्यते स्फुटनिदर्शनोद्दीपिनी ॥ २ ॥

नानानिबन्धनिकराद्भुतसम्प्रभूतस्नेहेन दीपनगुणेन भृशं प्रपूर्णाः ॥ भूरीतिहासपरिवर्तनवर्तियुक्ता यस्यां ज्वलन्त्यविरतं विशदाः प्रदीपाः ॥ ३ ॥

अथ प्रथमः प्रदीपः ।

अथ तावच्छिक्षापूर्वकं दृष्टान्तमार्य्यावृत्तद्वयेनाह ।

कर्तव्यः कर्तव्यो नहि कर्तव्यो न चापि कर्तव्यः ॥
उभयावपि कर्तव्यौ नहि कर्तव्योऽभिमानोऽसौ ॥ १ ॥
पूर्वं हि हरिसमीपेऽर्जुनगरुडस्त्रीजनैः कृतं बहुशः ॥
करुणाकरान्मुरारेः सकृदभिमानत्रिकं नष्टम् ॥ २ ॥

अथ सारोद्दीपिनी भाषाटीका भण्यते ।

जो कर्तव्य-विहित सुकर्मादि हैं वे करना और न कर्तव्य-निषिद्ध-कुकर्मादि हैं उनको नहीं करना । किसी अवस्था में दोनों करने चाहिये अर्थात् कर्तव्य करना और अकर्तव्य भी करना तथा कर्तव्य-न करना और न-कर्तव्य-करना -परन्तु अभिमान तो कभी भी न करना चाहिये ।

इसपर दृष्टान्त है जैसे-एक समय गांडीवधनुषधारी अर्जुन ने द्वारकापुरी में विराजमान श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द से कहा कि हे महाराज ! जो मैं न होता तो महाभारत-संग्राम में अष्टादश सहस्र सेना को कौन हराता । और अब भी मैं अपने गाण्डीवधनुष के बलसे शरों से स्वर्ग की सिड्ढी बांध सक्ता हूं जिससे सर्वजन यथेच्छ स्वर्गगामी होंगे कोई भी नरक न भोगेगा (१) और गरुड़जी यह कहा करते थे कि जो मैं नहीं होता तो आप को मुहूर्त्तमात्र में कई सौ योजन दूर कौन ले चलसक्ता ? (२) और सत्यभामादि स्त्रियां सब आपस में यही कहा करती थीं कि भगवान् हम सबके प्यारे हैं केवल रुक्मिणी केही नहीं हैं (३) इसप्रकार इन तीनों का अभिमान नष्ट करने के लिये श्रीकृष्णचन्द्र ने पहिले गरुडजी से कहा कि हे मेरे प्रियभक्त, गरुड ! जाओ किंपुरुषखण्ड में हमारा परमभक्त हनुमान्नाम वानर रहता है उससे जाकर कहो कि रघुवंशावतंस श्रीरामचन्द्रजी महाराज आजकल द्वारकाजी में विराजमान होरहे हैं तुमको निजदर्शन

ने हेतु बुलाते हैं, यह कहकर उन्हें शीघ्रही ले आवो। तब तो
ह सुनतेही गरुड़जी बहुत वेग से उड़े और तुर्तही किंपुरुषखण्ड
पहुँच, हनुमान्‌जी को हे हनुमन्! २ ऐसे कहकर पुकारें
नुमान्‌जी समाधि लगाये थे इससे उन्हें कुछ सुनाई न दिया।
फेर तो गरुड़जी ने निकट जाकर उनका हाथ पकड़के हिलाया
व हनुमान्‌जीने चौंककर निज हाथ को फटकारा तो गरुड़जी
सौ हाथ दूर पर जा गिरे और कुछ पंख भी उनके उखड़
ये। मारे खेद के राम २ पुकारते गिरे त्योंहीं राम नाम सुनते
ी हनुमान्‌जी की समाधि खुली तो दूर पड़े हुए गरुड़जी को
ेखकर अत्यन्त दुःखित हुए और हरे राम २ कहकर बार २
ार्थना की कि हे स्वामिन्! जो मुझ दासपर अनुग्रह है तो इस
हरिभक्त का खेद दूर करिये। तब तो गरुड़जी चैतन्य हो उठे
और दण्डवत् प्रणाम की। हनुमान्‌जी ने पूछा कि हे हरिभक्त!
तुम कौन हो और किस कारण से आये हो कहो। गरुड़जी बोले
हे हनुमन्! श्रीरामचन्द्रजी द्वारकापुरी में विराजमान हैं तुम्हें
दर्शन देने हेतु बुलाते हैं। आप मेरी पीठपर सवार होकर चलिये
जिससे शीघ्र पहुँचें। हनुमान्‌जी ने कहा तुम चलो हम आते
हैं। गरुड़जी बोले शीघ्रही मेरे साथ बुलाये हैं। फिर हनुमान्‌जी
बोले तुम निस्सन्देह चलो हम तुम से पहिले पहुँचेंगे। गरुड़जी
यह सुनतेही अत्यन्त वेग से उड़े परन्तु हनुमान्‌जी उनसे पहिले
ही जा पहुँचे। पहुँचने के समय श्रीकृष्णचन्द्रजी ने रुक्मिणी,
सत्यभामा, जाम्बवती आदि स्त्रियों से कहा कि जो कोई तुममें
से सीता का रूप धारण करसके वही आकर हमारे पास बैठे
परन्तु जो सीतारूप में कुछ भी अन्तर रहा तो वह वनचारी
वानर तुरन्तही भक्षण करलेगा। इतनी बात श्रीकृष्णजी के मुख
से निकलतेही सीतारूप धारण करने की किसीकी भी सामर्थ्य
न हुई और सब श्रीरुक्मिणीजी केही मुख की ओर निहारने
लगीं। श्रीकृष्णजी ने रुक्मिणीजी से कहा कि तुम सीता बनो।

वे तुरन्त सीतारूप धारणकर आज्ञाले पास बैठगईं । हनुमान्जी आये, दोनों को साष्टांग प्रणाम किया और आज्ञा पा निकट बैठगये । श्रीकृष्णजी ने कहा कि हे हनुमन् ! हमने तुमको दर्शन देने हेतु तथा इसलिये बुलाया है कि आजकल अर्जुन बड़ा बली है । हनुमान्जी बोले होगा । श्रीकृष्ण बोले वह यह कहता है कि मैं अपने बल से स्वर्गनिसेनी बांधसक्ता हूं । हनुमान् बोले बांधसक्ता होगा । अर्जुन बोले आज्ञा हो तो बांध दिखाऊं ? हनुमान् बोले हॉ हॉ, बांधिये । तब अर्जुन ने निज गाण्डीव में भारी बाण लगा लगा कर दृढ़ सिड्ढियां बनाईं । हनुमान्जी ने कहा भाई पहले इन्हें देख लें फिर और बांधना यह कहकर उन पर पैर धरा तो वे चूर चूर होकर गिरीं । अर्जुन ने फिर भी अत्यन्त बल से दृढ़ सिड्ढियां बनाईं परन्तु वे भी उनके पैर रखतेही चूर चूर हो गिरीं तब तो अर्जुन अत्यन्तही क्रोध में भरा और यह प्रतिज्ञा की कि यातो अब की ठीक २ बनेंगी नहीं तो मैं चिता बना भस्म होजाऊंगा । निदान श्रीकृष्ण महाराज, निज भक्त की लाज के काज, कूर्मरूप हो उस सिड्ढी के नीचे जा बैठे । तब फिर हनुमान्जी ने पैरधरा तो वे न टूटीं तब दूसरा पैर धरा तब भी न टूटीं तब कहा मुझ से बली और ऐसा कौन है जो मेरे बलको सहसके ऐसे कह नीचेकी ओर ध्यान लगाकर देखा कि श्रीभगवान् कूर्मरूप हो बैठे हैं और सिड्ढियां उनकी पीठ में घुसरही हैं और वहां से रुधिर बहरहा है । हनुमान्जी शीघ्रही सिड्ढी से अलग हो बोले भाई तुम भगवद्भक्त हो भगवान् ने तुम्हारी रक्षा की पर ऐसा अभिमान फिर कभी किसी के साथ न करना । यह सुनतेही अर्जुन का अभिमान दूर हुआ १ गरुड़जी ने हनुमान्जी को अपने से पहले आ पहुँचे देख निज अभिमान छोड़ा था २ और स्त्रियां जब सीतारूप न धारण कर सकीं और रुक्मिणीजी को सीता बनी देखा तो अहंपद छोड़ा ३ इस प्रकारही इन तीनों के

अभिमान कृपाकारी मुरारीजी ने एक समय मेंहीं खण्डन किया इससे मनुष्य को कभी किसी के साथ अभिमान न करना चाहिये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसंहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामर्जुन-गरुड़-श्रीजनाभिमानखण्डनंनाम प्रथमःप्रदीपः॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ।

कर्ण से अर्जुन का अभिमान दूर होना वर्णन ।

मानं मानं शीलतो वर्द्धमानमीर्ष्या बुद्ध्या वर्द्धमानं कुमानम् ॥ पार्थः कर्णात् स्वर्णभारप्रदातुरेधोदाने न्यूनतामाप सद्यः ॥ १ ॥

(भावार्थ) जो मान शील और स्वभाव से वर्द्धमान है वह 'मान' कहावे, और जो ईर्ष्याबुद्धि से बढ़े वह 'कुमान' कहाता है जैसे अर्जुन; भारभर सुवर्णदान करनेवाले कर्ण से इन्धन के न देने में न्यूनता को प्राप्त हुये (२) दृष्टान्त श्रीकृष्णचन्द्र, अर्जुन से कहाकरते थे कि दानी तो कर्णहीं है, इस वचन को न सहके अर्जुन ने कर्ण से बराबरी करी उसीके समान; भार प्रमाण सुवर्णदान और साधुसेवादि सत्सङ्ग करनेलगा और अपने को 'महादानी' प्रसिद्ध किया, तो भगवान् तिसकी परीक्षा के लिये वर्षासमय में साठ हजार शिष्य साथ लिये नगर निकट आय उतरे, अर्जुन सुनतेही नंगे पैरों उठधाया और साष्टांग प्रणामकर प्रार्थनाकर कहने लगा हे भगवन्! आप शीघ्र आज्ञा कीजिये क्या २ सामान भेजवाऊं श्रीकृष्ण जी बोले हमारे पास सब सामान है केवल सूखा इन्धन इनके लायक भोजन बनाने को चाहिये तुम से बने तो भिजवाओ, अर्जुन सुन कुछ न बोला उसके पास उनके लायक सूखा इन्धन उससमय तैयार नहीं था, चुप होके चल दिया, पीछे से कर्ण भी पहुँचा प्रार्थना की कि हे महाराज! अर्जुन आपके पास होगया है उसने आपका सर्वथा सन्मान कर दिया ही होगा पर तब भी जो मेरे लायक कोई काम रहा हो तो दास से कहिये

श्रीकृष्णजी बोले भाई ! कोई काम नहीं सब ठाठ हैं केवल सूखा इन्धन इनके लिये चाहिये था सो अर्जुन सुन चुप हो चल गया तुम ला सको तो लाओ, कर्ण ने झटही कहा जो आज्ञा लीजिये अभी आता है, यह कह आकर महलों को ढवाक कड़ी किंजे निकालने लगा, भगवान् ने आय हाथ पकड़ रोक और कहा "न दानी कर्णात्परः" कर्ण से परे कोई दानी नहीं है।

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामभि-
मानज्ञनिबन्धे द्वितीयःप्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः ।

अर्जुन को मुहूर्त्तमायादिखाना वर्णन ।

मुहूर्त्तमाया महती रमापतेस्तामर्जुनो द्रष्टुमना मज्ज के ॥ गतो रसायां रमणीवशः पुनस्तस्यां मृताय दहनान्निवारितः ॥ १ ॥

रमा के पति—श्रीकृष्ण भगवान् की 'मुहूर्त्तमात्र की माया बड़ी भारी है' उसे देखना चाहते अर्जुन ने जल में गोता ल गाया, तो वह पाताल में चलागया तहां स्त्री के अधीन भया फिर तिसके मरने पर श्रीभगवान् करकेही चिता में जलने से बचाया गया (२) दृष्टान्त अर्जुन, श्रीकृष्णजी से कहा क रता है महाराज ! आपकी पलकनिवाजी माया कौन सी है एकसमय इसही विचार से उसने जल में गोता लगाया त तभी वह पाताल में पहुंचा, तहां का राजा भया, पर रानी अत्यन्त वश में था, दैवयोग से वह रानी मरगई तो अर्जु उसके साथ भस्म होने गया तिसके साथ जलने को तैया हुआ लोगों ने बहुत सा समझाया पर न माना निदान श्री भगवान् नेही ब्राह्मणस्वरूप धार आकर रोका तब भी ना माना तो कहा अच्छाभाई ! पहिले तू स्नान तो कर आव, य सुन उसने फिर गोता लगाया तो वहांही जाय के निकल

हां पहिले था वहां भी श्रीकृष्णजी को सामने खडे देख के ज्जित हुआ और उन्हें साष्टाङ्ग प्रणाम किया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यास-
भिमाननिवन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थःप्रदीपः।

शिवजी की दयालुता का वर्णन।

शिवस्य माया महती दुरत्यया वैश्याकरोत्तस्य मह-
प्रपूजनम् ॥ अज्ञानदुर्बुद्धिखलापि मालिनी मौलौ हि
ादं दधती महत्कृता ॥ १ ॥

शिवजी की माया बडी भारी है एक 'वैश्यानी' तिनकी नित्य पूजा किया करती थी। और अज्ञान करके दुर्बुद्धि खोटी ऐसी 'मालिन' तिनके शिरपर पैरधरतेही निहाल कीगई 'दृष्टान्त' एक शून्यवन में वृक्ष के नीचे पुराचीन शिवजी की पिण्डी थी तहां एक 'वनियानी' तिसपर नित्य गन्ध, अक्षत, पुष्प आदि चढ़ाया करती थी। कभी एक मालिन, निजपति 'माली' के लिये खीर वनाकर खेत में लेजाती थी तो उसने विचारा कि खीरका स्वाद देखलेना चाहिये ऐसा विचार उसने एक पत्ता तोड़ना चाहा तो वह वृक्ष कुछ ऊंचा था तो उसने और कुछ नीचे रखने को सहारा न देख उस पिण्डी कोही रख उस पर पैर धरकर पत्ता तोडा सोही 'शिवजी महाराज' प्रसन्न हो बोले (वरं ब्रूहि २---वर मांग २) तब तो मालिन हँसकर कहने लगी हे महाराज! आप कौन हैं कोई देवरूप प्रसन्नभये हो तो मुझ को धन सन्तानादि सभी सुखदेओ। शिवजी ने 'तथास्तु' कहके तिसका मनोरथ पूर्ण किया। तो तिसे अकस्मात् फली फूली देख वह वनियानी भी तहां पहुँची और झुँझलाती भई बोली कि यथार्थ ही में आप तो भोले भण्डारी

हो, जोकि मैं आप के ऊपर नित्य २ गन्ध, अक्षत, चढ़ाती थी तिस पर तो आप ने कुछ भी ध्यान नहीं और उस मालिन को सहजही में निहाल कर दिया। शिवजी प्रकट हो बोले कि तू तो मुझपर गन्ध, अक्ष पुष्पही चढ़ाती थी और वह हमपर सदेहही चढ़गई क्योंकर प्रसन्न न होवें । यह सुन बानियानी खिसियानी अपने घर को चलीगई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामभिमाननिव शिवमायावर्णनंनाम चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमःप्रदीपः ।

दुर्योधन को अभिमान होना वर्णन ।

मदीयमेतद्धनधान्यसद्बलं तथा मदीयो गृहक उत्तमः ॥ ममेतिवाक्यात्प्रतिकोपितो हरिस्त्यक सपर्य्यां विदुराश्रमेऽवसत् ॥ १ ॥

मेरा यह धन धान्य सेना बल है और मेराही यह गृह भण्डारादिक है, तो मेरा २ ऐसा कहने से कुपित भये हरि राजपूजा तज विदुरजी के आश्रम में निवास किया १ जिस मय श्रीकृष्णमहाराज, दुर्योधन के राजगृह में पधारे तो दु धन ने ले जाकर श्रीकृष्णजी से कहा कि देखिये यह मेरा मेरा धान्य आदि, मेरा व्यापार संग्रह है । और देखिये घर मेरा भण्डार मेरी सेना इत्यादि मेरा सामान, सब मे अधीन हैं, जब मेरा २ ऐसी बातें सुनीं तो भगवान् तिस भिमानी 'दुर्योधन' पर बहुत क्रुद्धहुए और तिससे यथाविधि भई राजपूजा को छोड़ विदुरजी के आश्रम में बसे और तिस के घर का शाक पात भक्षण किया इस से मनुष्य चाहिये कि कभी किसी के साथ अभिमानयुक्त वाक्य मेरा

भी भक्तहुए जिनकी कथा प्रसिद्ध है इन्हों ने भगवान् थैली नहीं सौंपदी थी २ अब इनके यथाक्रम से इतिहास कह हैं । मुनिजन, वन में फल फूलों से भगवान् की पूजा किया कर उसी से गति पाई सो भगवान् ने भी कहा है 'पत्रं पुष्पं तोयं' तैसेही एक 'कौण्डिन्य' नाम मुनि श्रीगणेशजी पै दूर्वा चढ़ाया करता था । उसकी स्त्री बोली हे स्वामिन् ! दूर्वाही के चढ़ाने से क्या होता है ? तो तिसे परीक्षा के लि मुनि ने कहा जा इस दूर्वा के पत्रभर सुवर्ण, इन्द्र से लाव । वह गई इन्द्र ने सुन आश्चर्य मानके एक छोटा टुक सुवर्ण का चढ़ाया वह पूरा न भया तो और चढ़ाया फिर कम देखा तब तो जितना इन्द्रके पास सुवर्ण था वह चढ़ा फिर भी न भया तो अपने मित्र कुवेरजी को बुलाये वे भी अपना सब सुवर्ण चढाय फिर तिसमें आप भी निज समेत चढ़गया पर वह दूर्वापत्र के बराबर नहीं होसका । दूर्वा का ऐसा माहात्म्य है यह कथा श्रीगणेशपुराण-उपासनाखण्ड के ६७ अध्याय में लिखी है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ।

और, जैसे ग्राह ने जब हाथी को पकड़ा तो अति आतु भये तिसने जल में से कमलही लेकर नारायण की पूजा की तो शीघ्रही प्रसन्न हो हरिने तिसको छुटाया यह कथा श्रीमद्भागवत ८ स्कन्ध में विस्तार से कही है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धे द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः।

और 'गोपियां ब्रजवनिता, जैसे वृन्दावन में तिन श्रीकृष्ण जी के विना क्षण २ भी कोटि कल्पभर समझ अत्यन्त दुःख से काटती थीं सो विरहकथा वेणुगीत आदि श्रीभागवत दशमस्कन्ध में प्रसिद्ध लिखा है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां भक्तिनिवन्धे तृतीयः प्रदीपः॥ ३॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः।

और जैसे 'साधु-एक-वैश्य' हरिभक्त था वह रात्रि दिन यही चिन्ता किया करता कि कभी मुझ से भी भगवान् मिलेंगे इसही चिन्ता में वह एक पीपल वृक्ष के नीचे जाय बैठा उधर से श्रीनारदजी आय निकले तो वह इन्हें देख बोला कि, हे नारदजी! आप हरिभक्त हो विष्णुजी के पास जाओ तो पूछना कि मुझ तुच्छ सेवक से भी कभी कृपाकरिके मिलेंगे। नारद जी ने तहां पहुँच विष्णुजी से प्रार्थना की कि, हे महाराज! उस वनिये से आप कब मिलेंगे तब तो विष्णुजी के मुख से यही वचन निकला कि उस पीपल में जितने पत्ते हैं उतनेही जन्मों में हम उसे मिलेगे तो नारद जी आये और तिसी वृक्ष के नीचे बैठे भये उससे कहा कि इसमे जितने पत्ते हैं तितने जन्मों में भगवान् मिलेंगे ऐसे नारदजी ने तो उसकी आश टूटने के भय से कुछ संकोचही से कहा और वह प्रसन्न हो वहांही बैठगया और (अच्छा जी मिलेंगे तो सही। २) ऐसे कहने की ध्वनि बांधी निदान भगवान् आये और तिससे प्रेम सहित मिले तिसे वैकुण्ठ पठाया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां भक्तिनिवन्धे चतुर्थः प्रदीपः॥ ४॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

और जैसे एक 'व्याध-कसाई' ग्राहक के ताईं देने को बकरे का पुट्ठाभर काटकर देता था उसने जब शस्त्र उठाया और प्रहार करने लगा तब उसको बकरे ने कहा कि अब मेरा यह नया वैर भया, तब तो व्याध, अचानक ऐसा वचन सुन अचरज कर चुप होरहा तब फिर बकरे ने कहा कि तू जन्म २ में मेरा शिर काटता रहा और इसीतरह मैं तेरा काटता रहा था पर अब यह पुट्ठाभर काटने का मेरा तेरा नयाही वैर भया है अब मैं न तो जीतारहा न मरूंगा इतनी सुनतेही व्याधने सर्वथा उस कुकर्म को छोड़ दिया हरिभक्त भया इति । 'कपीश-हनुमान् जी के चरित्र रामायण में प्रसिद्ध हैं सदन कसाई की कथा भक्तमाल में प्रसिद्ध है 'चैद्य शिशुपाल, जैसे राजा 'युधिष्ठिर, के महायज्ञ में आये 'श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द, व्रजचन्द्र को असह्य गाली देता भी ज्योतिरूप हो तिनमें लीन भया यह कथा भागवत में है 'माता पिता नन्द यशोदा, वा 'वसुदेव-देवकी, जैसे इनके लिये अत्यन्त कष्ट पातेरहे जन्मान्तर में भी जैसे जन्मसमय भगवान् ने कहा है (त्वमेव पूर्वसर्गेभूः पृश्निः स्वायंभुवे सति । तदायं सुतपानाम प्रजापतिरकल्मषः) इत्यादि श्रीभगवान् कहते हैं कि, हे देवकि ! तू पहिले सर्ग में 'पृश्नि, थी और यह वसुदेव, निष्पाप 'सुतपा—नाम, राजा था, तुम दोनों ने ब्रह्माजी की आज्ञा से भारी तप किया सूखे पत्ते खा २ कर तुम ने समय बिताया ऐसेही तप करते २ तुम को बारह वर्ष बीते तब तो मैं इसही शरीर से तुम्हारे आगे प्रकट भया और मैंने कहा कि तुम वर मांगो 'तब तुम मेरे दर्शन से प्रसन्न होगये थे तो तुम ने मुझ से दुर्लभ मोक्ष भी न मांगा, किन्तु यह ही कहा कि तुम सरीखे हमारे पुत्र हों तो अहोभाग्य है ऐसा सुन मैं (तथास्तु) कह अन्तर्द्धान हुआ अब तिस तप के प्रभाव से मैंने तुम्हारे यहां अवतार लिया है सोही मैं कंस

ादि असुरों को मार, भूमिभार उतार के निजलोक पधारूंगा
म मुझमें ईश्वरभाव वा पुत्रभाव से भक्ति करते मेरे लोक में
ाय मेरे पास रहोगे इति। और 'नन्द' यशोदा, ने भी पहिले
प किया था सो 'नन्दजी' तो वसुओं में श्रेष्ठ 'द्रोण' नाम
सु थे और 'यशोदा' तिनकी स्त्री 'धरणी' थी। तिन दोनों ने
ी ऐसाही तप किया तो प्रसन्न हुए वर देकर फिर तिनके घर
हुंचे और तिनको अतिदुर्लभ बाललीला दिखाई जिसे कौन
र्णन करसके और अन्त में मोक्षपदवी दी इति (८) पिङ्ग-
ानाम, वेश्या थी वह शृङ्गार किये अपने मकानपर बैठी धनी
ोगों के आने की राह देखरही थी निदान आधीरात बीतगई
ोई भी तिसके पास न आया तब तो तिस को ज्ञान उत्पन्न
ुआ और मन में यह विचार किया कि इतना मन मैंने
निन्दित इस जारकर्म्म में लगाया और मनुष्यों की राह देखी
तिसपर भी कोई नहीं आया। और जो कदाचित् इतनी ईश्वर
ें भावना करती तो मेरा तुर्त मोक्ष ही निस्संदेह होजाता।
ऐसे पछतायके एकान्त बैठगई और ईश्वर में मन लगाया
और तहां कई श्लोक इस विषय के कहे सो भागवत एकादश
स्कन्ध में हैं और इसपर व्यासजी ने यह शिक्षा श्लोक कहा
है तहांही पर जैसे "आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम्।
यथा संत्यज्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिङ्गला ॥ १ ॥" अथवा
भाषा में किसी ने दोहा भी कहा है "जैसी नीति हराम में, तैसी
हरिसें होय ॥ चलाजाय वैकुण्ठ को, पला गहै नहिं कोय ॥ १ ॥"
अथवा "सुवा पढ़ावत गनिका तरी" यह साखी भी है। इत्यादि
वाक्यों पर पूर्वोक्त पिङ्गला का दृष्टान्त प्रमाण है। इत्यादि भक्त
हुए वे केवल भक्तिही से कृतार्थ होगये और परमगति पाई जो
योगियों को भी दुर्लभ है और शबरी, अहल्या आदि अनेक
भक्त हैं जिन्हों ने केवल मनही नारायण में लगाया और द्रव्य
पूजा उनसे कुछ भी न होसकी इनके इतिहास जहां तहां

प्रकट हैं सो देखलेना इस ग्रन्थ में कहांतक लिखें अप्रसिद्ध इतिहास का प्रकट करना इस ग्रन्थ का मुख्य प्रयोजन है प्रसिद्धों को वहां भी देखसक्ते हैं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां भक्तिनिबन्धे भक्तिसुलभतावर्णनं नाम पञ्चमः प्रदीपः॥ ५॥

अथ षष्ठःप्रदीपः।

वैश्यभक्त का इतिहास वर्णन।

अथवा दूसरा एक साहूकार भक्त, श्रीनारदजी से कहा करता कि मेरे भी कभी संतान होवेगी? श्रीविष्णुजी से आप प्रार्थना करना, नारदजी ने जाय विष्णुजी से पूछा कि हे महाराज! उस साहूकार के पुत्र कब होगा? श्रीविष्णुजी बोले भाई उसके तो सात जन्म में पुत्र नहीं है यह सुन नारदजी तो चुप हो चले आये और किसी समय उस वैश्य के घर कोई महात्मा आय ठहरे उनको उसने भोजन कराया उन्हों ने सात मोदक भोग लगाये और प्रसन्न हो उसको सातही पुत्र दिये वैश्य के सात पुत्र होने से पूर्ण गृहस्थानन्द होगया कभी नारदजी भी आ निकले तो वहां खेलते देख सातों से पूछा कि तुम किसके लड़के हो? वे बोले फलाने साहूकार के तब तो आश्चर्य करके बोले कि उसके तो सात जन्म में भी पुत्र न था ये सात कहां से आये? निदान प्रत्यक्ष देख सत्य मान, शीघ्रही क्रोधभरे फिर वैकुण्ठ को गये विष्णुजी ने तिनको रिसभरे आते देख लक्ष्मीजी से कहा कि नारद चला आता है और क्रोधभरा है ऐसा न हो कभी शाप देके चलाजावे इस से तुम उदास होकर बैठजावो और पूछें तो कहो कि ये भक्त की भ्रुकुटि मांगते हैं। तब नारदजी पहुंच के उस उल्हाने को तो भूल गये और आप भी उदास हो पूछने लगे कि हे लक्ष्मि तुम मलिनमुख कैसे हो रही हो। लक्ष्मीजी बोलीं कुछ कारण न पूछो श्रीविष्णुजी, निजसेवक की भ्रुकुटि, मांगते हैं सो सुम

ने तो दी न गई तुम से कुछ हो तो करो तब तो नारदजी, और भी घबरा गये और विचारा कि कहीं यहां गांठकी दो और देकर दुबे न हो चलें जो ये तुम्हीं से न मांगलें ऐसे विचार बोला कि मैं जाता हूं कहीं से भक्त की भ्रुकुटि लाता हूं जिससे नारायण, प्रसन्न हों यह कहके नारदजी चले आये तो महात्मा, शिवजी, मिलगये इन्होंने शीघ्रही तिन से कहा तुम विष्णुभक्त हो, विष्णुजी ने भ्रुकुटि मांगी है शिवजी बोले कि भाये ऐसी भक्ति से बिन भक्तिही रहजायँगे तो बने तो रहेंगे । निदान वेही महात्मा, साधुजी मिलगये देखतेही इन्होंने कहा कि तुम विष्णुभक्त, बनेरहते हो नारायण, ने भक्तकी भ्रुकुटि मांगी है सो देओ। साधुजी बोले, अहोभाग्य जो नारायण, भ्रुकुटि, मांगते हैं, उनके तो यह शरीरही अर्पण करने के लिये है फिर भ्रुकुटि, कौन चीज है । नारदजी जानगये और कहने लगे कि यथार्थही विष्णुजी तो भक्तों के वश है साधुजन बड़ेही भक्त होते हैं वे चाहें सो करें ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ।

द्रौपदी तथा अम्बरीष से दुर्वासाजी का अभिमानभङ्ग
होना वर्णन ।

तपस्विनश्चापि मुनेर्महात्मन, सद्भक्तवर्य्येषु प्रयोजितो वृथा ॥ यथाभिमानः सहसैव हन्यते दुर्वाससो द्रौपदितोऽम्बरीषतः ॥ १ ॥

तपस्वी और महात्मा मुनि का भी, श्रेष्ठ भक्तजनों में वृथा प्रयोजित किया अभिमान शीघ्रही नष्ट होजाता है जैसे द्रौपदी और राजा 'अम्बरीष' भक्त से मुनि 'दुर्वासाजी' का (१) पूर्व

दृष्टान्त का प्रसङ्ग है कि भक्तों के आगे महात्माओं का भी अभिमान खण्डित होजाता है इसही प्रसङ्गपर दो 'दृष्टान्त' हैं। जैसे धृतराष्ट्र के पुत्र 'दुर्योधन, करके कपट से जीते गये और चीरहरणसमय श्रीभगवान् से रक्षित किये तथा लाक्षा भवन आदि भयों से बचाये 'द्रौपदी, सहित पांचों पाण्डव, वन में 'श्रीकृष्णचन्द्रजी के प्रताप से निर्भय रहतेथे। एकसमय 'दुर्योधन के भेजे 'दुर्वासामुनि, साठहजार शिष्य सङ्गलेके तिनके पास सायंकाल वनमें पहुंचे पाण्डवोंने इनको पहिचान अत्यन्त भयभीत होकर प्रणामकिया और भीतर जाय उदास हो बैठे द्रौपदी बोली कि, हे महाराज ! बाहर कौन आये और घबराये कैसे हो तब पांचों ने कहा कि बहुत से शिष्य लिये दुर्वासा मुनि आये हैं और इससमय तुम्हारी चरी में भी पदार्थ नहीं है और न सायंकाल में उत्पन्न हो सक्ता इससे हम को महाभय होरहा हम उनसे कुछभी नहीं कहसके वे प्रचण्ड मुनि, तुर्तही शाप देके चले जावेंगे यह सुन द्रौपदी बोली कि आप उनसे कहिये स्नान पूजन करें फिर देखाजायगा इतने तो बचाव कीजिये फिर श्रीभगवान् हैं सब अच्छाही करें पाण्डवोंने तिनसे हाथजोड़ प्रार्थना की कि आप स्नान ध्यान कीजिये तुर्तही भोजन तैयार होता है। यह सुनतेही वे सब त श्रीगङ्गाजी के तीर स्नान ध्यान को चले गये। और द्रौपदी श्रीकृष्ण महाराज से विनती की कि इससमय चीरहरण दूना दुःख समझ मुझ भक्त की लाज राखिये नहीं तो अत्यन्त धार में नाव डूब जावेगी निदान 'श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द प्रकट भये और द्रौपदी से बोले कि ठीक है पर मारे भूख हमारे प्राण जाते हैं तू कुछ पहिले हमें खाने को दे। यह सु द्रौपदी चकितभई और कहने लगी कि, हे महाराज ! मैं तो इसही लिये आपको बुलाया और आप भी भूखेही मर आये तो पूरे पटे मेरी तो चरी में भी रात्रि को नहीं रहता

श्रीकृष्णजी ने कहा कि चरी को देख झड़काय के कुछ वेगलाव नहीं तो मेरे प्राण चले बस । तब तो घबराई द्रौपदी ने चरी को देखी झड़काई तो उसमें एक चावल लगारहा निकला उसे ले श्रीकृष्णजी को दिया उन्होंने शीघ्रही भोग लगाया और पेटपर हाथफेर "तृप्ता–धापे" ऐसे कहा तो तिससमय सब तृप्त होगये और द्रौपदी ने पाण्डवों से कहा कि उनको शीघ्र बुलाइये, तब पाण्डवों ने बुलावा भेजा वे वहां काकड़ी की तरें लोटहुये थे तो आपस में वह उसे कहै और वह उसे कहै कि उठो २ चलो निदान सबके सब कहने लगे कि चलें क्या हमारा तो ऐसा पेट भर गया है कि मारे बोझे के उठा भी नहीं जाता फिर चलना तो कहां जैसे दो चौबे, जीम के उठे एक ने दूसरे से कहा भाई देख तो मैने जूता किसी और का तो नहीं पहर लिया है मुझसे नीचा होकर देखा नही जाता है तब दूसरा बोला कि मुझे तूही नहीं दीखता मैंने क्या तुझसे थोड़ा खाया है सोही हाल इनका हुआ। निदान तब तो हारे बेचारे लज्जित भये और पाण्डवों को आशीश दे के कहने लगे कि (यत्रकृष्णःकुतोविपत्–) जहां श्रीकृष्णजी हैं तहां विपत्ति कहां से हो, यह कह विजय मन्त्र से आशीर्वाद देकर विदाहुए इति॥

और राजा अम्बरीष जैसे एकादशी व्रत किये द्वादशी को पारण करने अर्थात् व्रत खोलने के लिये तैयार थालीपर बैठा था कि इतने में कहीं से 'दुर्वासाजी, चले आये और बोले कि हे राजन्! हम तेरे घर, अतिथिरूप से, आये हैं राजा ने कहा कि, हे महाराज! आइये भोग तैयार हैं पाइये तब बोले हम स्नान ध्यान करके आते हैं यह कहकर चलेगये 'राजा, राह देखता रहा वे वहां निश्चिन्त ध्यान में मग्नहुये ब्राह्मण, न्योता पाये राजा हो बैठते हैं इधर राजा, इस धर्मसंकट में फँसा कि जो उनकी राहही देखता रहूं तो द्वादशी थोड़ी फिर पारण हो नहीं सक्ता और जो व्रत खोललें तो ब्राह्मण, न्योता रहा, तब

राजा ने शास्त्र की आज्ञा से जल पी लिया, कि जिसमें भोजन न हो और व्रत भी सफल हो । राजा के जलपान करते ही दुर्वासाजी झुँझलाते हुए आये और बोले तैंने ब्राह्मण को न्योत के बिन भोजन करवाये जलाहार करलिया है सो अब इसका फल अभी देखले । ऐसेकह निज जटा की लटा उखाड़ मन्त्र पढ़ के राजा की ओर फेंकी राजा डर के ठहरा रहा । निदान श्रीकृष्णजी का दिया सुदर्शन-चक्र, राजा की रक्षा करता था वह उस 'कृत्या=मूंठ,' के पिछाड़ी दौड़ा तब वह उलटी दुर्वासाजीकीही ओर झपटी तब तो मुनिजी जीव बचाने को भगे और त्रिलोकी भर में भ्रमआये पर कोई ऐसा ठौर न पाया जहाँ चक्र से पीछा छूटै । निदान फिर ब्रह्मलोक में ब्रह्माजी के पास गये और उनसे वह सब वृत्तान्त कहा तब ब्रह्माजी ने विचार के कहा भाई कैलास में 'शिवजी' के पास जाओ वे बचावेंगे इतनी सुन कैलास में शिवजी से जाय प्रार्थना करी उन्हों ने कहा भाई त्रिलोकीनाथ के चोर को कौन रखसक्ता है तुम विष्णुजीही के पास जाओ वेही छुड़ावेंगे यह सुन वैकुण्ठ में जाय श्रीविष्णुजी से साष्टांग प्रणाम कर निज कृत अपराध सुनाया तब विष्णुजी ने कहा भाई मेरे भक्त से किये अपराध को तो मैं भी क्षमा नहीं करसक्ता इससे तू उस राजा के पास जाव वहही तुझे इस विपत्ति से छुटावेगा । तब तो हार लाचार होकर ब्राह्मण उस राजा अम्बरीषही की शरण गया तब राजा ने निज जप तप का सब फल देकर ब्राह्मण को चक्र से छुटाया ।

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धे सप्तमः प्रदीपः ॥७॥

अथ अष्टमः प्रदीपः ।

त्रिलोकचन्द्र सुनार का वर्णन ।

महद्भयाद्रक्षति भक्तवत्सलो भक्तं हरिः स्वर्णकृत

नुतो वने॥दत्त्वाऽथ राज्ञे शुभपादभूषणं त्रिलोकचन्द्रस्य
यं न्यवारयत्॥ १॥

भक्तवत्सल दयालु भगवान् निजभक्त की भारीभय से रक्षा
रते हैं जैसे स्वर्णकार की रक्षा की अर्थात् त्रिलोकचन्द्र सुनार
वन में स्तुति किये गये भगवान् राजा को सुन्दर लक्ष्मीजी
ी पायजेब देकर त्रिलोकचन्द्र भक्तका भय निवारण करतेभये
१) दृष्टान्त जैसे एक त्रिलोकचन्द्र नाम से विष्णुभक्त था वह
ो कुछ पाता था सो सब साधु ब्राह्मणोंको खवादेता था यहाँ
क कि उसके पास कुछ गढ़ने को आता उसे भी वह घर वेच-
कर ठिकाने लगा देता था इसीकारण उसपर सब भाई लोग दुःख
ारहे थे कभी कि तिसनगर के राजा के घर में से रानी की पाय-
ोब जाती रही थी तो रानीने कहा कि इसी गढ़न की पायजेब
ूसरी तैयार होवे। राजा ने तुर्तही सब सुनारों को बुलवाय कहा
कि ऐसीही पायजेब तैयार करो वे सब विचारकर बोले कि, हे
महाराज! ऐसी तो हमसे नहीं बनसक्ती जो त्रिलोकी कारी-
गर, चाहे तो अवश्यही बना देवेगा इसमें सन्देह नहीं राजा
ने त्रिलोकचन्द्र से कहा भगत! तू बना देवेगा वह बोला
श्रीमहाराज! जो आज्ञा इधर लाइये पर यह पायजेब आप
को छः महीने में मिलेगी और एक लाख रुपये मुझको दिवा
दीजिये। राजा ने लाख रुपये भिजवा दिये नाम लिख लिया।
तब तो त्रिलोकचन्द्र के गहरे होगये लगा ब्राह्मण जिमाने और
साधुजनों को खवाने कम्बल वस्त्र वाँटने इसीतरह छः महीने में
सब रुपया ठिकाने लगाया। करार आया जान घरकों से कहा
कि अब हम लुटिया डोर बांध के चलते हैं सरकार के सिपाही
लोग आवेंगे। तो तुम कहदेना वह तो कहीं भगगया हम नहीं
जानते। यह कहके गहन वन में एक वृक्षतले जाय छिपा। इधर
राजा ने त्रिलोकचन्द्र को भगगया सुनके उन सब सुनारों को
कैद करलिये उन सबों के घर रोना पड़गया और लगे त्रिलोक

कर इसकी सबों ने पूजा की अभीष्ट राजकुमारी भी नित्य तिसे अच्छीप्रकार देखती रही ऐसे बहुत दिन बीते किस समय उस राजा को पूजा में मग्नजान के उसपर शत्रु ने चढ़ की तो मंत्रियों ने कहा कि, हे महाराज! कुछ उपाय कीजि शत्रु ने नगर आय घेरा है, राजा ने कहा मुझ भक्तपर श्रीकृष्ण, दया करके दर्शन देते हैं येही सब उपाय आप क लेवेंगे निदान श्रीकृष्ण महाराज, साक्षात् प्रकटे और रा के शत्रु की सेना हटाई॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां भक्ति निबंधे नवमः प्रदीपः॥

अथ दशमः प्रदीपः।

नवाब और कन्हैया, माशूक का दृष्टान्त वर्णन।

न जातिभेदं मनुते स्तुतो हरिर्न कर्म पूजां न भारहेमकम्॥ वदन् कन्हैयेति विनिर्गतो गृहान्मु नवाबो बुभुजेऽथ तत्करात्॥ १॥

स्तुति किये भगवान् न तो जाति के भेद को मानते और कर्म वा पूजा को और न सुवर्ण भार द्रव्यादिक को समझते हैं, जैसे एक 'नवाब, 'कन्हैया') ऐसे कहता घर निकल गया फिर वह तिन भगवान् केही हाथ से हर्ष क जिमायागया॥

नवाब को, "श्रीकृष्णचन्द्र" का चिड़ा इष्ट थी कि दिन रात के समय श्रीकृष्णजी, ने उसको निज चतु रूप दिखा दिया तो 'नवाब को तबही से हे कन्हैया माशूक यह झक, लग गई, प्रभात होतेही घर से निकल चला मथुरापुरी में पहुँच मन्दिर को आगे जाय भीतर जाने तो इसे यवन देख गुसाइयों ने रोका तब बाहर सामने

रहा शाम हुए उन्होंने पूछा कि फक़ीर साहब ! कुछ खाने को तो खालीजिये इसने कहा, मुझे तो 'मेरा कन्हैया-माशूक़, ही खिलावेगा यह सब अचरज कर भोग लगाके सो रहे तब आधीरात हुए आय 'श्रीकृष्णचन्द्र, वही निज भोग का थाल हाथ में लेकर 'नवाब साहब, के पास आय बोले लीजिये नवाब साहब ! भोजन कीजिये, उसने सुन वैसाही कहा तब भगवान् बोले अजी साहब आप का 'कन्हैया माशूक़, मैंही हूं यह सुन नवाब साहब ने आंख खोल देखा मनोरथ पूर्णकर जीवन्मुक्त हो परमगति को प्राप्त हुए। उधर सबेरे पुजारियों ने पूछा फक़ीर साहब ! क्या हाल गुज़रा। उसने सब कह सुनाया उन्होंने जाय निज भोग के थाल को सँभाला तो खाली मिला तबहीं से गोसाईं लोग, घिन के मारे प्रसाद, नहीं लेते तुलसीदल चरणामृतही ले लेते हैं ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धे दशमः प्रदीपः ॥ १० ॥

अथैकादशः प्रदीपः।

अजामिल का दृष्टान्त वर्णन।

गतिं धत्ते हरिः प्रीतः स्मृतोऽनिच्छावशादपि ॥ पुत्रं नारायणं स्मृत्वाऽजामिलोऽगात्परम्पदम् ॥ १ ॥

प्रसन्न भये भगवान् अनिच्छावश से अर्थात् और के भरोसे करके भी याद किये गति देते हैं जैसे 'अजामिल, निज पुत्र नारायण को याद करके परमपद को पहुँचा (१) जैसे अजामिल, एक महापापी था, उसने अवस्थाभर में कभी भी नारायण, का स्मरण, पूजन, सेवनादि नहीं किया। निदान निज मरने के समय अपने पुत्र 'नारायणही को अरे बेटा नारायण !, ऐसे याद कियातो वह परमपद को प्राप्त हुआ। इस पर यमराज के दूत भी उसे

घते तो दो रोटी न कम होजातीं उन्हों ने कहा भाई यह तो केवल भावनामात्रही है और घटता बढ़ता कुछ नहीं। यह सुने कमाल बोला वाहजी वाह आप ऐसाही भोग लगाते रहे हो वे बोले और कैसा सो तू दिखाव। उसने कहा ठहरिये अभी देख लीजियेगा ऐसे कहके कमाल ने फिर श्रीभगवान् से प्रार्थना की कि जैसे वेजाने हठ करते मुझपर कृपाकरी तैसेही एक वेर अब भी प्रतिज्ञा रखलीजिये निदान भगवान् ने फिर भी तिस पर कृपाकर उनमें से आधी दो रोटी भोग लगाई कबीरजी यह चरित्र देख अचम्भे में रहे ऐसेही भगवान्, केवल भक्ति के वश हैं भक्त के अधीन हैं 'कमाल' कबीरजी का पुत्र इस रीति से भया कि एक समय कबीरजी से बादशाह ने कहा कि यह मुर्दा जो नदी में बहा जाता है इसे जिलाओ कबीरजी बोले आपही जिलाइये दुनिया के बादशाह हो तो बोले नहीं आपही जिलासक्ते हो यह काम करामात का है वह आपही में है; तब तो कबीरजी ने उसे जल छिड़क उठाय बैठा दिया वह हाथ जोड़ खड़ा हुआ तब बादशाह ने खुश होकर कहा कि कबीरजी! आप ने 'कमाल' किया तो बोले अच्छा 'कमाल' ही किया सही तो बोले बेटा कमाल लँगोट बांधले, बांध लिया फिर कमाल, तरुण हुये तो कबीरजी इन्हों के विवाह की चिन्ता में लगे तब कमालने उत्तर दिया कि क्या लँगोटा बँधवाकर अब खुलवाओगे? कबीर सुन चुप रहे ऐसे कमालजी भये ॥ इति त्रयोदशः प्रदीपः ॥ १३ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
भक्तिनिबन्धोद्वितीयः ॥ २ ॥

अथ कार्पण्यनिबन्धस्तृतीयः।

प्रथमः प्रदीपः।

तत्र नियमदृढत्वप्रसङ्गे दमडचीदृष्टान्तमाह ।

नियमो नितरां फलप्रदोऽदानस्यापि फलं ददाति

हे ॥ दमडी हरिणापि याचिता नतु दत्ता दमडी दमड्
चेना ॥ १ ॥ पुनराह हरिः सुहर्षितो वृणु मां कामदुघं
तोऽप्ययम् ॥ दमडीभयतो विशङ्कितो दमडीमेव हरे
र्यमोचयत् ॥ २ ॥

भक्त, प्रायः कृपण भी होजाते हैं इससे कार्पण्यघ्न निबन्ध कहते हैं तिसमें दृढ़ नियम के प्रसङ्ग में 'दमड़ची सेठ' का दृष्टान्त न दान करने का भी नियम, निरन्तर फल देताही है जैसे एक सेठ को न देनेका नियम था वह भाइयों करके गढ़ ने खेदा एक तीर्थ पै न्हाने को गया। वहां सबसे पीछे एकान्त स्नान किया तो आप श्रीभगवान् ने तिससे ब्राह्मण बनके एक दमड़ी, मांगी उसने देने कही घर में आय बैठा भगवान् पिछाड़ी २ आये निदान वह भूठेही मर भी गया लोग उसे फूंकने को गये निदान आग देने की तैयारी भई तब प्रसन्न हो भगवान् ने कान में कही कि वर मांग, तब बोला कि ये दमड़ी छोड़ देओ इससे कुछ भी नियम हो पर फल देताही है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिबन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः।

जाट, ब्राह्मण का दृष्टान्त वर्णन।

नियमात्संतुष्यते यथा विभुरर्चादिवशात्तथा न च ॥
द्विजजाटकयोर्यथाद्वयोःपयसायष्टिकयाशिवंजुषोः ॥ १ ॥

विभु ईश्वर, जैसे नियम से संतुष्ट होते तैसे अर्चन आदि से प्रसन्न नहीं होते जैसे 'द्विज—एक ब्राह्मण शिवजी पे दुग्ध नित्य चढ़ाता था और जाट के शिवालय पर लट्ठ मारने का नियम था एकदिन राहमें नदी भारी चढ़रही थी वहां ब्राह्मण देवता तो नदी देख उसी में "पय:पृथिव्यां" पढ दुग्ध चढ़ाकर चले

आये और वह जाट आया उसनें नदी के पार हो लट्ठ जायहो मारे तो तिसपर शिवजी महाराज प्रसन्न हो (वरंब्रूहि) वर मांग, ऐसे बोले इससे नियम पक्का लेना चाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिवन्धे द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः ।

कृपण वैश्य का दृष्टान्त वर्णन ।

दत्त्वाऽपि दानं तु मिषेण केनचित् पुनर्भृशं वै कृपणोऽनुतप्यति ॥ हिरण्मयीं गां च मृदोपलेपितां दत्त्व वणिक् तत्र करौ ममर्द ह ॥ १ ॥

कृपण, किसी मिष से दान देकर भी फिर पश्चात्ताप करता है जैसे एक कृपण वैश्य ने कुछ भी कभी दान नहीं किया था निदान मरने के समय उसकी स्त्री ने कहा कि तुम—वैतरणी "गऊ का दान तो कर देओ" उसने कहा "उसमें भी वीस रुपैया लगैं" निदान उसने सुवर्ण की गऊ बनाय उसपर मिट्टी लपेट दिखाकर कहा "यह तो देदेओगे" उसे देखतेही प्रसन्न हो सेठ ने गोदान किया प्राणान्त भये नदी पर वही मिट्टी से सनी गऊ मिली सेठजी बड़े प्रसन्न हो पूंछ पकड़के पार होने लगे वीच में पहुँचतेहीं उसकी मिट्टी हटी तव तो तिसे सुवर्ण की देख सेठ जी पछता २ कर हाथ मसलने लगे पूंछ हाथ से छुटी अधविच मेंही गिरपड़े कृपणों की यह दुर्गति है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिवन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः ।

जहाति सर्वान् गुणिनो गुणान् खल आरोपयेद्दोष

दोषसंचयम् ॥ पपात वृक्षात्तु फलं प्रतोटयन् पृष्टः
थायां स तु दोषमाक्षिपत् ॥ १ ॥

खल जो कृपण सो गुणवाले के सब गुणों को तो त्यागदेता
ौर उनमें बहुत से दोष लगा देता है जैसे सूंजी सेठ फल तोडता
ा वृक्ष से गिरा और पूछा गया तो कथाही में दोष लगाने लगा
दृष्टान्त) एक सूंजी सेठ की स्त्री कहा करती थी कथा में जाओ
ह नहींजाता था निदान एक दिन लोग उसे गढ़ से पकड़ ले गये
हां पण्डित जी ने 'कलह कथा पूर्ण होगी' कहा यह सुनतेही दिशा
की शङ्का लग गई उठके चला आया दूसरे दिन भेंट पूजा में याद
ुई कि सेठजी आये भी थे बुलाने चाहिये फिर दो मनुष्य गये
देशा का नाम लेके छिप रहा स्त्री ने बता दिया मनुष्य, बांध जकड़
कर लेचले राह में विचारा कुछ भेंट पूजा भी लेनी कम से कम एक
नारियर तो लेना चाहिये फिर लोगों से कहा भेंट तो ले आऊं उन्हों
ने छोड़ा तो घर को न जाकर बगीचे में ही तोड़ने गया वह वृक्ष
ऊंचा था दीवार पै चढ़ के तोड़ने लगा फल हाथ में आया टूट न
सका निदान खैंचते २ पैर छूट गये सेठ जी लटकते रहे निदान
एक पीलवान हाथी लिये आता था उसे देख पुकारा कि तू हाथी
नीचे लगाव पच्चीस रुपये दूंगा उसने लगाया तो वह हाथी भी
कुछ नीचा रहा फिर उसने पीलवान से कहा तू भी खड़ाहोजा तो
पैंतीस दूं वह खड़ाहुआ दैवयोग से वह हाथी हटगया बोझ भारी
हुआ पीलवान, सेठजी, दोनों नीचे गिरे वह उठ हाथी पै चढ़
चलागया सेठजी की कल २ ढीली होगई। वे लोग इसे दे-
खते २ बाग में आये पूछा आप को किसने मारा तो बोले मोको
या कथाही ने मार्यो है ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

कथामृतं ह्यपि विषवत् प्रतीयते दुर्बुद्धेर्हरिविमुखा
न्तरात्मनः ॥ गतः कथां कथमपि जाययार्दितः सुप्ताप
स्वादितवान् पतच्छुमूत्रम् ॥ १ ॥

हरि से विमुख अन्तःकरण जिसका ऐसे दुर्बुद्धि कृपण को
कथारूप अमृत भी विष-समान जान पड़ता है । जैसे कोई
कृपण, स्त्री करके खेदाभया कथा में अमृत वर्षता है, इस
लालच से एक दिन कथा में गया वहां दो श्लोक सुनते ही
नींद आई कुत्ते ने आकर मुंह में मूत मारा चेत हुआ तो गाली
देने लगा कि यह तो महाखारी है इससे मेरा मुंह भी बिगड़
गया सब लोग हंसे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिवन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

अत्यन्तकृपणतायां जातायां जायते समौदार्यम् ।
दूरीकृता कृपणता महात्मना कोटिदानेन ॥ १ ॥

जब अत्यन्त कृपणता होती है तो फिर उसी से उदारता भी
उत्पन्न हो जाती है जैसे महात्मा हरि ने कृपण को कोटि
गुणा फल पाने का विश्वास देके उसकी कृपणता दूर की (दृ
ष्टान्त) एक सेठ का मुनीम, मथुरा जी में व्यापार करने गया वहां
चौवे लोगों से सुना एक गुणा देय करोड़ गुणा पावे तो मुनीम जी
ने इस व्यापार को मातवर समझ कर सब धन चौवों को बांट
दिया खाली हो घर आये । कुछ धन और मिला उसे भी भुगु
ताय आये निदान दरिद्री होगये कुछ धन ससुरालवालों ने
दिया वह भी तहां ही ठिकाने लगाया फिर मुंह न दिखा सके
वहां ही निवास किया एक दिन फल छीलते चाकू हाथ से छू

र नीचे गिरा वहां पारस-पत्थर गड़ा था उस से वह सुवर्ण का
ोगया तब तो मुनीमजी बहुत सा लोह खरीद लाये और सुवर्ण
नाय २ भरवाकर जिन २ के यहाँ से धन आया था वहाँ २
भेजवाने लगा ॥ इति षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
कार्पण्यनिबन्धस्तृतीयः ॥ ३ ॥

अथ औदार्यनिबन्धश्चतुर्थः ।

प्रथम प्रदीपः ।

तत्र मङ्गलरूपउदारजनकीर्तनश्लोकः ।

रामं रामद्वयाढ्यं कुलवरसहितं सीतया संयुतं च
कृष्णं कृष्णासमेतान्निगमनिगदितान् पाण्डुपुत्रान् सपु
त्रान् ॥ कुन्तीं कर्णं सुवर्णप्रतरणशरणं कौरवान्दानगी
तान् प्रह्लादंह्यप्रमादं बलिमथनिखिलान्दैत्यपुत्रान् सुदा
तॄन् ॥ १ ॥ मान्धातृवेणुसगरांश्च भगीरथादीन् याया
तिनाहुषमुखान् कृतदानपुञ्जान् ॥ उष्णांशुशीतकरवंश
विशेषमुख्यान् राज्ञो नमस्कृतिमहं विदधे विवक्षुः ॥ २ ॥

ऐसे दानियों को नमस्कार करके दानी भक्तजनों की दृढ़ता
दिखाते हैं जैसे—

सद्दानाद्दीयमानाद्धरणरणसमाज्ञोपतेद्दानवीरः सेवा
संग्रामधीरो जितनिखिलरिपुर्यः शुनाशीरतुल्यः ॥ तद्यो
धाभूत्कवीरः पुनरभवदसौ शाजहाँपूर्वगीरो यः संशुश्राव
वाचं महिपनिगदितां तारमार्गेण तूर्णम् ॥ १ ॥

दानी शूरवीर, दानरूप रणभूमि में गिरता नहीं है कैसा
वह जो सेवारूप संग्राम में धीर और सम्पूर्ण शत्रु जीतनेवाला
ऐसा और जो ऐश्वर्य्य में इन्द्र के समान होवे। जैसे तिस

संग्राम के मुख्य योधा भक्त "कवीरजी" भये। फिर 'शाहजहां-बादशाह' भया जिस ने तार की, राह से भैंसे के मनोरथ को समझ के सफल किया दृष्टान्त शाहजहां-बादशाह, ने सब को मालूम किया कि जिस किसी के पास अर्जी देने को दाम न हो वह इस तार को हिलादेवे मैं उसके अनुसार उसका मनोरथ जान सफल करूंगा । किसी काल रात को अचानक तार हिला बादशाह ने सिपाही भेजा उसने आकर कहा कोई आदमी नहीं है केवल एक 'भैंसा' तो खड़ा तार से खुजा रहा है बादशाह ने तुर्त उस भैंसे को मँगाया और भारी देख उसकी पखाल तौलाई तो उसमें सातमन पानी निकला तब से नियम कर दिया कि साढ़े तीन मन से अधिक कोई भी लादने नहीं पावे इति १ । कवीरजी का पुत्र कमाल हुआ तिसकी, भक्ति निष्ठा, दूसरे निवन्ध में वर्णन होचुकी है उत्पत्ति ऐसे भई कि किसी समय, बादशाह ने एक मुर्दा नदी में वहता था उसे मँगवाकर कहा कि इसे जिलाओ कवीरजी बोले आपही जिलावें दुनिया के बादशाह हैं तब कहा यह काम करामात का है इसे आपही कर सक्ते हैं यह सुन कवीरजी ने उसे 'उठ' ऐसा कह जिवाय उठाया तब बादशाह ने अचरज मान 'कमालकिया', ऐसा कह तब उसे 'कमालही' कहकर पुकारा तभी से वह "कमाल" ऐसे विख्यात हुआ ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निवन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ।

वलेः समानो नहि कोपि दानवान् त्रिविक्रमायाशु जगत्त्रयन्ददौ ॥ स्वयं तथासौ स्थितवान्रसातले शिरस्यथाधाय पदं महात्मनः ॥ १ ॥

राजाबलि के समान दानी कोई नहीं भया जिसने झटहि

श्रीभगवान् को तीन लोक देदिये और आप तिन वामनजी का चरण शिरपै धराकर पाताल में रहा तिसपर प्रसन्न हो वामनजी भी तहाँही द्वारपै रहे यह वृत्तान्त बहुधा प्रसिद्ध है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निबन्धे द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः ।

कर्णस्यापि तु दानं प्रदीयते दानिनां समाधानम् ॥ भारस्वर्णवितरणं ह्यकरोद्योसौ जगत्यसमम् ॥ १ ॥

कर्ण का भी दान देना, दानियों का समाधान किया जाता है। जिसने भार प्रमाण सुवर्ण का दान दिया जो जगत् में असमान अर्थात् सर्वोपरि गिना जाता है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निबन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः ।

यो रन्तिदेवोऽर्चितदेववृन्दः सर्वं जगद्योजितवान् स्व दानात् ॥ योऽदात्सदन्नम्प्रविभज्य भूय आपुल्कसेभ्यो व्रतकर्शितात्मा ॥ १ ॥

जो देव समूह पूजने वाला 'रन्तिदेव' भया उसने निज दान देने से सब जगत् को जीता जो बहुत दिन का व्रती भी भूख के न वश होकर श्रेष्ठ अन्न को विभाग कर २ के चाण्डाल तक दान करता रहा इसका इतिहास श्रीमद्भागवत में प्रसिद्ध है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

न संकुचन्ति प्रददायिनो ये दारिद्र्यकालेऽपि द्विजा

र्थदाने ॥ मृदर्घ्यदाताऽपि धनं ददौ यः कुबेरसंप्रेषित मत्र गाथा ॥ १ ॥

जो दानी हैं वे दरिद्रपन समय में भी ब्राह्मण के लिये देने में संकोच नहीं करते, जैसे मृत्तिका के पात्र से अर्घ्य वाले भी राजा "रघु" ने ब्राह्मणको धन दिया उसके पास कुबेरजी ने अपने पर चढ़ाई करता समझ के वहुतसा सुवर्ण भेजदिया था यह वृत्तान्त 'रघुवंश-काव्य' में वर्णित है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

जाता उदारा बहवोऽत्र भूमीतले महान्तो बहुदान वन्तः॥ तेषां समस्तानि विचेष्टितानि दृष्ट्वा समूह्यानि यथा क्रमेण ॥ १ ॥

इस भूमितल में ऐसे वहुत से उदार दानी होगये हैं तिन के समस्त कर्तव जहां तहां प्रसिद्धही हैं यथायोग्य देखके समझ लेने चाहिये ॥ इति षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामौदार्य निबन्धश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

अथ बधिरनिबन्धः पञ्चमः ।

बाधिर्यं दुःखदं लोके महद्दुःखप्रदायकम् ॥ यथ बधिरविप्रस्य सकुटुम्बगृहक्षतिः ॥ १ ॥

इस संसार में बहिरापन, महादुःखदायी होता है । जैसे बहिरे ब्राह्मण को कुटुम्ब सहित हानि अर्थात् बिगाड़ होने दुःख भया । (दृष्टान्त) एक बहिरा 'ब्राह्मण' था वह नये बैल लेकर खेत बाहने को गया, वहां एक ज्योतिषी ग्रह देख

ख्याह से आशीश दे २ कर फल बताने लगा वह कुछ न समझा और मन में पछताता रहा कि मेरे बाप ने इतना क़र्ज़ करलिया था? जब उसने आशीश देय कुछ मांगने को हाथ पसारा तो उससे यह बोला-कि मैं नहीं जानता था मेरे शिर पर इतना क़र्ज़ है अब आप ये दोनों बैल तो लेजाइये बाक़ी फिर देकर फारखती लेवेंगे। उसने शोचा सहज में माल हाथ लगा, बैल लेकर चल दिया। उधर उसकी मा, भोजन लेकर पहुँची वह उदास हुआ बैठा था खाते उसने कहा कि क्या खाना पीना है बाप तो हमें क़र्ज़े में फँसा गया साहूकार अभी वही लेकर आय बैठा था बैल लेकर गया है। वह भी बहिरी थी कुछ न समझ के पुकार बोली बेटा! मैं जानती हूं तेरी बहू ने तरकारी में नमक नहीं डाला होगा उसकी निगाह औरही होरही है मैं जाकर उसे बहुत धमकाऊंगी। वह वहां बड़ २ करती हुई पहुँची। उधर उसने भी कुछ कपास चुराकर बेंची थी सो भी कुछ न समझ के आपही पुकार उठी मैंने किस की कपास चुराई है कौन रांड कहती है तू दुनिया के कहने से मुझ से लड़ती है निदान तीनों बहिरे थे उनकी यह दुर्गति होती भई॥ इति प्रथमः प्रदीपः॥ १॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
बधिरनिबन्धः पञ्चमः॥ ५॥

अथालस्यप्रनिबन्धः षष्ठः।

प्रथमः प्रदीपः।

तत्र मङ्गलरूपमाद्यश्लोकमाह।

पूर्वं सुखप्रदायाथ पश्चाद्दुःखप्रदायिने॥ आलस्याय नमस्कुर्मो मित्ररूपाय शत्रवे॥ १॥

जो पहिले तो सुख देनेवाला अर्थात् प्रथम तो प्यारा लगे

और पिछाड़ी दुःखदायी होजावे ऐसे मित्रका रूप किये शत्रु भये आलस्य को हम लोग दूर से नमस्कार करते हैं॥१॥

नहि हानिं निजां सम्यग् जायमानां प्रपश्यति॥ म हालस्यवशीभूतो यथा मात्रोदितोऽलसः ॥ १ ॥ हा मात इति माखेदं कथितोऽसौ जगाद ह ॥ कथं कृता वत्स हेति जाने कार्याय वक्ष्यसि ॥ २ ॥ इदानीं तव भार्य कष्टात्कष्टतरंगता ॥ उत्तिष्ठानय सद्वैद्यं येन तज्जीवनं भवेत् ॥ ३ ॥

आलस्युवाच ।

अहं मातः सुखासीनो गन्तुं शक्तो न कुत्रचित् म्रियमाणा दृश्यते चेत्सद्वैद्यः किं करिष्यति ॥ कथं वृथ तत्सकाशं प्रेषयस्यपि सुव्रते ॥ ४ ॥

आलस्य से भगवद्भक्ति नहीं होती इससे आलस्यघ्न नि बन्ध कहते हैं ॥ जो आलस्य के वश है, वह होती भई नि हानि को भी नहीं समझता है ॥ दृष्टान्त ॥ जैसे आलसी क माता उसे पुकारी १ तो इसने खेद से 'हाय मा' कहके समाधा किया तब वह बोली वेटे ! हाय क्यों करी वह बोला मा मैंने जा किसी काम को कहेगी २ वह बोली, भाई ! इस समय ते वहू को अत्यन्त खेद हो रहा है । तू उठ किसी अच्छे वैद्य क ला जिससे उसका जीवन होवे ३ इतनी सुन आलसी 'आः करता बोला हे मा ! मैं सुख से सो रहा मेरी कहीं भी जाने क सामर्थ्य नहीं है । और जो वह मरती ही दीखती है तो फि अच्छा वैद्य वेचारा आकर क्या करैगा ४ मुझे उसके पास भे के क्यों वृथा हैरान करती है । आलसियों की यह गति है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामालस्य निबन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ।

केनचित्कथितो भृत्य ! दीपो निर्वाप्यतामिति ॥ प्रत्यु
नक्षिमीलस्व स्वयमेव भविष्यति ॥ १ ॥

किसी ने सेवक से कहा अरे! दीपक बुझादे उसने उत्तर
या कि आंखे मीच लीजिये आपही बुझ जावेगा। फिर उसने
हा कि बाहर जा देख मेह वर्षता है या नहीं उसने कहा कि
ता है वह बोला तू तो यहां पड़ा, कैसे जाना वर्षता है
कर बोला कि, बाहर से बिल्ली भीगी आई इससे जाना
ताही होगा इससे आलस्य से सदा बचते रहना चाहिये ॥
ते द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्या
मालस्यनिबन्धः षष्ठः ॥ ६ ॥

अथ प्रसङ्गान्मत्तनिबन्धः सप्तमः ।

प्रथमः प्रदीपः ।

नहि मत्तो विजानाति वस्तु स्वं विस्मृतं महत् ॥
अश्वं विस्मृत्य भृत्यो न गतो वासे बुबोध सः ॥ १ ॥

अब प्रसंग से 'मत्त—नशेबाजों' का निबन्ध कहते हैं ॥

मत्त जो नशेवाला है वह अपनी भूली भई भारी वस्तु को
भी नहीं सँभालता। जैसे स्वामी, सेवक, दोनों मत्त थे घर से
चले राह में ठहर के खान पान किया चलते समय घोड़ा वहां
ही बँधा भूल के चल दिये राह में संभालकरी कि कुछ भूले तो
नहीं हैं तो विचार कर लिया कि अफीम का डिब्बा, भांग,
तमाखू, पोस्त वगैरह सब हमारे पासही हैं जाहिर में तो कोई
चीज ऐसी रही नहीं जिसे भूल चले हों। यों कहते जाय सराय
में उतरे मेहतरानी से कहा खाने दाने घास पानी का जल्द
बन्दोबस्त कर उसने कहा कि कुछ आदमी पिछाड़ी आते हैं

या घोड़ा आप कुछ दूर छोड़ आये हैं नौकर तो आप के दीखता है। इतनी सुनतेही आंख खुलगई नौकर को साथ उलटेही घोड़ा लेने चले॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां सत्तानिबन्धे प्रथमः प्रदीपः॥ १॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः।

कालं नाप्यनुबुध्येत मत्तमूढो गतं बहु॥ स्त्रियावलम्बितः स्थूणे दृष्टो प्रातस्तथाविधः॥ १॥

उन्मत्तमूढ़ नशे में चूर, अतिकूर बहुत बीते काल को भी कुछ नहीं समझता। जैसे एक पोस्ती ने स्त्री से कहा 'खाट बिछाती जाना,' यह कहकर दो खूंटियों को पकड़ सहारा लेके खड़ा होगया। वह खाट बिछाकर दूसरे घर में रतजगा करने चलीगई निदान सवेरा भये वह घर में आय धराढ़का करने लगी तो खुड़का सुन पोस्तीजी की आंखखुली तो उसी ध्यान में कहा कि 'खाट बिछाई भी, यह सुन उसने ऊपर को देखा तो वहांही उसीतरें खूंटियों के सहारे लटक रहे हैं रोकर कहा मेरी क़िस्मत फूटगई॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां सत्तानिबन्धे द्वितीयः प्रदीपः॥ २॥

अथ तृतीयः प्रदीपः।

मत्तस्य जायते प्रायः स्वपरापस्मृतिः खलु॥ स्वयं हि पतितो विष्ठागर्त्ते पप्रच्छ सेवकम्॥ १॥

नशेबाज़ को अपने पराये की कुछ भी सुधि नहीं रहती जैसे आपही तो नशे के झोक में दिशा बैठते पायखाने में गिरपडे और नौकर से पूछते हैं अरे देख तो यह क्या गिरा बड़ाभारी खुड़का भया है नौकर बोला कि, कोई बिल्ली इस

ारी होगी फिर बोले अबे देखता नहीं है निदान आकर
खे तो आपही पड़े सड़ते हैं। उसने पुकारा कि आप कहाँ
यह तो बताइये तब आंखखुली आह-२-करते खड़ेहुये बड़ी
ोटलगी इलाज होने लगी ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मत्तनिबन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः।

नहि भङ्गादिमत्तोऽपि जानाति निजचेष्टकाम् ॥
था मिश्रो वनान्नग्नो वत्समङ्के निधाय च ॥ १ ॥
आजगाम पुरे हृष्टः घृष्टोऽपि बुबुधे न सः ॥ पत्न्याऽथ
र्त्सितो भूय आत्मानं ज्ञातवानसौ ॥ २ ॥

भङ्गबाजों का दृष्टान्त।

भङ्गड़ भी अपने शरीर की चेष्टा को नहीं जानता। एक
मिश्रजी निज गौ को वन में लेजाया करते थे वह वहांही
ब्याई तो आप बछड़े को गोदी में सँभाले नगर में आये राह
में इनकी धोती खुलके गिरपड़ी कुछ ध्यान नहीं रहा पुरवालों
ने इन्हें नङ्गे देखके पूछा, मिश्रजी! आज क्या डौल डाल है
किस रूप से आते हैं। तो ये कोपकर बोले अच्छा डौल है,
नारायण की कृपा से गऊ ब्याई है, बच्छा लिये आनन्दरूप
से चले आते हैं तुम किसी को देख नहीं सके। आगे और
भी लोगों ने इन्हें अद्भुतरूप देख पूछा आज अच्छे दर्शनभये
साथ २ पुकारते बालक बूढ़े सभी जाते थे और ये उन्हें हँसी
समझके लगे गालियां बकने। निदान गाली देते २ घर पै
आये स्त्री ने गैला सुन बाहर आय देखतेही कहा आज क्या
रूप है तो पुकारे रॉड़ तू भी तो दुनिया में ही है सब दुनिया
मेरे गैल लगी तो तूभी सही अब सबको धता है फिर कहा
निपूते धोती कहां, तब तो मिश्रजी नीचे की ओर झुक के देख

बहुत लज्जित हुये और स्त्री से बोले ल्याव ओढ़नाही ल्याव

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मत्तनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

क्वचिन्मत्तस्य सिद्धत्वाद् द्रव्यप्राप्तिरपि स्मृता ॥ धत्तूरमोदकान् कृत्वा प्रस्थिता भ्रातरः पुरा ॥ १ ॥ चौरैर्विलोकिता मार्गे विधिवद्धृतपादकाः ॥ तेषामन्योन्यमभवत्प्रेमतो विषभक्षणम् ॥ २ ॥ चौरामत्ता गता भूमिं तद्धनं तैर्न्यनायि वै ॥ द्रव्येच्छा चेद्भवेद्यस्य स धत्तूरं निषेवते ॥ ३ ॥

कहीं २ मत्त में सिद्धाई होने से द्रव्यप्राप्ति भी होजाती है। जैसे नारनौल राव के महोले के ब्राह्मण चारभाई धतूरा खाते थे उनकी स्त्री कहती कमाने जावो वे धतूरे के लड्डू बना घर से चले राह में उनको ठगमिले माल उनके पास बहुत था पर लोभ से " इनका भी जो हो सो लेलें " यह विचार के इन से पालागनकर पास बैठ गये और अपने पास से जहर के लड्डू निकालकर इन को दिये तब तो इन्हों ने भी वह अपना महाप्रसाद उन ठगों को सादे स्वभाव से दिया उन्हों ने प्रसाद जान खाय तो लिया पर पचावे कौन, बेहोश हो गिरे इनको जो सुमति आई, उनका माल से लदा भया घोड़ा था उसे हांकलाये घर आकर आवाज दई कि कमाय आये माल देखतेही सबों ने बड़ा ही आश्चर्य किया। उनका यह वचन है कि द्रव्य चाहै तो धतूरा सेवन करै ॥ इति पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मत्तनिबन्धः सप्तमः ॥ ७ ॥

अथ मूर्खनिबन्धोऽष्टमः।

प्रथमः प्रदीपः।

तत्रादौ मौढ्यघ्नं मूर्खचतुष्टयनिबद्धं दृष्टान्तमाह।

चत्वारोऽत्यन्तमूर्खा सघनवनगता भूय आह्लादवतः कश्चिद्वृद्धः स्वमौलिं पदपतनभियाऽधश्चकारैकारम्॥ ते तं मत्वा प्रणामं स्थविरवरकृतं कहिवादं वेचक्रुस्तन्नत्वागत्य तूर्णं च निजनिजकथां वर्णयांचक्रुरेवम्॥ १॥

चार अत्यन्त मूर्ख, बाग में सैर करते आपस में हँसी करते चले जाते थे। किसी वृद्ध ने 'पैर न अखटजावे' इस विचार से अपने शिर को एकबेर नीचा किया तो उन्हों ने समझा इस वृद्ध ने हमें प्रणाम किया फिर भी आपस में 'मुझको किया २' कह २ के झगड़ने लगे तो उसी बुड्ढे के पासआकर पूछा वृद्धजी तुमने किसको प्रणाम किया बता दीजियेगा। बुड्ढा था पुराना जानलिया कि ये निरे मूर्खही हैं उत्तर दिया कि मैंने तुमसें बड़े मूर्ख को प्रणाम किया है तब तो 'मैं बड़ा मूर्खहूं २' ऐसे कहके झगड़ने लगे तब वृद्ध ने कहा तुम अपनी २ मूर्खता वर्णनकरो तब वे राजीरजा हुये॥ १॥

एकस्तेषां मूर्ख आसीद् द्वितीयो मूर्खस्वामी मूर्खनेता तृतीय॥ योऽसौ तुर्य्यो मूर्खमूर्खस्तु तेषां संवादोऽयं कीर्त्यतेऽमौढ्यहेतुः॥ २॥

एक तो उनमें 'मूर्ख' था, दूसरा 'मूर्खस्वामी' और तीसरा 'मूर्खनेता' चौथा जो मूर्ख था वह 'मूर्खमूर्ख' अर्थात् मूर्खों में भी अत्यन्तही मूर्ख था अब इन चारों का संवाद है॥ २॥

मूर्ख उवाच ।

अहं हि पूर्वं श्वशुरालयं गतो महोत्सवं द्रष्टुमना सुभोज्यवत् ॥ सायंगतस्तस्य पुरे विचिन्तयन् स्फुटं न रात्रौ मम भूषणादिकम् ॥ ३ ॥ जातो निवासस्त्वथ साधु वेश्मनि समर्पितं तत्र विभूषणादिकम् ॥ तत्र प्रसुप्तस्तु यथाकथं मुदा परन्तु निद्रां नहि लब्धवान् क्षुधा ॥ ४॥ तयार्दितोहमुत्थाय याचन्नन्नं गृहे गृहे ॥ न लब्ध मन्नं कुत्रापि ततःश्वशुरसद्मनि ॥ ५ ॥ गत्वा मुहुःकथि तवानन्नं मे दीयतामिति ॥ मत्कनिष्ठाश्यालका तु स्वन्नमा दाय भूरिशः ॥ ६ ॥ भो याचक गृहाणान्नमित्यूचे ह्यनु कम्पिता ॥ अहं तु तदभिज्ञाय महद्वैधर्म्यमात्मनः ॥ ७॥ विलोमपद्भ्यां त्वरितं विद्रुतस्तेन लज्जितः ॥ एवं ग च्छन् पृष्ठतो हि पतितो भूमिगर्तके ॥ ८ ॥ निःसारितो यत्नतस्तैर्भूयो भूयो विगर्हितः ॥ तद्दिनादेव श्वशुरगृहं न गतवानहम् ॥ ९ ॥ अतोहं मूर्ख इत्येवं प्रसिद्धःस र्वदा बुधैः ॥ भवत्प्रश्नानुसारेण कथितं पुरतस्तव ॥ १०॥

मूर्ख कहनेलगा कि, हे वृद्ध ! पहिले मैं अपनी ससुराल में गया, वहां भारी महोत्सव था तो मैं सांझ हुये तहां पहुंचा तो विचारा कि रात को मेरे वस्त्र आभूषणों की प्रकट शोभा न होगी । तो एक साधु की मड़ैया में डेरा किया उसने सजा धजा देख मुझको ठहरा लिया वहां मैं रात को आराम से सोया पर रात को मारे भूख के नींद नहीं आई । तब व्याकुल हुआ मैं उठके घर २ अन्न मांगता अपने ससुर के घरही चलाआया । तो मेरी साली मेरे लिये बहुत सा अन्न लेकर 'ले मँगते भीख ले' ऐसे पुकारती आई मैं आवाज पहिचान उलटे पगों से

जितभया पिछाड़ी सरका वह आगे २ सरकती चलीआई नि-
न एक भारी गढ़ा था उसमें मैं गिरा लोग दीवा ले आये
मुझे निकाला पहिचानलिया तो सबोंने मुझे जानतें दईं तिसी
दिनसे मैं ससुराल नहीं गयाहूं और 'मूर्ख' मेरा नाम भया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे प्रथमः प्रदीपः॥ १॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः।

मूर्खस्वाम्युवाच।

अहमपि श्वशुरालयकं गतः प्रकथितो बहुधाऽपि
न भुक्तवान्॥ अथ निशि क्षुधया परिपीडितो बुभुज
प्राशु सुरक्षितमोदकम्॥१॥ तदुद्घाटनशब्देन श्वश्रा
सम्यङ्निरीक्षितः॥ कपोलस्थेन तेनाहं मूढवैद्यचिकि
त्सितः॥ २॥ भिन्नःशलाकया गण्डो द्वितीयोऽथापि
शङ्कया॥ मोदकः पतितो भूमावहमासं प्रगर्हितः॥ ३॥

दूसरा 'मूर्खस्वामी' बोला वृद्ध। मैं भी अपनी ससुराल
गयाथा तहां लोगों ने पूछा खाने को खाइये मेरे मुँह से नि-
कलगई 'खाकर चला था, फिर तो उन्हों ने मुझे बहुतही
अड़ाया पर मैंने भी समझलिया कि 'जायलाख रहेशाख, अब
खाना ठीक नहीं निदान बेचारे कह २ के चुप होरहे सोया पर
चारपाई पै भूख के मारे चैन नहीं पड़ी उठके धरा ढका सँभाला
तो खुड़का सुनके सास जगउठी उसने मुझे चोर जानके
पकड़ा मैंने एक लड्डू लेके मुँह में लगा लिया था पर वह
फूट न सका मुँह में रहा निदान उन्होंने जान भी लिया पूछते
रहे मैं 'हूँहूँ' करतारहा। तब उन्होंने जाना इनका मुँह बन्द
होगया तो वैद्य बुलाया उसने गाल फूला देख बेरोक नश्तर
मारदिया खून की धार गिरी पर मैंने भी उस समय ऐसी

बुद्धिमानी की कि वह लड्डू इधर से उसतर्फ कर लिया तो वैद्य बोला यह रोग इधर आगया अबके नस्तर में साफ निकल जावेगा, यह कह उस निर्दयी मूढ़, वैद्य ने देख यह मेरा दूसरा गाल भी फाड़डाला बस, फिर लड्डू निकल पड़ा लोग हँसने लगे मैं शर्माकर भागा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः ।

मूर्खनेतोवाच ।

मूर्खनेता त्वहं ख्यातो हर्षे दुःखप्रकारकः ॥ उष्णीषपतनात्कूपे बुद्धः श्वश्रूगृहं गतः ॥ १ ॥ दृष्टोऽनावृतमूर्द्धाहं पृष्टः केनापि नैव हि ॥ दृष्ट्वा तान् रुदतः सर्वान् रुरोद बहुथाप्यहम् ॥ २ ॥

मूर्खनेता बोला वृद्ध ! मैं भी अपनी ससुराल गया तो राह में कुयें के सहारे सोया नींद आगई । तो बेचेत सोते हुये मेरी पगड़ी उतरके कुवें में गिरपड़ी फिर मैं भड़भड़ाकर भय से उठा तो दिन थोड़ा रहगया था चलदिया ससुराल के पास पहुँचा तो पहिलेही सासुरे की नाइन मिली उसने मुझे पहिचान नङ्गे शिर देखके समझ लिया कि बीबीजी मरगईं इसी से ये नङ्गे शिर चले आते हैं । बस उसने जाय घरपै कहदिया लालाजी नङ्गे शिर बीबी की बदखबरी सुनाने आते हैं, यह सुनतेही वहां रोना पीटना पड़गया, मैं पहुँचा तो उन्हें रोते देख मैं भी रोने पीटने लगा खूबही शिर पीटा, निदान हारके उन्हों ने ही पूछा कि जो हुई सो परमेश्वर की मरजी पर आप तो अच्छे रहे । तब मैंने पूछा आपके यहां तो कुशल है उन्हों ने कहा यहां तो सभी कुशल है पर आप नङ्गे शिर आये

सुसे जाना बीबी मरगई इसी से हम रो पीटरहे हैं यह सुन-
ही मैंने शिर सँभाला तो होश हवास भूला वहां से भगा तब
आजतक फिर ससुराल नहीं गया हूं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे तृतीयः प्रदीपः॥ ३॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः।

मूर्खमूर्ख उवाच।

अहं पुरा राजमते स्थितोऽभवं लब्धं ततः स्वं च मह
द्व्ययीकृतम्॥ वृद्धाविवाहं मम कारयत्यपि प्राप्तिं सुता
नां प्रशशंस हर्षिता॥ १॥ श्रुत्वैवाहं पुत्रजन्म जन्म
साफल्यदं मम॥ प्रादां दानं द्विजादिभ्यः सुतसौख्यम
वाप्तवान्॥ २॥ कियत्काले गते चाहं जातो राज्ञा नि
राकृतः॥ ततस्तामब्रवं वृद्धां सुतौ मेद्य प्रदर्शय॥ ३॥
तत्र मामातुरं वृद्धे निवासय यथासुखम्॥ इत्युक्त्वाहं
तया सार्द्धं गतो दर्शनलालसः॥ ४॥ कस्याचिद्भर्म्ये
निकटे गता मामब्रवीदिति॥ भवद्भार्य्या मयि क्रुद्धा
दृष्ट्वातिक्रोधमाप्स्यति॥ ५॥ अतस्त्वमेवान्तर्य्याहि
स्वागतं ते भविष्यति॥ सुतौ तवान्तिके चापि संनता
वा गमिष्यतः॥ ६॥ इत्युक्तोहं गतः शीघ्रमन्तस्तौ चा
प्यबोधयम्॥ पुत्रौ श्रुत्वा गतौ तत्र संनतौ मत्समीप
त॥ ७॥ अहं तेभ्योऽददं चाथ भक्ष्यभोज्यमनुत्तमम्॥
तौ गत्वा मातसान्निध्यं दर्शयन्तौ परस्परम्॥ ८॥
तया ज्ञातः स्वीयभर्त्तुर्मित्रोहं बहुलालितः॥ सुखं सुतौ

सुसंप्रीतावङ्के कृत्वा स्थितोह्यहम् ॥ ९ ॥ आगतस्तत्रि
तां चापि मां नमस्कृतवानथ ॥ अन्तः पप्रच्छ साध्वी
तां कोऽयं नव्य इवागतः ॥ १० ॥ सापि श्रुत्वाभवत्तु
नाहं जानामि तत्त्वतः ॥ तवैवाऽयं कुतो मित्रो भवि
तथा स्मर ॥ ११ ॥ तत आगत्य तरसा
न्द्रितः ॥ कस्त्वं वा कुत आयातः प्रब्रुह्यागमकारण
म् ॥ १२ ॥ अहं कथितवान्सौम्य किन्न मां वेत्थ वान्धव
म् ॥ भगिनी भवदीया या सापि महां विवाहिता ॥ १३ ॥
ममाङ्कएतौ वर्त्तेते भागिनेयौ तव प्रभो ॥ श्रुत्वैवैतत्कु
वचः क्रुद्धो मां प्रदहन्निव ॥ १४ ॥ भृकुटीं कुटिलां कृत्वा
क्रुद्धो मां प्राब्रवीदिति ॥ किं दुष्ट ! भाषसे मिथ्या वचो
नैव विलज्जसे ॥ १५ ॥ कुतः किं मदिरा पीताऽथवा
मत्तो सुसूर्षति ॥ इत्युक्तोहं प्रकुपेन लज्जया विह्वली
कृतः ॥ १६ ॥ अधःशिराः खनन् भूमिमवोचं न किम
प्यथ ॥ गृहीत्वा कर्णयोस्तूर्णं वृद्धो निष्कासितो गृहात् ॥
अतो मूर्खेषु मूर्खोहं प्रथितः पृथिवीतले ॥ १७ ॥

मूर्खों में मूर्ख अत्यन्त अज्ञानी 'चौथा' बोला हे वृद्ध ! मैं
पहिले राजा का कामदार, बहुत मनचढ़ा था मैंने बहुत सा
द्रव्य कमाया खोया एक बुढ़िया ने कहा मैं तुम्हारी शादी
ठहराती हूं १०००) रुपये देवो मैंने देदिये कुछ काल में फि
आई कहा कि आप की शादी होही गई थी अब आपके दो
लड़के हुये हैं उनकी परवरिश के लिये खर्च दिलाइये य
कहके और रुपये लेगई निदान हमारा काम बंद होगया
हम तंग हुये तो उसी बुढ़िया से कहा कि अब हम तंग

। हमें हमारे कुनवे से मिलादे अब हम वहांही सुख से
हेंगे । तो वह बुढ़िया मुझ को एक बड़े मकान के नीचे ले
ाकर बोली कि बहूजी मुझसे नाराज़ हो रही हैं मुझे देख
ग्रौर क्रोध करेंगी इससे तुमहीं भीतर चलेजाओ वहां पुका-
ना तो तुम्हारे दोनों लड़के पास आजावेंगे बस मैं चाव भरा
ीतर गया आवाज़दी सुनतेही दो लड़के आये मैंने उन
। प्यारकर उन्हें मेवा मिठाई दी वे लेकर अपनी मा के पास
ये उसने समझा कोई मेरे पति का मित्र आया है फिर उस
। मेरे लिये अतर पानदान भेजा मैंने 'अहो भाग्य' कहके
हण किया और दोनों लड़कों को गोद में लिये बैठा था उस
समय के आनन्द को मैंही जानता हूं कहते नहीं बनता है ।
तने में उसका पति घर चला आया उसने मुझे देखतेही प्रणाम
किया और भीतर जायके घरवाली से पूछा यह नया सा
आदमी लड़कों को गोद में लिये बैठा, कौन है । उसने कहा
मैंने तो तुम्हाराही मित्र जानके इसकी खातिर करी है आप
निश्चय करलीजिये तो उसने आके मुझसे धीरे से पूछा कि मैं
आपको पहिचानता नहीं आप मुझे बतलादीजिये । तो मैं
झट से बोल उठा कि अजी साहब ! आपने मुझे नहीं पहि-
चाना मैं आपका रिश्तेभाई 'बहनोई' हूं आपकी बहिन मुझ
को व्याही है और ये दोनों आप के भानजे हैं । यह सुनतेही
उसने आंखें चढ़ाकर दांत पीसकर मुझ से कहा कहां का पा-
गल चलाआया चल यहां से नहीं इतने जूते लगेंगे कि बाल
खोपड़ी पर न रहेंगे । यह सुन मेरे होश बिगड़े तो मैं नीचा
मुंह किये जूता वहां ही छोड़के पत्ता तोड़ भागा फिर कभी उस
गली की तर्फ भी नहीं गया हूं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

कथितेयं मया सम्यक् चतुर्मूर्खकथा शुभा ॥ शुक्ल देवीसहायेन सहायेन मनीषिणाम् ॥ १ ॥

इस प्रकार से शुक्ल देवीसहाय ने विद्वानों की सहायता से चार मूर्खों की कथा कही ॥

न हि बुध्यति मूर्खोहि शब्दपर्य्यायमव्ययम् । यथा केनाचिदेवोक्तं काचिद्दर्पणमानय ॥ सोपि गत्वा गृहीत्वा तु स्थितः काचिद्विशङ्कितः ॥ २ ॥

मूर्ख जो है वह शब्द के साथ के अव्यय को भी नहीं पहिचानता जैसे किसी ने सेवक से कहा 'जरा दर्पण लाना' तो वह गया और दर्पण लेभी लिया पर 'जरा' की तलाश में खड़ारहा स्वामी ने पूछा तो कहा कि दर्पण तो मिला पर वह 'ज़रा' न मिली इससे लाचार खड़ा हूं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

हानिं कृत्वा पुनर्हानिं करोति निजमौढ्यतः ॥ जाते तु दर्पणध्वंसे घट्या ध्वंसोपि वै कृतः ॥ १ ॥

मूर्ख-निजमूर्खता से हानि करके और भी कुछ हानिही कर देता है जैसे किसी ने चौबे से कहा दर्पण लाना उससे भङ्गके नशे में दर्पण हाथ से छूट गिरके फूटगया मालिकने पूछा चौबेजी ! दर्पण कैसे फूटा चौबेजी के पास घड़ी रक्खी थी उठाकर देमारी कहा "ऐसे फूटो" निदान मालिक, संतोष कर बैठा इस से मूर्खों से पूछना सँभलकर चाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

॥ अथ सप्तमः प्रदीपः ॥

लक्षणां नैव जानाति मूर्खः केनापि लक्षितः ॥ यथा भोजनवेलायां श्वागतो न निवारितः ॥ १ ॥

मूर्ख किसी करके लक्षितकरी अर्थात् बताई लक्षणा को भी नहीं समझता है जैसे किसी ने रसोई करके जल को जाते एक से कहा भाई ! तू रसोई को देखते रहना, मैं जल लेआता हूं कहके चलागया पीछे से कुत्ता आय रसोई खाय विगाड़गया जिसने आकर देख कहा अरे यह क्या हुआ तो वह बोला कि कुत्ता आकर खाय फेंकगया मैं देखता रहा तुमने कहा न था कि देखते रहना, वह वेचारा लाचार हो चुप रहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मूर्खनिबन्धे सप्तमः प्रदीपः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः प्रदीपः ।

बहुभिर्बोध्यमानोऽपि मूढो नैवाऽवबुध्यति ॥ गृहीत्वा फललोभेन महिषीं न मुमोच सः ॥ १ ॥

बहुतों से समझाया गया भी मूर्ख, समझता नहीं जैसे एक मूर्ख से पण्डित ने कहा वृक्ष लगाकर सींचतारहु फल मिलेगा, वह इसी चाहना में नित्य २ सींचता रहा निदान एक दिन किसी की भैंस उस वृक्ष से आकर खसनेलगी उसके सींग वृक्ष में फँसगये निकल न सकी इतने में वह मूर्ख भी चला आया देखतेही बहुत प्रसन्न हो पुकारा कि गुरुजी ने जो फल बताया सो आज पाया लोगों ने बहुत समझाया पर न माना ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मूर्खनिबन्धेऽष्टमः प्रदीपः ॥ ८ ॥

अथ नवमः प्रदीपः ।

हानिलाभौ न जानाति कार्य्याकार्य्ये हिताऽहिते ।

अनुक्तो नैव जग्राह पतितं वस्त्रमुत्तमम् ॥ कथितः जग्राह वस्त्रे विष्ठां निपातिताम् ॥ १ ॥

मूर्ख-हानि, लाभ, कार्य, अकार्य, हित, अनहित, नहीं जानता है जैसे स्वामी ने सेवक से कहा हम कहें करना उसने यही निश्चय माना। एक दिन कहीं जाते थे दुशाला गिर पड़ा नौकर ने देखा पर उठाया नहीं अमीर संभाला तो पूछा अरे! दुशाला गिरा था तैंने देखा नहीं उसने कहा देखा था पर आप ने मुझ से "नहीं कहा उठाले" मैंने उठाया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मूर्खनिबन्धे नवमः प्रदीपः ॥ ९ ॥

अथ दशमः प्रदीपः।

शठो न शाठ्यं त्यजते हठं साधयतीह सः ॥ मृता मदाहयन्मौढ्यात्कथाग्रे जननीमसौ ॥ १ ॥

शठ, अपनी शठता को नहीं त्यागता किन्तु निजहठ को सिद्ध करता है। जैसे मूर्ख की माता मरी तो उसने किसी की भी न मानी और निजमाता का कथा के पासही "तत्रैव गङ्गा यमुना त्रिवेणी" इत्यादि प्रमाण करके दाह करवाया पण्डित चुपरहा इत्यादि मूर्खप्रसङ्ग जानना ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां मूर्खनिबन्धे दशमः प्रदीपः ॥ १० ॥

अथैकादशः प्रदीपः।

गुरु चेले का दृष्टान्त।

मूर्खशिष्यान्महद्दुःखं जायते शूद्रतो यथा।

ब्राह्मणो दुःखमापन्नस्ताडितस्तेन वै भृशम् ॥ १ ॥

मूर्ख शिष्य से महादुःख होता है। जैसे शूद्र शिष्य से ब्राह्मण ने दुःख पाया उसने गुरु को वहुतही मारा पीटा (दृष्टान्त) एक ब्राह्मण, किसी जाट को शिष्य करने गया था जाट से कहा कि मैं कहूँ सो कहना उसने वैसाही नियम लिया तो उसने कहा कि 'मेरे पैर पकड़के कहु मुझे शिष्य कीजियें, तो शिष्य ने भी वैसेही ब्राह्मण से कहा, मेरे पैर प० क० मु० शि० की०, तव गुरु ने कहा 'अरे तू कहु' शिष्य बोला अरे तू कहु गुरु ने कहा तू बड़ा मूर्ख है शिष्य बोला, तू बड़ा मूर्ख है। तव तो गुरुजी ने क्रोध में आकर उसके कहीं एक हलका सा थप्पड़ मारा, तो उसने भारी जमाया तव तो गुरु भी भारी २ मारनेलगा शिष्य उससे भी भारी २ मारता रहा निदान वेचारे गुरु की कल २ ढीली होगई लाचार होकर अलग हो बैठा, तव शिष्य भी हलकाईपर उतरा। इसी प्रकार शिष्य करके घर आया फिर उसकी जाटनी उसके घर पै सीधा लेकर आई तो उसे देखतेही गुरु ने कोप हो निज स्त्री से कहा कि इसके पति ने शिष्य होते मुझ को वहुत मारा है अव तू इस को खूव पीट वह सुनतेही उसे पीटनेलगी मारे मार के उसे शिथिल करदी। फिर घर पहुँचाई तव उस जाटनी ने जाट से कहा कि 'चेला होना तो सहज, पर सीधा देना बड़ा कठिन है अथवा एक ने ब्राह्मण से पूछा हे महाराज! गुरु होने में आराम, या चेला होने में? उसने कहा गुरु होने में आराम, चेला टहल करनेवाला होता है, तव उसने झटही कहा अच्छा तो मुझे गुरुही कर दीजिये, गुरु वेचारा सुनकर चुप हो वैठा॥इत्येकादशःप्रदीपः ११॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
मूर्खनिवन्धोऽष्टमः ॥ ८ ॥

अथ चातुर्यनिबन्धो नवमः ।

अथ प्रथमः प्रदीपः ।

अथ प्रसङ्गाच्चातुर्यनिबन्धं निबद्धुं तावद्विभक्तिकमं प्रदर्श
यन् ज्ञानोत्कर्ष्यं द्रढयति ॥

ज्ञानं सत्यतमं सदा विजयते ज्ञानं भजे सर्व्वदा
ज्ञानेनाशु हता निशाचरचमूर्ज्ञानाय तस्मै नमः ॥ ज्ञा
नात्सर्व्वमिदं जगत्समुदितं ज्ञानस्य दासोऽस्म्यहं ज्ञा
ने मतिरस्तु ज्ञान नहि मां मोक्तुं भवानर्हति ॥ १ ॥

अब मूर्खनिबन्ध कहने के अनन्तर चातुर्यनिबन्ध
कहना चाहिये इस प्रसङ्ग से चातुर्यनिबन्ध कहने के लि
पहिले ज्ञान की उत्कृष्टता दिखाते हैं । सत्यरूप ज्ञान स
विजयी है, ज्ञान को सदा भजते हैं । ज्ञान करकेही राक्षसले
हतीगई, तिस ज्ञान के लिये नमस्कार है ज्ञान से यह सर्व
संसार उत्पन्न हुआ, ज्ञान का मैं दास हूं, ज्ञान में मेरी मति
हो, हे ज्ञान ! तू मुझे छोड़ने योग्य नहीं है १ यहां ज्ञानं
यह प्रथमा त्रिभक्ति, इत्यादि, संबोधनसहित सातों विभक्तियां
भी सिद्ध होती हैं ॥

ज्ञानाज्जन्यबलं बलं निगदितं मौढ्याद् बलं कद्बलं
माजन्मावसितः शशेन मृगराड् भीत्यैव विद्रावितः ॥ यो
वै तं पुनराह्वयत्कपिभटस्तेनैव संहारितः सूढेनाऽथ तत्
विचार्य मतिमान् बुद्ध्या बलं योजयेत् ॥ २ ॥

जो ज्ञान से उपजा बल है वही 'बल' कहाता है और
मूर्खता से उत्पन्न बल है वह बहुत भी हो पर 'कद्बल' खोटा
बल अर्थात् वह निष्फल बल समझा जाता है । जैसे एक सिं
वन में बहुत से शशे खाता और मारडालता था । एक बुद्धि
मान् शशा, रंगरेज की कूँड़ में लोट अद्भुत भयानक रूप बन

रीन में जाय बैठा, सिंह आया उसने देखतेही पूछा तुम कौन, वह बोला हम सवासेर, यह सुन सिंह ने सोचा कि मैं सेर ही हूँ अब यहां सवासेर आगया यह विचार गीदड़ ज्यों कार भागा राह में वानर से पूछा सेर! कैसे भगा जाता है? ह बोला सवासेर आगया उसने कहा रेमूर्ख! कोई सवा वासेर नही है चल मुझे दिखाव तो सेर फिर लौटा जब स पहुँचे तो फिर ज्ञानी शशा पुकारा वाह २ मेरे प्राचीन त्र बन्दर! तूही मेरे गये शिकार को फिर लौटाकर लाया यह सुन सेर ने विचारा कि सचमुच इस वानर की मेरी पस में लागरहती है इसी से मुझे मरवाना विचार के दर, फिर भी लौटायके लिवालाया है वस! झट से बन्दर दुहाथड़ मार गिराया आप जीव बचाकर भगादिया। इससे द्धेमान् को चाहिये कि पूर्वापर विचारके वल का प्रयोग करै समें वह वल सफल होवे॥

इति श्रीगुरुदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां चातुर्यनिबन्धे प्रथमः प्रदीपः॥ १॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः।

अथवा एक ज्ञानी गीदड़ ने हाथी को देखके विचार किया इस हाथी को मारलेऊँ तो छः महीने भोजन का काम ले। ऐसे कह हाथी के पास गया प्रणामकर बैठगया। हाथी पूछा तुम कौन हो तब गीदड़ बोला कि, मुझे आप ने नहीं हिचाना, मैं आप का वडा पुराना 'लँगोटिया' यार हूँ मैंने हारे साथ वड़ी सैर की है पर आप मेरे साथ कभी भी सैर न गये देखिये हमारे वहां क्याही सुन्दर सरोवर भरा मा है जहां का जल हाथियों को अत्यन्तही गुणदायक है। दान! इस प्रकार की नोन मिर्च लगाई चुपड़ी २ बातों आकर हाथीजी मस्त हुये तो गीदड से बोले यार! हमें

गया तो सबों ने इसे लालाजी का मित्र जानके बड़े प्रेम रक्खा और मुलाकात होने पर मित्र-लालाजी ने भी बहुत माल दिया। इससे मनुष्य को मैले वेष से रहना न चाहिये॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

गतानुगतको लोको नायं तत्त्वार्थचिन्तकः ॥ ब
पुञ्जप्रभावेण गतं वै ताम्रभाजनम् ॥ १ ॥

यह असार संसार चलते के पीछे चलता है और तत्त्व अर्थ चिन्तन नहीं करता अर्थात् अपने प्रयोजन को नहीं समझता है जैसे एक ब्राह्मण, तीर्थस्नान को गया, उसने वहां भीड़ देख अपना ताम्रकमण्डलु, मिट्टी में दाब ऊपर मिट्टी का ढेर लगा दिया। पिछाड़ी, बहुत से लोग आते थे। उन्होंने देख सोच कि पण्डितजी ने ढेर लगाया इसका कुछ माहात्म्य होगा त उन्होंने भी एक एक ढेर अपना २ किया ऐसे पण्डितज नहाकर आय देखें तो हजार हों ढेर वैसेही लगे हैं पण्डितज के कमण्डलु का पता न लगा ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ।

सर्वसंग्रहकर्त्तव्यः क्वापि काले फलप्रदः ॥ घटस
प्रभावेण दुर्भगासुभगाऽभवत् ॥ १ ॥

मनुष्य को सर्व वस्तुओं का संग्रह करना, कभी कि काल में फलदायी होताही है जैसे एक राजा की दुहागिन रा सब वस्तु मोल लेलिया करती थी एक दिन एक घड़े में ब सर्प मिला उसे भी लेके संदूक में रखलिया। कभी कि उस

हर जाने पर उसकी 'सपत्नी सुहागन' उसके घर में आ
नी और देखा भाली करनेलगी तुरंतही उसने संदूक खोल
ई में हाथ दिया उस भूखे सर्प ने ऐसी डसी कि दूसरा सांस
ो न लिया उस दुहागिन को फिर से सुहाग मिला दोनों
जा रानी, सुखसे रहने लगे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धे सप्तमः प्रदीपः॥ ७॥

अथाष्टमः प्रदीपः।

निजवृत्त्यैव वर्त्तेत परवृत्त्या नहि क्वचित्॥ हंसवृत्तिं
धानोऽसौ काकोऽबुद्धिर्जलेऽपतत्॥ १॥

मनुष्य को निज स्वभाव की वृत्ति से ही वर्त्तना अर्थात् दूसरे
ो रीस न करना चाहिये हंस की रीस करता कौआ पीछे २
ड़ा और हंस के साथही जलमें डूबके मरगया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धेऽष्टमः प्रदीपः॥ ८॥

अथ नवमः प्रदीपः।

बुद्ध्यैव सफलाभवतीत्यत्र दृष्टान्तमाह।

बुद्ध्यैव विद्या सफला फलप्रदा अबुद्धिविद्या विफला
ऽफलप्रदा॥ यथातिमूढाश्चतुरोऽपिसङ्गता गताःप्रदेशं
त्वथ नापुरएवपि॥ १॥ ज्योतिर्विदाऽश्विनीत्युक्ता तृण
मत्तुङ्गतागता॥ वैद्येन शाकमानीतं निम्बस्याऽऽरोग्य
दायकम्॥ २॥ वैयाकरणमूढेन तत्पत्त्राणि यथेच्छया॥
निस्तुषीकृत्य चाप्यग्नौ स्थापितानि फलेच्छया॥ ३॥
गड्बडंशब्दमुद्दिश्य चुक्रुशुस्ते स्वभावत.॥ पात्रेण सह
चैतानि क्षेपितान्यथ भूतले॥ ४॥ नैयायिकेनाथ घृतं

त्वधाराधेयभावतः ॥ विस्मयापन्नमनसा पातितं पृथिवीतले ॥ ५ ॥ पुनर्गत्वा तु राज्ञोऽग्रे प्रश्नं तैर्हि विचारितम् ॥ चतुर्भिश्चतुरैः शास्त्रे प्रेक्ष्य बुद्ध्या विचारितम् ॥ ६ ॥ कथितं चक्रिकाभागं करे ते नात्र संशयः ॥ पण्डितस्य वचः श्रुत्वा जहासोच्चैर्नृपस्तदा ॥ ७ ॥

बुद्धि से ही विद्या, सफल हो कार्यसाधन करती है-और बुद्धिहीन की पढ़ी विद्या भी निष्फल होजाती है जैसे चारों पण्डित पढ़े भी थे पर। बुद्धिहीन थे तो वे मिलकर विदेश गये और कुछ भी न पाया। सो कि वे चारों जाकर ठहरे तो उनमें से ज्योतिषी ने तो घोड़ी को 'स्थिर लग्न में छोड़ी कहां जायगी' ऐसे विचारके बेबन्धन के छोड़ दई वह कहीं ही पहुँची और वैद्यजी शाक लेगये तो सब में वात, पित्त, कफ दोष, मालूम दिये निदान वे नींब के पत्ते (सर्व्वरोगहरोनिम्बः) कहके तोड़ लाये। तो मूढ़ व्याकरणीजी ने तिन पत्तों को चुग बीनकर अग्नि पर चढ़ाया तो उसमें स्वभाव से 'गड़बड़ २' शब्द होने लगा, व्याकरणीजी उसे (अशुद्धं न वक्तव्यं २) कह २ के उसमें धूल डालते रहे वे जल का संयोग रहने तक 'गड़बड़ २' करतेरहे निदान पण्डितजी ने अशुद्ध पद सुनना न सहके पात्र को भूमि में देमारा। उधर नैयायिकजी घी लेकर आते थे सो ('घृताधारं पात्रं' वा 'पात्राधारं घृतं-') घृतके आसरे पात्र है, या पात्र के आसरे घृत, ऐसे विचार २ हाथ नीचा करते २ हाथ में से घृत और पात्र दोनों छूट (पृथिव्याधारे घृतपात्रे) हुये। इस प्रकार चारों दिनभर व्रती रहे घोड़ी जातीही रही थी। फिर विचार किया राजा के पास चलना अवश्य चाहिये तो चारों समय विचारकर गये तो कोई पहरेदारभी इनको न रोकसका खास राजा के सम्मुख आशीश जाय दई राजा ने चारों की विद्या सुन ज्योतिष को सद्य उप

योगी जान प्रश्न किया हाथ में एक मोती लेलिया कहा 'हमारे हाथ में क्या है ? बताइये'। ज्योतिषीजीने समय वि-चार लग्न से शास्त्र अनुसार कहा' श्रीमहाराज ! आप के हाथ में श्वेत वस्तु गोल है और विंधी भई है राजा ने कहा नाम भी बताइये तो पण्डितजी को नाम निजबुद्धिही से बताना पड़ा तो घोले हो न हो आपके हाथ में चक्की का "पाट" है पण्डित का ऐसा वचन सुनकर राजा ठट्ठा मारकर हँसने लगा देखो मतिमन्द ज्योतिषी की ऐसीही गति होती है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धे नवमः प्रदीपः ॥ ९ ॥

अथ दशमः प्रदीपः ॥

श्रेयस्तावत्प्रकर्तव्यं यावद्धानिर्न हि स्वका ॥ युवाव स्थाप्रदानेन प्रेतो योषित्त्वमाप्तवान् ॥ १ ॥

भलाई, तहांतकही करनी जहांतक अपनी सर्वथा हानि न होवे। जैसे प्रेत, निज युवा अवस्था देने से स्त्री होगया तैसे न हो (दृष्टान्त) दो राजों का करार ठहरा कि जौन से के हम में लड़का या लड़की हो वह सगाई करदेवे। कुछ काल में प-हिले उस बडे राजा के लड़की हुई वह करार पर ठहरा रहा कि जो तुम्हारे लड़का हुआ तो मैं इस लड़की को अवश्य वि-वाह देऊँगा इसमें सन्देह नहीं। दैवयोग से उसके भी लड़की ही हुई पर उसने भारी तिलक के लालच से उसे 'लड़का' ही प्रसिद्ध किया। सगाई भई विवाह भी होगया द्विरागमन की तैयारी भई तब तक उस लड़की को भी ज्ञान भया कि मेरे बाप ने माल के लालच मुझको लड़की से 'लड़का' बना रक्खा है पर अब क्या करूँ गौने में तो सभी कलई खुल जावेगी इसी चिन्ता में वह लडकी दिन २ सूखनेलगी और उस का बाप भी द्विरागमन के कईक मुहूर्त्त टालचुका पर पोल कब

तक निभे' 'बकरे की मा' कबतक कुशल मनावे, निदान उस को गौना करनें भेजनीही पड़ी, वह लड़की मारे भय के अढ़ाई कोस से अधिक मंज़िल नहीं करती थी कि जबतक जान बचे तभीतक सही निदान राहमें एक ठौर ठहरना हुआ उस स्थान में महामारी 'प्रेत' रहता था वह लड़की पर दौड़के खाने को आया तब तो वह बोली 'ले खालेब' में भी यही चाहती हूं प्रेत ने आश्चर्य कर इसका कारण पूछा उसने सब कह सुनाया निदान प्रेत ने दया में आकर उसे निज पुरुषपन देदिया और करार किया जब तू लौट आवे तब मेरा पुरुषपन मुझी को देदेना उसने स्वीकार किया तो शीघ्रही ससुराल पहुँचा वहां द्विरागमन भया। फिर तो कहनाही क्या था, उस ने छः महीने तक बड़ाही आनन्द कईक स्त्रियों के साथ सदा किया और उधर वह प्रेत स्त्री भया तो उसे और प्रेतों ने भोगा उसके गर्भ रहगया। फिर यह बिदा होकर चला और उसी स्थान पै ठहरा उस प्रेत ने निज पुरुषपन मांगा इसने देना स्वीकार किया पर कहा कि जैसी अवस्था का मैंने तुझको स्त्रीपन दिया था तू मुझे वैसाही देव तब तो वह प्रेत निज गर्भवती रूपको देख लज्जित हुआ उसने डेरा उठाय आगे प्रस्थान किया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
चातुर्यनिबन्धे दशमः प्रदीपः॥ १०॥

अथैकादशः प्रदीपः।

मायिकप्रसङ्गे अयाचकद्विजस्य दृष्टान्तमाह।

मायातो द्रव्यलब्धिर्भवति बहुतमा प्रायशोऽमायि नोनो मायाहीनाद्विजेनामितगुणविदुपाऽलाभि नो ताम्र खण्डम्॥ दृष्टो मायाविनाऽसौ द्विकुटिलसहितः प्रापितो

लक्षमुद्रा मुद्रास्तेनार्जिताः स्वाभ्यवहरणपरा मायया पञ्चलक्षाः॥ १॥

माया से अर्थात् चालाकी करने से जैसे बहुत सी द्रव्य प्राप्ति होती है तैसे अमायी-बेचालाक, को नहीं होती। जैसे, मायाहीन ब्राह्मण अमित गुणज्ञ भी था पर उसको एक पैसा भी नहीं मिला। फिर उसको मायावी ने देखा तो दो कुटिल सहित उसको लक्षमुद्रा प्राप्त कराई गई। और उस मायावी ने पांचलक्ष मुद्रा अपने लिये प्राप्त करी। दृष्टान्त। जैसे एक गरीब पण्डित कमाने गया बहुत दिन भटका उसे एक पैसा भी भोजन से सिवाय नहीं मिला। फिर उसे एक मायावी मिला तो मिलकर एक नगर में पहुँचे तब उस मायावी ने ब्राह्मण से कहा तुम किसी से कुछ मांगना मत यही नियम रखना तुम को कुछ भी कमी नहीं रहैगी ब्राह्मण ने वैसाही किया तो उसके पास सभी ठाठ लगगये और वह 'अयाचक-ब्राह्मण' ऐसे विख्यात हुआ। उधर उस मायावी ने एकान्त उद्यान में आसन लगाया वहां बहुत से मनुष्य जानेलगे उस ने ऐसी माया रची कि किसी को भी मालूम नहीं आधी रात को उसका संगी उसे चार रामरोट दे आता वह खालेता और दिन भर व्रती रहता तब तो उसकी बहुतही प्रतिष्ठा बँधी कुछ समय में उसी मायावी की समस्या से वह 'अयाचक द्विज' झूठ मूठ से मरगया लोग इकट्ठे होय शोच करने लगे कि देखो कैसा 'अयाचक-ब्राह्मण' था जिसने कुछ भी किसी से न मांगा और निजप्राण देदिये ऐसे शोचते चिन्ता करते उसे लेकर नगर के बाहर गये उसी उद्यान में वह साधु था उसने कहा क्या रौला है लोगो ने कहा 'अयाचक-ब्राह्मण' बड़ाही सीधा सादा था, उसने कहा यहां लाओ कैसा सीधा सादा है लोग झट से चाव करते उसकी अर्थी लाये

कारयित्वा देशस्यान्तःपुरस्य च ॥ उक्तं सभायां तं नीत्वा किमाश्चर्यमतः परम् ॥ २ ॥

एक वेर राजा ने बुद्धिमान् मन्त्री से कहा हमें कोई ऐसा आश्चर्य्य दिखाव जो हमारे कुल में कभी भी न हुआ होवे नहीं तुझ को मरवावेंगे । यह सुन मन्त्री शोचता रहा कुछ दिन वाद भुलावा देकर बोले । वैकुण्ठ का विमान हमारे पास आता है जो आप की इच्छा देखने की हो तो आप भी भेजदिये जावें राजा बोला हम अवश्य चलेंगे तब तो झटही उसने उसकी आंखों में पट्टी बँधवाई और गधे को बुलवाय राजा से कहा सवार होइये । राजा उसपर चढ़ा, मन्त्री ने उसे शहर भरे की परिक्रमा दिवाय रनवास में फिराय कचहरी में लाय खड़ा किया कामदार लोग आये राजा को देख २ कर हँसने लगे राजा ने पट्टी खुलवाई और लाचार हुआ अथवा जैसे वादशाह ने बीरबल से कहा कि हम बावन सिड्ढी 'जुमा मस्जिद की' चढ़लेवें तभीतक हम को हँसाना नहीं तुम को सजाहोगी यह कह होशियार हुये चढ़ते गये बीरबल ने बहुत से किस्से हँसने के कहे पर न हँसा निदान बीरबल और कुछ भी औसान न समझ जूता निकाल वादशाह के मारने को सामने हुये वादशाह को हँसी आ गई इससे जैसे के साथ तैसे ही करे ॥ एक दिन बादशाह ने पूंछा, बीरबल! लड़ाई में क्या काम आता है ? वह बोला 'औसान' फिर एक वेर वादशाह ने उस पर मत्तहाथी मारने को छोड़ दिया बीरबल पूजा में था उस समय कुछ भी हथियार न मिला निदान पास में एक कुतिया बैठी थी उसकी टांगपकड़ के हाथी के माथे पर फेंकी हाथी डरता चिंहाड़कर भगादिया इ- त्यादि फिर एक दिन पूछा बीरबल! उत्तम भोजन क्या? कहा (तसमई) फिर कई दिन वाद जंगल में गये वड़ के वृक्षतले

बैठे थे बादशाह ने भुलावा देकर वही बात पूछी बीरबल ! ऊपर क्या ? उसने झटही कहा 'शक्कर' बादशाह खुश हुआ। एकबेर सबों ने सलाह करके बादशाह से कहा यह बीरबल अगाड़ी २ अच्छा चल सकता है क्योंकि दुबला है बीरबल ने इस बात को सुन बादशाह को चिताया कि इन सबों को आप हुक्म दीजिये कम २ खाकर आया करें जिस से दुबले हों अगाड़ी चलने के कामिल हों यह सुन सबको भारी सन्देह हुआ इत्यादि बहुत से छोटे २ चुटकुले हैं कहांतक लिखें जगत् में प्रसिद्धही हैं॥ इति द्वाविंशः प्रदीपः॥ २२॥

इति श्रीमच्छुक्लोपनामकपण्डितदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां चातुर्य्यनिबन्धो नवमः॥ ९॥

अथ निर्णयनिबन्धो दशमः।

प्रथमः प्रदीपः।

निर्णेता त्वीश्वरः साक्षात्सत्यासत्यविवेचकः। सत्ये ददाति सर्व्वस्वं त्वसत्ये हानिकारकः॥ असत्यवादिनो द्रव्यं सत्ययुक्ताय दत्तवान्॥ १॥

निर्णेता जो निर्णय करनेवाला है उसे साक्षात् ईश्वर जानना वह निर्णयकर्त्ता सत्य और असत्य का प्रतिपादन करता है। फिर वह सत्य विषय में तो सर्वस्व देता और असत्य में हानिकारक है जैसे असत्यवादी का द्रव्य 'सत्यवादी ब्राह्मण' को दिलाया (दृष्टान्त) जैसे एक ब्राह्मण के घर लड़का हुआ वह महादरिद्री था कि उसके घर में एक दिन का भी भोजन न था और प्रसूता की क्षुधा प्रसिद्धही है कि अपने बच्चे को भी खा लेती है। निदान वह ब्राह्मण लाचार भोजन के तलाश में चला तो राह में उसे बीस हज़ार रुपये के कागज़ मिले उसने सहजही उठालिये फिर वह कागज़वाला भी पीछे से पुकारता आया कि मेरे कोई कागज़ देवे मैं उसे पांच हज़ार

रुपये देऊंगा वह बोला भाई ये तो मुझ को मिले हैं उसने ले लिये और बोला भाई मेरे पचीस हजार के कागज़ थे सो वीस हजार के तो तैंने दिये पांच हजार के और दे। वह बोला भाई मैं तो और कुछ जानताही नहीं हूं मुझे तो येही मिले हैं वह मिथ्यावादी कब मानता था उस गरीब को सरकार में लेगया वहां वह लिखवाय आया था तो कहने लगा। सरकार मेरे पचीस हज़ार के कागज़ खोये थे उनमें से इसने वीस हजार के तो दिये अब मेरा पांच हज़ार का दावा रहा। उससे पूछा वह बोला मैं वीस, पचीस को ज़ानताही नहीं मुझे तो ये कागज मिले थे फिर सरकार ने पूछा भाई तू अपना सच २ हाल कह सुनाव। उसने सब हाल ठीक २ कहदिया तब तो सरकार ने निज हृदय में विचार परमेश्वर की उस दरिद्री पर उदारता को समझ लई। और ब्राह्मण से बोले तू ये वीस हजार के कागज ले तुझ को परमेश्वर ने दिये और उससे बोले तू अपने पचीस हजार के और कहीं देख ये तो इसे वीसहजार के मिले हैं इनमें किसी का दावा नहीं वह मिथ्यावादी लाचार हो बोला मुझे येही मिलजावें तब सरकार ने उस झूठे को जूतों से पिटवाकर निकला दिया ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिबन्धे प्रथमः प्रदीपः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः प्रदीपः ।

चोर की दाढ़ी में तिनका दृष्टान्त ।

निर्णयो जायते वाक्यमिषतोऽपि विशेषतः ॥ नष्टं तूलं महल्लब्धं श्मश्रुलग्नापदेशतः ॥ १ ॥

किसी वचन करके मिस लगाने से भी विशेष निर्णय होता है (दृष्टान्त) जैसे किसी की बहुत सी रुई चुराई गई थी वहां एक चतुर मनुष्य बोला, कहीं रुई चोरी रहसक्ती है उसकी

दाढ़ी में उस रुई का रोहाँ अवश्यही लगा होगा इसमें संशय नहीं। यह सुनतेही तुर्त उस चोर ने अपनी दाढ़ी पै हाथ डाला कि कहीं लगा न रहगया हो वस निश्चय होगया वही पकड़ा गया रुई देनीहीपड़ी ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिवन्धे द्वितीयः प्रदीपः ॥ २ ॥

अथ तृतीयः प्रदीपः ।

अथवा यष्टिकावृद्धेर्भयतः कर्तितास्वकाः ॥ छिन्ना दृत्ता धनं तेन गृहीतमिति निश्चितम् ॥ १ ॥

अथवा एक चतुर ने सब जनों को एक २ छड़ी दई और यह कहदिया कि चोर की लकड़ी दो अंगुल वढ़ जावेगी यह सुन उस चोर ने अपनी लकड़ी दो अंगुल काटडाली तो फिर नापने में उसकी लकड़ी दो अंगुल कम हुई तो निश्चय हुआ चोर यही है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिवन्धे तृतीयः प्रदीपः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थः प्रदीपः ।

दातारो हि दयायुक्ताश्चोरस्यापि ददन्ति हि ॥ पश्चाद्दैववशात्तेषां निर्णयो जायते स्वयम् ॥ १ ॥

दयायुक्त जो देनेवाले हैं वे चोर को भी देदेते हैं और फिर दैवयोग से आपही उनका निर्णय होजाता है (दृष्टान्त) जैसे एक खलीफाजी किसी ठाकुर के लड़के को पढ़ानेजाते थे राह में उसी गांव के चोर उनको मिले उन्होंने कहा मियाँ ! जो तुम्हारे पास है हमें देदेओ, मियाँजी ने उनको गरीव समझ अपने पास के कपड़े वगैरा कुछ दिया वे लेकर चलदिये तो मियाँजी ने उन्हें बड़े तंग समझ फिर बुलायके कहा भाई ये दो रुपये हमारी ओंट में खुराक के और हैं तुम लेजाओ

तुम्हारा कई दिन काम चलेगा तबतो चोरों ने विचारा कि यह जो फिर बुलाकर देता है इसमें कुछ दगा है तो उन्होंने पूछा बड़े मियाँ! आप कहाँ तशरीफ़ लिये जाते हैं तब उन्होंने उसी ठाकुर का पता बताया तबतो कांपउठे और कुछ पास से भेंट देकर पैरों में शिर धरके बोले हमारी जान बख्शिये ठाकुर साहब से जिकर न किया जावे नहीं हमें उसीवक्त मारेजावेंगे मियाँजी और लेओ देंगे २ करते रहे चोरों ने अपनीजान बख्शाई॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

गन्धी का दृष्टान्त ।

निर्णेतृभीषणभयादपि जायेत निश्चयः ॥ न दत्तवान्धनं गन्धी दृष्ट्वा तद्भयतो ददौ ॥ १ ॥

निर्णयकर्त्ता सरकार से संभाषण करने के भय से भी निश्चय होता है (दृष्टान्त) जैसे कोई गन्धी के पास द्रव्य रखकर कहीं चला गया था आकर मांगने लगा तो उसने नहीं दिया उस बेचारे ने वहां के सरकार से अर्ज की उस सरकार ने कहा हमारी सवारी उधर से निकले तब तू हमारे कान के पास मुहँलगा ठहरके निकल जाना तो उसने वैसाही किया तब तो गन्धी ने जान लिया कि सरकार से इसकी बड़ी प्रीति है यह जोहीचाहे सो कानही में कहदेता है निदान उसे बुलाय हाथ जोड़के कहा अपना द्रव्य लीजिये मैं तो हँसी करता था॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

कालेन तस्य संसर्गादपि जायेत निश्चयः ॥ मधुगुप्तं धनं सम्यङ्निश्चितं मधुकालतः ॥ १ ॥

समय पायके उस द्रव्य का किसी वस्तु के साथ रहने से भी निश्चय होजाता है (दृष्टान्त) जैसे किसी ने द्रव्य शहद में छिपाय रक्खा था फिर उस शहद से कई मनुष्य रोगी हुये उन से पूछने पर निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय
निबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ।

अथवा पाचकं द्रव्यं चोरितं चौरकेण च ॥ क्षिप्ते तस्मिञ्जले गन्धे जाते जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

अथवा किसीने हलवाई का द्रव्य चुराया और उसे जलमें छिपाया तो जल में चिकने की गन्ध आने से द्रव्यका निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय
निबन्धे सप्तमः प्रदीपः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः प्रदीपः ।

अथवा वृक्षमूले तत्क्षिप्तं निस्सारितं पुनः ॥ तद्वृक्ष गुणरोगिभ्यां मुक्ते जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

तथा किसी ने वृक्षकी जड़ में द्रव्य गाड़ दिया था फिर उस वृक्ष की धातु संयोगी छाल से अच्छे भये रोगियों के कहने से निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय
निबन्धेऽष्टमः प्रदीपः ॥ ८ ॥

अथ नवमः प्रदीपः ।

अथवा वेष्टितं वस्त्रे कर्त्तितं तद्धनं गतम् ॥ तद्रफूग रसंसर्गात्तस्य जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

अथवा किसी ने वस्त्र थैली आदि में से काटकर द्रव्य चुराया। फिर रफूगरके पास जाने से पूछनेपर कि तुमने कौन २

तुम्हारा कई दिन काम चलेगा तबतो चोरों ने विचारा कि यह जो फिर बुलाकर देता है इसमें कुछ दगा है तो उन्होंने पूछा बड़े मियाँ आप कहाँ तशरीफ़ लिये जाते हैं तब उन्होंने उसी ठाकुर का पता बताया तबतो कांपउठे और कुछ पास से भेंट देकर पैरों में शिर धरके बोले हमारी जान बख्शिये ठाकुर साहब से जिकर न किया जावे नहीं हम उसीवक़ मारेजावेंगे मियाँजी और लेओ देंगे २ करते रहे चोरों ने अपनीजान बख्शाई

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

गन्धी का दृष्टान्त ।

निर्णीता भीषणभयादपि जायेत निश्चयः ॥ न ददौ बान्धनं गन्धी दृष्ट्वा तद्भयतो ददौ ॥ १ ॥

निर्णयकर्त्ता सरकार से संभाषण करने के भय से भी निश्चय होता है (दृष्टान्त) जैसे कोई गन्धी के पास द्रव्य रखकर कहीं चला गया था आकर मांगने लगा तो उसने नहीं दिया उस बेचारे ने वहां के सरकार से अर्ज की उस सरकार ने कहा हमारी सवारी उधर से निकले तब तू हमारे कान के पास मुँहलगा ठहरके निकल जाना तो उसने वैसाही किया तब तो गन्धी ने जान लिया कि सरकार से इसकी बड़ी प्रीति है यह जोहींचाहे सो कानही में कहदेता है निदान उसे बुलाय हाथ जोड़के कहा अपना द्रव्य लीजिये मैं तो हँसी करता था ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
निर्णयनिबन्धे पञ्चमः प्रदीपः ॥ ५ ॥

अथ षष्ठः प्रदीपः ।

कालेन तस्य संसर्गादपि जायेत निश्चयः ॥ मधुगुप्तं धनं सम्यङ्निश्चितं मधुकालतः ॥ १ ॥

समय पायके उस द्रव्य का किसी वस्तु के साथ रहने से भी निश्चय होजाता है (दृष्टान्त) जैसे किसी ने द्रव्य शहद में छिपाय रक्खा था फिर उस शहद से कई मनुष्य रोगी हुये उन से पूछने पर निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय निबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ।

अथवा पाचकं द्रव्यं चोरितं चौरकेण च ॥ क्षिप्ते तस्मिञ्जले गन्धे जाते जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

अथवा किसीने हलवाई का द्रव्य चुराया और उसे जलमें छिपाया तो जल में चिकने की गन्ध आने से द्रव्यका निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय निबन्धे सप्तमः प्रदीपः ॥ ७ ॥

अथाष्टमः प्रदीपः ।

अथवा वृक्षमूले तत्क्षिप्तं निस्सारितं पुनः ॥ तद्वृक्ष गुणरोगिभ्यां मुक्ते जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

तथा किसी ने वृक्षकी जड़ में द्रव्य गाड़ दिया था फिर उस वृक्ष की धातु संयोगी छाल से अच्छे भये रोगियों के कहने से निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय निबन्धेऽष्टमः प्रदीपः ॥ ८ ॥

अथ नवमः प्रदीपः ।

अथवा वेष्टितं वस्त्रे कर्त्तितं तद्धनं गतम् ॥ तद्रफूग रसंसर्गात्तस्य जातो विनिश्चयः ॥ १ ॥

अथवा किसी ने वस्त्र थैली आदि में से काटकर द्रव्य चुराया । फिर रफूगरके पास जाने से पूछनेपर कि तुम ने कौन २

अथ पञ्चदशः प्रदीपः ।

असाध्यं पणितं द्यूतमसाध्येनैव जय्यते ॥ सकृत्से टकमांसस्य दानाभावे विनिश्चयः ॥ १ ॥

असाध्य से पणित जो शर्त लगाया द्यूत है वह असाध्यही नियमों से जीता जाता है (दृष्टान्त) जैसे किसी की शर्त थी कि आधसेर मांस कलेजे का लेऊँगा शर्त पूरी होने पर सरकार पै गये वहां निर्णय हुआ कि आधसेर मांस एकदम चाकू से एक बेरही उतारले कम ज़्यादे हुआ तो तुझ को फांसी होगी यह सुन वह चुप होगया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णय निबन्धे पञ्चदशः प्रदीपः ॥ १५ ॥

अथ षोडशः प्रदीपः ।

अप्राप्तधनिनो द्रव्यं साक्ष्यभावेऽपि जायते ॥ निर्णय स्तत्प्रतिकृतेः करणाभावतो ध्रुवम् ॥ १ ॥

जिससे धन न मिला उसके द्रव्य का साक्षियों के अभाव में भी निर्णय, तिसके सदृश वस्तु नहीं बनने से भी होता है (दृष्टान्त) जैसे कोई दो जने विदेश कमाने को गये थे उनमें से एक घर आया अशर्फियें बँधाई दूसरे ने उसके हाथ अपनी भी अशर्फियें घर भेजी उसने उसके घर न दईं कुछ काल पीछे वह भी घर आया अशर्फियें न मिलीं तो उसके घर जाकर पूछा उसने कहा मैंने तो देदी थी उनका झगड़ा हुआ सरकार में गये, वहां यह निर्णय हुआ कि तुम अलग २ मिट्टी की मुहर बना २ कर लावो वे वैसीही बना २ कर लेआये केवल उसही की स्त्री, जिसके पास मुहर नहीं पहुँची थी उसके हाथ से अशर्फी नहीं बनी वह औरही सूरत की बनाकर लाई तो

निश्चय होगया कि इसके घर मुहर नहीं पहुँची॥ इति षोडशः प्रदीपः ॥ १६ ॥

इति श्रीमच्छुक्लोपनामकपण्डितवरदेवीसहायविरचित दृष्टान्तप्रदीपिन्यांनिर्णयनिबन्धोदशमः ॥ १० ॥

अथैकादशो मिश्रनिबन्धः ।

सार्वविषयिकः

शुक्लदेवीसहायशर्मणा निबद्धः

प्रथमः प्रदीपः ।

तावद्राधाकृष्णविनोदात्मकम्मङ्गलमाह ।

अङ्गुल्या कः कपाटं प्रहरति कुटिलो माधवः किं वसन्तो नो चक्री किं कुलालो न हि धरणिधरः किं द्विजिह्वः फणीन्द्रः ॥ नाहं घोराहिमर्दी किमपि खगपतिर्नो हरिः किं कपीश इत्थं राधाविवादे प्रहसितवदनः पातु वः कृष्णचन्द्रः ॥ १ ॥

एकबेर रात्रि के समय आनन्दकन्द व्रजचन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र जी महाराज राधिकाजी के भवन पधारे किवाड़ बन्द थे लगे खटखटाने, तो प्रियाजी की नींदखुली तो बोलीं को किवारे बजावत है, श्रीकृष्णजी बोले हे प्रियाजी ! मैं हूं, श्रीराधिकाजी तू कौन है; श्रीकृष्णजी-मैं माधव हूं, श्रीराधिका-क्या माधव वसन्त है, विन अवसरही चलाआया फिर बोले-नहीं प्यारी मैं चक्री हूं, श्रीराधिकाजी क्या चक्र चाकवाला कुलाल है तो यहाँ क्या काम है। फिर बोले-नहीं मैं हूं धरणीधर, श्रीराधिकाजी-तो सर्प है मुझ से क्या कहे है। फिर बोले०-नहीं तो मैं सर्पमर्दक हूं, तो सर्पमर्दन करनेवाला गरुड़ है तो विष्णुजी पै जाव। फिर बोले-नही प्यारी हरी हूं हरि २ तो वन में जाओ यहां हरि वानर का क्या काम है। इसप्रकार

घड़ी महीनो चार घड़ी की साल । कहो वह कब आवेगी काल" निदान बेचारा ब्राह्मण हार लाचार होकर उसकी स्त्री के पास जायके पुकारा यजमान ! यह तो कुछ भी नही देताहै स्त्री बोली–महाराज ! अभी क्या हुआ है यह तो योंहीं कल्ह २ किये जावेगा । लीजिये । यह मेरी नथ आप रखिये और लहजा देखिये । गुरुजी ने नथ ली वह सेठ घर आया सेठानी ने रसोई पानी कुछ भी न किया था उसने पूछा तो कहा मेरी नथ जाती रही, वह बोला आप रसोई पानी कीजिये अभी तो नथ बनी जाती है देर नहीं, झट आदमी से कहा वह सौ की जोड़ी मोती पचास की नथ ले आया तुर्तही दो घड़ी में तैयार होकर सेठानीजी को पहिराई गई तो सेठानी ने कहा कहिये महाराज ! यह सच्चा चेला तुम्हारा या मेरा ? ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुर्थः प्रदीपः ॥ ४ ॥

अथ पञ्चमः प्रदीपः ।

नेकी का फल बदी दृष्टान्त ।

श्रेयःकरणेऽश्रेयोऽश्रेयःकरणे भवेत्सौख्यम् ॥ सम्यग्दृष्टे ह्युभये श्रेयः श्रेयोऽशुभोऽशुभदः ॥ १ ॥

भला करने से बुरा और बुरा किये भला होता, यह स्थूल दृष्टिवालों का कथन है । और इन दोनों को सम्यक् विचार-दृष्टि से देखने में भला भलाही और बुरा बुराही है (दृष्टान्त) दो ब्राह्मणों के लड़के आपस में मित्र थे एक सवेरे उठ स्नान पूजन करता फिर पढ़ने लिखने में दिन बिताता । दूसरा उठतेही चोरी के विचार में निकल धनलाय उससे जूआ वेश्यागमन आदि कुकर्म में समय खोता था, एक दिन वह ब्राह्मण, बहुत सवेरे नहाने को उठा तो राह में उसके पैर में ऐसी शूल लगी जो पैर में पार होगई निदान वह महाकष्ट-

होगये। इस व्यवस्था को एक गरीब चमार जानता था वह सर्वत्र "राम के घर न्याय नहीं" ऐसे कहता फिरता रहा। निदान किसी समय उस जाटनी के सातों पुत्र और आठवां उसका पति 'जाट' ये सब चोरों से लड़के कटमरे फिर तो सात रांड़ वे और आठवीं आप ऐसे उनका अठरंडा, खंडवंड हो दुःख पाय २ के मरा फिर उस चमार ने कथन बदला कि "राम के घर न्याय है पर देर में" ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे षष्ठः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ सप्तमः प्रदीपः ।

प्रार्थितो न हि कुर्वीत निराकृत्यागतं हठात् ॥ दुःखी संजायते नूनं वान्ताशीव यथा यतिः ॥ १ ॥

जो प्रार्थना किया अर्थात् कहे से न करै और आये पदार्थ का निरादरकरे वह अवश्य दुःखी होता है जैसे वान्ताशी साधु पछताया (दृष्टान्त) एक साधु महात्मा थे बड़े निरपेक्षी होरहे थे पास में कहीं भोजन था निमन्त्रण आया तो न लिया कहा हम कहीं नही आते जाते हैं फिर शिष्यों ने आकर बहुत ही साथ लेजाने को कहा पर बाबाजी ने एक न मानी। निदान वे बिचारे हारे वहांही पहुँचाते भये थाल सब तैयारी से भरा अगाड़ी रक्खा। बाबाजी बोले हमको कुछ अपेक्षा नहीं लेजाओ तुम्हारा भोजन भाजन, वे न माने तो उसे उठाय धूनी में डाल दिया वे मन मलीन हो चलेगये। फिर तो बाबाजी ने विचारा कि देखों थाल में कितनी २ तैयारियां थीं तब तो उस राख में से उठाकर अधजला अन्न चखने लगे पर वह सवाद कब आना था पछतावा किया तो तृष्णाबँधी निदान रातभये उठ मँगते वनके वहांहीं पहुँचे तब एक शिष्य अन्न लेकर दीपक

ज्य इनके भाई आया ये पिछाड़ी सरकते २ मूर्खनेता के तरह में गिरे॥

॥ इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निवन्धे सप्तमः प्रदीपः॥

॥ अथाष्टमः प्रदीपः।

तेली का दृष्टान्त।

नीचो धनिनो गृहेऽपिसन्नत्यजति प्रकृतिं निजामसौ॥
राज्ञा निहितोऽपि तैलिनः पुत्रस्तूलं मुहुर्दुधाव ह॥ १॥

नीच, धनवान् के घरमें भी जाय रहै पर वह निज स्वभाव कर्म को नहीं छोड़ता है जैसे (दृष्टान्त) एक बादशाह नें अपनी वेगम से कह दिया था कि तेरे काला लड़का होगा तो तुझे सजा दीजावेगी दैवयोग से वह लड़का कालाही हुआ, तो भय के मारे एक तेली का भूरा लड़का लाकर रक्खा और उस लड़के को तेली के घर पहुँचाया दोनों लड़कों का यह हाल हुआ कि तेली के घर बादशाह का लड़का था वह तो अपने को थानेदार और लड़कों को और २ अफसर बनाय कइयों को चोर बना २ कर उनके मुक़द्दमे फैसल किया करता था। और वह तेली का बादशाह के यहां तकिये में से रुई निकाल २ कर कमान बनाकर धुना करता तो बादशाह, इस हाल को देखके बहुत उदास होता लोग कहते कि बालकों के अनेक २ खेल होते हैं। निदान एक दिन बादशाह से किसी बुढ़िया का मुक़द्दमा बिगड़ गया इन्साफ न होसका वह बुढ़िया जहां तहां पुकारती फिरी कि मैंने बादशाह से इन्साफ़ नहीं पाया उस लड़के ने सुनतेही उसका मुक़द्दमा साफ़ २ कर दिया वह खुश हो पुकारती फिरी कि बादशाह से कुछ न होसका और तेली के लड़के ने इन्साफ किया यह खबर शहर भरे में फैली बाद-शाह सुन खिसियायके वेगमों पर तलबी कर कहने लगा तब

शब्दहेतुमभिज्ञाय वेश्याऽप्यासीत् सुपूजिता ॥ १ ॥

केवल शब्दही से डरजाना न चाहिये विना उस शब्द के कारण को जाने जैसे (दृष्टान्त) एक बन्दर के कहीं से घण्टा हाथ लगगया वह आधीरात के समय तिस घण्टा को बजाता हुआ आया तो बहुत जनों ने घण्टाकर्ण राक्षस की बात सुनी थी वे डरकर मरने और भयभीत हो भगने लगे। निदान एक वेश्या ने इस बात को जानली वह लोगों से बोली जो मुझे हजार रुपये देओ तो मैं उसका परिहार करदेऊं । उन्होंने देदिये तो उस वेश्या ने बन्दर के आगे खाने की चीज धरी वह खाने लगा उसने घण्टा उठालिया सब निर्भयहो सुख से रहने लगे।

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे विंशः प्रदीपः ॥ २० ॥

अथैकविंशः प्रदीपः ।

गूजरी और पण्डित का दृष्टान्त ।

रामनामदृढा नौका संसारार्णवतारिणी ॥ विश्व सिनां न चान्यस्य गुर्जरीपण्डितौ यथा ॥ १ ॥

रामनाममयी नौका, संसारसागर से पार उतार देती है पर विश्वासी जनों को और को नहीं जैसे गूजरी पण्डित व (दृष्टान्त) एक गूजरी मथुरा में दधि बेचने आया करती त आते २ दो श्लोक कथा के भी सुनलिया करती थी। एक दि उसने "रामनामदृढा नौका संसारार्णवतारिणी" सुना त इस पद को अपना हितकारक समझके विचारा कि मैं उ 'टका' आतेजाते उतराई देती हूं वृथाही है बस फिरतो व तटपर पहुँच ओढ़नी बिछायके "रामनामदृढा नौका संसार र्णवतारिणी" का स्मरण करके झटपटही यमुना से पार उतरी निदान गूजरी ऐसेही नित्य २ आती जातीरही तब उस विचारा कि इस पण्डित ने मेरे कई टके बचाये एक दिन इ

न्योता? तो देदेना चाहिये तौ बोली, पण्डितजी! आपको
ोता है पण्डितजी बोले बहुत अच्छा चल, वह बोली आप
क सन्ध्यावन्दन करो मैं आती हूं बोले जल्दी आव। आई
। पं० तैयारही पाये साथ होलिये गूजरी, पुल की राह छोड़
तिरछी २ चली तो पं० ने विचारा ये रांड़ कहां ले जाती है
बोवेगी तो नहीं फिर सोचा कि इसने टका बचाने को गुसी
ोड़े जल की राह यादकर राखी है। जब पहुँचे तो गूजरी
सेही अधर २ लहँगा उठाये चलती गई पं० पिछाड़ी २ चले जब
ामर तक जल आगया तब घबराये और जल की ढकेल लगी
ी कहीं लुटिया, कहीं पगिया, कहीं धोती, कहीं पोथी, पं०
ीने सीधी रामघाट की राहली तो पुकारे अरी रांड़ मरवाये २
ब गूजरी बोली अजी पं० आप किधर बहे जाते हो उन पदों
ा स्मरण करो पं० बोले अरी रांड़ तूने हम से पहिलेही क्यों
। पूछ लई यह तो जिसके हृदय में चुभजाय उसी को फल
ता है हम तो कथनमात्र करते हैं निदान पं० विचारे कहते २
ुपचुप हुये॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे एकविंशः प्रदीपः॥ २१ ॥

अथ द्वाविंशः प्रदीपः।

माता पिता की सेवा में तपस्वी पण्डित का दृष्टान्त।

ये ये देवाः सर्व्वलोकप्रसिद्धास्ते ते सर्व्वे भावभक्त्या
वंनीयाः॥ मातापित्रोर्नाऽत्र देवत्वतर्कस्सन्निर्णीतः पण्डि
तैनानुभूतः॥ १॥

जो २ देवता समस्तलोक में प्रसिद्ध हैं वे सब भावभक्ति से
ही पूजे जाते हैं अर्थात् उनके नाम की मूर्त्ति बनाकरही पुजती
हैं। और माता, पिता इनके देवपन में कुछ सन्देह नहीं ये
प्रत्यक्ष मूर्तिमान् देव हैं यह पक्ष श्रेष्ठजनो से निर्णय किया

तबतो तुर्तही 'श्रीरामजी' ने सेनासहित राजा को हतकर उसके पति को शीघ्र जिलाया और हाथजोड़ ब्राह्मणी से बोले हे देवि ! अब हम को क्या आज्ञा है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे त्रयोविंशः प्रदीपः ॥ २३ ॥

अथ चतुर्विंशः प्रदीपः ।

एकस्मिन् साध्यमाने हि सर्वं सिध्यत्यसंशयम् ॥ यथा पाचनवेलायां शास्त्रार्थस्य निदर्शनम् ॥ १ ॥

एक को साधने से निस्संदेह सभी सिद्ध होता है और दुविधा में दोनों जाते हैं जैसे (दृष्टान्त) एक विदेशी पण्डित शहर में पण्डित के पास शास्त्रार्थ करनेगया वह रसोई बनाता था इसने जल्दी मचाई तो उसे अवसान आया कि दाल का रँधतापात्र नीचे देमारा और कहा आव पहिले शास्त्रार्थही करलें इससे एकही बात एकचित्त में होती है चाहो सो करलेओ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुर्विंशः प्रदीपः ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशः प्रदीपः ।

सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामास पतिं पतिव्रता ॥ बभूव तस्या व्रतभङ्गशङ्कया हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥ १ ॥

एक पतिव्रता, निजपति के पैर दाबती थी, उसका लड़का, खेलते २ अग्नि के पास जाय उसमें गिर भी पड़ा पर उसने निज पति की निद्राभङ्ग होनेके कारण उसे नहीं सँभाला निदान उस पतिव्रता के व्रतभङ्ग होने की शङ्का से वह अग्नि चन्दन समान शीतल होगया, लड़का उसमें ज्यों का त्यों खेलतारहा पति ने जागतेही लड़के को पूछा तो उसने अग्नि में

गिरा बताया वह झट से जाय देखे तो वैसेही खेलरहा है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे पञ्चविंशः प्रदीपः ॥ २५ ॥

अथ षड्विंशः प्रदीपः।

धृष्टता विषय के दृष्टान्त।

शठस्य शाठ्यं शठ एव वेत्ति नैवाशठो वेत्ति शठस्य शाठ्यम् ॥ छुच्छुन्दरी भक्षति लोहदण्डं कथं न गृध्रेण हृतः कुमारः ॥ १ ॥

शठ की शठता को शठही जानता है और कोई नहीं। जैसे (दृष्टान्त) कोई बैरागी एक गृहस्थ को अपना लोह का दण्ड सौंपगया था उसमें मोती छिपे थे। फिर उस साधु ने आकर मांगा तो कहा उसे तो छुछूंदर उठालेगई खागई होगी। वह चुपका होरहा कभी उसके लड़के को वह साधु भी सङ्ग ले जाकर छिपाय आया उसने कहा लड़का कहां रहा तो बोला लड़के को भी चील लेगई वह बोला कभी लड़कों को चील लेजासक्ती है वह साधु बोला जो छुछूंदर लोह का डंडा खाय सक्ती हो तो लड़के को भी चील लेजासक्ती है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे षड्विंशः प्रदीपः ॥ २६ ॥

अथ सप्तविंशः प्रदीपः।

शठम्प्रति चरेच्छाठ्यं सादरं प्रति चादरम् ॥ शुकस्योक्तहृतं पुच्छं तेन मुण्डायितं शिरः ॥ १ ॥

शठ के प्रति शठताही करनी और आदरवाले के साथ आदर करना जैसे (दृष्टान्त) एक की स्त्री व्यभिचारिणी थी, उसके घर में एक तोता था। वह उसके पति को आतेही सब हाल कहदिया करता था। एक दिन उस स्त्री ने क्रोधकर उसके पंख उखाड़के बाहर फेंकादिये। पति ने आय पूछा तो रोकर

कहदिया बिल्ली लेगई वह मूर्ख सुनके चुप होरहा। और वह तोता घिसटता २ शिवालय के गुम्बज में जायघुसा वहां वह पूजन करने जाया करती थी एकदिन वह गुम्बज के भीतर से बोला "प्रसन्नोस्मि, वरं ब्रूहि" प्रसन्न हूं वर मांग॥ तब वह बोली हे महाराज! जो प्रसन्न हो तो मेरे पति को अन्धा कर देओ जिससे मैं मनमाने काम कियाकरूं। तब तोता बोला तू अपना शिर मुँड़वाकर हमारे सम्मुख आव तेरा कार्य्य सिद्ध होगा। वह झटपटही मुँड़वाकर सामनेआई तोते की पंख तैयार होगई थी उसे दिखाई देकर उड़गया वह खिसियानी सी रहगई इससे जैसे के साथ तैसाही करना चाहिये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे सप्तविंशः प्रदीपः॥ २७॥

अथाष्टाविंशः प्रदीपः।

अहं मुनीनां वचनं शृणोमि शृणोत्ययं वै यवनस्य वाक्यम्॥ न चास्य दोषो न च मे गुणो वा संसर्गतो दोषगुणा भवन्ति॥ १॥

किसीसमय की लूट में एक सिपाही के दो तोते हाथ लगे उनमें से एक तोता ब्राह्मण का था और एक मुसलमान का था वे पास २ ही रहाकरते थे निदान सिपाही उन्हें अपने सरकार के यहां लेगया वहां सवेरा होतेही ब्राह्मण के तोते ने तो "मङ्गलं भगवान् विष्णुः" तथा "मेघैर्मेदुरमम्बरं" कहके गीतगोविन्द के अच्छे २ पद कहे तो उन्हें सुनके वह सरकार प्रसन्नहुई और उस दूसरे से कहा अबे तू भी कुछ पढ वह बोला "दःवहनचोद" सुनके कहा अबे क्या बोलता है फिर बोला "दः सूअर के बच्चे" तब तो तुरतही सरकार ने कहा इसकी गर्दन काटो जब गर्दन कटने लगी तब उस ब्राह्मण के तोते ने "अहं मुनीनां" यह श्लोक पढ़ा। तात्पर्य मैं तो मुनिजन

ब्राह्मणों के वचन सुनतारहा और यह 'यवन म्लेच्छों' के वचन सुनतारहा है सो नतो इसके गाली देने का दोष है और न मेरे श्लोक कहने का गुण है येतो दोष, गुण, संसर्ग साथ रहने सेही होजाते हैं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेऽष्टाविंशः प्रदीपः॥ २८॥

अथैकोनत्रिंशः प्रदीपः।

सहसाविदधीत न क्रियामविवेकः स्वयमापदां पदम्॥ वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः॥ १॥

काम को शीघ्रता से न करे यह 'अविवेक-बिनविचारना' महाआपत्तियोंका स्थान है। क्योंकि विचार के करनेवाले पुरुषको तो गुणों के लोभवाली सम्पत्तियां आपही चाहती हैं अर्थात् किसी कामको जल्दी से न करना किंतु विचारके करना इसमें दो दृष्टान्त। एक ब्राह्मण के पास तोता था उसने उसको परिश्रम करके "अत्र कः सन्देहः" 'इसमें क्या शक है'-यह पढ़ाया फिर उसे बेचने को गया एक साहूकार ने पूछा तोते का क्या मोल है? उसने कहा "लाख रुपये' तब बनियाँ बोला ऐसा इस में क्या गुण है उसने कहा मेरा तोता, संस्कृत बोलता है इससे पूछलीजिये। साहूकार ने पूछा अरे तेरी कीमत लाख रुपये? तू संस्कृत बोलता है? वह बोलदिया " अत्र कः सन्देहः " बस बनिये ने झटही लाखरुपये देदिये उसे घर लेगया वहां "चुग्गा खावेगा, पानीपीवेगा" ऐसे पूछतारहा वह " अत्र कः सन्देहः २" कहतारहा फिर सोचा कि इसे और भी कुछ आता है? तो पूछा तोते! भूसाचैरगा कहा 'अत्र कः सन्देहः' फिर कहा 'मरैगा' कहा 'अत्र कः सन्देहः' तब तो जानलिया कि इसे सिवाय 'अत्र कः सन्देहः' के और कुछ भी आता जाता नहीं है।

फिर हार लाचार होकर कहा 'अरे ये लाखरुपये कुवें मेंही डालगये तो कहा 'अत्र कः सन्देहः' वेचारा बानियां अपने घर में रोकर बैठ रहा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे एकोनत्रिंशः प्रदीपः ॥ २९ ॥

अथ त्रिंशः प्रदीपः।

"सहसाविदधीत न क्रियाम्" पर दूसरा दृष्टान्त।

एक पण्डित लड़ झगड़कर अपने घर से निकलगया फिर बीसवर्ष में आया तो उसकी स्त्री को गर्भ था उससे लड़का हो पलकर समर्थ होगया वे दोनों माता पुत्र एकठौरही पास २ सो रहे थे । जूता उसका बाहर खुल रहा था उस पण्डित ने विचारलिया कि अवश्य ये जारकर्म करती है परपुरुष इसके घर में घुसा है इसमें संदेह नहीं । निदान भीतर गया और पुत्र को सोता देख उन दोनों पर तलवार निकाल के मारने का उद्योग किया कि इतने में ही "सहसा विदधीत न क्रिया" श्लोक याद आगया तो ठहरा खांसा इतने में स्त्री की आँखें खुलीं तो निजपति को पहिचानतेही, लज्जाकर पड़दा करलिया और पुत्र को जगाया वह उठतेही पिता के चरणों में गिरा पण्डित, बेर २ श्लोक की प्रशंसा करके परमेश्वर को धन्यवाद देता भया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३० ॥

अथैकत्रिंशः प्रदीपः।

तथा एक कुटिल ब्राह्मण अपनी बेटी के घर भोजन करने को बैठा तभी उसका 'जमाई' आय पहुँचा उसने कहा 'क्या अन्याय, करते हो ' यह कहके हाथ पकड़लिया उसने ग्रास उठाकर मुख में लगा लिया था इतनेही से उसके होठ सफ़ेद

होगये जमाई ने कहा जो कभी ग्रास भीतर चलाजाता तो देहभरमे तुम्हारे कुष्ठ होजाता इससे पुत्रीके धान्यसंसर्ग से सदा बचना चाहिये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे एकत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३१ ॥

अथ द्वात्रिंशः प्रदीपः ।

अथ पितृभक्ति में सात व्याधों का दृष्टान्त ।

सप्तव्याधा दशार्णेषु मृगाः कालिञ्जरे गिरौ ॥ चक्रवाकाः सरद्वीपे हंसाः सरसि मानसे ॥ १ ॥ तेपि जाताः कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥ प्रस्थिता दीर्घमध्वानं यूयं किमवसीदथ ॥ २ ॥

एक दरिद्री ब्राह्मण के घरमें सात पुत्र थे उसने उनका निर्वाह होना नहीं समझकरके 'मुनि भारद्वाजजी को सौंप दिये उनके घर वे पढ़ २ कर पण्डित हुये' एकदिन मध्याह्नसमय में निजपिता का श्राद्ध करना उनको याद आगया और पशु, पक्षी भी उनको कुछ नहीं मिला। निदान उन्हों ने श्राद्ध अवश्य करना समझके गौ का पिण्ड दिया। फिर घर आय गुरुजी से कहा गऊ को 'बघेरा' लेगया। उन्हों ने ज्ञान से विचार लिया कि इन्हों ने यह काम किया है। तब क्रोध करके शाप दिया कि तुम सातों व्याध होजाओ तो वे 'दशार्णदेश में सातव्याध' हुये। फिर 'कालिञ्जर पर्वत में सात मृग हुये' फिर सरद्वीप में 'चकवे' हुये फिर मानससर में 'हंस' हुये उस व्यवस्था में तहां एक राजा स्नान करने को बड़ी तैयारी से आया उसके ऐश्वर्य को देखके उनमें से छोटा हंस बोला कि राजा हो तो ऐसाही होवे, सबो ने कहा अब तेरे लिये हमको भी जन्म लेना पड़ेगा। फिर तो वह राजा के घर जाकर जन्मा

और वे एक दरिद्री ब्राह्मण के घर जन्मे। राजा के घर कुँवर होने का बड़ा उत्साह हुआ। वह लड़का समर्थ होने पर राजा हुआ रानी बड़ी सुन्दर आई थी उसके सर्वथा वह अधीन था। एक दिन राजा रानी दोनों एक थाल में भोजन करने को बैठे तो उसमें से एक चावल उठाकरके 'चींटी' लेचली आगे उसका पति 'चींटा' मिला उसने कहा तू यह चावल कहां से लाई है वह बोली राजा के थाल में से। तूभी ले आव, वह बोला, यह मुझको देदे तू और लेआना वह बोली तू मर्द की जात मुझ को लाकर देता सो तो नहीं और मुझही से मांगता है निदान उनका झगड़ा होते २ चींटी ने कहा 'ले नपूते लेले' यह वृत्तान्त वह राजा समझता था सुनकर हँसदिया। उधर रानी ने जाना कि मेरे शृङ्गार को देखके कुछ कसर रहने पर राजा, हँसा है। तो पूछनेलगी आप कैसे हँसे सो बतलाइये राजा ने कहा मैं तो तुच्छ बातपर हँसा हूँ तुम मत पूछो रानी ने कहा कुछ भी हो मुझे बताही दीजिये निदान राजा ने निजभय सुनाया कि मैं जो बताऊँ तो मरजाऊँगा। रानी बोली मैं अभी मरीजाती हूँ। तब राजा ने कहा अच्छा मन्दिर में चलो बतावें ऐसे कहके गये। उधर उस ब्राह्मण के घर में वे छओं विद्वान् हुये ब्राह्मण को उनसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ था वह पूछता तब कहदेते कि ब्राह्मण? हम तुम को एकही बेर प्रसन्न कर जावेंगे उसी अवधिपर उन्हों ने उस ब्राह्मण के हाथ पत्र लिखके भेजा उसमें "सप्तव्याधा" आदि दोनों श्लोक लिखदिये वह लेकर चला मन्दिर में पहुँचा, राजा ने देखतेही उस ब्राह्मण को बुलाया और पत्र को ले उसका अभिप्राय समझकर वह 'चींटी' चावल लेजाने की बात रानी को सुनाकर देह त्यागदिया सबके सब देखते रहे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे द्वात्रिंशः प्रदीपः ॥ ३२ ॥

अथ त्रयस्त्रिंशः प्रदीपः।

देहत्यागं न वाञ्छन्ति केऽपि दुःखभुजो भृशम् ॥
यथा काष्ठवहो मृत्युं वाञ्छितं वाञ्छति स्म नो ॥ १ ॥

एक लकड़िहारा, शिर पै लकड़ी लादे घाम में तपा पसीने में भीगा महादुःखी एक वृक्ष के नीचे ठहरा वहां उसके मुँह से यही निकला 'अरे मौत, कहां है' तवहीं वह मृत्यु पुरुष रूप धारके उसके सामने आया। उसने पूछा तू कौन? वह बोला मैं मौत हूं तैंने मेरा स्मरण किया था। तव तो उसके सब होश हवास भूलगये और वह उस वात को टालकरके बोला मुझे बोझा उठादो अगाड़ी वड़ी २ दूर जाना है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामिश्र
निवन्धे त्रयस्त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३३ ॥

अथ चतुस्त्रिंशः प्रदीपः।

दूसरा दृष्टान्त, एक वैश्य का पुत्र, पासही में एक योगीश्वर थे उनके पास जायाकरता था। योगीजी कहते तू प्राणायाम साधा कर वह कुछ न कहता फिर नित्य २ कहने पर वह बोला महाराज! मैं अपने मा वापों के अकेलाही हूँ क्या? आप मुझे योगी वनाया चाहते हो योगीजी बोले वच्चा प्राणायामसाधन, सब को अच्छा है निदान उनके नित्य २ कहने पर उसने अभ्यास किया जब प्रहरभरे की गति होगई तव योगीश्वर, बोले वच्चा आज अपने घर जाकर परीक्षा करना तू किस को प्यारा है। निदान वह उनके कथन के अनुसार प्राणायाम चढ़ायके पड़रहा उसकी माता ने जगाया न उठा तो थथेड़ के मरा जान रो २ कर पुकारने लगी अव लगे सव घर बाहर के रोने और शिर पीटने फिर आधीरात होनेपर योगीश्वरजी आये वे पूछनेलगे यह कैसे मरगया उन्हों ने कहा आपही के यहां जाया करता है न जाने आपने क्या करदिया है तव

योगीजी बोले अच्छा हमही इसे जिलावेंगे यह कहके एक कटोरे में दूध भरवाया उसमें मिश्री डाली सुन्दर तैयार करके कहा कि तुम में से जिस किसी को यह अधिक प्यारा था वही इस दूध को पीजावे बस ? पीनेवाला मरजावेगा और यह जी उठेगा इतनी सुनतेही उसका पिता उठा था पर मरने को सुन कर विचारता रहगया योगीजी के पूछने पर जो जीता रहूँगा तो लड़के और भी होजावेंगे पर जीते जी मरा नहीं जाता फिर उसकी मा से कहा अरी तुझे यह बहुत प्यारा था तू मरजावेगी यह जी उठेगा तू पीले । तो वह भी बोली जो जीती रहेंगी तो लड़का और भी होसक्ता है फिर उसकी स्त्री से कहा इसकी अर्द्धांगी है तेरे मरने से कुछ हानि नहीं यह और विवाह करलेगा तू पीव, वह भी बोली मैं दुःख से दिन काटदेऊँगी पर मरा नहीं जाता ऐसेही योगीश्वर ने सब से पूछा पर मरना किसी ने भी न चाहा । निदान आपही उस दूध को पीगये मरने का काम क्या था लड़के को पुकारा वह उठ साथ होचला मा बाप लिपटनेलगे उसने कहा मेरे तुम कोई नहीं हो जो होते तो दूध में क्या विष मिला था ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे चतुस्त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३४ ॥

अथ पञ्चत्रिंशः प्रदीपः ।

शय्या वस्त्रं रम्यगेहं सुरत्नं वीणापाणिर्दर्शनीया च नारी ॥ न भ्राजन्ते क्षुत्पिपासातुराणां सर्व्वारम्भास्तण्डुलप्रस्थमूलाः ॥ १ ॥

सुन्दर सेज, वस्त्र, रमणीय घर और रत्न; और वीणा हाथ लिये देखने योग्य स्त्री ये सब क्षुधा तृषा से आतुर जनों को कुछ भी नहीं सुहाते जितने भर आरम्भ हैं वे सब प्रस्थभर चावलों के आश्रय हैं (दृष्टान्त) किसी की बरात जाती थी

उसमें वर की पालकी पिछाड़ी रह गई बरात समधी के घर पहुँची लग्न का समय आया तो उन्हों ने सोच विचारके एक गरीब के लड़के को सजाकर फेरे लेने को भेजदिया। विवाह होगया तभी लड़का लड़की, एकान्त रमणीय गृह में गये वहां स्वच्छ शय्या बिछी थी और वह नवीन वधू तैयार थी उस सब सामान को देख के विद्वान् लड़के ने "शय्या वस्त्रं" यह श्लोक पढ़ा तब उसने उसी समय कहीं से चावल चुग चुगके बनाये और भोजन कराने को आई तब प्रभात होने पर आगया तो उसने भोजन नहीं किया वैसेही चला आया। फिर दूसरे दिन के नेगचारों में वह दूल्हा आगया था भेजा गया उसे देख और है, कह २ के सन्देह करने लगे सब लोगों ने कहा लड़की ही से इसकी परीक्षा कराओ वह कहै सो सही तब दोनों का सामना हुआ तो लड़की ने 'शय्यावस्त्रं' श्लोक आधा कहा उससे उत्तर कब होता पर दूती आदिकों की सहायता से इसने 'नआजन्ते' आधा कहके प्रत्युत्तर कह दिया पर फिर पूछा कि उन चावलों का क्या भया तब बोल उठा कि खालिये और क्या हुआ तब निश्चय करके कहा यह नहीं है निदान उस गरीब लड़के कोही लड़की देनी पड़ी॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे पञ्चत्रिंशः प्रदीपः॥ ३५॥

अथ षट्त्रिंशः प्रदीपः।

अथ शालग्रामोत्पत्तिः।

प्रत्यहं गण्डकी वेश्या ह्येकं पुरुषमाभजेत्॥ तस्या जिज्ञासया विष्णुर्गत्वा तस्यै वरं ददौ॥ १॥

"गण्डकी नाम" एक वेश्या थी वह कथा सुना करती उसने पतिव्रता का धर्म बहुत सुना तो विचारा कि हमारे कोई भी

पति नहीं है हम किसकी सेवा करें निदान पण्डितों ने विचार करके कहा कि, तेरे घर जो पहिले चला आवे उसही की सेवा कियाकर तेरा दिन रातभर वही पति है । गण्डकी ने ऐसाही निश्चय किया नित्य २ नये २ पुरुषों की सेवा किया करती उस सेवा से प्रसन्न हुये आप श्रीभगवान् दरिद्री ब्राह्मण बन भारी पेट बढ़ाये जूता छिटकाये मक्खी लिपटाये महाकुरूप बनाये तिस वेश्या के घर पहुँचे उसने अहो भाग्य कह आसन पै बैठाये पैर धोय चरणामृत लिया । फिर इनको नहवाय बहुतसा भोजन करवाय हाथ जोड़ बोली स्वामिन् ! क्या आज्ञा है ? तो ये बोले दिशा बैठेंगे कहा बैठ लीजिये यह कहतेही हगमारा सब घर भर में दुर्गन्ध फैल गई । उस ने फिर स्नान करवाया फिर हाथ जोड़ पूछा क्या आज्ञा, बोले दिशा बैठेंगे, फिर हगा फिर न्हाये फिर हगा ऐसेही रात विताय सवेरा भये टिक होके मर गये वे सब भडुवे लोग देख २ कर नाक चढ़ाने और गण्डकी से लड़ने लगे कि क्या आफत गले में डाल ली अब यह मुहताज आदमी बे तादाद खाकर मर गया लावो इसे कहीं फेंक आवें नहीं तो तंगी होगी उसने कहा भाई तुम कुछ भी मत कहो मेरा यह पति परमेश्वर, हो चुका और मैं शास्त्र में सुनती रही हूं जो पति मरजावे तो साथही सती होजाना परमधर्म है सो करूंगी यह सुनतेही उन भडुवों के तो होश उड़गये और उसने सती होने की तैयारी की झटपट एकान्त में चिता लगाय उसमें चढ़के पति को प्रेम से अपनी गोद में बैठालिया और सखियों को अग्नि लगाने की आज्ञा दी इतने में यथोक्त रूपधारी भगवान्, तिसकी गोद में प्रकट भये वेश्या दर्शन से प्रसन्न हो पवित्र भई भगवान् बोले वर मांगले वह बोली आप के मिलते ही मांगनी कुछ वस्तु रही नहीं फिर आपही बोले तेरी गोद में हम ऐसे सजे जैसे माता की गोद में पुत्र, इसी से अब तू (गण्डकी नदी) होगी और हम तुझ में

ालग्रासजी) होवेंगे (सब जनों का तुझसे उद्धार होगा)॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे षट्त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३६ ॥

अथ सप्तत्रिंशः प्रदीपः ।

या पाणिग्रहलालिता सुसरला तन्वी सुवंशोद्भवा
ामा स्पर्शसुखावहा गुणवती नित्यं मनोहारिणी ॥
केनापि हृता तया विरहितो गन्तुं न शक्नोम्यहं
भिक्षो तव गेहिनी नहि नहि प्राणप्रिया यष्टिका ॥ १ ॥

एक दरिद्री ब्राह्मण, यह श्लोक बोलता एक विद्वान् के
के नीचे से निकला उसने इसके मुख से जो पाणिग्रह से
लित, सुन्दर सीधी, हलकी, अच्छे वंश की, श्यामवर्ण
ली, कोमल, गुणयुक्त मनोहर ऐसी मेरी प्राणप्यारी किसी
चुरालई उस बिन मुझ से चला नहीं जाता है। यह सुन उस
द्वान् ने पूछा रे भिक्षुक! तेरी घरवाली? उसने कहा नहीं २
री लट्ठी जातीरही इससे चला नहीं जाता है। दूसरा २ अर्थ
ो हाथ पकड़ने से लड़ाई अर्थात् सदा हाथ में रहती सीधी–
ोई वंक न था हलकी अच्छे वांस की काली कोमलाई गुण:
ारी सुन्दर प्राणों से भी प्यारी ऐसी लाठी इत्यादि ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे सप्तत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३७ ॥

अथाष्टत्रिंशः प्रदीपः ।

पाप का बाप, इस में वेश्या का दृष्टान्त ।

लोभो नृणां पिता माता न लोभाच्चापरं कियत् ॥
यथा लुब्धो द्विजः कश्चिद् भोजनं वेश्ययाऽचरत् ॥ १ ॥

यह लोभही मनुष्यों का मा बाप है लोभ से परे और कुछ
नहीं है जैसे लोभी ब्राह्मण, वेश्या के साथ भी भोजन करने

को तैयार हुआ एक विद्वान् को सन्देह हुआ कि पाप का बाप कौन है वह इसी सन्देह में घर से निकलचला और जहां तहां पूछनेलगा तो एक वेश्या ने उसे पास बुलाकर कहा महाराज! आप मेरे घर रसोई बनाकर पाय लिया करें तो मैं एक अशर्फी दक्षिणा दिया करूँ ब्राह्मण सुनके प्रसन्न हुआ अशर्फी दक्षिणा के लोभ से वहां गोवर से लीप रसोई करने पानेलगा फिर उसने कहा जो मैं स्नान करके बनादेऊं आप पायलेओ तो दो अशर्फी देऊं ब्राह्मण ने कहा क्या चिन्ता है "अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति" शरीर तो जल सेही शुद्ध होजाता है यह हमारी स्मृति की आज्ञा है उसने बनाई जब कि उस ब्राह्मण ने खाने को ग्रास उठालिया तब वेश्या ने थप्पड़ मारके कहा कि देख 'पाप' का "बाप" यह लोभही है ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेऽष्टत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३८ ॥

अथैकोनचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ।

रक्षा के विषय में राजा चन्द्रहास का इतिहास ।

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति ॥ जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति ॥ १ ॥

विन रक्षा किया भी दैवकरके रक्षित किया जाता और रक्षा किया भी दैव से रक्षित न हो तो नष्ट होजाता है। अनाथ वन में भी आनन्द से रहता और घर में अच्छे प्रकार रक्षा किया भी दैवहत हो तो नहीं जीवता है इसमें (दृष्टान्त) राजा "चन्द्रहास" बालपने से ऐसे भगवद्भक्त हुये कि महाभागवतों में गिनेगये। उनका यश 'च्यवन' अश्वमेध में लिखा है कि 'मेधावी' नाम राजा केरलदेश के घर 'राजाचन्द्रहास' का जन्म हुआ तो एक पांव में छः अंगुली थीं 'यह सामुद्रिक'

में कुलक्षण लिखा है। जन्म से थोड़ेही दिन बीते कोई शत्रु चढ़ आया उस लड़ाई में इनका पिता मेधावी मारागया माता उनके साथ सती होगई और धाय इनको लेकर कुन्तलपुर में चली आई वहां के राजा के वजीर का नाम "धृष्टबुद्धि" था उसके घर रहनेलगे फिर वहां धाय भी मरगई "चन्द्रहास" जी अनाथ पांच वर्ष के लड़कों के साथ नगर में फिरने लगे कोई कुछ देता उसी से उदर पालन करलेते, एक दिन वहां नारदजी आये तो इनको सुपात्र देख एक शालग्रामजी की प्रतिमा देकर आज्ञा की कि जो कुछ भोजन आदि करे सो इस प्रतिमा के आगे रखके इसकी आज्ञा से किया कर। वे वैसेही करते रहे थोड़ेही दिनों में भगवत्प्रीति बढ़गई एक दिन उस वजीर के घर ब्राह्मण भोजन करने आये उसने उन्हों से पूछा मेरी लड़की को वर कौन कैसा मिलेगा तो उन्हों ने "चन्द्र-हासजी" को बतलाया कि यह इसे ब्याहैगा तब तो वजीर को बड़ी ग्लानि भई कि हाय! मेरी पुत्री दासीपुत्र की भार्या होगी! शीघ्र बधकों को बुलाकर कहा इस लड़के को जंगल में लेजाकर मारडालो वे लेगये और चन्द्रहासजी से पूछा अब तुम्हारा रक्षक कौन है तो कुछ भी चिन्ता तिनको निज मरने की न भई और कहा कि एक घड़ी ठहरो, कहके शालग्रामजी का पूजन किया फिर उनको मारने की आज्ञा देकर स-माधि लगालई फिर तो जगद्रक्षक भगवान् ने उन निर्दयी बधकों के मन में ऐसी दया उपजाई कि वे एकही अंगुली जो बढ़ती थी उसे काटकर वजीर को दिखलाने लेगये और चन्द्र-हासजी, तीन दिनतक उस वन में भगवान् को ध्याते विच-रते रहे जब उनपर धूप आता तो पक्षी उनपर छाया कर लेते और रात्रिसमय बघेरा आदि बली जीव उनकी रखवाली किया करते थे। संयोगवश 'कलिन्ददेश में' चन्दनावती नगरी का राजा शिकार खेलता २ उस वन में आया तो चन्द्र-

हासजी को अपने घर लेगया । उसके कोई लड़का नहीं था इन्हीं को अपना पुत्र समझकर सब विद्यायुक्त किया और पीछे राज्यतिलक देकर सारा राज्य सौंपदिया और आप भगवद्भजन करने लगा यह राजा 'कलिन्द' कर देनेवाला राज्य कुन्तलपुर का था । जब समयपर वह कर नहीं पहुँचा । तो "धृष्टबुद्धि वजीर" सेना सजकर आया राजा कलिन्द सुनके मिलने को गया । वड़ी रीति मर्य्यादसे नगर में लाया । "चन्द्रहासजी" से भेंट कराई सब समाचार उनके राज्य पाने के कहे फिर तो वह 'धृष्टबुद्धि' चन्द्रहासजी को पहिंचान बड़े शोच में आकर मारने के विचार में उद्यत हुआ । सोही राजा कलिन्द को डरपाया कि विना हमारे राजा की आज्ञा तुमको गद्दी बैठाना उचित न था अब मैं इसको अपने 'मदन' नामा पुत्र के सामने पत्र सहित भेजता हूं वह राज्यतिलक अङ्गीकार करादेगा 'चन्द्रहासजी' पत्री लेकर चले और कुन्तलपुर के निकट उसी वजीर के बाग में ठहरे वहां स्नान पूजन कर भगवत्प्रसाद पाकरके थके सो रहे । दैववश उसी वजीर की लड़की (विषया) नामवाली, वाग की शोभा देखने को आई सखियों से अलग होकर जहां "चन्द्रहासजी" सोते थे तहां पहुंची वह इनकी शोभा देखतेही आसक्त होगई और भगवंत से प्रार्थना की कि यही पुरुष मेरा पति होवे फिर जो दृष्टि उसकी कमर की ओर गई तो पत्री देखकर निकाललई और पढ़ी तात्पर्य यह था कि हे मदन ! इस चिट्ठी लेजानेवाले को तुरन्त विष देदेना जो देर होगी तो हम क्रोध करेंगे, वजीर की लड़की ने पढ़कर सोच लिया कि मेरा पिता बहुत दिनों से मेरे लिये सुन्दर पुरुष देखरहा था और चलती वेर मुझ को जल्दी विवाह करदेने के वचन देगया था सो इस पुरुष को मेरे लिये भेजा है और जल्दी से पत्र लिखा इससे इसमें अक्षर (या) जो विष के पीछे लिखना था सो भूलगया सो या अक्षर बनादेना

चाहिये सोही उसने निज आंख के काजल की स्याही बनाकर उससे (या) लिख उसीतरह कमर में बांधदई फिर उठते ही "चन्द्रहासजी" मदन के पास पहुंचे पत्री दिया वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसी घड़ी विवाह "चन्द्रहासजी" से निज-बहिन का कर दिया। जब वजीर ने पत्रद्वारा यह सब वृत्तान्त सुना तो अत्यन्त दुःखी और क्रुद्ध हुआ। उसी क्षण चलके घर आया और अपने लड़के को धिक्कारने लगा तब उसके लड़के मदन ने वह पत्री आगे धरदी और कहा मेरा कुछ अपराध नहीं जो लिखा सो किया है। फिर तो वजीर ने मन में यही ठानलिया कि लड़की चाहे विधवाही बैठी रहै पर इसे अब मारदेनाही उचित है इस हेतु वधकों को आज्ञा करी कि जो कोई प्रभात दुर्गा के भवन में आवे उसे मारदेना। और "चन्द्रहासजी" से कहा कि हमारे कुल में प्रथम दुर्गापूजन होता है सो तुम प्रभातही दुर्गा पूज आओ। ऐसे उस दुर्बुद्धि वजीर ने तो यह घात विचारा और भगवत् की यह इच्छा भई कि कुन्तलपुर का राज्य भी "चन्द्रहासजी" को मिलजावे। इस हेतु कुन्तलपुर के राजा के मन मे ज्ञान दिया कि राज्य और शरीर, दोनों नाशवान् हैं और भजन सिवाय दूसरा उत्तम पदार्थ नहीं है सो यह राज्य तो "चन्द्रहास" वजीर का लड़का योग्य है उसे देदेना चाहिये और जो आयुर्बल शेष है सो भगवद्भजन में बिताना चाहिये। प्रभात को जिसप्रकार "चन्द्रहास" पूजा करने गये तो राजा ने वजीर के बेटे 'मदन' को बुलाकर कहा हम राज्यतिलक देते है "चन्द्रहास" को शीघ्र बुलाओ वह इस आनन्द से शरीर में न समाया कि राज्य हमारे घरकाही रहैगा और "चन्द्रहास" के पास जाय उनको तो राजा के पास भेज दिया और आप दुर्गाभवन में पूजा करने गया और राजा ने तुर्तही तिलक चन्द्रहास के करदिया। और मदन जो भवनमें पहुंचा तो तुर्त माराही

औरत बैठी देखपड़ी उसे बादशाह के पास लेगये उससे पूछा गया कि रात को गश्तपर कौन गया था, वह बोली मैं गई थी तो फिर कहा हम ने रात पूछी तब तैंनेही जवाब दिया था, वह बोली जी हां मैंनेही, तो तैंने रात (घघरिया०) बतलाई इसके क्या माने, वह बोली माने को तो मैं जानती नहीं पहर रात बीते मैं घघरा निकालकर सोया करती इससे "घघरिया" बतलाई। फिर पूछा कि आधीरात को (चांकलगी) यह क्या कहा था। वह बोली मेरा मरद आधीरात को चांक लगाया करता है इस से कही। और (डोलै आरही) ये क्या तू बोली पहररात रहे हिरनी डोले आती हैं। फिर बोले (पौह फाट्या में दिया) यह क्या तो कहा प्रभात होतेही मैं चक्की में गल्ला डालती हूं इससे कहा बादशाह इन चारों जवाबों को सुनके बड़ा खुश हुआ और पछिताने लगा कि मुफ्त में इसकी या उस कोतवाल की जान जाती थी इससे सब काम सोच समझकर करने चाहिये निदान तब तो तुर्तही बादशाह ने हजार १०००) रुपये उस चतुर स्त्री को दिलाये और दो नादर खोजे साथ में घर पहुंचाने को भेजे गये वे राह में उस स्त्री से कुछ लेने को कहने लगे तो उसने उनको अपने हाथ का कंगन दिखाकर पूछा कि कहो एक बेचूं या दोनों को तो वे बोले दोनोंही को बेच दीजिये फिर वह सामनेही एक सराफ़ की दूकान पर जाय उससे बोली ये दो खोजे सरकारी आप इन्हें गिरवी रखली-जिये पांचसौ रु० ५००) इन दोनों के हैं। बनिये ने पूछा इनसे पूछना चाहिये तो स्त्री ने पूछा अरे एक को या दोनों को, तो वे कंगन के लिये समझकर बोले अजी दोनों कोही रखदी-जिये उसने यह सुनतेही पांच सौ रुपया गिन दिये वह लेकर एक गली से चलदी वे दोनों कुछ देर राह देखकर सटकने लगे तो उस बनियें के आदमी ने कहा कहां जाते हो तुम गि-रवी धरेगये, वे सुन चुप बैठरहे बादशाह के यहां खोजों की

ादगारी हुई वहां किसी ने जाय कहा कि खोजे तो वनियें के ारवी हैं तब वादशाह ने पास से रुपये भेजकर उन दोनों को ूटवाये और मन में वहुत सा अचरज मानकर उस चतुर स्त्री ी बुद्धिमानी को सराहने लगा और वहही स्त्री उनके मनमें ासी निदान सांझ होतेही अपने नौकरों से हुक्म किया कि ास दाना औरत को हमारे पास ले आओ बुलावा पहुँचा वह ााय हाजिर हुई। तो वादशाह ने पूछा अय नेक औरत! यह ्या माजरा हुआ तू हम को अव्वल से कह सुनाव। वह बोली ारीवनिवाज! मुझ को सात चूतिया मिलगये और कुछ मा-जरा नहीं वादशाह ने फिर पूछा कौन २ कैसे चूतिया मिले। वह कहनेलगी कि अव्वल चूतिया तो मेरी सास जो मुझ को दाढ़ से चूल्हे के आगे वैठाती थी १ दूसरा चूतिया मेरा मर्द, जो मुझ को अकेली जंगल में छोड़दी थी २ तीसरा चूतिया सवार, जो वात के कहने पर घोड़ा छोड़ भगा ३ चौथा कोत-वाल, जो बेतादाद पीतागया जिसे हकूमत का कुछ ख्याल नहीं रहा ४ और दोनो चूतिया वे खोजे जो कंगन के वहाने दोनों विकगये ५। ६ सातवें चूतिया आप जो हुये हुआये माजरे को फिर पूछ रहे हो ७ वादशाह सुनके और खुश हुआ और उसे और भी इनाम देकर उसके घर पहुँचाई॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांसिथ्रनिवन्धेचतुर स्त्रिया इतिहासवर्णनंनामैकचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४१॥

अथ द्विचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

दो लड़कियों का दृष्टान्त।

सुरक्षितोऽपि व्यथते दुरासदस्ततस्तु दुष्कर्म भुनक्ति हि स्वकम्॥ महद्गृहे चापि विवाहिता सुता दुष्कर्मणा भुक्तवती स्वकं फलम्॥ १॥

कुटिलजन, रक्षा किया भी दुःखित होता है और फिर

कुकर्मफल को भोगता है जैसे बड़े घर में भी विवाही कन्या,फिर दुःखही भोगती भई (दृष्टान्त) एक वैश्य के दो लड़की थीं। एक कथा सुनती। दूसरी आते जाते जनों के ईंटें मारा करती थी और उनका बाप उन्हों से पूछता कि सब से मीठा क्या? तब वह कथा सुननेवाली कहती कि सब से मिष्ट 'लवण है' इसी बात की जिद पर उसने बेटी को महा दरिद्री घर में कुष्ठी मनुष्य को विवाही और दूसरी को भाग्यवान् अच्छे वर को विवाही दोनों का विवाह हुआ॥ दैववश उस ईंटें मारनेवाली का पति परस्त्रीगामी था गरमी का रोग निकलकर मरगया वह निर्धन दरिद्रिणी हो व्यभिचार करनेलगी। और वह अपने कुष्ठी पति की टहल कियाकरती कभी कोई महात्मा आकर उसे अच्छा स्वच्छशरीरी कर गये फिर वह द्रव्य कमाकर बड़ा धनी होगया वे दोनों परमसुखी भये और उस सुलक्षणवती के मा बाप भी निर्धन होकर उन्हीं की शरण आरहे इससे चाहे कहीं हो पर भाग्य अपना अपने साथ रहता है जैसे श्लोक में कहा "भाग्यं फलति सर्वत्र न च विद्या न च पौरुषम्। समुद्रमथने प्राप्ता हरौ लक्ष्मीर्हरे विषम् १" जब ईश्वरों की भी यह गति है तो मनुष्य, क्या वस्तु है और भी कहा है जैसे कि "अवश्यं भाविभावानाम्प्रतीकारो भवेद्यदि। तदा दुःखै र्न युज्येरन्नलरामयुधिष्ठिराः"॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यामिश्र निबन्धे द्विचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४२॥

अथ त्रिचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

माली का दृष्टान्त।

प्राप्ते विभुत्वे कर्तव्या विभुत्वस्यैव भावना॥ यथा माली दिनैकेन्द्रो महेन्द्रत्वमवापह॥ १॥

स्वामित्व के प्राप्त होने में स्वामीपन की प्राप्ति होने काही

प्रयत्न करना जैसे 'माली' एक दिन के लिये इन्द्र बनाया गया फिर वह सदा के लिये 'महेन्द्र' होगया (दृष्टान्त) एक माली शिर पर फूल लादे चला आता था। राह में कथा होती थी तहां एक फूल उसके शिर से गिरपड़ा तो उसने उसे दूर पड़ा देख (श्रीकृष्णार्पण) कहके छोड़दिया तो फिर वह तिसके फल से एक दिन को (इन्द्र) बनायागया, तब तो उसने विचारा कि सदा के लिये इन्द्र बनजाना चाहिये इस विचार से उस चतुर माली ने निज (नन्दनवन) श्रीकृष्णार्पण करदिया तो तिसके फल से वह सदा के लिये महेन्द्र बनायागया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे त्रिचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४३॥

अथ चतुश्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

तथा वेश्यानुगः पुष्पं पतितं ह्यर्पयद्धरौ॥ गतोऽसौ नन्दनवनं ततो वैकुण्ठमप्यगात्॥ १॥

तैसेही एक वेश्या के साथवाले जनने भी गिरा पुष्प, श्रीकृष्णार्पण किया तो वह इन्द्र बनकर (नन्दनवन में) विहार करने को गया वैकुण्ठ के दरवाजे में ढाढ़ से धसगया तो फिर वहां वैकुण्ठ मेंही रहा वहां सदा आनन्द से रहनेलगा॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे चतुश्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४४॥

अथ पञ्चचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

राजा युधिष्ठिर और एक साधु का दृष्टान्त।

पदे पदेऽश्वमेधस्य फलं तीर्थाटने भवेत्॥ राज्ञोऽस्यदानसंकोचे साधुनाऽदायि तत्फलम्॥ १॥

तीर्थाटन करने में पद २ पर अश्वमेध का फल होता है जैसे राजा "युधिष्ठिर" से एक ने अश्वमेध यज्ञ का फल मांगा

तो उसने देने में संकोच किया तब वहां एक साधु सुनरह था उसने तुर्तही अपने अश्वमेधों का फल देदिया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे पञ्चचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४५ ॥

अथ षट्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ।

कोली और परमहंस को दृष्टान्त ।

यादृशस्तादृशम्पश्येज्जनं वै कृषिकृद्यथा ॥ गत्वा हंस समीपे तु कृषेर्दुःखं हि पृष्टवान् ॥ १ ॥

जैसा जो मनुष्य होवे वह दूसरे को भी वैसाही देखता है। जैसे एक कोली ने खेती की थी उसके पास माल हाकिमी ठेका देने को न रहा था तो सरकार ने उसे नंगा करके निकाल दिया। तब जंगल में गया तो तहां शून्य वन में एकान्त एक (परमहंस) बैठा था उसने उसके पास जातेही पूछा कि क्या तूने भी खेत किया था तोपै भी हाकिमी नाहिं दई गई का ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे षट्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४६ ॥

अथ सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ।

यती परमहंस का दृष्टान्त ।

समा हि यतिनः सर्वे सुखदुःखप्रदायकाः ॥ भोजितस्ताडितः पृष्टे ताडितो येन भोजितः ॥ १ ॥

यती परमहंस के सुख दुःख देनेवाले जन सब समान हैं जैसे किसी महात्मा को एकने भोजन कराया और किसी ने ईंट मारी तो शिर में रुधिर चला देख लोगों ने पूछा आप के किसने मारा ? तो उन्होंने उत्तर दिया कि जिसने जिमाया उसी ने ईंट मारी महात्मा जन ऐसे होते हैं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४७ ॥

अथाष्टचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

रानी से यती की परीक्षा।

मुखप्रसादमालिन्यात्परीक्षा यतिनो भवेत्॥ यथा राज्या भोज्यमानः पुरीषग्लानितोऽहितः॥ १॥

मुख की प्रसन्नता और मलिनता से भी परमहंस की परीक्षा होजाती है जैसे कि, रानी ने एक कपटी परमहंस को भोजन करवाया। तो वह उसकी जांघपर बैठकर खानेलगा फिर वहीं ही दिशा बैठ दिया तो रानी ने परीक्षा के लिये उसी की विष्ठा उसके मुख में लगाई तब तो वह छी २ करके मुंह फेरनेलगा तब रानी ने एक थप्पड़ मारा और मकान से बाहर निकलवा दिया कपटी की यह गति है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेऽष्टचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४८॥

अथैकोनपञ्चाशत्तमः प्रदीपः।

अथवाऽपक्वचित्तोऽसौ कन्यामुद्वोढुमैच्छत॥ तिरस्कृतोऽथ गुरुणा पुरीषग्लानितोऽभवत्॥ १॥

तैसेही एक ब्राह्मण अपक्वयोगी था उसको योगाभ्यास पूरा २ नहीं भया था और वह अपने कों ज्ञानी जानता था उसके घर एक कन्या थी वह व्याहने योग्य हुई तो उसकी स्त्री ने कहा इसे कहीं व्याह देनी चाहिये वह सुनके चुप रहा कुछ न उत्तर दिया कई दिन बाद फिर कहा स्वामिन्! यह बड़ी होती जाती है तो कहा क्या चिन्ता है भावी संस्कार मुख्य है। ऐसेही कहते २ वह कन्या बीस वर्ष की होगई तब हार लाचार होकर उसने फिर कहा, स्वामिन्! अब क्या विचार है तब उसने कहा विचार क्या है? जो कोई इसको वर न मिलेगा तो हमहीं इस को ब्रह्मार्पण करलेवेंगे क्या चिन्ता है हम ज्ञानी जन हैं हमारे

अथैकपञ्चाशत्तमः प्रदीपः।

राजा युधिष्ठिर का दृष्टान्त।

राजते तस्य राज्यं हि यत्र तुष्टा द्विजाः सदा॥ द्विजाश्चौर्य्यरता यत्र तस्य राज्येन किं फलम्॥ १॥

जिस राजा के राज्य में ब्राह्मण सदा सन्तुष्ट हों उसही का राज्य राजित होता अर्थात् भलीभांति शोभित होता है। और जिसके राज्य में ब्राह्मण, चोरी करें उसके राज्य करने से क्या फल है (दृष्टान्त) राजा युधिष्ठिर के यज्ञ में भोजन करते समय एक ब्राह्मण ने उठते समय थाल चुराया गिरवी धरा तब निश्चय हुआ कि राजा युधिष्ठिर का थाल है तब राजा बलि के पास न्याय गया, राजा ने पूछा ब्राह्मण, तैंने थाल क्यों चुराया वह बोला मैंने अपने कुटुम्ब के लिये चुराया मैं न चुराता तो मेरा कुटुम्ब भूखा मरता मैं कुटुम्ब के भोजन के लिये कहीं से आटा प्रतिदिन मांग २ कर लाता था आज राजा के यहां नौता गया तो मैं जीम चुका था पर मेरा कुटुम्ब क्या खावे इससे चुराया। राजा बलि, सुनके चकित हो कहने लगा वह कैसा राज्य जिसमें ब्राह्मणों के पास दूसरे दिन का भोजन नहीं रहे ऐसे धिक्कारें दीं तभी से (हतं यज्ञमदक्षिणम्) कहके भोजन के साथ दक्षिणा लगाई गई वह उस भोजन करने वाले के कुटुम्ब के लिये होती है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे एकपञ्चाशत्तमःप्रदीपः॥ ५१॥

अथ द्विपञ्चाशत्तमः प्रदीपः।

दो स्त्रीवाले वैश्य का दृष्टान्त।

अन्यदुःखं तु दुःखं हि दुःखमात्रस्यवाचकम्॥ दुःखा दुःखतरं दुःखं भार्य्याद्वयभवं भवे॥ १॥

और दुःख तो जगत् में दुःखमात्र का वाचकही अर्थात्
समात्रही का दुःख है। पर दुःख से भी महादुःखतर दो
ार्याओं का दुःख है जैसे एक सेठके दो स्त्रियां थीं जब वह
ान से आकर सोया करता तो वह अपना २ पैर जो बांट
खा था उसे दावा करती थीं। एक रोज सेठजी आकर लेटे
ैर वे दोनों अपना २ पैर दावरही थीं इसमें उनकी अपने २
केही झगड़े में विगड़ी तो वह बोली मैं तेरे पैर को तोडूंगी
सने कहा मैं तेरे पैर को काटूंगी ऐसेही वे हथियार ले लेकर
ापस में पैर को एक को एक काटनेलगी सेठजी के दोनों
कटने लगे तव तो सेठने दुहाई तिहाई मचाई निदान
ास के लोगों ने आकर इनको निठ से छुटाया॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निवन्धे द्विपञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥ ५२॥

अथ त्रिपञ्चाशत्तमः प्रदीपः।

अहीर का दृष्टान्त।

आभीराः कथिता लोके अधीरा बुद्धिवर्जिताः॥ शीत
काले शीतजलैर्गुरुमस्नापयन्मुदा॥ १॥

इस संसार में अहीर वड़े अधीर अज्ञानी कहे हैं उन्होंने
शीत समय में ठंढे जल से गुरु को स्नान कराया। एक अहीर
के घर गुरु जड़ावल लेने को माह के महीने में आया वह
उसके लिये पहिले तो ठंढाई बनाय लाया वह ठाढ़ से पिलाई
फिर ठंढे जल से स्नान कराया तो वह वेचारा मारे ठंढ के
ऐंठगया फिर सवेरे वह स्नान कर चन्दन लगाकरके उनके
पास गया वे देखतेही वोले कि गुरुजी के पेट में दर्द था रात
भर पुकारे अब ये दर्द की जगह चांक लगाकर आये हैं अब
इनके चांचवे 'दाग' लगादेने चाहिये निदान गुरु वेचारा

अथाष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

कुकर्मापि प्रपूज्येत मिथ्या वेषधरश्च यः ॥ धृतमाले यथा राजा बधिकञ्चाप्यपूजयत् ॥ १ ॥

कुकर्मकारी भी हो पर वह हरिवेषधारी होने से 'मिथ्या अर्थात् कपट रूपधारी भी पूजा जाता है' जैसे बधिक भी था पर माला पहिर के गया तो राजा ने देख तिसकी पूजा करी और उसी दिन से उसने उस चिड़ीमारपन के कुकर्म को त्यागा और आप हरिभक्त भया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेऽष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५८ ॥

अथैकोनषष्टितमः प्रदीपः ।

केनचित्प्रोच्यमानं हि पुण्यकर्मफलप्रदम् ॥ वैश्यो क्कोपि कथां श्रुत्वा प्राप्तवान् स्वर्गदर्शनम् ॥ १ ॥

किसी करके बताया भया भी सत्कर्म, फलदायी होता है। जैसे किसी याचक ने एक वैश्य से याचना की उसने कहा कि पासही कथा होरही है जाव सुन लेव वह जायके कथा सुनता रहा तो तिसके फल से उसने स्वर्ग में भगवद्दर्शन पाया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे एकोनषष्टितमः प्रदीपः ॥ ५९ ॥

अथ षष्टितमः प्रदीपः ।

स्वकर्म भुज्यते स्वेन नान्येन तु कदाचन ॥ पापमिन्द्रे रोपयित्वा पुनर्वै भुक्तवान् स्वयम् ॥ १ ॥

अपना किया कर्म, अपनेही से भोगा जाता है और कोई कदापि नहीं भोग सक्ता है । जैसे एक मनुष्य ने साधु को मारा लोगों ने कहा तुम दण्डभागी हुये उसने कहा भुजाओं का

वामी इन्द्र है मेरा क्या दोष है तब कहा वे भुजा तेरेही आ-
श्रित हैं तब वह निरुत्तर हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र
निबन्धे षष्टितमः प्रदीपः॥ ६० ॥

अथैकषष्टितमः प्रदीपः ।

रस में भेली का दृष्टान्त ।

अरसे हि मिथो जाते कुतो रसविभावना ॥ रसाभावे
कुतो भेलीत्युक्तस्तूष्णीं बभूव सः॥ १ ॥

आपस में जब विरसता होजावे तब रस की सम्भावना,
कहां से होसक्ती है । जैसे किसी अच्छे भाग्यवान् घर में बरात
आई सब कुछ लगकर विवाह भया पर दाने चारे पर नौवत
झगड़नेलगी उधरसे वह कहता है मैं तो भेली लूंगा भेली, वह
कहता 'भेली की लागे धेली' आपस में येही जटल होरही थी
निदान दो चतुर मनुष्य उससे बोले भाई तू भेली मांगै वह
भेली रस कीही होती है, उसने कहा 'हां' तो जब हमारा
तुम्हारा रसही नहीं रहा अर्थात् झगड़ा होने से बेमन
होगया तब भेली काहे की मांगै है । वह यह सुनके कुछ नहीं
कहसका ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र-
निबन्धे एकषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६१ ॥

अथ द्विषष्टितमः प्रदीपः ।

संसर्गेणैव त्यज्येत मुनेस्तत्सञ्चितन्तपः॥ यथा वेश्या
मुनिं कृत्वा स्ववशञ्चानयद् गृहे ॥ १ ॥

संसर्ग होने से मुनिजन का भी इकट्ठा किया तप नष्ट हो-
जाता है । जैसे एक मुनि ऋष्यशृङ्गीजी, वन में तपस्या करते
थे और तहां के राजा ने यज्ञ किया था तो लोगों ने कहा वह

के भोजन करना और ' सहस्ररश्मि सूर्य उदय) होते स्नान करना तथा ' लक्ष पहिंचाने भये को छोड़ औरको दान देना और कोटि-सुमेरु को छोड़ हरि भजना अर्थात् माला फेरनी चाहिये इस प्रकार तीन अर्थ भये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धेऽष्टषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६८ ॥

अथैकोनसप्ततितमः प्रदीपः ।

चोरी निकालने का दृष्टान्त ।

लोभादिनापि चौरस्य निश्चयो जायते ध्रुवम् ॥
चौरभोजननिष्कासे जातस्तन्निर्णयो यथा ॥ १ ॥

लोभ आदि देने से भी चोर का निश्चय हो जाता है। जैसे किसी ने साधु के पास से अशर्फी चुराली थी मांगने से न दी तब साधु ने विचार करके उनके भोजन के लिये जब थाल परोसे तो एक थाल बहुत श्रेष्ठ उसमें एक रुपया धरा ऐसा उस चोर के लिये भी परोसा तब चेलों ने पूछा यह थाल किसका परोसा है तब बाबाजी बोले भाई यह थाल उस चोर के लिये है वह भी तो हमारा अंशभागी अधिकारी होगया है अब उसे यह भोजन दक्षिणा मिलेगा तब तो उस चेले ने विचारके आप उस लालच से अशर्फी बाबाजी को देदी बाबाजी और सब चेले हँसनेलगे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र निबन्धे एकोनसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ६९ ॥

अथ सप्ततितमः प्रदीपः ।

अज्ञानी मनुतेऽत्यर्थं स्वीयास्वीयं परापरम् ॥
ताडयित्वा परभ्रान्त्या सुतं पश्चादलालयत् ॥ १ ॥

अज्ञानीजन, अपने पराये का बहुत भेदभाव मानते हैं। जैसे एक सिपाही का लड़का बहुत दिन से कहीं चलागया था। फिर वह सिपाही दौरेपर गया तो सराय में उतरा। वहांही

उसका लड़का भी, कहीं से आय भीतर पड़ा था सिपाही ने जाय आवाज दी वह न बोला तब उसके चार चाबुक मारे जब वह पुकारा और, जान लिया कि लड़काही है तब छाती से लगाकर रोने लगा अपने और पराये में इतना भेद मानते हैं ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र-
निबन्धे सप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७० ॥

अथैकसप्ततितमः प्रदीपः।

धर्मस्य सूक्ष्मा गतिः पर दृष्टान्त।

कार्य्यारम्भे तु शतं जातेऽर्द्धेऽर्द्धं शतं तथा ब्रूते ॥
जाते कार्य्ये न शतं न चार्द्धमेषा जनप्रकृतिः ॥ १ ॥

यह जन कार्य्य के आरम्भ में अर्थात् जब करनेलगता है और कार्य्य सिद्ध नहीं भया है तब तो शत अर्थात् पूरा २ पुण्य करने को चिन्तता है ॥ जब वह काम आधा सिद्ध होता तब आधा पुण्य करने कहता है। और जब वह कार्य्य होजाता है तो नतो आधा पुण्य होता न सारा होता है इसपर (दृ-ष्टान्त) जैसे कि एक कृपण मनुष्य किसी ऊंचे वृक्षपर चढ़गया फिर नीचे को देखा तो आंखें फिरगई और उतरने की तर-कीब कोई याद न आसकी तबतो देवता याद आये तब लगा उनको मनाने कि मैं खुशी से नीचे उतरजाऊं तो सौ ब्राह्मण, देवता के जिमाऊंगा। जब बीच में आया तो कहनेलगा आधे ५० तो जिमाऊंहीगा। जब ऐसेही कम करता २ नीचे उतरआया तो न सारे न आधे याद रहे देवताकी जय, बोलके सांवरो भाव को भूखो, सुदामा के चावलचूके, शाक विदुर घर लूखो ऐसे सूखे पद कह २ देवता की मनुहार करकर घर चला आया। पुण्यकरने मे कृपणजनों की यह गति है ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांमिश्र-
निबन्धे एकसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७१ ॥

भक्तजन, महादुःख को भावी से प्राप्त भया जानकर मोहित नहीं होते जैसे वैश्यभक्त ने, वैश्य साधुकरके हते भये पुत्र को जानकरके भी तिसका शोक नहीं किया और तिसही वैश्य साधु को निज पुत्री व्याहदई (दृष्टान्त) जैसे एक वैश्यभक्त के द्वारपै वैश्य साधु आया वहां उसकी सेवा अच्छी बनी तो वह सेवा से प्रसन्न हुआ वहांहीं रहनेलगा वैश्यभक्त ने अहो-भाग्य कहके रखलिया उसे साधुसेवा करने का बड़ा प्रेम था आनन्द से रहनेलगे। एक दिन वह साधु उस वैश्य के लड़के को साथ लेकर वन में गया तो उसके आभूषण आदि बहुत मोल के देखकर उसका चञ्चल चित्त चलित हुआ तो उसे मार के गाड़ आया। घर आतेही वैश्य की स्त्री ने पूछा आप के साथ लड़का गया था कहा नहीं मेरे साथ से तो लड़कों में ठहरगया था यहांहीं कहीं खेलता होगा। उसने सब ठौर देखा भाला पर कहां मिलना था। निदान दासी देखनेगई तो उससे एक योगी ने कहा कि जो तुम्हारे घर में साधु रहता है वह ही तुम्हारे लड़के को मारके गाड़आया है उसही ठौर पै उसके रुधिर के चिह्न होरहे हैं, वह जायके देखआई सब हाल आकर घर में कहा वैश्य की स्त्री रोने पीटनेलगी तो वैश्य ने उसे ज्ञान देके समझाया कि यह प्राणी काल से होता और काल सेही मिटजाता है उस काल की गति को देखना चाहिये और जिसने अपनी प्रसन्नता से जो वस्तु हम को दी थी वह हमें कुपात्र तथा निजसेवा में असमर्थ जानके वह अपनी आप उलटी लेली तो हमारे शोक किये क्या वह आ-सक्ती है ? इससे शोक करना सर्वथा वृथा है और जो हुआ सो तो भावीवश से हुआ इसमें किसी का वश नहीं पर अब उ-चित यह है कि अपनी लड़की इस साधु को और व्याहदेवें जिसमें निस्संदेह हो आनन्द से भजन करें इस सलाह को सु-ननेही उस शीलवाली स्त्री ने अङ्गीकार करी और साधु को

व्याहदेने की तैयारी भई इस चरित्र को देखके वह साधु निज निन्दित कर्म की और उनकी श्रेष्ठता की लज्जा के मारे सुन्न रह गया चित्र की पुतलीसा ज्योंका त्यों स्थित कुछ भी न कह सका। इतने में उस साधु के (गुरु नारायण) चले आये वह उन्हें देखके और भी लज्जित हुआ और वे दोनों स्त्री पुरुष उनके चरणों में गिरे तब गुरुजी बोले क्या विचार है उन्होंने हाथ जोड़ कहा हे महाराज! इस भगवद्भक्त को अपनी कन्या विवाहने का विचार है और कुछ नहीं तब तो महात्मा ने कहा बहुत अच्छा विचारा लाओ तजवीज करें ऐसे कह विवाह की तैयारी करने लगे और विवाह भी होने लगा निदान जब फेरों का समय आगया तब गुरुजी ने कहा कि इससमय लड़की का भाई चाहिये जब वह आवे आहुति दीजावे यह सुन सबके सब रोने लगे और वह वैश्य भी आंख भरे हाथ जोड़ बोला हे स्वामिन्! लड़का तो था पर वह इस रीति से काम आया वह सब हाल कहा तो महात्मा बोले नहीं २ ऐसा नहीं हुआ वह लड़का खेलने गया और अभी आता है तब तो वे सब बाहर की ओर एकसाथ निहारने लगे उसी समय लड़का बाहर से प्रसन्न खेलता २ आय पहुँचा सबके आनन्द भया साधु का व्याह उस की पुत्री के साथ होगया भगवान् भक्त की ऐसे रक्षा करते हैं॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे द्वितीयः प्रदीपः॥ २॥

अथ तृतीयः प्रदीपः।

देवाजी ब्राह्मण का दृष्टान्त।

भक्तं रक्षति दुःखार्त्तं देवाजी ब्राह्मणं यथा॥ ररक्ष स्थविरो भूत्वा केशाद्रक्तमवासृजत्॥ १॥

भगवान् भक्त की रक्षा करते हैं जैसे दुःखित (देवाजी)

नहीं फँसा वह लाचार होकर चला आया। दूसरे दिन वा कपटी कण्ठी, तिलक धारकर गया तो भगवान् उस वेष की लाज से आप उस जाल में आय फँसे तथा माया के हंस बना के फँसा दिये वह ले प्रसन्न हो चला गया। उधर श्रीभगवान्‌जी वैद्य बन राजा के पास पहुँचकर बोले हे राजन्! क्यों वृथा हिंसा करता है तेरे इस बूटी का रस लगाने से आराम होगा ऐसे कह उस राजा को (बूटी) दे उस हंस जोड़े को छुड़वाकर पधारे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे पञ्चमः प्रदीपः॥ ५॥

अथ षष्ठः प्रदीपः।

कमधुज भक्त का दृष्टान्त।

भक्तं वनेऽपि रक्षति कमधुजभक्तं मृतं यथा कपिभिः॥
कृतसंस्कारं सद्यो ह्यदाहयत्सर्वजनसाक्ष्यम्॥ १॥

भगवान् वन में भी भक्त की रक्षा करते हैं॥ जैसे (दृष्टान्त) "कमधुज भक्त" घर में सब भाई बन्धुओं से उदासीन रहता घर जो मिलता सो खाकर वन में चला जाता वहां एकान्त भगवद्भजन करता परिणाम में वह वन में मर गया भाई लोगों को खबर न थी तो निज भक्त के काज महाराज ने अपनी वानरी सेना भेजी वे वानर आकर उसकी तैयारी में लगे उसका यथा विधि से संस्कार किया तभी ब्योरा पाके उसके भाई लोग भी आ पहुँचे थे उन्होंने यह चरित्र देख बड़ाही आश्चर्य माना और धन्य धन्य कहते भये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे षष्ठः प्रदीपः॥ ६॥

अथ सप्तमः प्रदीपः।

जयमल राजा का दृष्टान्त।

रक्षति भक्तं भयतः कृष्णो नियमस्थितं यथा रिपुतः॥

जयमलवरराजानं ररक्ष परचक्रतोऽभीतम् ॥ १ ॥

कृष्णचन्द्रजी भक्त की भयादिक से रक्षा करते हैं जैसे "जयमलराजा" को शत्रु से बचाया और उसके शत्रु से आप लड़े उस को कुछ भी भीड़ नहीं आनेदी (दृष्टान्त) "राजाजयमल" बड़ा नेमी था नारायण की सेवामें लगा था केसी ने आकर कहा शत्रु चढ़ा आता है तो उसने उसका कुछ भी भय नहीं माना कहा कि मेरे तो भगवान् रक्षक हैं मैं उन्हीं की सेवा में हूं निदान जब शत्रु पासही आय पहुँचा तो भगवान् आपही शूरवीर होकर तहां गये और उसको सेना सहित मारभगाया ॥

॥ इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेसप्तमः प्रदीपः ॥ ७ ॥

॥ अथाष्टमः प्रदीपः ।

भक्तं रक्षति श्रीरामः कवचारक्षितं भयात् ॥ लुण्ठकात् परिरक्षासीद्यथा श्रीधरस्वामिनः ॥ १ ॥

श्रीरामजी कवचों से रक्षित भक्त की भय से रक्षा करते हैं जैसे (दृष्टान्त) श्रीधर-स्वामी किसी ग्राम से चले आते थे उन्हों ने मार्ग में भय समझकर (श्रीरामरक्षा-कवच) से निज रक्षा करी चलदिये । राह में उनको लुटेरे मिले तो इनके इधर, उधर उनको धनुष बाण लिये 'श्रीरामलक्ष्मणजी' साथ चलते देखपड़े ऐसेही वे भी देखते २ घरतक चले आये कोई भी दांव न चला तो हार लाचार होकर श्रीधरस्वामी केही चरणों में आय गिरे सब हाल कहा वे जानगये कि प्रभु ने हमारी रक्षाकरी तभी से उन चोरों ने भी लूटना छोंड़दिया भगवद्भक्त हुये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेऽष्टमः प्रदीपः ॥ ८ ॥

अथ नवमः प्रदीपः ।

किं कथये हरिभक्तः कुमार्गचारोऽपि रक्ष्यते हरिणा ॥
लुण्ठकभक्तं विपिने वैश्यो भूत्वा ददौ द्रव्यम् ॥ १ ॥

कहांतक कहैं कुमार्गचारी भक्त की भी भगवान् रक्षा करते हैं जैसे (दृष्टान्त) एक भक्त चोरी और लूट से द्रव्य लाकर साधु सेवा करता था । एक दिन उसके घर बहुत से साधु चले आये उसके घर में कुछ भी न था वह उनको घर बैठाकर वन में लूटने के तलाश में गया कुछ उपाय न चला तो उन साधुओं से डरके महादुःखी हुआ निदान श्रीभगवान वैश्य वनके आये और उसे बहुत सा द्रव्य लुटाय गये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे नवमः प्रदीपः ॥ ६ ॥

अथ दशमः प्रदीपः ।

चोर का दृष्टान्त ।

पुण्यार्थमोघवचनं सम्पादयति प्रभुर्मुदा सत्यम् ।
चौरैर्मुषितां महिषीं सालंकारां समानयत ॥ १ ॥

पुण्य के अर्थ कहे निरर्थक अर्थात् मिथ्यावाक्य को भी भगवान् सत्य करदेते हैं जैसे गोपाल भक्त, वन में गऊ चरारहा था, भैंस को चोर ले गये घर में माता से आकर कहदिया एक व्यापारी घी के दाम और भैंस देदेने के इकरार से ले गया है केवल छांछमात्र वह खाकर फिर हमारी को हमारे घर पहुँचाय देगा निदान उस चोर ने फिर दीपमालिका के दिन उस भैंस के गले में चांदी की हॅसली, पहिराकर बाहर निकाली तब निर्णय करने को श्रीभगवान् ने उस भैंस की रस्सी तोड़ उसके बच्चे समेत (गोपालजी) के घर पहुँचाई वे देखके

माता से कहनेलगे देख यह घी के दामों के गहने समेत भैंस उस भले मानुष ने पहुँचाई है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे दशमः प्रदीपः ॥ १० ॥

अथैकादशः प्रदीपः ।

गणेशदेई रानी का दृष्टान्त ।

कौटिल्यं नापि मनुते भक्तः साधुकृतं महत् ॥ गणेश देवी तत्साधोर्महत्कौटिल्यमक्षमत् ॥ १ ॥

भक्तजन साधुकरके किये भारी अपराध को सहलेते हैं जैसे गणेशदेई-रानी के एक साधु भक्तिपरीक्षा के लिये जांघ में कटार मारकर भगगया तो कितनेही दिन वह रजोधर्म तथा बेचैनी के मिष से राजा की सेजपर न गई कि राजा फिर साधुसेवा न करेगा निदान कई दिन बाद राजा के पास गई तब भी राजा ने देख उससे हाल पूछा उसने कह सुनाया राजा सुन बहुत प्रसन्न हो निजभाग्य सराहने लगा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे एकादशः प्रदीपः ॥ ११ ॥

अथ द्वादशः प्रदीपः ।

कृष्णदासजी का दृष्टान्त ।

दाता भक्तो ददात्येव निजमांसमपि प्रियम् ॥ कृष्ण दासो ददन्मांसं वृकं मत्वाऽतिथिं स्वकम् ॥ १ ॥

दाता-भक्तजन निजमांसभी दान करदेते हैं। जैसे कृष्ण-दासजी अभ्यागतों के परमसेवक भगवद्भक्त हुये ॥ श्रीगलता जी जयपुर के राज्य में रहते रहे अभ्यागतसेवा से उन्होंने कलियुग को जीतलिया जैसा दधीचि मुनिजी ने काम किया वैसाही उन्हों ने किया सो कि एक दिन भजन करते २ द्वारपर एक व्याघ्र चलाआया तो उसे अभ्यागत जानकर आप ने

वेद बनाये और पृथक् २ संहिता बनाकर (पैल) आदि निज शिष्यों को पढ़ाई। तथा अरिणी मन्थन करके उत्पन्न भये मुनि (शुकदेवजी) को श्रीमद्भागवत, बनाकर पढ़ाई और भागवत आदि अठारह पुराण (श्रीसूतजी को) पढ़ाये उसको वेद का अधिकार नहीं था उन्हों ने तिन पुराणों को (शौनक) आदि मुनिजनों को श्रवण कराये वे इतिहास आजतक जगत् में फैल रहे हैं इत्यादि इनका चरित्र बहुत सा प्रसिद्ध है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे चतुर्दशः प्रदीपः॥ १४॥

अथ पञ्चदशः प्रदीपः।

अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः॥ १॥

बिना तीसरे नेत्र (श्रीशुकदेवजी) साक्षात् (श्रीमहादेवजी) भये (दृष्टान्त) ऐसा जगत् में कौन है जो श्रीशुकदेवजी की महिमा वर्णन कर सकै जिनके मुख से (श्रीमद्भागवत रूप) अमृत की नदी निकली जो सब पीनेवालों को अमर करती है। एक समय देवस्त्रियों ने स्नान करते (शुकदेवजी) से लज्जा न की और व्यासजी को देख लज्जित होकर वस्त्र पहिरलिये। व्यासजी ने पूछा तब उत्तर दिया कि शुकदेवजी सिवाय भगवत्रूप के जगत् को नहीं देखते आप को सब प्रकार का ज्ञान है इस हेतु तुम से लज्जा है शुकदेवजी बालकपन से ही ज्ञानी-भगवद्भक्त हुये जन्मतेही वन को चल दिये व्यासजी, पीछे २ मोह के वश पुकारते २ चले तब सब ओर वृक्षों से ध्वनि हुई कि हम और तुम यह सब भ्रम है 'व्यासजी' यह उत्तर पाकर लौट आये पर इस उपाय में रहे कि 'शुकदेवजी' फिर भी आय रहैं इस हेतु कई लड़कों को श्रीमद्भागवत के श्लोक पढ़ाकर जिस वन में शुकदेवजी थे तिस वन में भेजते थे। एक दिन किसी लड़के से श्लोक सुना उस

का अर्थ यह है। पापात्मा पूतना, स्तनों में विष लगाकर मा-रने को भी गई पर उसे भी वह गति प्राप्त भई जो और को कभी न मिलसके ऐसा दयालु और कौन है जिसकी हम शरण जावें, शुकदेवजी ने यह सुनकर बड़ा आश्चर्य्य किया और लड़कों से प्यार करके पूछनेलगे कि यह तुम ने किससे सीखा है उन्होंने व्यासजी का नाम बताया तब शुकदेवजी आये और प्रेम से रहनेलगे श्रीमद्भागवत पढ़ा और श्रीगंगाजी के तटपर आकर राजा परीक्षित को श्रवण कराकर तिसकी मुक्ति की और जिस २ ने उस सभा में सुनी वे सब भगवद्भक्तिपरायण हुये और अब भी जो कोई सुनता है वह परमपद का अधिकारी होजाता है॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे पञ्चदशः प्रदीपः॥ १५॥

अथ षोडशः प्रदीपः।

जयदेवकविका इतिहास।

महान् महत्त्वं भजते मुहुः स्वकं भृशार्दितोपीह खलैः समन्ततः॥ विच्छिन्नहस्तो जयदेवपण्डितश्चकार चौरेषु दयां ततोऽपि सः॥ १॥

महान् पुरुष—महात्माजन, कुटिलजनों करके सब ओर से अत्यन्त दुःखी किये भी निजमहत्त्व कोही भजते अर्थात् निजश्रेष्ठपन को नहीं त्यागते हैं। जैसे चोरों करके हाथ कटाने पर भी (पण्डित श्रीजयदेवकविजी) ने तिन चोरोंपर दयाही करी विस्तार से इनका इतिहास॥ श्रीजयदेवकवि, सब कविराजों में चक्रवर्ती (महाकविराज) भये (गीतगोविन्द काव्य) तीनों लोकों में ऐसा प्रकाशित किया कि कोकक्काव्य और नौरस और शृंगार का समुद्र है जिसकी अष्टपदी को जो कोई पढ़ता है वह निश्चय बुद्धिमान् और सर्वशास्त्रों का

के समय झंगा देखकर राजा चकित रहा पंडों से पूछा निदान श्रीजगन्नाथजी ने वह वृत्तान्त राजा के हृदय में प्रकाशित कर दिया राजा ने निश्चय करके डौंड़ी फेरवादी कि जो कोई गीतगोविन्द पढ़ै तो शुद्धस्थान में पढ़ै क्योंकि आप भगवान् सुनने को जाया करते हैं एक मुगल बड़े प्रेम से इस पोथी को पढ़ता था। एक दिन घोड़ेपर सवार हो प्रेमभाव में मग्न होकर अष्टपदी को गाता था उसको दर्शन हुये कि भगवान् सुनने को साथ हैं। इस गीतगोविन्द की महिमा कौन वर्णन करसके स्वर्गलोक में देवकन्या गान करती हैं। एक दिन जयदेवजी को राह में ठग मिले तब यह शोचा कि पाप का मूल धन है यह शोचकर जो कुछ पास था सो ठगों को देदिया ठगों ने समझा कि यह बड़ा धोखेबाज है कुछ पीछे उत्पात करेगा यह विचार करके हाथ पांव काटके जयदेवजी को कुयें में डाल दिया। एक राजा भगवत्इच्छा से उधर आय निकला और उनको निकाला हाथ पांव न देखकर पूछा तो जयदेवजी बोले माता के गर्भ से ऐसेही जन्मे थे। वार्त्तालाप होने से राजा ने जानलिया कि कोई महात्मा भगवद्भक्त हैं बड़े भाग्य से दर्शन हुआ अपनी राजधानी को लेगया हाथ जोड़के सेवा के लिये विनती की तो जयदेवजी ने साधुसेवा की आज्ञा दी राजा अङ्गीकार करके साधुसेवा करनेलगा जब विख्याति हुई तो वे ठग भी साधुवेष बनाकर तहां पहुँचे जयदेवजी उन्हें देखते ही राजा से बोले कि ये दोनों हमारे बड़े भाई महात्मा पुरुष हैं इनकी अच्छे प्रकार से सेवा करो, राजा ने वैसाही किया, पर ठगों ने भी जयदेवजी को पहिंचानलिये इस से डरके बिदा होने की विनती नित्य किया करते निदान एक दिन बहुत रुपया दिलादिया और बिदा किये कुछ सिपाही घरतक पहुँचाने को पठाये सिपाहियों ने उनसे पूछा कि तुम्हारी स्वामीजी से ऐसी प्रीति काहे से है जो ऐसी मर्य्याद से बिदाई हुई

ग बोले कुछ कहने योग्य बात नहीं सिपाहियों ने वचन दिये
व बोले कि एक राजा के घर हमलोग और ये तुम्हारे स्वामी
ी, चाकर थे किसी अपराध से राजा ने इनको मरवा देने
ी आज्ञा दीथी तो हमलोगों ने इसके हाथ पांवही काटदिये
ान छोड़दी। इसी से सेवा हमलोगों की ऐसी कराई। यह
अपराध भक्त का प्रभु न सहसके धरती तुरन्त फटगई ठग
ाताल में धँसगये। सिपाहियों ने सब वृत्तान्त जयदेवजी से
हा वे दया से कम्पित हो हाथ मलनेलगे तो हाथ पांव निकल
ाये यह सब वृत्तान्त सिपाहियों ने राजा से कहा फिर राजा
े आय स्वामीजी से पूछा कुछ न बोले जब बहुतही हठ
किया तो सब वृत्तान्त कह सुनाया। राजा अति विश्वासी
सेवा करनेलगा॥ सचक्करके भगवद्भक्तों की रीति है कि
कोई उनके साथ दुष्टता भी करे पर वे साधुपनही करते रहेंगे।
जयदेवजी ने अपने देशजाने का विचार किया तब राजा ने
बहुत प्रार्थना करी जाने न दिये आप जाय स्वामीजी की स्त्री
(पद्मावती) को लेआकर राजमन्दिर में निवास कराया रानी
को पद्मावती की सेवा में युक्तकरी उस रानी का भाई मरगया
था उसकी स्त्री साथ सती होगई थी रानी ने एकदिन यह
बात पद्मावती से आश्चर्य मानने योग्य कही पद्मावती सुनकर
हँसदी रानी ने कारण हँसने का पूछा तब उत्तर दिया कि
शरीर का जला देना पति के पीछे कौन बड़ीबात है मुख्य
प्रीति वही है कि तुरन्त निज पति की मृत्यु सुनतेही उसी क्षण
अपने प्राण निछावर करै रानी बोली इससमय में तो ऐसी
सती आपही होंगी और कोई देखपड़ती नहीं हैं। फिर पद्मावती
की परीक्षा लेने को पीछे पड़ी राजा से जा कहा कि स्वामीजी
को एक दिन फुलवाड़ी में ले जाओ नगर में विख्यात करो कि
स्वामीजी मरगये राजा ने रानी को समझाया कि ऐसी बात
चाहिये नहीं निदान नहीं मानी तब राजा ने वैसाही सब किया

तब आंसूभरे रानी, पद्मावतीजी के पास जाबैठी उन्हों ने कारा
पूछा तो रोनेलगी पद्मावतीजी ने कहा स्वामीजी आनन्द से ।
तब रानी लज्जित हो बैठी फिर दश बीस दिन पीछे वैसीही बा
उठाई । पद्मावतीजी जानगई कि रानी परीक्षा को पीछे पड़ी
है तो रानी के मुख से यह बात सुनतेही प्राण छोड़दिये या
चरित्रदेख राजा रानी सफ़ेद होगये और आप भी मरने
हेतु चिता लगाई स्वामीजी यह समाचार सुनतेही तुरन्त आ
और राजा को मरणप्राय देखा कि जलने को तैयार हैं त
बहुत समझाया तो न माना तब स्वामीजी ने विचारलिय
कि बिना पद्मावती के जिये राजा रानी, जीवेंगे नहीं तब ए
अष्टपदी (गीतगोविन्द की) गाई सोही पद्मावतीजी उठबैठ
और साथ गवानेलगी तब भी राजा सावधान न हुआ स्वामीजी
ने सचेत कराया कुछ दिन पीछे स्वामीजी निज स्थान को ग
(कुण्डाबिल्व) गांव में घर था वहां पहुँचे गङ्गाजी अठारह को
पर रहीं नित्यही स्नान को जाते तब वृद्धता देख श्रीगङ्गाज
की एक धारा स्वामीजीकी कुटी के नीचे बहनेलगी उसका ना
(जयदेवी) गङ्गा, विख्यात है ऐसा प्रभाव हरिभक्तों का है ।

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे षोडशः प्रदीपः ॥ १६ ॥

अथ सप्तदशः प्रदीपः ।

चतुर्भुज भक्त का दृष्टान्त ।

भक्तलज्जां न सहते हरिर्भक्तस्य नृत्यतः ॥ मुक्तक
च्छस्य सद्यैव कच्छं सम्यग्बबन्ध ह ॥ १ ॥

भगवान् भक्त की लाज को नहीं सहते जैसे भगवत् के आगे
नृत्य करते परमरसिक भक्त (चतुर्भुज) की लँगोटी खुलगई
दोनों हाथों से झांझ बजारहे थे तालसम के भङ्ग होने के भय
से लँगोटी नहीं सम्हाली और लोगों के ठट्ठाकरने की चिन्ता

भी हुई तिसी समय परमरिझवार (विहारीजी) ने दो भुजा ९ उत्पन्न करदीं और अपने भक्त की लज्जा रखली ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निवन्धे सप्तदशः प्रदीपः ॥ १७ ॥

अथाष्टादशः प्रदीपः।

भगवान्दासजी का दृष्टान्त।

विश्वस्तभक्ते दण्डघ्नो ददाति यवनोऽपि च ॥ भगवद्दासकं भक्तिनिष्ठं प्रातोषयद्धनैः ॥ १ ॥

विश्वासी हरिभक्तजनपर दुष्ट यवन राजा भी दण्ड नहीं कर सक्ता है जैसे परमरसिक भक्तशिरोमणि (भगवान्दास जी) माला वहुत पहिरा करते इसीपर एक दिन वादशाह ने सारे नगर में डौंड़ी फिरवादी कि जो कोई माला तिलक धारण करै वह गर्दन मारा जावेगा इस भय से वहुतों ने छोड़दिया पर भगवान्दासजी कुछ नहीं डरे अपने शिष्यों सहित और दिनों से भी अधिक चमकीले तिलक माला पहिरकर वादशाह के सामने जान करके आये इसने वुरा मानकर हुक्म-अदूली का कारण पूछा, तो भगवान्दासजी ने अशङ्कही उत्तर दिया कि हमारे दीन में माला तिलक सहित प्राण जावें तो उद्धार होता है अब हमारी मौत आप की आज्ञा होते ही होने वाली जान पड़ती है इससे तिलक माला वहुत धारण किये जिससे वेपरिश्रम उद्धार होवें। यह सुनतेही वादशाह वहुत प्रसन्न हुआ और वोला कि जो चाहना हो मांगो ये वोले मथुरा जी से वाहर जाना नहीं चाहता, वादशाह ने लिख दिया कि मथुरा की आमिली जव तक मन चाहे तव तक करै सो वहुत काल तक करी हरदेवजी का मन्दिर और मानसी गङ्गा पोखरा गोवर्द्धनजी में उनका स्थान है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निवन्धेऽष्टादशः प्रदीपः ॥ १८ ॥

अथैकोनविंशः प्रदीपः ।

चतुर्भुजराजा का दृष्टान्त ।

मिथ्याभक्तपरीक्षा हि जायते राजसन्निधौ ॥ यथा चतुर्भुजगृहाच्चारणस्य विसर्जनम् ॥ १ ॥

मिथ्या वेषधारी भक्त की परीक्षा, प्रतापवान् राजा के पास होजाती है। जैसे राजा चतुर्भुज के घर से मिथ्या वेषधारी (भाट) की विदाई भई (दृष्टान्त) राजा (चतुर्भुजजी) करौली के ऐसे भगवद्भक्त साधुसेवी हुये कि उनकी उपमा दूसरे राजा से नहीं दी जाती। भक्तों के आने का वृत्तान्त सुनकर इसप्रकार लेने को आगे जाते थे कि जैसे सेवक अपने स्वामी की सेवा के लिये जाता है घर लाकर राजा रानी अपने हाथों से चरण धोते पूजा करते नगर के चारों ओर चार २ कोस पर चौकी थी कि जो कोई मालाधारी आवै उसका समाचार भिजवावे एक कोई दूसरा राजा यह वृत्तान्त वेष सेवा का सुनकर कहने लगा कि योग्य अयोग्य की पहिचान नहीं तो भक्ति की बड़ाई क्या है उसके पण्डित ने उत्तर दिया कि मन में पहिंचान लेते होंगे इसी बात पर राजा ने अपने हरिविमुख (भाट) को माला तिलक पहिराय हरिदासजी बनाकर परीक्षा को राजा के पास भेजा वह भाट गया द्वारपाल ने कुछ रोक टोक न की जब सामने आया तो राजा ने सादे स्वभाव से आव बैठकी भगवत्प्रसाद जिमाया भगवत् चरचा छेड़ी भाट (हूं हां) करता रहा राजा ने पहिंचान लिया विदाई दी तो एक डिबिया में (फूटी कौड़ी) रख उसपर बहुत अच्छे २ वस्त्र लपेटकर उसपर मुहर छाप लगा करके देदी भाट अपने राजा के पास आया तो सब वृत्तान्त भक्तिभाव का वर्णन किया और विदाई की डिबिया राजा के आगे धरी। राजा ने डिबिया खोल फूटी कौड़ी देखी भेद न पाया तो उसी पण्डित ने समझाया कि ऊपर वेष ऐसा और भीतर फूटी कौड़ी (भाट)

है भक्त नहीं राजा चतुर्भुज का यही अभिप्राय है राजा सुनकर बड़ा लज्जित हुआ और राजा चतुर्भुजजी को धन्य २ कहने लगा भक्ति अङ्गीकार करी साधु सेवा करनेलगा निदान आप भी हरिभक्तों में श्रेष्ठ भया इस से हरिभक्ति सत्संग ये पारस है सबको श्रेष्ठ करता है॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे एकोनविंशः प्रदीपः॥ १६॥

अथ विंशः प्रदीप।

लालाचार्य्य भक्त का दृष्टान्त।

भक्तवर्य्ये न जात्यादिभेदः कार्य्यो मनीषिभिः॥ विष्णुभक्तो ह्यानयित्वा लालाचार्य्येण संस्कृतः॥ १॥

श्रेष्ठ विष्णुभक्त में बुद्धिमानों को जाति आदि का भेद नहीं करना चाहिये। जैसे मरे भये एक विष्णुभक्त को (लालाचार्य्यजी) ने लाकर उसका संस्कार किया॥ (लालाचार्य्य) रामानुज (स्वामी) के जमात में ऐसे भगवद्भक्त हुये कि जिनकी कथा सुनकर निश्चय भगवत् के चरणों में प्रीति होती है। गुरु ने आज्ञा दी कि भगवद्भक्तों में जितनी प्रीतिहो वह अच्छा पर उनको निज बड़े भाई से कम न समझने। सो ये उस आज्ञा के अनुकूल वर्तते रहे एकसमय कोई माला-तिलकधारी (वैष्णव) को नदी में बहते जाते से निकालकर अपने घर लाये और विमान बनाकर भगवत्कीर्त्तन करते नदी पर जाय दाह दिया फिर महोत्सव में नातेदारो को निमन्त्रण भेजा उन्हों ने नहीं माना कहा कि यह न जानें कौन जाति का मृतक रहा। लालाचार्य्य सुनकर चिन्ता करनेलगे और निज गुरु के पास गये दण्डवत् कर सब वृत्तान्त निवेदन किया तब स्वामीजी ने कहा कि वे लोग, भगवत्प्रसाद की महिमा को नहीं जानते तुम चिन्ता मत करो भोजन की

ने कहा, परमधाम को गये। इस लड़के को किसी के भी वचन पर विश्वास न हुआ और कहने लगा कि मेरे गुरु का वचन कभी झूठा नहीं पर मेरे ढूंढ़ने का ही आलस्य है तब तो खाना सोना सब छोड़कर बेचैनी कर ढूंढ़ने लगा जब कुछ दिन बीता न खाया न सोया न बैठा जहां तहां फिरताही रहा तो करुणाकर दीनवत्सल प्रकट हुये और कहा कि जिसको तू ढूंढ़ता फिरता है वह मैं ही हूं यह लड़का रूपमाधुरी और छवि अनूप देखकर चरणों में गिर पड़ा और विनय किया कि कुछ सन्देह नहीं है आप वेही हैं कि जिनको मैं ढूंढ़ता था पर मैंने सुना था कि आप चोर और छलिया भी हैं जब तक मेरे गुरुजी आप को पहिंचान कर निश्चय नहीं कर देंगे तब तक मैं एक नहीं मानूंगा। भक्तवत्सल महाराज उसके प्रेम और विश्वास के वश होकरके कुछ न कह सके साथ होलिये और उस लड़के ने छल और कपट के भय से इनका हाथ पकड़ लिया बस तुरन्त जहां उसके गुरुजी थे तहां आय पहुँचे आधीरात थी गुरुजी अटायशयन में थे उस लड़के ने पुकारा कि महाराज! ब्रजसुन्दर मनमोहन महाराज को लाया हूं आप पहिंचान लीजियेगा दो चार बेर के पुकारने में गुरुजी को सुन पड़ा तो उसके वचन को मिथ्या समझा पर उजेरा मुख झमक शोभाधाम की जो विलक्षण चांदनी सी छिटक रही थी झरोखे की राह से जो देखा तो घबराय उठे और यह चरित्र देखकर गुरुजी पुकारे अरे तू किस ढिठाई से हाथ पकड़े है ये नन्दनन्दन महाराज पूर्णब्रह्म हैं मैं भी आता हूं यह कहते गुरुजी तो आतेही रहे और आप उस लड़के सहित अन्तर्धान होगये गुरुजी जो आये तो कुछ न देखा तब तो अपने चेले पर विश्वास कर हरिशरण हुये। गुरु में विश्वास करना चाहिये ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनिबन्धे द्वाविंशः प्रदीपः ॥ २२ ॥

अथ त्रयोविंशः प्रदीपः।

पादपद्माचार्य्यजी का दृष्टान्त।

गुरुभक्तिर्दृढा भक्तकार्य्यं संसाधयेद् ध्रुवम्॥ गङ्गाप द्मोद्भवात्पादपद्माचार्य्याभिधोऽभवत्॥ १॥

दृढ़ जो गुरुभक्ति है, वह कार्य्य को अवश्यही सिद्ध करती है। जैसे भक्ति से गङ्गाजी में कमल होने से भक्त का (पादपद्माचार्य्य) नाम भया (दृष्टान्त) "पादपद्माचार्य्यजी" परम भगवद्भक्त गुरुनिष्ठ गङ्गाजी के तटपर गुरुसेवा में रहाकरते गुरु जी कहीं जानेलगे तो इसे विकल हुआ देख आज्ञादे चले कि गङ्गाजी को हमारा रूप समझना वह गङ्गाजी का पूजन करता पर चरण गङ्गाजी में नहीं धरता कूप जल से स्नान करलेता और साधुलोग इस बात से अप्रसन्न रहते थे जब गुरुजी आये तो सबों ने निन्दा की गुरुजी इसके मन की जानगये कि मर्य्यादा के भयसे चरण गङ्गा में नहीं देता है तब सबका मोह दूर करने को एक दिन गुरुजी ने गङ्गा में स्नान करते इससे अँगौछा मांगा तो इसको इधर तो गुरुरूप गङ्गाजी में चरण पाप उधर गुरुआज्ञा न मानना अयोग्य इसी चिन्ता में शोचता था कि तभी कमल गङ्गाजी में प्रकट हुये उन्हीं पर चरण धरते जाकर अँगौछा दिया गुरु ने प्रभाव देख छाती से लगाया और तभी से (पादपद्माचार्य्य) नाम धरा॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निवन्धे त्रयोविंशः प्रदीपः॥ २३॥

अथ चतुर्विंशः प्रदीपः।

घाटम चोर का दृष्टान्त।

निर्भयश्चौरभक्तोऽपि जायते हरिरक्षितः॥ घाटमो घोटकं हृत्वा गतः केनापि नो धृतः॥ १॥

विष्णुभक्त, चोर भी होवे पर वह भगवत्करके रक्षित किया

निर्भय हो जाता है जैसे घाटमजी प्रत्यक्ष घुड़शाल में से घोड़ा चुराय लाये उन्हें कोई भी न रोकसका ॥ (घाटम) चोर ज़ाति के मीना रहनेवाले गांव (घोड़ी) राज जयपुर के थे। गुरुभक्ति और वचन के भय से उत्तम पद को पहुँचे और कृतार्थ होगये ठगी का रोज़गार करते थे कुछ मन में विवेक आया किसी हरिभक्त के पास गये । उसने शिक्षादी चोर ठगी छोड़दे । घाटम ने कहा मेरी जीविकाही यह है हरिभक्त ने कहा इसके बदले चारबात अङ्गीकार करो १ सत्यबोलना २ साधुसेवा ३ भगवत् को अर्पण करके खाना ४ भगवत् की आरती में जामिलना । घाटम ने सुनते ही चारों बातें अङ्गीकार करीं तब घाटम को हरिभक्त ने मन्त्रोपदेशकरके चेला किया 'घाटम' गुरु की चारों बातों पर अभ्यास करते रहे एक दिन घर में कुछ न था साधु आगये तो खलिहान से किसी के गेहूँ चुरालाये साधुसेवा की पर डरते रहे कि ऐसा न हो कहीं से पता लगाकर गेहूँवाला आय पकड़लेवे जिससे साधुसेवा में विघ्न होजावे । तौ आंधी मेह इस रीति से आया कि पता पांव का सब मिट गया सुचित्त होकर सेवा में लगे । एकसमय गुरु ने भगवत् उत्साह में घाटम को बुलाया उससमय साधुसेवा करने को कुछ पास न था चिन्ताभई तो राजभवन के आगे आय भीतर धसे डेवढ़ीदारों ने पूछा कौन है तो कहा कि चोर हूं (घाटम) मेरा नाम है वे लोग पहिराव उत्तम देखकर जानगये कि हँसी से अपने को चोर बताता है तब कुछ न बोले तो घुड़शाल में जाय एक उत्तम घोड़ा मुश्की रंग का ले सवार हो चले द्वारपर रोक हुई तो फिर उसीप्रकार सच २ कहके चले आये गुरु की ओर चले तो सन्ध्यासमय किसी ठाकुरद्वारे में आरती होती थी वहां जाय भजन करनेलगे । राजा के यहां उस घोड़े की ढूँढ़पड़ी तो कोतवाल बहुत से सिपाहियों सहित घोड़े के पांव देख २ पता लगाता उसी मन्दिर के द्वारपर पहुँचा । भक्त-

वत्सल महाराज भगवत् को चिन्ता भई तो घोड़ा नुक़रेरंग का बना दिया। घाटमें जब सवार होकर चले तब कोतवाल देख कर लज्जित होगया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे चतुर्विंशः प्रदीपः ॥ २४ ॥

अथ पञ्चविंशः प्रदीपः।

चतुरदासजी का दृष्टान्त।

गुरुसेवाकल्पवल्लया किमलभ्यम्मनीषिणाम् ॥ यथा चतुरदासाय दुग्धम्भोज्ये ददौ हरिः ॥ १ ॥

गुरुसेवारूप कल्पवृक्षवल्ली से मनुष्यों को क्या नहीं प्राप्त होता है। जैसे (चतुरदासजी) को भोजन करने के लिये हरि ने दुग्ध दिया स्वामी (चतुरदासजी) परमभक्त और वैराग्यवान् हुये। भगवत्भजन में मग्नरहकर सदा त्रिसरंग में रँगे रहते थे। मथुरा-व्रजमण्डल में फिरतेहुये ठौर २ सत्संग के सुख को लेते रहे गुरुभक्त ऐसे हुये कि कोई न होगा उनके गुरु सदा घरपर आयाकरते तो ये भगवत्रूप जानकर सेवा पूजा किया करते स्त्री स्वामीजी की नवयौवना रूपवती थी उसे गुरुसेवा में लगा देते और कह दिया कि जो आज्ञा कहैं सो करना और आप ऐसे गुरुवचननिष्ठ थे कि तनकभेद गुरु में नहीं लाये निदान धन, स्त्री आदि सब सामग्री गुरुजी की भेंटकरके दण्डवत्कर आज्ञा पाकरके प्रभात की मङ्गल आरती (गोविन्ददेवजी) के दर्शन किया करते थे। फिर शृङ्गार आरती (केशवदेवजी की) और (राज्यभोग) नन्दगांव का देखकर गोवर्द्धनजी में राधाकुण्डपर होतेहुये (श्रीवृन्दावन) में आते। एकबेर नन्द-गांव में मानसरोवर पर बिन अन्न जल रहे सो नन्दगांव के स्वामी (नन्दबाबा) हैं इससे नन्दजी के सुकुमार भक्तवत्सल महाराज, निज मेहमान को बिना अन्न जल नहीं देखसके तो

वारहवर्ष के लड़के के स्वरूप से कटोरे में दूध लेकर स्वामी को दिया तव स्वामी चतुरदास ने उस अनोखेरूप दर्शन के लालच से फिर जल मांगा जव वहुत देरवीते वह चञ्चल लड़का न आया तो बहुत बेचैन और विकल हुये और स्वप्न में आज्ञा दी कि पानी का कुछ प्रयोजन नहीं तुमको दूध ही मिलता रहैगा। तव स्वामीजी ने विनय किया कि दुग्ध व्रजवासियों को वड़ा प्यारा है जिसके लिये महारानी (यशोदाजी) ने पुत्र (श्रीकृष्णचन्द्रजी) को भी कुछ न समझा वे कैसेदेंगे फिर आज्ञाभई कि अवश्यही मिलता रहैगा सो स्वामी (चतुरदासजी) को दुग्ध सव कोई देनेलगे और अवतक इनके वंश के चेले जहां चहैं तहांही व्रज में से दूध लेलेते हैं सच है गुरुसेवा से कौन फल नहीं मिलता है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
प्रेमनिवन्धे पञ्चविंशः प्रदीपः ॥ २५ ॥

अथ षड्विंशः प्रदीपः ।

किसी द्रव्यार्थी का दृष्टान्त ।

अन्यदैवतभक्तेऽपि दृढे विष्णुः प्रसीदति ॥ दुर्गाभोज्यार्पणायोऽसौ नासारुद्धोऽपि चाऽतुषत् ॥ १ ॥

और देवता के भी दृढ़भक्त पर भगवान् प्रसन्न होते हैं जैसे दुर्गाजी के भोग लगाने में आप नासिका रुकजाने से भी प्रसन्नही भये किसी द्रव्यार्थी को भगवत् के पूजन से धन न मिला तो किसी के उपदेश से भगवत् की मूर्त्ति को ताख में रखकर (दुर्गामूर्त्ति) का पूजन करनेलगा एकदिन यह विचार कि जो धूप मैं (श्रीदुर्गाजी) को देता हूं वह ऐसा न हो इस भगवत्मूर्त्ति को प्राप्त होजाती हो इस हेतु भगवत्मूर्त्ति के नाक में रुई भरनेलगा तो उसी क्षण भगवान् प्रसन्न हुये और बोले कि जो चाहता होवे सो मांगो तो वह वोला कि पूजा से

वहीं न प्रसन्नभये और इस ढिठाई से बहुतही रीझे इसका क्या कारण है। बोले कि जब जो तू पूजन करता था तब तो पत्थर की मूर्त्ति जाना करता और इससमय सब ओर से मन को खैंचकर भगवत्मूर्त्ति को पूर्णब्रह्म सच्चिदानन्दघन जाना इसी से अब प्रसन्न हुये एक बाई की कथा है कि गुजंरात देश में भगवत्मूर्त्ति की पूजा वात्सल्यभाव से करती थी। जहां रहती तिस गांव में भेड़ियों की बड़ी प्रबलता भई कई लड़कों को उठालेगये यह बाई हाथ में मूसल ले सारीरात जगनेलगी बहुतदिन यही दशा रही दिन को भोग शृङ्गार में रहती और रात को भेड़िये की रखवाली में तो भगवत् को बड़ी करुणा भई तब तो साक्षात् प्रकटहुये बाई ने जो घुंघुरों की झनझनाहट सुनी तो मूसल हाथ में लेकर दौड़ी तो देखा कि कोई लड़का श्यामसुन्दर मोहनीरूप है पूछा कि तू कौन है तो बोले कि मैं वहही परमात्मा हूं जिसकी मूर्त्ति को तू बालक समझकर पूजाकरती है जो अब चाहना हो सो मांगलेव। तब बाई प्रसन्न होकर बोली कि जो तू परमात्मा है तो यही वरदान देव कि इस मेरे लड़के को भेड़िया नहीं लेजासके॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे षड्विंशः प्रदीपः॥ २६॥

अथ सप्तविंशः प्रदीपः।

अल्हजी का दृष्टान्त।

भक्तस्य भोज्यवेलायां भोज्यं साधयते हरिः॥ वृक्षं सन्नामयामास ह्यल्हस्याम्रं यथेच्छतः॥ १॥

भक्त के भोजनसमय में भगवान् उस के लिये भोजन सिद्ध करते हैं जैसे आम खाने की इच्छा करते अल्हजी के लिये विष्णुजी ने आम के वृक्ष को नीचा झुका दिया (दृष्टान्त) अल्हजी परम भगवद्भक्त हुये यात्रा में कहीं एकान्त बाग में उतरे सेवा पूजा किया आम के नीचे बागवान से आम मांगा

तो वह बोला आम खाये विन रहा नहीं जाता तो तुमहीं तोड़ लेव । तब तो तुरन्तही आम की डाली झुकगई कि आम सिंहासनपर आभिड़े भगवत् को भोगलगाया । उस बागवान ने जाकर यह चरित्र राजा से कहा राजा दौड़ाआया चरणों में गिरके विनय किया कि आपके चरणों की रज से मैं, ये बाग और सब देशभर पवित्र हुआ । अब कुछ कृपा विशेष करना चाहिये । अल्हजी ने दयाकरके उसको भगवत्शरण और भक्त करदिया । भगवद्भक्ति और भक्तों का ऐसा प्रताप है कि शिव ब्रह्मादिक भी जिनके चरणों में मस्तक नवाते फिर आम की डाली का झुकना कौन बड़ीबात है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
प्रेमनिबन्धे सप्तविंशः प्रदीपः ॥ २७ ॥

अथाष्टाविंशः प्रदीपः ।

पृथ्वीराज का दृष्टान्त ।

मृत्युं बोधयते विष्णुर्भक्तं स्वक्षेत्रवाञ्छकम् ॥ पृथ्वीराजं यथा मृत्युं प्रदेशेऽपि ह्यबोधयत ॥ १ ॥

जो भक्त भगवत् के क्षेत्र में निज मृत्यु चाहता उसे भगवान् आप तिसकी मृत्यु बतादेते हैं जैसे पृथ्वीराज को, परदेश में तिसकी मृत्यु बतादी (दृष्टान्त) पृथ्वीराज, राजा बीकानेर का बेटा कल्याणसिंह का भगवद्भक्त हुये । कवित्त दोहा भाषा में श्लोक बनाकर अतिप्रेम से कीर्त्तन कियाकरते पिंगल आदि के बड़े ज्ञाता और काव्य उनका बड़ा ललित था भगवत्सेवा में बड़े निष्ठ थे और विषयेन्द्रिय सुख के त्यागी ऐसे थे कि जन्मभर कभी स्त्री की ओर न देखा इन्हों ने मथुराजी में निजदेहत्यागने की प्रतिज्ञा की थी इस बात को सुन बादशाह ने द्वेषकरके उनको काबुल की लड़ाई पर तैनातकर दिया । राजा को इस यात्रा में एक दिन कल्पसमान बीतता था जब दिन उनके प्रण का निकट आया तो भगवत् ने राजा

ो बिताये दिया। तुर्त सांड़िनी पर सवार होकर मथुराजी
आये प्रण पूर्ण हुआ। प्राणत्याग के परमधाम को पहुँचे
२ ध्वनि संसार में फैली ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धेऽष्टाविंशः प्रदीपः॥ २८ ॥

अथैकोनत्रिंशः प्रदीपः।

धनाभक्त का दृष्टान्त।

अबीजोप्तामपि कृषिं प्रीतो विष्णुस्समापयेत्॥ धना भक्तकृतं सस्यं निर्बीजं समवर्द्धयत्॥ १॥

प्रसन्न भये भगवान् निज भक्त के विन बीज बोये भी खेत को तैयार कर देते हैं। जैसे धनाभक्त के निर्बीज खेत को आप बधाकर सम्पूर्ण तैयार करदिया (दृष्टान्त) 'धना' जाति के जाट परमभक्त हुये। उनके भक्तहोने का वृत्तान्त यह है कि जब लड़के थे तब उनके घर एक ब्राह्मण भक्त आया करता था वह सेवा पूजा भगवत् की किया करता था। धनाभक्त ने उससे कहा कि मूर्त्ति हम को भी देओ जैसी तुम सेवा पूजा करते हो तैसी हम भी करेंगे। ब्राह्मण ने न दी जब इसने हठ किया तो उसने एक छोटा सा कालापत्थर दे दिया। धनाजी ने बड़ी प्रीति से उसे शिर चढ़ाय नेत्रों से लगाया पूजा आरम्भ की पहिले आप स्नानकर मूर्त्ति को भी स्नान कराया और तालाव की मिट्टी का तिलक लगाया और तुलसीदल की ठौर हरी पत्ती चढ़ाई फिर बड़ी प्रीति और हर्ष से साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करी और जब उनकी माता रोटी लाई तो भगवत् के आगे रखकर आंखें बन्द करके बैठ गये बड़ी वेर तक राह देखते रहे कि भगवत् भोग लगावें पर जब न खाई तो दुःखित उदास होकर वार २ हाथ जोड़े फिर हठ करके बहुत ही प्रार्थना की न माने तब रोटी तालाव में डालदी आप वे अन्नजल रह

गये कई दिन इसी प्रकार बीते और भूख प्यास से विह्वल होकर मरने के निकट पहुँचे तो भगवत् को द्रव हुआ प्रकट होकर रोटी खाने लगे जब आधा भोजन किया तो धनाजी बोले क्या सब तौंहीं खाय लेगा कुछ मुझ को भी देगा कि नहीं भगवत् ने हँसकर बची रोटी धनाजी को दी इसीप्रकार नित्य की व्यवस्था होगई । धनाजी ने जो परम मनोहररूप भगवत् का देखा तो ऐसी प्रीति होगई कि एक क्षण उस रूप को प्रकट वा ध्यान में नहीं देखते तो बेचैन होजाते भगवत् ने देखा कि जिसकी रोटी बेपरिश्रम खाते हैं उसकी कुछ टहल भी करनी चाहिये सो धना भक्त से पूछकर गऊ चराय लाया करते एक बार वही ब्राह्मण आया धना को सेवा पूजा कुछ नहीं करता देखके कारण पूछा धनाजी ने कहा महाराज ! भली पूजा देगये थे कितनेही दिनों तक मुझे भूखों मारा पर अब कठिनाई से ऐसा सीधा हुआ है कि गाय तक चराने लग गया है ब्राह्मण चकित हो कहने लगा कि हमें भी दिखाव । धनाजी ने ब्राह्मण को भी दर्शन कराये । वह भी कृतार्थ होगया फिर धनाभक्तजी भगवत् की आज्ञा से काशीजी में जाय (रामानन्दजी) से मन्त्र उपदेश लेकर गुरु की आज्ञा के अनुसार घर में आकरके साधु सेवा में लीन रहे । एक दिन खेत बोवने के लिये गेहूं लिये जाते थे तभी साधु आगये तो वे गेहूं साधु सेवा में लगाय दिये पर माता पिता के भय से खेत को जैसा बोने पर बनाकर छोड़ते हैं वैसाही करके छोड़ दिया भगवत् ने विचार के ऐसा अच्छा उस खेत को जमाया कि सब लोग बड़ाई करने लगे धनाजी ने यह हँसी ठट्ठा समझा । एक बेर खेत की ओर गये तो कहना सबका सत्य देखा तो भगवत् के प्रेम में मग्न भये और भी अधिक भगवत् की सेवा करने लगे ॥

इति श्रीसुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निवन्धे एकोनत्रिंशः प्रदीपः ॥ २९ ॥

अथ त्रिंशः प्रदीपः।

दो लड़कियों का दृष्टान्त।

मूर्त्तिपूजकभक्तस्य मूर्त्तेर्हानौ महाक्षतिः॥ यथा द्वयोः कन्यकयोर्मूर्त्तिहानौ महाहतिः॥ १॥

मूर्त्ति पूजनेवाले भक्त की मूर्त्ति न मिलने से उसकी महा हानि है जैसे दो लड़कियों की मूर्त्ति न मिलने से उनकी मृत्यु होने निकट आई। एक लड़की किसी जमींदार की, दूसरी राजा की भगवत् के प्रभाव से ऐसी पदवी को पहुँची कि जिन की कथा अबतक भक्तों के मुख से निकलती है। वृत्तान्त यह है कि एक बेर राजा के गुरु आये थे उनसे इन दोनों लड़कियों ने भगवत् मूर्त्ति मांगी। उन्हों ने इनका बालपन देख एक २ पत्थर का टुकड़ा देकर (शिलिपली) बतादिया और इतना उपदेश करदिया कि मन लगाकर सेवा करती रहो संसार-सागर से पार उतर जाओगी। वे दोनों बड़भागिनी, अत्यन्त प्रेम और विश्वास से पूजा करने लगीं तो भगवत् का रूप उनके हृदय में प्रकाशित हुआ इतनी कथा दोनों की इकट्ठी वर्णन हुई अब अलग २ है कि जमींदार की लड़की का चचा अपने भाई से अर्थात् उस लड़की के बाप से शत्रुता रखता था, वह इसपर चढआया गांव को लूट लेगया उस लूटमें उस लड़की की सेवा मूर्त्ति भी गई तो वह लड़की अत्यन्त विकल भई सारासंसार अँधियाला होगया प्राणों को पीड़ा भई जब खाना, पीना, सोना सब छूटगया तब सब लोगों के कहने से वह लड़की चचा के पास गई और मूर्त्ति मांगी वह बोला पहिं-चान कर लेलेव तब किसी के बहकाने से उसने फिर यह कहा कि जो तेरे से ठाकुर को प्रीति होगी तो आप तेरे साथ होले-वेंगे तब तो वह लड़की दीन हो बड़ेही कष्ट से पुकारी "हे शिलिपली जी महाराज! मुझ दासी को क्यों छोड़ आये हो"

भगवत् उस शब्द को सुनतेही तुर्तही उस बड़भागिनी की छाती से आयलगे और उसे प्राणदान दिया तब दोनों गांव वालों को उसकी भक्ति का विश्वास होगया और वह राजा की लड़की भगवत् के प्रेम में ऐसी मग्नभई कि सदा आनन्दित रहती थी पर उसका विवाह भगवत् विमुख पुरुष के साथ होगया था वह लेजाने को आया तो उसे बड़ी चिन्ता सेवा में हुई निदान जब माता ने विदा करदिया तो अपने प्राणप्रियतम को भी उसने साथ बैठाय लिये और लौंड़ी बांदी कोई भी साथ न ली राह में वह विमुख पास आया और बोलने लगा तो वह कुछ न बोली वह बोला तुम क्यों नहीं बोलती हो तुमको क्या दर्द है जिसका उपाय किया जाय तब उस लड़की ने उत्तर दिया कि तुम को बोलने की चाहना हो तो भगवद्भक्ति अङ्गीकार करो नहीं तो हम से स्पर्श न करो यह सुन उसको क्रोधआया तो उसने भगवत्पिटारी को नदी में डालदी तब तो वह लड़की अपने स्वामी के वियोग से अति व्याकुल भई उसे अन्न जल विष होगया । फिर उस विमुख ने उसके उपाय प्रसन्न करने के अनेकही रचे पर कुछ काम न आया जब अपने घर आया तो सब वृत्तान्त राह का जनाय दिया । स्त्रियों ने बहुत भांति से समझाया और सासु अपने हाथ से भोजन करवानेलगी परन्तु उस बड़भागिनी का मन भगवत्चरणों में ऐसा दृढ़ लगा था किसी की कुछ न सुनी और न कुछ खाया पिया जब सब उपाय करहारे तब सब उसी नदी पर आये जहां पिटारी को पानी में डाल दिया था और वह बड़भागिनी करुणा से भरीहुई रुदन करके पुकारी "हे स्वामी शिलिपली महाराज ! कहां हो मुझ दासी से क्यों रूठगये हो जो आपको बहुतही नहाना था तो मैं गङ्गाजी में नहवाती अब कृपा करो" तब तो वह करुणाभरा शब्द सुनतेही अपनी प्राणप्रिया को दर्शन दे भगवत् ने प्राणदान दिया सब

को भक्ति का विश्वास होगया वह वहां से निज प्राणप्रिय मूर्त्ति को लेकर घर आई सबके सब हरिभक्त भये और २ लोग जो साथ में थे सब हरिशरण हुये इसी रीति सब ग्राम भर भक्त होगया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां
प्रेमनिबन्धे त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३० ॥

अथैकत्रिंशः प्रदीपः ।

नामदेव भक्त का दृष्टान्त ।

नामदेवो महाभक्तो भक्त्या सन्तोषयन् हरिम् ॥ न किञ्चिद्भयमापन्नो यवनेन परीक्षितः ॥ १ ॥

महान् भगवद्भक्त (नामदेवजी) भक्ति से भगवत् को सन्तुष्ट करते, यवन–बादशाह करके परीक्षा भी किये गये पर कुछ भी भय को नहीं प्राप्त भये (दृष्टान्त) नामदेव, चेले (ज्ञानदेवजी) के विष्णुस्वामी सम्प्रदाय में भक्ति के प्रकाशक सूर्यसमान हुये बालपन में निज भक्तिभाव से ईश्वर को वश मे कर लिया भगवत् के अंश से उनका जन्म है वृत्तान्त यह है कि (पण्डरपुर में वामदेव) नामी जातिका छीपी भगवद्भक्त था उसकी लड़की बालविधवा होगई जब बारहवर्ष की हुई तो वामदेव ने भगवत् सेवा पूजा की शिक्षा देकर कहा कि जो हृदय की प्रीति होगी तो तेरा मनोरथ भगवत् सब पूरा करदेंगे उस लड़की ने उसी दिन से अतिभक्ति और विश्वास से ऐसी पूजा अङ्गीकार करी कि थोड़ेही दिन में भगवत् प्रसन्न होगये यहांतक कि जवानी के आने से उसको जो काम की चाहना हुई तो वह भी भगवत् ने पूर्ण करी और उस लड़की के गर्भ रहा तब सारे ससार और भाइयों मे यह बात विख्यात हुई और लड़की से पूछा गया कि यह तेरी क्या अभाग्यता है उसने पिता से कहा कि तुम कहचुके थे सब चाहना तेरी भगवत् ने

प्राप्त होगी सो कुछ हुआ वह भगवत् से हुआ। वामदेव इस सुखसमाचार से ऐसे आनन्दित हुये कि शरीर में न समाये और जब लड़का उत्पन्न हुआ तो सब धन सम्पत्ति उसके जन्मोत्सव में लगादी और (नामदेव) नाम धरा प्राणों से प्रिय जान पालना करने लगे और अयोग्यों के शङ्का सन्देह दूर करने के लिये पुराणों की कथा आदि से अलग भगवत् का वचन स्मरण हो आया कि भागवत के द्वितीय स्कन्ध में लिखा है कि निष्काम वा सकाम अथवा मुक्ति के हेतु मुझको दृढ़भाव से जो सेवते हैं तो मैं आप उनकी सब कामना पूर्ण करता हूं और एकादशस्कन्ध में लिखा है कि मैं अपने भक्त को मुक्तिपर्यन्त देता हूं और संसारी कामना की तो कितनी बात है कथा संक्षेप। नामदेवजी, जन्म से ही प्रेमी भगवत् के आराधक हुये दो चार वर्ष के हुये तो खेल भी भगवत् के ही हेतु खेलते अर्थात् भगवत् की मूर्त्ति बनाय वस्त्र आभूषण पहिराय उनकी नाना प्रकार करके सेवा पूजा आरती किया करता और वामदेवजी से कहा करते कि यह सेवा पूजा हम को देदेओ वे बालक जान इसे बहाना कर देते एक दिन बोले कि हम किसी गांव जायँगे तू सेवा पूजा कीजियो जो भगवत् ने तुम्हारा भोगलगाना अङ्गीकार कर लिया तो सेवा पूजा भी तुम को सौंप देंगे नामदेवजी बहुत प्रसन्न हुये और दिन गिनने लगे नानाजी से नित्य गांव जाने का दिन पूछलेते जब वह दिन आया तो उनका नाना सब रीति सेवा पूजा की समझाकर चला गया तो नामदेवजी को सन्ध्याही से प्रेम हुआ और जब गऊ के आने में विलम्ब हुआ तो आप वन में जाकर ले आये फिर माता ने शिक्षा दी कि दूध पिलाने का समय हो आया इस हेतु दुग्ध बहुत शीघ्रता से उष्ण किया और सुगन्ध मिश्री मिलाकर बड़ेही प्रेम उत्साह से कटोरा भगवत् के आगे लेगये पर मन में यही डर रहा कि मुझ से कुछ अपराध न होगया हो तो भगवत् के सामने हाथ जोड़

कर बड़ी दीनताई से विनय किया कि हे महराज ! यह दूध है मुझे अपना दास जानके पान कीजिये और मुझे आनन्द दीजिये दूध न पिया देखके नामदेवजी लड़के थे तो यही बात जानते थे कि भगवत् भी सब की तरह दूध पीते हैं इसहेतु बहुत उदास हुये और सामने से अलग होकर शोच करने लगे जब निराश हुये तो रोने लगे और कहा कि, हे महाराज ! अच्छे प्रकार गरम किया मिश्री बहुत डाली है आप पीजिये । तब भी भगवत् ने न पिया तो रोले २ भूखे प्यासे पड़रहे । इसीप्रकार दो दिन बीते तीसरे दिन उसको नाना घर आनेवालाही था तो यह भी विकलता भई । जो दूध न पिया तो सेवा मुझ को न मिलेगी इसहेतु और दूध बनाकर लेगये कईबार विनय किया नहींही माने तब छुरी निकाल अपना गला काटनेपर तैयार हुये । भगवत् ने जो यह दृढ़ विश्वास देखा तो एक हाथ से उनका हाथ पकड़ लिया और दूसरे हाथ से कटोरा दूध का उठाकर पीनेलगे जब कटोरे में दूध थोड़ा रहा तो नामदेवजी बोले मैं तीनदिन से भूखा हूं मुझको भी तो कुछ प्रसादी छोड़दीजिये तब तो भगवत् हंसे और निज अधरामृतयुत महाप्रसाद दिया । भोरही नामदेवजी का नाना जब आया और सब वृत्तान्त सुना तो बहुत ही आनन्द में मग्न हुये और कहा कि, हमको भी तो दिखलाव नामदेवजी उसी प्रकार दूध का कटोरा सँवारकर लेगये विनय किया कुछ विलम्ब हुआ तो वही चाकू दिखलाया कहा कि, मेरे पास है तो भगवत् ने तुरन्तही पान किया वाह २ भक्तवत्सलता भगवत् तो भक्ति के ही वश हैंगे । तब तो यह बात विख्यात होगई बादशाह ने इन से बुलाकर कहा कि तुम को ईश्वर मिला है सो हमें भी दिखलाओ या अपनी कुछ सिद्धाई बताओ नामदेवजी बोले हम में सिद्धाई होती तो छीपी की आजीविका क्यों करते जो कोई साधु आता है तो आधसेर आटा बांटखाते हैं उसी के प्रभाव

से आपने बुला लिया है तब बादशाह बोला हम तुम्हारी कपट की बातें नहीं सुनेंगे यह गऊ मरी है इसे जिलाओ नहीं तुम को क़त्ल करेंगे तब तो नामदेवजी ने विनय से एक विष्णुपद बनाकर भगवत् की भेंट किया तिसकी पहिली तुक यह है (बिनती सुन जगदीश हमारी) तो तुरन्त इस विष्णुपद के कहतेही गऊ जीउठी और बादशाह, चरणों में गिरा और कहा कि द्रव्य, गांव, परगना जो मांगना हो सो कहो नामदेव जी बोले हमें कुछ नही चाहिये विदामात्र से प्रयोजन है तब तो बादशाह ने एक पलॅग जड़ाऊ सोने का इनकी भेंट किया उसे लेकर चले और बादशाह के नौकर लोग जो साथ थे उन सबों को विदा किया और राह में एक नदी आई उसमें पलॅग को डालदिया बादशाह ने सुनके वही पलँग मँगवाया इस बहाने कि इसी मेल का और बनेगा तब तो नामदेवजी ने उससे भी उत्तम २ पलँग अनगिनत नदी से निकालकर डालदिये। और उनसे कहा कि तुम अपना पहिंचानकर लेजाओ यह बादशाह सुनके और भी चकित हुआ फिर आकर चरणों में गिरा नामदेवजी ने कहा कि फिर किसी साधु को क्लेश मत देना और न कभी हमको बुलाना। एक दिन पण्डरपुर में ठाकुरद्वारे दर्शन करने को गये तो बड़ी भीड़ लोगों की देख कर विचारा कि दर्शन में स्थिरचित्त न करूंगा इससे जूता निकालकर कमर में बांध कर मन्दिर में गये संयोगवश से किनारा जूतेका किसी ने देख लिया तो मारते मन्दिर से बाहर निकाल दियेगये तो मन्दिर के पीछे पड़रहे और भगवत् से विनय किया कि जो दण्ड किया सो तो उचित किया, पर मुझ को आपके सिवाय और कहीं ठिकाना नहीं है और कुछ चाहता नहीं जो दर्शन और लोगों को है तो कान मेरे कीर्तन की ओर हैं यह विनय करके कीर्त्तन करने लगे और एक विष्णुपद व्यङ्ग लिये और अपनी हिनाई को भी गाया। पहिली तुक यह

है (हीन है जाति मेरी यादवराय) भगवत् सुनतेही करुणा से विह्वल हो मन्दिर को जड़ से फेरकर द्वार उसका नामदेव जी की ओर करदिया। यह चरित्र देखकर सब चकित होरहे और महन्त आदिकों ने उनके चरणों में पडकर अपराध क्षमा कराया। अबतक द्वार उस मन्दिर का दक्षिणमुख है। और एकदिन अचानकही नामदेवजी के घर में आग लगगई तो जो वस्तु घर से अलग भी थी सब अग्नि में डालनेलगे और विनय किया कि सब कोही स्वीकार कीजिये। तब भगवत् बहुत हँसे और बोले कि क्या अग्नि में भी मुझको समझता है तब कहा कि यह घर आपका है दूसरा इसे कौन स्पर्श करसक्ता है। तब तो भगवत् ने प्रसन्न होकर आप नवीन छप्पर ऐसा सुन्दर निज भक्त के लिये छायदिया कि जैसा किसी ने भी न देखा था तो लोगों ने पूछा कि छप्पर किसने छाया और क्या मजूरी लेता है तब नामदेवजी बोले कि मजूरी बड़ी कडी है अर्थात् तन मन चाहता है और पहिले मजूरी लेलेता है तब दिखाई देता है। पण्डरपुर में एक साहूकार ने तुलादान किया सारे नगर में सोना बहुत बांटा किसी के कहने से नामदेवजी को भी कहला भेजा नामदेवजी ने कहा हमको द्रव्य से प्रयो-जन नहीं है फिर बुलाकर उसने कहा कि कुछ थोडा सा आप भी ग्रहण कीजिये जो मेरा भला होय तब नामदेवजी ने सोचा कि इसके धन का गर्व दूर होगा तब भला होगा तो एक तुलसीदल पर (रा) अक्षर जो भगवत् का नाम है लिख कर उसके बराबर सोना मांगा पहिले साहूकार राजा बलि की तरह हँसी समझा पीछे घर का और औरों से भी मांग २ कर धरा पर बराबर न तुला तब लज्जित हुआ नामदेवजीने विचारा कि धन का गर्व तो दूरहुआ पर पुण्य इसने किया है तिसका भी गर्व दूर किया चाहिये तो बोले कि जो तूने जन्मभर से पुण्य किया है उसका भी संकल्प करदे क्या जानें बराबर होजाय

तब उसने वह भी संकल्प करदिया तब भी बराबर न तुला तब तो संकुचित हो कहने लगा कि जो है सोही लेजाव तब नामदेवजी बोले अरे अज्ञानी यह धन हमारे कौन काम का है एक भगवद्भक्ति धन चाहिये कि जिसके आधीन सब देवता हैं और सब लोकों का ऐश्वर्य्य जिसके आगे तुच्छ है तब तो वह साहूकार लज्जित हुआ और विश्वासयुक्त हो भगवद्भक्त हो गया, इसके पीछे भगवत् ने एकादशीव्रत की परीक्षा के लिये एक अतिदुर्बल ब्राह्मण के रूप से आकर नामदेवजी से भोजन मांगा उन्हों ने एकादशीव्रत जानकर न दिया ब्राह्मण बोला कि बिन भोजन किये मेरे प्राण निकले जाते हैं शीघ्र भोजन देव तो नामदेवजी बोले आज एकादशीव्रत है न देंगे इसी हठा हठी में झगड़पड़े धूमभई लोग इकट्ठे भये सबने कहा रसोई बनवाकर खवादेव तब भी नामदेवजी न माने तो संध्या होते ही वह ब्राह्मण मरगया लोगों ने कहा नामदेवजी को हत्या भई उनको कुछ भी भय न था चिता में ब्राह्मण की लोथ स मेत बैठगये लोगों से कहा कि आग लगाओ तभी भगवत् हंसे और नामदेवजी के विश्वासपर प्रसन्न हुये सबलोग यह चरित्र देखकर नामदेवजी के चरणों में गिरे । एकबेर नामदेवजी के घर जागरण एकादशी का करते लोगों को तृषा लगी उस बावली में एक बड़ा प्रेत रहता था उसके डर से कोई भी न जायसका नामदेवजी कलश लेकर आधीरात को वहां गये तो वह प्रेत विकराल भयंकर होकर आया तब तो नामदेवजी ने स्वर व ताल से यह पद सुनाया तुक यह है कि (येआये मेरे लम्बकनाथ) टेक (धरती पांव स्वर्ग लों माथो । यो- जन भर भर हाथ) भगवत् प्रसन्न हो उस भूतमेंही प्रकट हुये और वह भूत भी नामदेवजी की कृपा से परमधाम को पहुँचा ॥ नामदेवजी, एकादशी के जागरण में, ऐसे दृढ़भक्त प्रेमी, सर्वभक्तशिरोमणि भये, कि अबतक रीति है, जाग-

ण में पहिले नामदेवजी का पद मङ्गलाचरण में गाते हैं॥
इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे एकत्रिंशः प्रदीपः॥ ३१॥

अथ द्वात्रिंशः प्रदीपः।

सन्तदास भक्त का दृष्टान्त।

सर्वोपरिकृतम्भुक्तं मन्यते भगवान्यथा॥ भोजितस्स
न्तदासेन स्वीयभोगं जहौ हरिः॥ १॥

भगवान् निजभक्त करके लगाये भोग को सर्वोपरि समझते
जैसे सन्तदासजी ने प्रीति से मानसीही भोग लगाया तो
प्र भये हरि ने जगन्नाथ मन्दिर में निज भोग नहीं पाया
दृष्टान्त) "सन्तदासजी" निवाई गांव के विमलानन्द के प्र-
पौत्र वंश में परमभक्त हुये। जिस प्रकार राजा (पृथु) ने निज
ीसमेत भगवत्सेवा करी तैसेही सन्तदासजीने करी अपनी
णी की रचना में भगवद्भक्ति और भक्तों का प्रताप बराबर
सेवा और काव्य उनकी सूरदासजी के बराबर थी भगवत् के
न्म कर्म व) और लीलाचरित्रों को ऐसी मधुर ललित वाणी में
नाया कि जिससे निश्चय मन निर्मल होकर भगवत् चरणों में
गजाता है। एक वेर मनमें आया कि भगवत् का भोग छप्पन
कार काही लगाना चाहिये सो ध्यान करके मानसीभोग ल-
गाया तो (श्रीजगन्नाथरायजी) ने निज सच्चेभक्त का मानसी
भोग अङ्गीकार किया और वहां के पुजारियों का लगाया भोग
धरा रहा वे चिन्ता में हुये तो राजा को आज्ञाहुई कि सन्तदास
जीके घर आज हमारा निमन्त्रण था वहां हम स्वादिष्ट और
मधुरता के लालच से बहुत खागये कि भूख कुछ भी रही नहीं
राजाने सन्तदासजी की भक्ति और प्रताप का विश्वास किया॥
इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे द्वात्रिंशः प्रदीपः॥ ३२॥

महाप्रभु के दर्शन किये एक (गजपति) नाम पुरुषोत्तम पुरी के राजा भगवद्भक्त हुये गोसाईं श्रीकृष्ण चैतन्य अपने गुरु में ऐसा दृढ़ विश्वास रखते थे कि जब दर्शन तिनके कर लेते तब राजकाज किया करते थे एक दिन गुरु गोसाईंजी ने तिनका दर्शन करने को आना रोकलिया तो राजा संन्यासी रूप करके दर्शन करने को इधर उधर फिरनेलगा पर दर्शन नहीं पाया तब एक दिन रथयात्रा को देखा कि रथ के आगे गोसाईंजी नृत्य कररहे हैं तब तो गोसाईंजी ने राजा का प्रेम और दृढ़ विश्वास देखकर निज छाती से लगालिया और प्रेम आनन्द में मग्न हुये ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे चतुस्त्रिंशः प्रदीपः ॥ ३४ ॥

अथ पञ्चत्रिंशः प्रदीपः ।

सदन कसाई भक्त का दृष्टान्त ।

सदनः सदनं हि बभूव हरेस्त्रिजगन्मदनोऽपि च यत्सदने ॥ सदनेन गृहे तुलया ललितस्सदने प्रससाद हरिस्त्वरितम् ॥ १ ॥

(सदन) कसाई भगवत् का स्थान अर्थात् कृपापात्र भया। जिसके घर त्रिभुवननिवासी (श्रीविष्णुजी) जिस सदन करके निज दुकान में तराजू से तौलके लड़ायेगये तो तिस सदन पर भगवान् शीघ्रही प्रसन्न भये (दृष्टान्त) "सदनजी" जाति के कसाई परम वैराग्यवान् भगवद्भक्त हुये जिस प्रकार सोना कसौटी से अवगुणरहित होजाता है इसीप्रकार सदनजी पिछले जन्मों के पाप दूरकरके शुद्ध भये। मांस औरों से मोल लेकर बेचते थे आप हिंसा नहीं करते थे (शालग्राम) मूर्त्ति पास थी उसी से सेर मन जो चाहता था बेचदेते थे। एक वैष्णव

ने देखके मन में कहा कि यह मूर्त्ति ऐसी कुवृत्तिवाले के पास कहां उचित है यह कह सदनजी से मांगी उन्हों ने तुरन्तही देदी तो साधु को स्वप्न में आज्ञा भई कि हमें जहां से लाया तहांहीं पहुँचा दे उसने कहा महाराज! क़साई के घर आप का निवास अयोग्य है तो बोले उससे हमारा बड़ाप्रेम है हम को वह पलरेपर रखता है तो हम भूला भूलते हैं और मोल तोल की जो २ बातचीत करता है वह हमारा कीर्त्तन है तब तो साधु ने जाय सदनजी से सब वृत्तान्त कहकर शालग्रामजी की मूर्त्ति दिया तब सदनजी घरबार छोड़ उस मूर्त्ति को शिरपर रखके जगन्नाथजी को चले राह में कहीं एक स्त्री सदनजी को युवास्वरूप देखके आसक्त होगई अपने घर टिकाये सुन्दर भोजन करवाया रात को कहा कि हमें अपने साथ लेचलो सदनजी बोले कि मेरी गर्दन कटजाय तब भी यह बात नहीं होगी तो उसने कुछ औरही समझ तुरन्त घर में जायके अपने पति का शिर काट करके फिर आय बोली कि अब बेखटके तुम साथ लेचलो सदनजी ने फिर कहा कि हम से यह कभी भी न होगी तब तो उसने पुकार मचादी कि इस मनुष्य को साधु जानकर टिकाया था सो अब यह मेरे पति का शिर काटकर मुझको अपने साथ लेजाने चाहता है। सदनजी पकड़े हाकिम के घर पहुँचे पूछा गया तो सदनजी ने कहा हम से अपराध हुआ तब हाकिम ने सदनजी का हाथ कटवाय दिया। ऐसे कष्ट में भी सदनजी उसे पूर्वजन्म के पाप का फल समझकर भगवद्ध्यानही में लीन रहे जब पुरी के निकट पहुँचे तो जगन्नाथजी महाराज ने प्रसन्न होकर पालकी सदनजी के लिये भेजी पर सदनजी मर्य्याद देखकर नहीं चढ़े जब सब बहुतही कहने लगे तब भगवत् की आज्ञा उल्लंघना उचित न जानकर सवार हो श्रीदरबार में पहुँचे भगवत् के दर्शन पाये कृतार्थ भये और

छुटाई हृदय की प्रीतिही की देखी जाती है और हम को केवल भगवत् की आज्ञापालन उचित है यह कहकर अल्ह जी के गले में माला डालदी तो कूल्हजी को अतिदुस्सह दुःख हुआ और अपनी बेमर्य्यादी समझकर डूबने का मनोरथ करके समुद्र में कूदपड़े मुख्य द्वारका में जाय प- हुंचे भगवत् का दर्शन करके कृतार्थ भये जब भोजन करने गये तो भगवत् ने आज्ञा की कि दो पनवाड़ों में पारुस करो कूल्हजी ने पूछा दूसरा किसका है तो बोले यह तुम्हारे छोटे भाई का है तब तो सुनतेही फिर भी बड़ा दुःख हुआ और भोजन करना विष समान होगया भगवत् बोले दुःख की कुछ बात नहीं है तुम्हारा छोटा भाई मेरा परमभक्त है वृत्तान्त यह है कि पूर्वजन्म में वह राजा था और राज्य छोड़ वन में हमारा भजन करता था संयोगवश एक और राजा वहां आकर टिका तो उसकी सजावट भोग विलास और रागरंग को देखकर इसने भी उस सुख की चाहना करी इससे यह शरीर पाया अब वह तुम्हारे वियोग से खाना पीना सोना सब छोड़के मरने समान होरहा है शीघ्र जाकर सुधिलेव तब तो कूल्हजी प्रसाद लेकर जहां पहिले टिके थे तहां जाय पहुंचे तो अल्हजी को वहां न पाया घरजाने की सुधिपाय घर को चले (अल्हजी) निजभाई के वियोग से दुःखी भये रोया करते थे फिर कूल्हजी को आते सुन हर्षित होकर आगे जाकर सामने लिया दण्डवत् करी दोनोंभाई प्रेम से भरे हुये मिले । कूल्हजी ने सब वृत्तान्त कहा दोनोंभाई प्रेम से भरे घर बार त्यागके भगवत् सेवा भजन में शरीर समाप्त किया ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे सप्तत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३७ ॥

अथाष्टत्रिंशः प्रदीपः ।

जगन्नाथजी का दृष्टान्त ।

स्वीयार्चामिच्छतोविष्णुर्भक्तस्य प्रतिमां निजाम् ॥
प्रबोधयेद्यथा कूपे जगन्नाथमशिक्षयत् ॥ १ ॥

निज प्रतिमा पूजना चाहते भक्त को भगवान् निज प्रतिमा की आपही बतादेते हैं जैसे जगन्नाथजी को कुवें में निज प्रतिमा बताई (दृष्टान्त) (जगन्नाथजी) रहनेवाले गांव थानेश्वर के परमभक्त और कृष्ण चैतन्य महाप्रभु के सेवक पार्षद के सदृश हुये वृत्तान्त यह है कि तीन दिनतक प्रभुको अपने द्वारपर विराजमान देखा और उनके प्रताप का प्रभाव घर में प्रकट पायके आधीन और विश्वासयुक्त भये और सेवक होकर (कृष्णदास) नाम पाया पर लोग कृष्ण नाम कहा करते । बहुतकाल मानसी पूजा और ध्यान करते रहे एकबेर मन यह हुआ कि भगवत् मूर्ति अर्चा मिलै तो सब काल सेवा पूजा में रहों तो भगवत् ने कृपा करके अपना स्वरूप एक कुवें में बताया उसे लाकर स्थापन किया और ऐसी सेवा पूजा में लीन हैं कि रात्रि दिन भगवत् के शृङ्गार सेवा पूजा और उत्साह और लाड़ लड़ाने के सिवाय दूसरा कुछ काम न था उनके पुत्र का नाम (रघुनाथ) था वह भी लड़काईही से ऐसा प्रेमी और भक्त हुआ कि भगवत् ने स्वप्न में एक श्लोक अपने प्रेम और भक्ति का सिखाय दिया ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धेऽष्टत्रिंशः प्रदीपः ॥ ३८ ॥

अथैकोनचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ।

रामदासजी का दृष्टान्त ।

गच्छेद्भक्तसमीपं हि हरिर्हृदयवित्तमः ॥ रामदासगृहं गत्वा दर्शनं प्रददौ यथा ॥ १ ॥

हृदयवेत्ता—अन्तर्यामी भगवान्, भक्त के पास जापहुँचते हैं जैसे (रामदासजी) के घर जायके तिन्हें नित्य दर्शन दिया। (दृष्टान्त) रामदासजी, रहनेवाले डाकौर द्वारका के निकट बड़े प्रेमी हरिभक्त भये एकादशी व्रतकरके बड़ी प्रीति से रनछोड़जी के मन्दिर में द्वारका जायाकरते जब वृद्धभये तो रनछोड़जी ने आज्ञा की कि अब तुम घरहीमें भजन स्मरण किया करो यद्यपि रामदासजी ने वचन अङ्गीकार किया पर जब तरङ्ग प्रेम की उठै तो वेवश होकर चलेहीजाते तो भगवत् से निज भक्त के आने जाने का परिश्रम नहीं सहागया तब आज्ञा की कि तुम एक गाड़ी लाओ हम तुम्हारे घर चलेंगे। रामदासजी अगिली एकादशी को गाड़ी लेकर पहुँचे और लोगों ने जाना कि बुढ़ाई के कारण गाड़ीपै आया है द्वादशी के दिन बतलाये भये भगवत् मन्दिर में गये और गाड़ी में सवार कराकर चले पर गहने सब भगवत् के मन्दिर में छोड़दिये प्रभात को पुजारीलोगों ने मन्दिर खोला और भगवत् को न देखा तो जान गये कि रामदास लेगये सब पीछे पड़े और रामदासजी को उनके आने से चिन्ता भई तब भगवत् ने कहा समीपही एक बावड़ी है उसी में हमको छिपादेव रामदासजी ने वैसाही किया फिर वे लोग आये तो रामदासजीको मारा पीटा घायल किया और गाड़ी में जब न देखा तो लज्जित होकर पश्चात्ताप करने लगे पीछे किसी के बतलाने से बावड़ी को देखा तो रुधिर से भरी है चकित हुये भगवत् ने कहा कि रामदास हमारी आज्ञा से हमको लाया है तुमने जो उसको घाव दिया सो हमने अपने शरीरपर रोका है इसहेतु बावड़ी रुधिर से भरी है अब तुम लौटजाओ तुम्हारे साथ न जायँगे पुजारियों ने बड़ी प्रार्थना और करुणा विनय किया कि महाराज ! जो आप न चले तो हमारी क्या गति होगी भगवत् ने कुछ न सुना बहुत कहा तब यह ठहरा कि भगवत् मूर्ति के बराबर सोना तौलदेओ

पुजारीलोग इस बातपर मानगये रामदासजी ने कहा महाराज! मेरे घर सोना कहां है भगवत् बोले तुम्हारी स्त्री के कान में बाली सोने की है हमारे तौल की बराबर नहीं बहुत है जब उस बाली के साथ भगवत् मूर्ति को तौलनेलगे तो बालीवाला पलरा धरती से जालगा और मूर्तिवाला हलकाई से ऊपर होगया पुजारी सब लज्जित हो २ कर घर चलेगये रामदासजी ने भगवत् को लाकर अपने घर में विराजमान किया और भजन सेवा करनेलगे इस चरित्र से प्रकट है कि राजा बलि के यहां तो उसके बांधने के पीछे वहां टिके और यहां रामदासजी के घायल होने के पीछे टिके और सदा भगवत् के यहां रहने का यह चिह्न है कि अब भी भगवत् मूर्ति किसी और मनुष्य से नहीं उठती जब कोई रामदासजी के वंश में काहीं उठाता है तब तुरन्त उठजाती है मन्दिर की मरम्मत के समय इस बात की परीक्षा होचुकी है॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेम निबन्धेएकोनचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ३९ ॥

अथ चत्वारिंशः प्रदीपः ।

॥ दयावान् साहूकार भक्त का दृष्टान्त ॥

सर्वेभ्यश्चापि यज्ञेभ्यो दयायज्ञः परो मतः ॥ दयानिष्ठो यथा वैश्यः पञ्चयज्ञफलं लभेत् ॥ १ ॥

सब यज्ञों से पर अर्थात् श्रेष्ठ दयायज्ञ मानागया है। जैसे दयावाला एक साहूकार संपूर्ण पञ्चयज्ञ के फलको प्राप्तहुआ) (दृष्टान्त) एक साहूकार समय के फेरकरके दरिद्री होगया, चारयज्ञ उसने किये थे किसी ऋषीश्वर के उपदेश से एक यज्ञ के फल को लेने के लिये धर्मराज के पास चला एकबेर भोजन करने की सामग्री उसके पास थी उसकी रसोई बनाकर जब खाने को बैठा तो एक कुतिया उसी घड़ी वियाई भूख से,

विकल भई आई तो साहूकार ने दया में आकर चौथाई भोजन उसको देदिया पर भूख न गई फिर दूसरी चौथाई दी फिर भी वही दशारही फिर तो चार वेर में सब भोजन देदिया और पानी पियायदिया संतुष्ट हो चली गई और साहूकार भूखा प्यासा धर्मराज के पास पहुँचा धर्मराज ने हिसाब करते कहा कि पांच यज्ञों में एक यज्ञ तुम्हारा अक्षय है किसका फल चाहते हो वैश्य ने हाथ जोड़कर विनय किया महाराज ! मैंने तो चारही यज्ञ किये हैं वह पांचवां यज्ञ कौन सा है धर्मराज ने कहा कि पांचवां अक्षय यज्ञ वह है जो तैंने कुतियापर दयाकरके सब भोजन देदिया यही सर्वोत्तम अक्षय पांचवां यज्ञ है इस यज्ञ की बराबरी और कोई भी यज्ञ नहीं करसक्ता क्योंकि और तो फलाकांक्षी होने से नाशवान् यज्ञ हैं और यह निरपेक्ष्य होनेसे अक्षय महायज्ञ है साहूकार सुन प्रसन्न होगया॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेम निबन्धे चत्वारिंशः प्रदीपः॥ ४०॥

अथैकचत्वारिंशः प्रदीपः।

राजाशिवि का दृष्टान्त।

शिविः कारुणिको दाता बभूव भगवत्प्रियः॥ इन्द्राय श्येनरूपाय मांसं यो दत्तवान् स्वकम्॥ १॥

राजा शिवि, दयावान् दाता भगवत् का प्रियभक्त हुआ। जिसने श्येनरूपधारी इन्द्र को निजमांस भी दान करदिया (दृष्टान्त) "राजाशिवि" की कथा और पुराणों में तथा महाभारत में विशेषता से लिखी है कि दयावान् शरण देनेवाले और धर्मात्मा भये अश्वमेधादि बहुत से यज्ञ करके ब्राह्मणों को अनेक प्रकार के दान दिये भगवत् की प्रेरणा करके राजा इन्द्र को दया और शरणागतवत्सलता की परीक्षा की चाहना हुई तो अग्निदेवता को कबूतर बनाया और आप बाज का रूप

करके आया कबूतर ने बाज के भय से कम्पित होकर राजा के दामन की शरण ली और बाज से राजा का बड़ा वाद हुआ बाज बोला कि हमारा आहार छीनते हो राजा ने कहा कि शरण में आये की रक्षा करना परम धर्म है निदान जब निज शरीर का मांस देने कहा तब बाज माना तब मांस अपना काट २ कर पलरे पर धरा तो कबूतर का पलरा धरती न छोड़े जब मांस धरते २ भी बराबर न हुआ तब राजा शिर काटकर धरनेलगा तो तीनों देवता प्रकट भये और वरदान देकर स्तुति करी और शरीर जैसा था वैसाही करके चलेगये इससे भगवत् के भक्त भी भगवत्रूपही हैं वे जो करैं सो आश्चर्य नहीं ॥

इति श्रीशुक्कदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेम निबन्धे एकचत्वारिंशः प्रदीपः ॥ ४१ ॥

अथ द्विचत्वारिंशः प्रदीपः ।

राजा मयूरध्वज का दृष्टान्त ।

मयूरध्वजराजा हि धर्मनिष्ठो महानभूत् ॥ छित्वा स्वपुत्रदेहार्द्धमखिन्नो हरये ददौ ॥ १ ॥

राजा (मयूरध्वज) महान् धर्मनिष्ठ भया। जिसने भगवत् के अर्थ निजपुत्र का आधा शरीर काटकर बेखेद देदिया (दृष्टान्त) राजा (मयूरध्वज) उनकी धर्मपत्नी, और (ताम्रध्वज) पुत्र, ये ऐसे परमभक्त दयावान् हुये कि भगवत् ने घर बैठे दर्शन दिया और परीक्षा से दृढ़ देखा। वृत्तान्त यह है कि राजा (युधिष्ठर) ने अश्वमेध यज्ञ किया और अर्जुन को घोड़ा देकर उसकी रक्षा के निमित्त भेजा तो उसी समय राजा "मयूरध्वज" ने भी यज्ञ आरम्भ किया और ताम्रध्वज पुत्र घोड़े के साथ था राह में भटभेरा हुआ तो 'ताम्रध्वज' ने महाभारत के योधा गाण्डीवधारी (अर्जुन) के हाथ से घोड़ा छीन लिया तब भक्तानुकूल महाराज (श्रीकृष्णचन्द्रजी) ने देखा

कि यहां दोनों भक्त हैं एक को जय दीजाय तो एक की अभि लाषा भङ्ग होगी । इसहेतु परीक्षा के हेतु आप वृद्ध ब्राह्मण बने और अर्जुन को लड़के का रूप बनाकर राजा मयूरध्वज के द्वार पै गये राजा यज्ञशाला में था दण्डवत् करके आदर और वि- नयपूर्वक पूछा कि आगमन का हेतु क्या है तब वृद्धब्राह्मणरूप- धारी भगवान् बोले कि वन में एक व्याघ्र है उसने इस बालक के खाने की इच्छा की मैंने बहुत कहा कि इसके बदले हम को खालेव पर उसने न माना कि तू वृद्ध है तेरा मांस मेरे काम का नहीं निदान बहुतही प्रार्थना और रुदन करने से यह ठहरा कि जो राजा का आधा शरीर लादे तो इस बालक को छोड़ देवेंगे इस हेतु मैं तुम्हारे पास आयाहूं इस बालक की रक्षा करो तब सुनकर राजा को बडीही दया उत्पन्न हुई कि निश्चय यह शरीर एकदिन नष्ट होनेवाला है जो ऐसे काम में आवे तो इससे अच्छा क्या है तब उस ब्राह्मण ने कहा एक वचन उस व्याघ्र का और भी है कि जिस ओर से राजा का शरीर चीरा जाय वह आरा एक ओर से तो राजा के बड़बेटे के हाथ में होय और दूसरी ओर राजा की स्त्री के हाथ में होय और किसी प्रकार का भी किसी को दुःख और शोक न होवे राजा ने इस बात को भी अङ्गीकार किया तब ताम्रध्वज ने ब्राह्मण से कहा कि शास्त्रमत से बेटा भी बाप का रूप होता है जो मेराही आधा शरीर लेलिया जावे तो बहुत अच्छी बात है तो ब्राह्मण ने कहा कि तू राजा नहीं है तब रानी बोली कि मैं भी राजा की अर्द्धाङ्गी हूं जो राजा के आधे शरीर के बदले मुझ को लेजावे तो व्याघ्र की और भी अधिक सन्तुष्टता होय ब्रा- ह्मण ने कहा तू रानी है राजा नहीं फिर तो ब्राह्मण ने ताम्र- ध्वज को राजा के सामने इस कारण कि परस्पर देखके मोह उत्पन्न होजाय और पीठ पीछे रानी को खड़ा किया और दोनों आरा राजा के शिर पर रखके खींचनेलगे जब आरा राजा की

नाकतक पहुँचा तो राजा की बाईं आँख से जल निकला ब्राह्मण ने कहा बस यह शरीर हमारे काम का नहीं रहा क्योंकि राजा दुःखित होकर देता है तब राजा ने विनय किया (महाराज! कृपा करो क्रोध न करिये जिस ओर की आँख से पानी निकला है उस ओर को शरीर को यह दुःख है कि मैं बड़ा पापी हूं जो किसी काम में न आया और दाहिना अङ्ग बड़भागी है जो ब्राह्मण के काम में आया तब तो भगवत् करुणासिन्धु इस वचन के सुनतेही भक्ति विश्वास से अत्यन्तही प्रसन्न हुये और प्रेम से विह्वल होगये और राजा को आरे के नीचे से उठाकर छाती से लगालिया और निजरूप से राजा को दर्शन दिया भगवत् के स्पर्श होतेही घाव शिरका अच्छा होगया और भगवान् बोले कि मैं तुम्हारी धर्मनिष्ठा से बहुत प्रसन्न हूं जो चाहता हो सो मांगो पूर्ण करूंगा राजा ने हाथ जोड़के विनय किया महाराज! आपने अनुग्रह किया तो अब कौन पदार्थ बाकी रहा जो मांगूं केवल चरणों की प्रीति चाहता हूं और एक प्रार्थना यह है कि कलिकाल आगे आने-वाला है सो अब ऐसी कठिन परीक्षा भक्तोंपरन करनी चाहिये तब भगवत् ने यह वचन अङ्गीकार किया और अर्जुन और राजा का मिलाप करवाकर मेल करादिया। राजा ने बहुत हर्ष से घोड़ा फेरादिया और इस चरित्र से भगवत् को अर्जुन का गर्व दूर करना था सो भी दूर होगया॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेमनिबन्धे द्विचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४२॥

अथ त्रयश्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

रांका कुम्हार की कथा का दृष्टान्त।

वह्निनापि न दह्येत दैवपूरितजीवनः॥ रांकाकुलालभक्तस्य गृहे मार्जाररक्षणम्॥ १॥

राजा ने झरोखे में हाथ डालकर रौला मचाया तभी मन्त्री ने ऐसी तलवार मारी कि हाथ अलग जाय गिरा जब मन्त्री को मालूम हुआ कि राजा का हाथ है तो बड़े शोक और लज्जा में पड़ा तब राजा ने समझाया कि भूत और प्रेत वही है जो भगवत् से विमुख हैं तुम चिन्ता मतकरो हमको यही करना योग्य था तब तो करुणासिन्धु भगवत् ने आज्ञा करी कि राजा के लिये महाप्रसाद ले आओ और कटा हाथ उठालाओ पुजारी लोग दौड़े और इधर से राजा दर्शन को चले राह में पुजारी लोग जब आगे बढ़कर महाप्रसाद देने लगे तो राजा ने भावभक्ति से हाथ दोनों उठाये उससमय भगवत् की कृपा से वह कटा हाथ भी निकल आया और राजा ने दोनों हाथों से महाप्रसाद ले अपनी छाती से लगाया और दर्शनकर प्रेम आनन्द में मग्न होकरके सेवा में रहने लगे। भगवत् ने कटा हुआ हाथ अपने बाग में लगवा दिया अब तक वह दोनों वृक्ष सुगन्धवान् हैं जिनके पुष्प जगन्नाथरायजी पै चढ़ाये जाते हैं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम-
निबन्धे षट्चत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ४६ ॥

अथ सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः ।

सुरेश्वरानन्दजी की कथा ।

महाप्रसादं मनुते सर्वोत्कृष्टं हरिप्रियः ॥ अपीह मांसवटकं भक्षयामास तद्धिया ॥ १ ॥

हरि के प्रियभक्त महाप्रसाद को सबसे उत्कृष्ट मानते हैं जैसे मांस के बड़े को भी भक्त ने महाप्रसाद मानकर भोग लगाया (सुरेश्वरानन्दजी) चेले स्वामी (रामानन्दजी) के परमभगवद्भक्त हुये और महाप्रसाद की ऐसी महिमा इस संसार में फैलाई जिसके प्रभाव से हजारों को दृढ़ विश्वास होगया (वृत्तान्त) एक बेर किसी द्वेषी ने राह चलते दारू और

मांस का बरा बनाहुआ आगे ले आकर कहा कि भगवत् का महाप्रसाद है सुरेश्वरानन्दजी ने महाप्रसाद का नाम सुनते ही लेकर भोग लगाय लिया आगे चल दिये पीछे से जो चेले चले आते थे उन्हों ने भी देखा देखी वही आचरण किया तब स्वामीजी ने क्रोध करके उनसे कहा कि तुमने क्या खाया वे बोले जो आपने खाया वही हमने भी खाया है तब स्वामीजी बोले हम ने तो महाप्रसाद पाया तुमने मांस खाया है तब सबने वमन किया तो स्वामीजी के उदर से तो तुलसीदल और गङ्गारज निकला और उनके में से वही मांस निकल पड़ा तब तो चेले चरणों में गिरे और भगवत् के महाप्रसाद और भजन का विश्वास हुआ। निश्चय करके समर्थ को विष भी अमृत है और असमर्थ को अमृत विष के तुल्य है सोही शिवजी ने हलाहल पान करलिया वह अबतक उनके कण्ठ का आभूषण है और राहु ने अमृत पान भी किया पर उसका शिर काटा गया॥

इति श्रीशुकदेवसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे सप्तचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः॥ ४७॥

अथाष्टचत्वारिंशत्तमः प्रदीपः।

श्वेतद्वीपनिवासी भक्तों का दृष्टान्त।

श्वेतद्वीपे महाभक्ता निवसन्ति न संशयः॥ परीक्षितुं गतो भक्तो नारदोऽथ बुबोध तत्॥ १॥

(श्वेतद्वीप) भगवत् का विहारस्थान है और जो भगवद्भक्त शास्त्रों में चिरंजीवि लिखे हैं विशेष करके इसी द्वीप में रहते हैं एक बेर नारदजी उस द्वीप में गये और ज्ञान उपदेश करने को चाहा तो भगवत् ने रोक दिया कि यहांके रहनेवाले मेरे प्रेम और भक्तिभाव में मग्न रहते हैं इससे तुम अपनी ज्ञानकहानी और ही कहीं कहो तब नारदजी उदास हो चले गये वैकुण्ठ में

नता के शोक से विकल हुई और भगवत् में मन लगायके जहां पति गया तहांही विराजमान हुई ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे एकोनपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ४९ ॥

अथ पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

वशिष्ठजी का इतिहास ।

(वशिष्ठजी) ब्रह्माजी के दशों पुत्रों में भगवद्भक्त और सब विद्याओं के आचार्य हुये ज्योतिषविद्या, चिकित्सा और सांगीत इत्यादिकों में संहिता उनकी बनाई विख्यात हैं नवीनजनों ने उनकी संहिता को प्रमाण करके नई परिपाटी चलाई पर विशेष करके उन्हीं का अधिकार धर्मशास्त्र भक्ति और ज्ञान शास्त्र में अधिक है जिन्हों ने अन्तरिक्ष में निरालम्ब होकर भगवद्भजन और ध्यान किया और फिर दूसरे ब्रह्माण्ड में जाकर वहां की ब्राह्मणी की सहाय के निमित्त ब्रह्माजी से प्रार्थना की और धर्म की प्रवृत्ति के लिये अबतक यह विचार है कि तीन स्वरूप धारण करके एक तो ब्रह्मलोक में दूसरा धर्मराज की सभा में तीसरा सप्तऋषियों में ऐसे तीन स्थानों में रहते हैं जिनके प्रताप को देखके राजा विश्वामित्र ने अपना राज्य छोड़कर भगवद्भक्ति को अङ्गीकार किया और तितिक्षा ऐसी थी कि नन्दिनी गऊ के न देने और कहने ब्रह्मर्षि के वैर के कारण से विश्वामित्र ने उनके सौ पुत्र एक राक्षस से वध करवादिये परन्तु समर्थ होकर भी उन्हों ने कुछ बदला न लिया उनका वचन ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सारे जगत् को ऐसा स्वीकृत था कि जब विश्वामित्रजी ने ब्राह्मण होने के निमित्त बहुतकाल तप किया और उनके ब्राह्मण होने का निश्चय वशिष्ठजी के वचनपरही था जब वशिष्ठजी ने निजमुखसे ब्राह्मण कहा तब उनकी ब्राह्मणों में गणना भई । भगवत् के चरणों में ऐसी प्रीति थी कि ब्रह्माजी से यह बात सुनी कि पूर्णब्रह्म

सच्चिदानन्दघन का सूर्यवंश मे अवतार होगा तो बड़ी प्रसन्नता से सूर्यवंश की पुरोहिताई अङ्गीकार की जब भगवत् का अवतार हुआ तो उन्हीं के प्रेम में मग्न रहे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनेवन्धे पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५० ॥

अथैकपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

विश्वामित्रजी का इतिहास ।

(विश्वामित्रजी) पहिले क्षत्रिय राजा गाधि के पुत्र थे जब नन्दिनी गऊ के हेतु वशिष्ठजी से प्रबल सेना हारगई और राजा से ब्राह्मणों का प्रताप और पदवी भगवद्भक्ति के कारण से अधिक देखा तो राज्य छोड़कर भगवद्भजन में लगे और कईलाख वर्षतक ऐसा घोर महातप किया कि क्षत्रिय से ब्राह्मण होगये भगवद्भक्ति और तप का ऐसा बल प्रताप रखते थे कि दूसरा ब्रह्माण्ड उत्पन्न करदेवें सो एकवेर ब्रह्मा से क्रोध होकर नवीन ब्रह्माण्ड बनाने का विचार किया और कई प्रकारके बहुत लोग उत्पन्न किये फिर ब्रह्मा और देवताओं ने आकर बहुत विनय किया तब रचना से शान्तभये जो वस्तु उत्पन्नकी सो अबतक वर्त्तमान है। और (त्रिशंकु) नाम अयोध्या के राजा को शरीर सहित स्वर्ग को पहुँचाया जब इन्द्र ने उसे धरती पर गिराया तो उसने आकाश में से पुकार करी तब विश्वामित्रजी ने निजतपोबल से धरती पर न गिरनेदिया वह अबतक निराधार है और इन्द्रको स्वर्ग से गिराने की इच्छा की फिर देवताओं ने प्रार्थना करी तब दया करी इसप्रकार के कई चरित्र विश्वामित्रजी के हैं और भगवत् के निष्काम भक्त और धर्मशास्त्र के प्रवर्त्तक ऐसे थे कि एक वेर बहुत अकाल पड़ा कुछ भी भोग लगाने को न मिला बहुत दिन पीछे एक चाण्डाल से अभक्ष्य वस्तु मिली असमय में उसको भक्षयही

नता के शोक से विकल हुई और भगवत् में मन लगायके जहां पति गया तहांही विराजमान हुई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे एकोनपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ४९ ॥

अथ पञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

वशिष्ठजी का इतिहास ।

(वशिष्ठजी) ब्रह्माजी के दशों पुत्रों में भगवद्भक्त और सब विद्याओं के आचार्य हुये ज्योतिषविद्या, चिकित्सा और संगीत इत्यादिकों में संहिता उनकी बनाई विख्यात हैं नवीनजनों ने उनकी संहिता को प्रमाण करके नई परिपाटी चलाई पर विशेष करके उन्हीं का अधिकार धर्मशास्त्र भक्ति और ज्ञान शास्त्र में अधिक है जिन्हों ने अन्तरिक्ष में निरालम्ब होकर भगवद्भजन और ध्यान किया और फिर दूसरे ब्रह्माण्ड में जाकर वहां की ब्राह्मणी की सहाय के निमित्त ब्रह्माजी से प्रार्थना की और धर्म की प्रवृत्ति के लिये अबतक यह विचार है कि तीन स्वरूप धारण करके एक तो ब्रह्मलोक में दूसरा धर्मराज की सभा में तीसरा सप्तऋषियों में ऐसे तीन स्थानों में रहते हैं जिनके प्रताप को देखके राजा विश्वामित्र ने अपना राज्य छोड़कर भगवद्भक्ति को अङ्गीकार किया और तितिक्षा ऐसी थी कि नन्दिनी गऊ के न देने और कहने ब्रह्मऋषि के वैर के कारण से विश्वामित्र ने उनके सौ पुत्र एक राक्षस से वध करवादिये परन्तु समर्थ होकर भी उन्हों ने कुछ बदला न लिया उनका वचन ब्रह्मा, विष्णु, महेश और सारे जगत् को ऐसा स्वीकृत था कि जब विश्वामित्रजी ने ब्राह्मण होने के निमित्त बहुतकाल तप किया और उनके ब्राह्मण होने का निश्चय वशिष्ठजी के वचनपरही था जब वशिष्ठजी ने निजमुखसे ब्राह्मण कहा तब उनकी ब्राह्मणों में गणना भई। भगवत् के चरणों में ऐसी प्रीति थी कि ब्रह्माजी से यह बात सुनी कि पूर्णब्रह्म

सच्चिदानन्दघन का सूर्यवंश में अवतार होगा तो बड़ी प्रसन्नता से सूर्यवंश की पुरोहिताई अङ्गीकार की जब भगवत् का अवतार हुआ तो उन्हीं के प्रेम में मग्न रहे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे पञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥ ५०

अथैकपञ्चाशत्तमः प्रदीपः।

विश्वामित्रजी का इतिहास।

(विश्वामित्रजी) पहिले क्षत्रिय राजा गाधि के पुत्र थे जब नन्दिनी गऊ के हेतु वशिष्ठजी से प्रबल सेना हारगई और राजा से ब्राह्मणों का प्रताप और पदवी भगवद्भक्ति के कारण से अधिक देखा तो राज्य छोड़कर भगवद्भजन में लगे और कईलाख वर्षतक ऐसा घोर महातप किया कि क्षत्रिय से ब्राह्मण होगये भगवद्भक्ति और तप का ऐसा बल प्रताप रखते थे कि दूसरा ब्रह्माण्ड उत्पन्न करदेवें सो एकबेर ब्रह्मा से क्रोध होकर नवीन ब्रह्माण्ड बनाने का विचार किया और कई प्रकारके बहुत लोग उत्पन्न किये फिर ब्रह्मा और देवताओं ने आकर बहुत विनय किया तब रचना से शान्तभये जो वस्तु उत्पन्नकी सो अबतक वर्तमान है। और (त्रिशंकु) नाम अयोध्या के राजा को शरीर सहित स्वर्ग को पहुँचाया जब इन्द्र ने उसे धरती पर गिराया तो उसने आकाश में से पुकार करी तब विश्वामित्रजी ने निजतपोबल से धरती पर न गिरनेदिया वह अबतक निराधार है और इन्द्रको स्वर्ग से गिराने की इच्छा की फिर देवताओं ने प्रार्थना करी तब दया करी इसप्रकार के कई चरित्र विश्वामित्रजी के हैं और भगवत् के निष्काम भक्त और धर्मशास्त्र के प्रवर्तक ऐसे थे कि एक बेर बहुत अकाल पड़ा कुछ भी भोग लगाने को न मिला बहुत दिन पीछे एक चाण्डाल से अभक्ष्य वस्तु मिली असमय में उसको भक्ष्यही

बड़े बेटे जो ज्ञानदेवजी थे वे लड़काईहीं से श्रीकृष्णमहाराज के भक्त भये फिर वेद पढ़नेको गये तो किसी ने भी इनको न पढ़ाया कि तुम जातिबाहर हो वेद के अधिकारी न रहे तो ज्ञानदेवजी ने कहा कि ब्राह्मण होना कुछ वेदही पढ़नेपर सिद्धान्त नहीं है यह तो पशु भी पढ़सक्के हैं किंतु भगवत् का ज्ञान होना सबसे परे है इसी बातपर एक भैंस को वेद पढ़ाना आरम्भ किया फिर शाखासहित वेद ब्राह्मणों को सुनाया तो वे सब आश्चर्य्यकर रहगये और ऐसी दृढ़ भगवद्भक्ति देखकर चरणों में गिरे ज्ञानदेवजीने उनको दया करके भगवद्भक्त किये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे त्रिपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५३ ॥

अथ चतुःपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

लड्डूस्वामी का दृष्टान्त ।

देवोऽपि भक्ते विश्वस्ते स्वबलिं त्यजति क्षणात् ॥
दुष्टान् खादति हि प्रीतो दुष्फलं दुष्टकर्मणः ॥ १ ॥

देवता भी, विश्वासी भक्त के आगे निजबलि को त्याग देते और उन बलि देनेवाले दुष्टों को भक्षण करलेते हैं क्योंकि दुष्टकर्म का खोटाही फल मिलता है (दृष्टान्त) "लड्डूस्वामी" परमभागवत भगवत्रङ्ग में रँगेहुये और सर्वत्र उसी भगवत् रूपको चिन्तन करते दुःख सुख से अलग होकर जहां तहां विचरते संयोगवश ऐसे देश में पहुँचे जहां भगवद्भक्ति का लेश भी न था और वहां के लोग दुर्गा की प्रसन्नता के हेतु मनुष्य का बलिदान देते थे तो लड्डूस्वामी को चिकना मोटा देखके काली के हेतु लेगये सो भगवत् अपने भक्तों के सहाय के लिये सदा साथ रहते हैं तो वह प्रतिमा काली की फटगई और दुर्गा भयङ्कररूप से प्रकट हुई और उन्हीं दुष्टों का तरवार से वध किया और भगवद्भक्ति का प्रताप दिखाने के हेतु सन्मुख हो

कर नृत्य किया और चरणों में लोटगई यह विश्वास और भक्ति भगवती की वहां के लोगों ने देखी तो आधीन हुये और भगवद्भक्ति अङ्गीकार करी ॥

इति श्रीशुकदेवसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे चतुःपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५४

अथ पञ्चपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

परशुरामजी का दृष्टान्त ।

कापीनमात्रनिष्ठो हि सर्वभोगाल्लँभेदिह ॥ यथा परशुरामो हि त्यक्त्वाऽपि तु मुहुर्वभौ ॥ १ ॥

जो वैराग्यवान् भक्त कोपीनमात्रही की वाञ्छा रखते हैं उन्हें सब भोग आपही से मिलजाते हैं जैसे परशुरामजी ने किसी के कहनेपर सब ऐश्वर्य्य त्याग भी दिया पर फिर सब प्रकार के भोग उनके पास आय पहुंचे (दृष्टान्त) "परशुराम जी" ने निजभक्ति के प्रताप से जङ्गल देश के जङ्गली-लोगों को ऐसे सत्संगी और भगवद्भक्त करादिये कि जैसे चन्दन के वृक्ष की सुगन्धि से सारा वन सुगन्धित होजाता है श्रीभट्टजी और हरिव्यासजी का जो परम्परा मार्ग था उसीपर चलते थे भगवत्कथा और कीर्त्तन का ऐसा नियम था कि हजारों को भगवद्भक्त करदिया माला तिलक आदि की प्रवृत्ति चलाई और राजधानी में रहकर सब ऐश्वर्य प्राप्त था पर उस संसारी वैभवसे ऐसा वैराग्य था कि तुच्छ जानते थे उन्हींका दोहा है ॥

दो० माया सगी न मन सगो, सगो न यह संसार ॥
परशुराम या जीव को, सगो सो सिरजनहार ॥ १ ॥

किसी साधु ने जाकर परीक्षा के लिये उनसे कहा कि आप को भगवत् से प्रेम है तो फिर इस वैभवसे क्या काम है अलग हो भजन करना चाहिये परशुरामजी अभिप्राय उस साधु का जान गये तो सर्व त्यागकर कोपीनबांध भगवद्भजन करनेलगे

बड़े बेटे जो ज्ञानदेवजी थे वे लड़काईहीं से श्रीकृष्णमहाराज के भक्त भये फिर वेद पढ़नेको गये तो किसी ने भी इनको न पढ़ाया कि तुम जातिबाहर हो वेद के अधिकारी न रहे तो ज्ञानदेवजी ने कहा कि ब्राह्मण होना कुछ वेदही पढ़नेपर सिद्धान्त नहीं है यह तो पशु भी पढ़सक्ते हैं किंतु भगवत् का ज्ञान होना सबसे परे है इसी बातपर एक भैंस को वेद पढ़ाना आरम्भ किया फिर शाखासहित वेद ब्राह्मणों को सुनाया तो वे सब आश्चर्य्यकर रहगये और ऐसी दृढ़ भगवद्भक्ति देखकर चरणों में गिरे ज्ञानदेवजीने उनको दया करके भगवद्भक्त किये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनिबन्धे त्रिपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५३ ॥

अथ चतुःपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

लड्डूस्वामी का दृष्टान्त ।

देवोऽपि भक्ते विश्वस्ते स्वबलिं त्यजति क्षणात् ॥
दुष्टान् खादति हि प्रीतो दुष्फलं दुष्टकर्मणः ॥ १ ॥

देवता भी, विश्वासी भक्त के आगे निजबलि को त्याग देते और उन बलि देनेवाले दुष्टों को भक्षण करलेते हैं क्योंकि दुष्टकर्म का खोटाही फल मिलता है, (दृष्टान्त) "लड्डूस्वामी" परमभागवत भगवत्रङ्ग में रँगेहुये और सर्वत्र उसी भगवत्रूपको चिन्तन करते दुःख सुख से अलग होकर जहां तहां विचरते संयोगवश ऐसे देश में पहुँचे जहां भगवद्भक्ति का लेश भी न था और वहां के लोग दुर्गा की प्रसन्नता के हेतु मनुष्य का बलिदान देते थे तो लड्डूस्वामी को चिकना मोटा देखके काली के हेतु लेगये सो भगवत् अपने भक्तोंके सहाय के लिये सदा साथ रहते हैं तो वह प्रतिमा काली की फटगई और दुर्गा भयङ्कररूप से प्रकट हुई और उन्हीं दुष्टों का तरवार से वध किया और भगवद्भक्ति का प्रताप दिखाने के हेतु सन्मुख हो

कर नृत्य किया और चरणों में लोटगई यह विश्वास और भक्ति भगवती की वहां के लोगों ने देखी तो आधीन हुये और भगवद्भक्ति अङ्गीकार करी॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपन्याप्रम निबन्धे चतुःपञ्चाशत्तमः प्रदीपः॥ ५४॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः प्रदीप।

परशुरामजी का दृष्टान्त।

पीनमात्रनिष्ठो हि सर्वभोगाल्लँभो
रशुरामो हि त्यक्त्वाऽपि तु मुहुर्वभो॥ १॥

जो वैराग्यवान् भक्त कौपीनमात्रही की वाञ्छा रखते हैं उन्हें सब भोग आपही से मिलजाते हैं जैसे परशुरामजी ने किसी के कहनेपर सब ऐश्वर्य्य त्याग भी दिया पर फिर सब प्रकार के भोग उनके पास आय पहुँचे (दृष्टान्त) "परशुराम जी" ने निजभक्ति के प्रताप से जङ्गल देश के जङ्गली लोगों को ऐसे सत्संगी और भगवद्भक्त करदिये कि जैसे चन्दन के वृक्ष की सुगन्धि से सारा वन सुगन्धित होजाता है श्रीभट्टजी और हरिव्यासजी का जो परम्परा मार्ग था उसीपर चलते थे भगवत्कथा और कीर्त्तन का ऐसा नियम था कि हजारों को भगवद्भक्त करदिया माला तिलक आदि की प्रवृत्ति चलाई और राजधानी में रहकर सब ऐश्वर्य प्राप्त था पर उस संसारी वैभवसे ऐसा वैराग्य था कि तुच्छ जानते थे उन्हींका दोहा है॥

दो० माया सगी न मन सगो, सगो न यह संसार॥
परशुराम या जीव को, सगो सो सिरजनहार॥ १॥

किसी साधु ने जाकर परीक्षा के लिये उनसे कहा कि आप को भगवत् से प्रेम है तो फिर इस वैभवसे क्या काम है अलग हो भजन करना चाहिये परशुरामजी अभिप्राय उस साधु का जान गये तो सर्व त्यागकर कौपीनबांध भगवद्भजन करनेलगे

की टीका करी तिसे भगवत् ने आप स्वीकार करी (दृष्टान्त) "श्रीधरस्वामी" ने (श्रीमद्भागवत) की ऐसी टीका रचना की कि परम अमृत अर्थ भागवत का बिन परिश्रम सबको प्राप्त होने लगा दूसरे तिलककारों से तो द्वेष और खैंच प्रकट है अर्थात् जो कोई कर्म का उपासक था तो उसने भक्ति और ज्ञान के अर्थ को भी कर्म की ओरही लगाया और जो भक्ति ज्ञान के उपासक थे वे निजमार्ग कोही दृढ़ करते रहे किसी ने मुख्य अर्थपर दृष्टि न की परन्तु श्रीधरस्वामी ने तो तीनों काण्ड अर्थात् ज्ञान कर्म और उपासनाकाण्ड की रीति के अनुसार विना पक्षपात अर्थ लिखा और जैसा अर्थ जहां चाहिये अपने गुरु परमानन्दजी से पूछकर वैसाही लिखा जब वह टीका रचना होचुकी तो काशीपुरी में पण्डितों की सभा हुई तब दूसरे पण्डितों ने अपनी टीका को रख दिया और सब पण्डित अपनी २ टीका को श्रेष्ठ बताते थे निदान सबकी सम्मति से यह बात ठहरी कि बिन्दुमाधव महाराज जिस टीका को अङ्गीकार करें उसी की प्रवृत्ति कराईजाय फिर सब टीकाओं को मन्दिर में रखवाय दिया फिर कुछ देर में खोलकर देखा तो श्रीधरस्वामी की टीकापर दस्तखत मंजूरी मिले और सब नामंजूर हुये सबको विश्वास हुआ और श्रीधरीटीका सर्वत्र प्रचलित भई ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम-
निबन्धे सप्तपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५७ ॥

अथाष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

माधवदासजी का इतिहास ।

भक्तस्य कार्याण्यखिलानि साधयेत्प्रियः प्रभुर्नात्र कदापि संशयः ॥ प्रीतो यथा माधवदाससेवके दधौ सपर्य्यां किमतः परम्पुनः ॥ १ ॥

(भक्तप्रिय भगवान् निजभक्त के सर्वकार्य सिद्ध करते हैं

इससे इस विषय में कदापि संदेह नही करना। जैसे माधवदासजी पर प्रसन्न भये भगवान् ने तिनकी सम्यक्प्रकार से सेवा व रक्षा की इससे परे और क्या होगा (वृत्तान्त) यह है कि (माधवदासजी) की भक्ति महिमा और प्रताप वैराग्य तथा शान्तिभाव का वर्णन कौन करसक्ता है जिस प्रकार से वेदव्यासजी ने अवतार धारके वेदो के विभाग किये और पुराण वनाये तथा महाभारत और सूत्र आदिकों को जगत् में प्रकट किये फिर उनका सार अर्थ सूक्ष्म करके श्रीमद्भागवत में लिखा और भगवद्भक्ति को प्रवृत्त किया इसी प्रकार माधवदास जी ने भी मानों वेदव्यासजी का अवतार धारके भगवद्भक्ति और चरित्र तथा सव शास्त्रों का सार निकालकर जगत् में विख्यात किया और भगवत्नाम और लीला का कीर्त्तन करके हजारों को संसारसमुद्र से पारउतार श्रीजगन्नाथरायजीके परम उपासक और वैराग्यवान् और ब्राह्मणों के नायक हुये। कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे जव स्त्री उनकी मरगई तो विचार किया कि यह संसार आगसाप्रायी है मनोरथ था कि लड़का लड़की होंगे उनका व्याह शादी करेंगे और कुल की वृद्धि होगी अव भगवत् ने यह चरित्र दिखाया निश्चय यह संसार अनित्य है और किसी का नहीं है यह शोचकर कि जो घर में हैं इनकी चिन्ता करना निपट अयोग्य है कि सवका आहार पहुँचाने वाला और पालनकर्ता भगवत् है जो कोई अपने अर्थ उपाय करै वह बुद्धिहीन है ऐसा निश्चय कर सव संसारी सुख छोड़ करके अलग हुये और श्रीजगन्नाथपुरी में पहुँचकर भगवत् के दर्शन किये समुद्र के किनारे जाकर वैठरहे और मन जो भगवत् के रूप अनूप में दृढ़ लगगया था इस हेतु भोजन की सामग्री के न मिलने से विकल न हुये तीन दिन वीते कुछ न खाया और भगवत् का नाम लेते एक जगह वैठरहे तव भगवत् ने सोचा कि हमारे वास्ते नित्य हजारों मन व्यञ्जन

की टीका करी तिसे भगवत् ने आप स्वीकार करी (दृष्टान्त) "श्रीधरस्वामी" ने (श्रीमद्भागवत) की ऐसी टीका रचना की कि परम अमृत अर्थ भागवत का बिन परिश्रम सबको प्राप्त होने लगा, दूसरे तिलककारों से तो द्वेष और खैंच प्रकट है अर्थात् जो कोई कर्म का उपासक था तो उसने भक्ति और ज्ञान के अर्थ को भी कर्म की ओरही लगाया और जो भक्ति ज्ञान के उपासक थे वे निजमार्ग कोही दृढ़ करते रहे किसी ने मुख्य अर्थपर दृष्टि न की परन्तु श्रीधरस्वामी ने तो तीनों काण्ड अर्थात् ज्ञान, कर्म और उपासनाकाण्ड की रीति के अनुसार विना पक्षपात अर्थ लिखा और जैसा अर्थ जहां चाहिये अपने गुरु परमानन्दजी से पूछकर वैसाही लिखा, जब वह टीका रचना होचुकी तो काशीपुरी में पण्डितों की सभा हुई तब दूसरे पण्डितों ने अपनी टीका को रख दिया और सब पण्डित अपनी २ टीका को श्रेष्ठ बताते थे निदान सबकी सम्मति से यह बात ठहरी कि बिन्दुमाधव महाराज जिस टीका को अङ्गीकार करें उसी की प्रवृत्ति कराईजाय फिर सब टीकाओं को मन्दिर में रखवाय दिया फिर कुछ देर में खोलकर देखा तो श्रीधरस्वामी की टीकापर दस्तखत मंजूरी मिले और सब नामंजूर हुये सबको विश्वास हुआ और श्रीधरीटीका सर्वत्र प्रचलित भई ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनिबन्धे सप्तपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५७ ॥

अथाष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ।

माधवदासजी का इतिहास ।

भक्तस्य कार्याण्यखिलानि साधयेत्प्रियः प्रभुर्नात्र कदापि संशयः ॥ प्रीतो यथा माधवदाससेवके दधौ सपर्य्यां किमतः परम्पुनः ॥ १ ॥

(भक्तप्रिय भगवान् निजभक्त के सर्वकार्य सिद्ध करते हैं

इससे इस विषय में कदापि संदेह नहीं करना। जैसे माधवदासजी पर प्रसन्न भये भगवान् ने तिनकी सम्यक्प्रकार से सेवा व रक्षा की इससे परे और क्या होगा (वृत्तान्त) यह है कि (माधवदासजी) की भक्ति महिमा और प्रताप वैराग्य तथा शान्तिभाव का वर्णन कौन करसक्ता है जिस प्रकार से वेदव्यासजी ने अवतार धारके वेदों के विभाग किये और पुराण बनाये तथा महाभारत और सूत्र आदिकों को जगत् में प्रकट किये फिर उनका सार अर्थ सूक्ष्म करके श्रीमद्भागवत में लिखा और भगवद्भक्ति को प्रवृत्त किया इसी प्रकार माधवदास जी ने भी मानों वेदव्यासजी का अवतार धारके भगवद्भक्ति और चरित्र तथा सब शास्त्रों का सार निकालकर जगत् में विख्यात किया और भगवत्नाम और लीला का कीर्त्तन करके हजारों को संसारसमुद्र से पारउतार श्रीजगन्नाथरायजीके परम उपासक और वैराग्यवान् और ब्राह्मणों के नायक हुये। कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे जब स्त्री उनकी मरगई तो विचार किया कि यह संसार आगमापायी है मनोरथ था कि लड़का लड़की होंगे उनका ब्याह शादी करेंगे और कुल की वृद्धि होगी अब भगवत् ने यह चरित्र दिखाया निश्चय यह संसार अनित्य है और किसी का नहीं है यह शोचकर कि जो घर में हैं इनकी चिन्ता करना निपट अयोग्य है कि सबका आहार पहुँचाने वाला और पालनकर्ता भगवत् है जो कोई अपने अर्थ उपाय करै वह बुद्धिहीन है ऐसा निश्चय कर सब संसारी सुख छोड़ करके अलग हुये और श्रीजगन्नाथपुरी में पहुँचकर भगवत् के दर्शन किये समुद्र के किनारे जाकर बैठरहे और मन जो भगवत् के रूप अनूप में दृढ़ लगगया था इस हेतु भोजन की सामग्री के न मिलने से विकल न हुये तीन दिन बीते कुछ न खाया और भगवत् का नाम लेते एक जगह बैठरहे तब भगवत् ने सोचा कि हमारे वास्ते नित्य हजारों मन व्यञ्जन

का यह प्रताप हुआ कि भगवत् के मन्दिर में और उस स्त्री के हृदय में बराबर प्रकाश होगया उस स्त्री को तुरन्त भक्ति उत्पन्न भई दूसरे दिन माधवदासजी गये तो झट दौड़के चरणों में गिरी ऐसी दयालुता का वर्णन किससे हो एक पण्डित सब देशों के पण्डितों को शास्त्रार्थ और चर्चा में जीतताहुआ पुरुषोत्तमपुरी में आया और माधवदासजी से कहनेलगा कि मेरे साथ चर्चा करो माधवदासजी ने चर्चा न की और काग़ज़पर लिख दिया कि माधवदासजी हारा तब वह पण्डित काशीजी में गया और अपनी बड़ाई और पाण्डित्य दिखाकर कहा कि मैं माधवदास को जीतकर आया हूं जब वह पत्र पण्डितों की सभा में धरा तो उसमें लोगों ने लिखा देखा कि माधवदास जीता और पण्डित हारा फिर वह जगन्नाथ पुरी में आया और माधवदासजी को क्रोध से अनेक दुर्वचन कहकर बखेड़ा करनेलगा तब माधवदासजी बोले भाई तुम कहो सो फिर लिख देवें तब पण्डित ने कहा तू बड़ा धूर्त है तुझे गदहेपर चढ़ाय काला मुहँ करके चारोओर फिराऊंगा यह सुन माधवदासजी तो चुप होरहे और वह पण्डित स्नान करने को चलागया तभी भगवत् पण्डित का रूप धरके उसके पास पहुँचे और चर्चा करके उस पण्डित को जीत लिया और उसको गदहेपर चढ़ाकर और सौ दोसौ बालक पीछे लगाकर और आप भी लड़के के रूप से उसके साथ होकरके उस पण्डित की खूबही धूल उड़ाई संयोगवश माधवदासजी भी उसी ओर आ गये और भगवत् से विनती की कि ऐसे पण्डित को बेमर्य्याद और मानभञ्जन करना कौन उचित था भगवत् ने कहा बहुतही उचित और प्रयोजन था कि यह मूर्ख मेरे भक्त को गदहे पर चढ़ाकर मुझ से छेड़ करता था तब माधवदासजी ने आप उसको गदहेपर से उतारा और आपही अपना अपराध क्षमा करानेलगे पण्डित बहुतही लाचार होगया एकबेर माधवदासजी

के मन में आया कि पुरुषोत्तमपुरी में ब्रज के चरित्र बहुत कीर्तन हुआ करते हैं इससे ब्रज का दर्शन करना चाहिये सो चले राह में एक बाई भगवद्भक्त इनको भोजन कराने लेगई जब भगवत् का भोग लगाया तो जगन्नाथरायजी आये और माधवदासजी भोजन करने लगे तो वह बाई भगवत् का सुकुमार अङ्ग देखकर रोनेलगी माधवदासजी ने कारण पूछा तो कहा कि यह लड़का जो तुम साथ लाये हो परम सुकुमार है इसके माता पिता कैसे जीते रहे होंगे जब माधवदासजी ने गर्दन फेरके देखा तो स्वामी हैं देखतेही प्रेम में मग्न हो बेसुधि होगये फिर उस बाई का बोध करके आगेको चले किसी और गांव में एक वैश्य हरिभक्त रहता था उसे माधवदासजी ने बचन दिया था कि हम तेरे घरपै आवैंगे सो उसके घर गये वह किसी काम को गया था उसकी स्त्री आय चरणों में गिरी एक महन्त उसकी अटारीपर रोटी करता था स्त्री ने उस महन्त से कहा कि एक हरिभक्त आगये हैं वे भी आप के साथ में प्रसाद पालेवेंगे महन्त ने क्रोध करके उत्तर दिया कि यहां किसी और की रसोई नहीं होसक्ती तब लाचार हो उस स्त्री ने विनय किया कि सामग्री तैयार है आप रसोई बनालेवें माधवदासजी बोले और नहीं बनासक्ते कुछ भोजनकी वस्तु तैयार हो सो लेआव वह गरम दूध लेआई भोग लगाकर चलदिये और कहगये कि अपने पति से कह देना माधवदास जगन्नाथी आये थे। फिर वे थोड़ी ही दूर पहुँचे कि वह वैश्य भी आगया और वृत्तान्त उनके आने का स्त्री से सुनकर दौड़ा जाकर अत्यन्त प्रेम से चरण पकड़ लिये और घर पधारनेको बहुतही विनय किया माधवदासजी ने उससे कहा कि तेरे घर स्त्री ऐसी बड़भागिनी है कि वर्णन नहीं होसक्ता अब तेरे उद्धार में क्या सन्देह है तब तो वह महन्त भी माधवदासजी का नाम सुनकर महाजन के साथ आया था हाथ जोड़ अपराध क्षमा कराने लगा

और शिक्षा चाही माधवदासजी ने कहा कि हरिद्वार में जाकर भगवद्भक्तों की शीतप्रसादी सेवन करो तब कुछ ठिकाना लग जायगा वहां से महाजन महन्त को विदा करके वृन्दावन में आये श्रीवृन्दावन और श्रीवृन्दावनचन्द्र के दर्शन करके परम आनन्द में मग्न होगये, बांकेविहारीजी के मन्दिर में दर्शन करने गये थे वहां चने मिले और द्वारपालों ने कहाभी कि अब भगवत् रसोई भोग लगजाता है तब प्रसाद मिलेगा परन्तु चनेही से क्षुधा की शान्ति समझकर यमुनाजीपर आये और भगवत् अर्पण करके भोग लगाया जब मन्दिर में रसोई तैयार भई और पुजारी नाना विधि मधुर व्यञ्जन भगवत् के भोग के लिये लाये तो भगवत् ने अङ्गीकार न किया और आज्ञा भई कि माधवदासजी ने हम को चना भोग लगाया इससे अब कुछ चाहना नहीं रही तब पुजारी और गोसाईं लोग दौड़गये और माधवदासजी को ढूंढ़कर लेआये तब भगवत् ने भी भोग अङ्गीकार किया श्रीवृन्दावन के दर्शन करके व्रजभूमि के दर्शन को गये वहां भाण्डीरवन में (खेम) नामी साधु रहता था उसके स्थान पर टिकने का विचार किया तो उसने टिकने न दिया और कठोरताई बहुत करी माधवदासजी अलग कहीं जाय ठहरे जब उस साधु ने अपने लिये तसमई तैयार की और खाने को बैठे तो उसमें बहुत से कृमि पड़गये तब लाचार होकर आया और माधवदासजी के चरणों में गिरा तब माधवदासजी ने अपराध क्षमा किया और हरिभक्ति की शिक्षा की फिर हरियाने गांव में पहुंचे वहां एक ठौर वैरागियों के स्थान में साधुसेवा हुआ करती है और गौवें बहुतसी रहती हैं वहां कथा भागवत की होती थी भगवत्चरित्र सुनने को कुछ दिन वहां टिकरहे और टहल वहां की अपने अङ्ग से यह उठाली कि गोवर इकट्ठा करके उपले थाप देते दैवयोग एक साधु आया वह इनको पहिंचानकर चरणों

में गिरा जब वहां के महन्त आदिकों ने भी माधवदासजी को जाना, तो सब चरणों में पड़े और बहुत विनय कर अपराध क्षमा कराया कुछ दिन वहां रहे और चलती वेर ऐसा वर देगये कि अबतक उनका स्थान पूर्ववत् बना रहता है और वहां साधुसेवा होती है फिरती वेर अपने घर भी गये और माता आदि को भगवद्भक्ति उपदेश देकरके चले आये जब उस महाजन के गांव के निकट पहुँचे तब स्वप्न में अपने आने से उसे जनादिया कि तो वह आया और दर्शन किये वहां से पुरुषोत्तमपुरी को चले और भगवत् के दरबार में पहुँचकर भगवत्सेवा भजन में लगे चरित्र बहुत है कुछ लिखा गया ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेऽष्टपञ्चाशत्तमः प्रदीपः ॥ ५८ ॥

अथैकोनषष्टितमः प्रदीपः ।

नारायणदासजी का दृष्टान्त ।

भक्तिः प्रायो जायते हि खिन्नस्य परवाक्यतः ॥
अलहवेषस्य भक्तस्य भक्तिरासीद्यथा हरौ ॥ १ ॥

पराये वाक्य से खिन्न दुःखी होने अर्थात् किसीके उलाहना देने से भी भक्ति उत्पन्न होती है जैसे अलहवेषधारी नारायणदासजी को भाभी के कहने से भक्ति भई (दृष्टान्त) जैसे नारायणदासजी जाति चारन अलहभक्त के वेष में भागवत और वैराग्यवान् भये उनका बड़ा भाई तो कमानेवाला था और नारायणदासजी लुटानेवाले थे एक वेर भाभी ने भोजन ठण्डा खाने को दिया इन्हों ने न खाया गरम मांगा तब भाभी ने बोली मारी कि क्या तू अपने बाबा अलहजी के जैसा भक्त है जो तुम्हारी आज्ञा उठाया करें वह बोली नारायणदासजी के लगगई कि भगवद्भक्ति से विमुख होके जीना पशुसमान है मनुष्यदेह केवल भगवद्भक्ति के लिये है संसारीसुख के हेतु

नहीं है इससे भगवद्भक्ति सार है और यह संसार अनित्य है यह समझकर संसार को त्यागदिया द्वारका में जाकर ऐसे सेवा भजन में लगे कि भगवान् ने भक्ति से वश होकर जो कृपा उनके चाचा अल्हजीपर की थी वैसेही उनपर करी साक्षात् प्रकट हो दर्शन देतेभये ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निवन्धे एकोनषष्टितमः प्रदीपः ॥ ५६ ॥

अथ षष्टितमः प्रदीपः ।

जीवगोसाईंजी का इतिहास ।

इस कलियुग में रूपसनातनजी तो भक्ति के जलसमान हुये और (जीवगोसाईं) महाराज मानसरोवर के सदृश और भजन उस मानसरोवर के घाट के समान है और भक्त की दृढ़ता फूले कमल के सदृश है कलियुग के प्रपञ्च की काई जिस सरोवर के निकट न पहुंची और जो भगवद्भक्त हैं वे हंस के सदृश हैं उन को परम आनन्द देनेवाले हुये जिन्हों ने वृन्दावन में वास करके प्रिया प्रियतम महाराज की सेवा और भजन में मन लगाया और जगत् के उद्धारनिमित्त सब शास्त्र और पुराण आदि इकट्ठे करके उनका जो सार अभिप्राय था उसको अच्छे समझकर ऐसी भगवद्भक्ति को प्रकट किया कि करोड़ों संसारसमुद्र के पार होगये और शोकसंदेह के नाशक ऐसे हुये कि सूर्य्यरूप और मेघ के समान सबके उपकारक हुये माधुर्य्यभाव से भगवत् की उपासना करते थे रासलीला और विहारलीला के तत्त्व को जानते थे उसी को मुख्य समझते थे रूपसनातनजी के भतीजे थे धन ऐश्वर्य्य बड़ा रहा तो सब को असार और अनित्य समझकर त्यागदिया श्रीवृन्दावन में आये धोती और चादर रेशमी बड़े मोल की शरीर पर थी रूपसनातनजी ने मुलाक़ात के समय हँसकर कहा कि नाम

सो वैरागी और पोशाक यह तव जीवगोसाईंजी ने उस को भी त्याग दिया और गांव से अलग यमुना किनारे कुटी वनाकर भगवद्भजन में लगे एक दिन गोसाईं रूपजी उस ओर जानिकले तो व्रजवासियों ने कहा कि हमारे गोसाईंजी के दर्शन करो तव रूपजी आये और जीवगोसाईंजी की मग्न दशा देखकर अतिप्रसन्न भये और छाती से लगाय रहे फिर अपने पास टिकाकर सव शास्त्र सिखाया और रसग्रन्थ तथा भगवत्चरित्र के गोप्यलक्ष्य उनको सव समझाये फिर जीव-गोसाईंजी ने उन्हें सव संसार में प्रवृत्त किये फिर अकवर वादशाह ने गङ्गा व यमुनामाहात्म्य के निर्णय करने को बुलाया तो इनको व्रजभूमि छोड़ रात्रि को और ठौर नहीं रहने का नियम था इस हेतु वादशाह ने डाक के अनुसार एक प्रहर में उलटाय पहुँचाने का वाचा प्रवन्ध किया सो आगरे में आये और ऐसे सुष्ठुवाद से यमुनाजी की बड़ाई को ठहराया कि किसी को कुछ अनुवाद की जगह न रही अर्थात् यह सिद्धान्त दिखाकर वोले कि अल्प विचार के वास्ते वृथा हमको बुलाया कोई पुराण देखलिया होता कि पुराण में गङ्गा जी को जिन विष्णुजी का चरणामृत लिखा है यमुनाजी उन्हीं की पटरानी हैं तो विचार करलेना चाहिये कि वड़ाई किसकी हुई इस उत्तर से किसी को किसी वात का सन्देह न होय यह उपासना और सिद्धान्तकी परमपक्तता है जिस ओर जिस किसी को जैसा विश्वास है उसको वह देवता वैसाही फल देता है। वादशाह, गोसाईंजी के निर्णय को सुनकर वहुत प्रसन्न हुआ और विनय किया कि कुछ सेवा की आज्ञा होय गोसाईंजी वोले कुछ इच्छा नहीं है जव वहुतही कहा तो आज्ञा की कि सव शास्त्र और स्मृति पुराणआदि काशीजी से मँगवाकर वृन्दावन में इकट्ठे करवादेओ तो वादशाह ने थोड़ेही समय में आज्ञा गोसाईंजीकी पूर्ण की कि अवतक स्मृति पुराण आदि

वृन्दावन में विराजमान हैं गोसाईंजी ने जिसप्रकार गोविन्द-देवजी का मन्दिर (मानसिंह) अजमेर के राजा से बनवाया कि वर्णन नहीं होसक्ता फिर अकबर बादशाह वृन्दावन में आया गोसाईंजी के दर्शन किये और चलते समय विनय किया कि ब्रज में मकान पक्के बनवाने की आज्ञा होवे गोसाईं जी बोले कुछ प्रयोजन नहीं उसने बहुतही हठ किया तब गोसाईंजी ने कहा कि हृदय की आँखों से श्रीवृन्दावन की सजावट को देखना चाहिये बादशाह ने आँखें बन्दकरके देखा तो धरती और वृन्दावन के कुञ्जनिकुञ्ज सब स्वर्ण के रत्नजटित देखपड़े तब आधीन हो विदा हुये और रीति गोसाईंजी की ऐसी थी कि जो कोई कुछ भी भेट पूजा लेजाता था सो श्री-यमुनाजी में डालदेते थे अपने पास कुछ नहीं रखते थे सेवक लोगों ने हाथ जोड़कर विनय किया कि किसलिये यमुनाजी में डाला करते हो अच्छा है जो साधुसेवा हुआ करे तो कहा कि साधुसेवा करनेवाला कोई देखने में आता नहीं है एक चेला बोला कि जो आज्ञा हो सो किया करें तब गोसाईंजी ने आज्ञा की तो वह साधुसेवा करनेलगा । एक साधु ने रात के समय आय भोजन मांगा वह सेवक टहल करने के परिश्रम से थका हुआ रिस करके बोला कि इस समय भोजन कहां है प्रभात को मिलेगा जो बड़ीही भूख है तो मुझ को खालेव गोसाईंजी सुनकर बोले कि इसी श्रद्धापर साधुसेवा स्वीकार करी थी कि उन्हें आदमीखोरा बताता है फिर पीछे हरिभक्तों का माहात्म्य और उनकी बड़ाई और सेवाका फल समझाया फिर आप श्रीगोविन्ददेवजी की सेवा पूजा में गोसाईं रूपजी की आज्ञा से रहते थे बहुत कालतक बड़ी प्रीति और स्नेह से सेवा की जब एक शिष्य की भगवद्भक्ति और प्रेम की सब प्रकार से परीक्षा करली तब भगवत्सेवा उसको सौंपकर आप श्रीवृन्दावन की लता और कुञ्ज यमुनातट के वन

ध्यानसे बेसुधि और निमग्न रहनेलगे॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे षष्टितमः प्रदीपः॥६०॥

अथैकषष्टितमः प्रदीपः।

सुरसुरीजी का दृष्टान्त।

भक्तं रक्षति केनापि वेषतः सेवितः कृष्णः॥ ख्यातः सुरसुर्यासौ व्याघ्रो भूत्वा ररक्ष ताम्॥१॥

सेवा किये भगवान् निजभक्त की किसी वेष से भी रक्षा करते हैं जैसे येही भगवान् सुरसुरीजी करके ध्यायेगये तो तिन्हों ने व्याघ्ररूप होकर तिनकी रक्षा करी (वृत्तान्त) यह है कि सुरसुरीजी परमसती ऐसी भगवद्भक्ता हुई कि जिसका सत रखने के लिये भगवान् आप स्वरूप धारण करके आये ये सब धन सम्पत्ति को अनित्य और संसार को असार समझ कर घर त्याग करके और अपने पति (सुरसुरानन्दजी) के साथ वृन्दावन में आयके भगवद्भजन में लगी रूप अतिसुन्दर था उनकी कुटी के पास मुसल्मानों का डेरा आनपड़ा उनका सरदार सुरसुरीजी के रूप को देखके आसक्त हुआ तो अपने सेवकों को पकड़लाने की आज्ञा की, तो सुरसुरीजी ने धनुषधारी का ध्यान किया तब भगवान् ने तुर्तही व्याघ्र के रूप से प्रकट होकर कि तरकस से तीर निकालते धनुष चढ़ाते देर होगी इससे व्याघ्ररूप हो सब दुष्टों को विडारा कितनों को मारडाला कितनों को घायल किया व्याघ्ररूप से इस हेतु प्रकट भये कि व्याघ्र के सब अङ्ग शस्त्ररूप हैं इससे वह रूपकर दुष्टों के दल को मारते हुये॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे एकाधिकषष्टितमः प्रदीपः॥६१॥

अथ द्विषष्टितमः प्रदीपः ।

हरिवंश की कथा ।

भगवत् का वचन है कि जे निष्किञ्चन मेरा भजन करते हैं उनको मैं शीघ्र मिलता हूं इस वचन पर हरिवंशजी को दृढ़ विश्वास था जैसे किसी घसियारे ने जिसके पास केवल खुरपा जालीही था उसे गङ्गास्नान के समय दान करदिया तैसेही ये भी सब वस्तु त्यागकर भगवद्भजन में लगे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे द्व्यधिकषष्टितमः प्रदीपः ॥६२॥

अथ त्रिषष्टितमः प्रदीपः ।

हनुमान्जी का दृष्टान्त ।

वायुसूनुर्महाभक्तो भक्तश्रेण्याः शिरोमणिः ॥ रामनामाङ्कितवपुः श्रद्धालुरभवद् दृढम् ॥ १ ॥

वायु के पुत्र (हनुमान्जी)भक्तशिरोमणि महाभक्त अति श्रद्धावान् भये । जिनके रोम २ में रामनाम अङ्कित था (वृत्तान्त)श्रीहनुमान्जी का भक्तिभाव और कथाचरित्र ऐसे पवित्र हैं कि आप रघुनन्दन स्वामी जिन्हें सुनकर प्रसन्न होते हैं श्रीरघुनन्दन स्वामी के जो संसारसमुद्र से तिरानेवाले नौकारूप चरित्र हैं उनके प्रवर्तक श्रीहनुमान्जी हुये इनकी महिमा किस से वर्णन होसकै कि सब ब्रह्माण्ड तिनकी सेवा को धन्य २ कहता है । सीता महारानी को तो भगवत् का संदेश और रावणके वध होने की भविष्य वार्ता सुनकर फिर रघुनन्दन स्वामी के पास जाय समाचार सुनाये लक्ष्मणजी के लिये संजीविनी लाये उनका प्राण बचाया फिर भरत शत्रुघ्न और अयोध्यावासियों को भगवत् के आगमन का शुभ समाचार सुना कर उपकार किया और भगवच्चरित्रों को सर्वत्र विख्यात कर संसारीजीवों को परमपद के अधिकारी किये और गानविद्या,

शस्त्रविद्या, व्याकरण और साहित्यशास्त्र में विशेष करके आचार्यत्व हनुमान्जी का ही है शिवजी के अंश हैं केवल रघुनन्दन स्वामी की सेवा के लिये अवतार लिया है भगवत् ने इनकी सेवा की बड़ाई की और सर्वकाल भगवत् की सेवा में प्राप्त रहे। भगवत्नाम से ऐसा विश्वास था कि जब श्रीरामचन्द्रजी लङ्का जीतकर आये तो विभीषण ने एक मणिमय माला अद्वितीय जैसी और नहीं तैसी समुद्र से लेकर भगवत् के लिये अर्पण की जिससमय रघुनन्दन महाराज राजसिंहासन पर विराजमान हुये तो उस माला को भगवान् ने निजमन में विचारा कि माला एक और इसके लेनेवाले अनेक हैं तो ऐसे किसी को देनी चाहिये जिसे चाहना न हो सो हनुमान्जी के गले में डालदी उन्होंने देखा तो विचार किया कि प्रकट देखने में तो कोई बात भगवद्भक्ति की इस माला में दिखाईपड़ती नहीं क्या जाने भीतर कोई बात हो इस हेतु एक नग को तोड़ा और उसे देखा जब भगवत्नाम उस में न पाया तो दूसरा तोड़ा तब भी जो नाम न पाया तो तीसरे को तोड़ा इसीप्रकार बहुतसे नग तोड़ डाले ज्यों२ दाने तोड़ते त्यों२ चाहनेवालों का मन टूटता था और वे मन में रिस करके कहते थे कि कैसे बेशऊर को यह अमोल माला देदी कि जो मोल परख को नहीं जानता निदान एक किसी से नहीं रहागया तो हनुमान्जी से बोला कि किसलिये ऐसी दुर्लभ माला के नगों को तोड़ेडालते हो तो हनुमान्जी ने कहा कि इस माला के नगों में रामनाम, देखता हूं उसने कहा कि महाराज कहीं ऐसी वस्तुओं के भीतर भी रामनाम होता है तब हनुमान्जी ने कहा कि जो इसके भीतर रामनामही नहीं तो यह किस काम की है वह कहनेलगा कि जो आपके विश्वास का ऐसा वृत्तान्त है तो आपके भीतर भी रामनाम होनाचाहिये हनुमान्जी बोले सत्यही होनाचाहिये यह कहके

अपनी छाती का चर्म उखाड़के दिखाया तो सब रोम २ में रामनाम लिखा था देखतेही सबको हनुमान्जी की भक्ति के विश्वास का निश्चय हुआ ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेम
निवन्धे त्रिषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६३ ॥

अथ चतुष्षष्टितमः प्रदीपः ।

नरहरिआनन्द का दृष्टान्त ।

दृढभक्तकृतां हानिं देवोऽपि सहते निजाम् ॥ यथा नरहर्य्यानन्दो दुर्गाकाष्ठं समानयत् ॥ १ ॥

देवता सच्चेभक्त करके करीभई निजहानि को भी सहलेते हैं जैसे नरहरिआनन्दजी दुर्गामन्दिर से काष्ठ उठालाये (वृत्तान्त) "नरहर्य्यानन्दजी" ऐसे परमभक्त हुये कि सिवाय भगवत् भजन के कुछ भी काम न था और सदा भगवत् सेवा सामा की तैयारी ही में रहते थे एकदिन भगवत् रसोई का चौका आदि बनाकर भगवत् प्रसाद तैयार करनेलगे घर में ईंधन नहीं था और पानी बड़े धूमधाम से वर्षता था इसहेतु बाज़ार में भी लकड़ी न मिली और भगवत्सेवा सर्वोपरि है देवता भी इससे प्रसन्न हैं अब रसोई में विलम्ब करना उचित नहीं यह समझकर दुर्गा का मन्दिर निकट था वहां गये और छत उतारने लगे तो (दुर्गामहारानी) इस भगवत्सेवा के दृढ़ विश्वास पर प्रसन्न हुईं और नरहरिआनन्दजी से कहा कि मन्दिर न फोड़ोतोड़ो लकड़ी तुम्हारे घर पहुँचती रहेगी नरहर्य्यानन्दजी फिरि आये और प्रयोजन भरे को नित्य लकड़ी पहुँचती रही एक पड़ोसन ने इस भेद को जाना और अपने पुरुष से कहा कि नरहर्य्यानन्दजी ने दुर्गा को प्रसन्न करके नित्य लकड़ी पहुँचाना ठहरालिया है तुम भी तैसा ही करो तो नित्य लकड़ी आ पहुँचाकरे तो वह 'निर्बुद्धिजन'

दुर्गामन्दिर पै पहुँच मन्दिर पै जैसे फावड़ा मारने लगा तैसेही दुर्गा महारानी ने शिर नीचे पैर ऊपर करके लटकाय दिया जब मरने लगा तो पुकारा कि हे दुर्गाजी। अबके प्राण बचाओ फिर ऐसा अपराध न होगा दुर्गा ने कहा जो मेरे बदले नर-हर्य्यानन्द के घर लकडी पहुँचाय दिया करे तो प्राण तेरे बचें तब उसने दुर्गाजी की आज्ञा स्वीकार करी श्रीदुर्गा के शिर से बेगार छूटी भगवत्सेवा की महिमा जो कुछ वर्णन होसके सो थोड़ी है समस्त तो शेष शारदा से भी नहीं कही जाती॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम-
निबन्धे चतुष्षष्टितमः प्रदीपः॥६४॥

अथ पञ्चषष्टितमः प्रदीपः।

प्रेमनिधि का दृष्टान्त।

हरिः सेवावशीभूतो भक्तदुःखं व्यपोहति॥ यथा प्रेमनिधेरग्रे गतः प्रज्वाल्य दीपिकाम्॥१॥

सेवावश भये भगवान् निजभक्त के दुःख को दूर करते हैं जैसे भगवान् प्रेमनिधि के आगे मशाल लेकर चले (प्रेम-निधिजी) जाति के चारण, रहनेवाले आगरे के ऐसे मधुर व-चन से जगत् को आनन्द देनेवाले हुये कि वर्णन नहीं होता गृहस्थी होकर किसी काम में बद्ध नहीं थे भगवत् भक्तों के सत्सङ्ग के नेमी और दयालु हुये सदा चार घड़ी रातरहे उठके भगवत्सेवा में लगते भगवत् के लिये यमुनाजल अपने शिरपर धरके ले आया करते एक बेर वर्षासमय राह में कीच बहुत थी चिन्ता में लगे कि प्रभात हुये राह में लोगोंकी भीड़ होगी किसी नीच से जल छू न जाय और रात को जायँ तो कहीं अँधेरे में गिर न पड़ें घट फूट न जाय निदान नीचका स्पर्श अयोग्य विचारकर पानी बर्षते उसी अँधेरी में कलश को लेके चले जैसेही द्वार से बाहर पग दिया तैसेही भक्तवत्सल

करुणाकर महाराज उनकी सेवा से प्रसन्न भये बारह वर्ष के लड़के के स्वरूप से मशाल लेकर प्रेमनिधिजी के आगे २ हो लिये । प्रेमनिधिजी ने जो रूपमाधुरी उस मशालची (मनमोहन की) हरारङ्ग आँखें रसीली घूँघरवाली अलकैं लाल चीरा बांधे कमर मशालचियों की नाईं कसेहुये और हाथ में मशाल देखी तो भीतर बाहर सब प्रकाशित होगया तो आसक्त और मोहित होगये । यद्यपि यह विचार भी लिया कि यह अपने स्वामी को पहुँचाकर आता है परन्तु उसके देखने की आशा करके जिधर को वह चलाजाता था उधरही को आप भी जाते थे । फिर यमुनाजी पर पहुँच प्रेमनिधिजी स्नान कर कलश जलका शिरपर धरकरके उसी तरह चले घर आये तो कलश मन्दिर में रखकर तुर्त उस मशालची को ढूंढ़ने लगे कहीं पता न लगा तब जानगये कि ऐसे रूपवाला सिवाय उस व्रजकिशोर चित्तचोर के और कौन है जो एकही निगाह में अपना दास बनालेवे और दासकी भीड़पर निजईश्वरता को छोड़ सीधा सादा बनके आन पहुँचे ऐसे समझकर भगवत्सेवा में लगे जब भगवत्सेवा से छुट्टी पाते तो भगवत् का कीर्तन किया करते और बड़े प्रेम से कथा कहते श्रोता बहुत से आते थे कथा के पीछे कुछ गान होता था तब सब स्त्री पुरुष भगवत्भाव में मग्न होजाते थे दुष्ट और पापीजनों को यह बात अच्छी न लगती थी तो बादशाह से जनाकर निन्दा की कि प्रेमनिधि, कथा के मिस स्त्रियों को जमा करके घर में आनन्द करता है तब बादशाह ने चोपदार को भेजा । उसने लेचलने के वास्ते जल्दी की, उससमय प्रेमनिधिजी भगवत् के निमित्त जल लिये जाते थे चोपदार की जल्दी से जल पिलाना भूल गये बादशाह के सम्मुख भये उसने वृत्तान्त पूछा इन्हों ने सत्य २ जो था वह कह सुनाया कि भगवत् के आगे कीर्तन किया करता हूं उससमय कोई भी स्त्री पुरुष आवें रोक टोक नहीं है

बादशाह ने कहा तुम्हारे टोले के लोगों ने कुछ खोटीबात कही है उसकी हम भलीभांति परीक्षा करेंगे यह कहकर प्रेमनिधि को नजर क़ैद रक्खे और आप महल में चला रात को जब सोया तो भगवत् ने उसके इष्टदेव के रूप से आकर स्वप्न में कहा कि हमको जल की तृषा लगी है बादशाह बोला जल के घड़े भरे हैं पान करिये तब उत्तर दिया कि तेरे घड़े का जल हमारे काम का नहीं तब कहा जिसे आज्ञा हो वही लेआवे तब भगवत् ने कहा कि हमारा जो पानी पिलानेवाला है उसे तो तूने क़ैद कर रक्खा है पानी कौन पिलावै तभी बादशाह की आंखें खुलगईं तो बड़ी मर्याद से प्रेमनिधिजी को बुलाये और चरणों में शिर रखके अपराध क्षमा कराया। और कहा कि आप जल्द जाइये जो तृषा की तृषा को भी दूर करनेवाला है उसे भी आप के बिन तृषा लगी है और मालमुल्क जो चाहिये सो लीजिये तो कुछ न लिया बिदाहुये बादशाह ने मशाल साथ देकर उनके घर पहुंचा दिया उसी क्षण प्रेमनिधिजी ने भगवत् को जल पान कराया तभी तृषा मिटगई॥

इति श्रीशुकदेवसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे पञ्चषष्टितमः प्रदीपः॥ ६५॥

अथ षट्षष्टितमः प्रदीपः।

आशकरणजी का दृष्टान्त।

भक्तश्छिन्नशरीरोऽपि नहि सेवां जहाति हि॥ आश
कर्णश्छिन्नपादो नहि सेवां यथाऽजहात्॥ १॥

भक्त का शरीर कट भी जावे पर वह हरिसेवा को नहीं छोड़ता है जैसे आशकरणजी का पैर भी काटागया पर वे हरिसेवा को न छोड़ते भये (वृत्तान्त) "आशकरणजी" राजा नरवरगढ़ के महाराज भीमसिंह के बेटे जाति के कछवाहे स्वामी कील्हजी के चेले धर्मात्मा और परम भागवत गुणवान् हुये कि वर्णन नहीं होसक्ता दशघड़ी दिनचढ़ेतक भगवत् की सेवा पूजा किया

वस्त्र में से आधा देकर बाहर लाई और एक साथ भोजन किया पीछे पीपा और सीताजी उसकी सेवा को उचित समझकर विशेष द्रव्य प्राप्ति वेश्याकर्म से हो यह निश्चय करके बाज़ार में जा बैठे सुन्दर रूप देखकर लोग जमा हुये समीप आये तो आंख उठाकर न देखसके पूछा तो उत्तर दिया कि वेश्या हैं घर बार कुछ नहीं केवल एक समाजी (भडुवा) साथ है वे लोग सुनकर चुप होरहे कुछ हँसी की बात नहीं कहसके नाज मुहर रुपैया भेंट किया पीपाजी ने वह सब चीधर भक्त के घर पहुँचाय दिया आप ऐसे वैराग्यवान् थे कि जिसी समय भगवद्भक्तों को देदिया आप जैसे थे तैसेही रहे पीपाजी विदा होकर राहका कष्ट उठाते टोडाशहर में टिके तालाब पर स्नान करनेगये मुहरों से भरा एक घड़ा देखा रात को सीता से कहा चोरों ने सुनकर जाकर देखा तो घड़े में बड़ा भारी सर्प है तब विचारा कि उसको इस सांप से कटवा देना चाहिये जो हमारे कटवाने के लिये झूठ कहा तो उस घड़े को पीपाजी के स्थानपर डाल कर चलेगये पीपाजी ने उससमय सातसौ वीस अशर्फी जो पांच२ तोले की एक२ थी तीन दिन में भण्डारा करके साधुओं को खिला दिया सूर्यसेन राजा उस देश का था वह पीपाजी का नाम सुनकर दर्शन को आया चरणों में गिरा और विनय किया कि मुझ को भी अपना सा बना लीजिये और शिष्य करके मन्त्रोपदेश कीजिये पीपाजी ने कहा कि अपनी धन संपत्ति और रानी आदि सब हमारे भेंट करदेव राजा ने तुरन्त वैसाही किया तब उस को मन्त्रोपदेश दिया और रानी और सम्पत्ति आदि जो भेंट की थी सो सब फेरदी और कहा कि भक्तों से परदे का प्रयोजन नहीं राजा के भाई बन्धु यह बात सुनकर बहुत क्रोधयुक्त हुये और पीपाजी से गुप्त दुष्टता करने लगे एक बनजारा बैल मोल लेने को आया किसी ने कहा पीपाजी के पास

बैल अच्छे २ हैं। बनजारे ने पीपाजी के पास आय के रुपये नकद रखदिये और कहा कि नये २ बैल मोल लेने हैं पीपा जी दुष्टों की दुष्टता को जानगये तो कहा कि इस समय बैल चराई पर गये हैं फिर आकर लेजाना वह तो सुनकर चला गया और पीपाजी ने उन रुपयों से भण्डारा और महोत्साह आरम्भ किया हजारों मनुष्य जमा थे सो ही वह बनजारा भी आ पहुँचा और रुपयों के लिये विनय किया तो पीपाजी ने उत्तर दिया कि ये हजारहों बैल खड़े हैं जो परमधाम तक खेव पहुँचादेते हैं वह बड़भागी बनजारा उन साधुओं का दर्शन करते ही उसी घड़ी भगवत्शरण भया और अच्छे २ वस्त्र साधुओं के भेंट किये एक बेर पीपाजी घोड़े पर सवार होकर स्नान को गये घोड़े को खुला छोड़के स्नान करने लगे घोड़को दुष्टलोग चुरा लेगये और बांध लिया जब स्नान करके चलने का विचार किया तो घोड़ा कसा कसाया आकर खड़ा हुआ मानों कोई तैयार करके लाया है दुष्टजन लज्जित हुये एक बेर पीपाजी हरिभक्तों के समाज में गये थे घरपै साधु आये उस समय कुछ घरमें न था तो सीता जी बाजार में जाय एक बनिये से रातको आने का क़रार करके रसोई की सामग्री ले आई तभी पीपाजी भी आये सब वृत्तान्त कहदिया जब रातको सीता शृङ्गार करके चली तो जल बहुत वर्षनेलगा तब पीपाजी अपनी पीठपर चढ़ाकर लेगये दर्शन से बनिये को ज्ञान होगया चरणसूखा देखकर कहा माता कैसे आई सीता ने कहा मेरे स्वामी अपनी पीठपर लाये हैं दरवाज़े पर खड़े हैं बनियां दौड़कर चरणों में गिर गिड़गिड़ाने लगा पीपाजी बोले, लज्जा का कुछ प्रयोजन नहीं अपनी दूकान में जाय बचा जी चाहे सो करो चैन उड़ाओ तुमने वह रुपया दिया है जिसके निमित्त भाई आपस में लड़ २ कर मरते हैं तब बनियां बहुत दुःखी हो धार मार २ कर रोनेलगा तो पीपाजी को दया आगई तो

दीक्षा देकर आवागमन के दुःख से छुटादिया वहां के दुष्टों ने यह वृत्तान्त राजातक पहुँचाया ब्राह्मणों ने राजा से कहा कि यह बड़ी अनीति है राजा अज्ञान अपनीही नाईं समझकर बे विश्वास होगया पीपाजी नें सुनके विचार किया कि गुरु से विश्वास छूटे इसके दोनों लोक बिगड़ जायँगे इसको दृढ़ विश्वास करा देना चाहिये इस हेतु राजा के घर गये खबर कराई तब राजा ने कहाय भेजा कि पूजा करता हूं पीपाजी सुन बोले कि यह राजा बड़ा मूर्ख है जो गद्दी पर आराम से बैठाहै और कहता है कि पूजा करता हूं यह सुनते ही राजा तुरन्त उठ आकर चरणों में गिरा तब पीपाजी ने राजा को चेताने के लिये कुछ और परीक्षा देनी उचित समझ कर उसकी रानी वन्ध्या थी उसे लेआने की आज्ञा करी राजा नें कुछ मन न दिया और चला तो अगाड़ी एक व्याघ्र बैठा देखा तो लौट आया कि यही बहाना करूंगा तब पिछाड़ी भी वही देखा तब करामात पीपाजी की मालूम हुई रानी के पास गया और देखा कि रानी के पास लड़का है जो अभी जन्मा है तब तो आधीन और विश्वास संयुक्त होकर साष्टाङ्ग दण्डवत् करके पीपाजी को विनय किया कि मैंने आपकी महिमा का प्रभाव जाना नहीं था अपराध क्षमाकर कृपा कीजिये तब पीपाजी उसी बालक के रूप से प्रकट होकर बोले अरे मूर्ख ! उस दिन के भक्ति विश्वास का स्मरणकर कि जिस दिन चेलाहुआ उचित तो यह था कि दिन २ भगवत् और गुरु में प्रीति अधिक होती जाती यह नहीं कि विमुख होकर नरक में पड़ना अब तो चेतकि दोनोंलोक सहज में प्राप्त हों इस प्रकार शिक्षा देकर अपने स्थान पै गये एक कोई साधु वेष करके आय एक रातका क़रार करके सीता को लेगया तो रातभर आप भी भागा और सीता को भगाई जहां प्रभात हुआ तहांहीं सीता ठहरगई कहा कि स्वामी की एक रात की ही आज्ञा थी तब गांव में सवारी लेने को

गया तो वहां सब स्त्रियां सीतारूप देखीं तब तो उन्हीं सीताजी के चरणों में आय गिरा। इसी प्रकार एक बेर चार विषयी लोगों ने आकर सीता को मांगा जब सीताजी शृङ्गार करके कोठरी में बैठी तो वे भी भीतर धसे तो उन्हें एक बाघिन फाड़ने खानेवाली देखपड़ी तब क्रोध भरे आकर पीपाजी से बोले अच्छे साधु हो बाघिन बैठाली क्या मरवाते हो पीपाजी बोले कि नहीं वह तो सीताही है जैसी तुम्हारे चित्त की वृत्ति है वैसेही दीखती है सो अब तुम शुद्धचित्त से जावो तो सीता का दर्शन पाओगे सीताजी के दर्शन भये तब तो वेभी चेले होकर भगवद्भक्ति करनेलगे। एक तेलिन सुन्दरी (तेल लो २) कहती फिरती थी पीपाजी उसे देख हँसकर कहनेलगे कि जो इस मुख से राम २ निकलता तो बड़ी शोभा होती वह तेलिन बोली कि राम २ तो जब कोई मरजावे तब कहा करते हैं यह कह चलीगई तो घर जातेही अपने पति कोही मरा देखा तब तो आकर चरणो में गिरी और कुटुम्ब सहित राम २ कहने का क़रार करलिया तब पीपाजी ने कृपा करके उसे जिलाया। एकबेर साधुसेवा के लिये एक भैंस कहीं से हाथ लगी चोर आये उसे खोलकर ले चले तो आप उसके बच्चे को लेकर पीछे २ दौड़े और कहा कि यह भैंस बच्चे बिन दूध नहीं देगी वे सुनतेही दास हुये भैंस छोड़कर चलेगये। एक बेर कहींसे एक गाड़ी गेहूं और कुछ रुपये लिये आते थे राह में बटमारों ने गाड़ी छीनली तो पीपाजी वे रुपये भी निकालकर देनेलगे और कहा कि बिन घृत शक्कर के भगवत्भोग की सामान नहीं बनेगी वे सुनते ही दास होगये। एक बेर बहुत सा रुपया इनके शिरपर क़र्ज़ का होगया वह साहूकार नित्य तगादा करने लगा ये उसे आज कल्ह कहा करते उसने लाचार हो हाकिम से फ़रियाद करी हाकिम ने उसकी बही देखी तो सब कोरी देखपड़ी तब हाकिम ने उसे दण्ड देना चाहा तो पीपाजी ही दया करके छुटा लाये और

रुपये भी उसके देदिये जब भगवत् ने देखा कि पीपाजी कङ्गाल होगये तो बहुत सा माल रुपया उनके घर भिजवाया पर पीपाजी ने उसे जल्दी ही पुण्य करादिया एक साधु ने आकर इनसे भण्डारा करने को याचना की तो उसे इतना द्रव्य दिया कि और बचरहा। एक ब्राह्मण ने कन्या के ब्याह करने के लिये द्रव्य मांगा इनके पास न था तो इन्हों ने उसे राजा के पास भेज निजगुरु बताकर उसे बहुत सा द्रव्य दिलाया। एक ब्राह्मण से गोहत्या होगई वह जाति बाहर किया गया तब पीपाजी ने उसे राम २ उपदेश करके भगवद्भक्त किया पर लोगों ने उसे जाति में न मिलाया तब तो इन्हों ने सभा कर सब शास्त्रों के मत से रामनाम की उत्कृष्टता दिखाकर प्रतिपादन किया कि जिस नाम के एक बेर भी मुख से निकलते ही हजारहों गोहत्या दूर होती हैं तो कई बेर कहने से एक गोहत्या छूटनी कौन बड़ी बात है यह सुन सबों ने निरुत्तर हो उसे जाति में लेलिया। एक बेर श्रीरङ्गजी से मिलने को गये वे मानसीपूजा कररहे थे तो माला मुकुट में अटक जाने से पहिराते नहीं बनती तब पीपाजी बाहर से पुकारे कि कैसी पूजा करते हो जो माला नहीं पहिराई जाती रङ्गजी सुनते ही दौड़े आये और परस्पर मिलाप भया। एकादशी को जागरण होरहा था वहां बैठे पीपाजी अचानक ही हाथ मलने लगे लोगों ने कारण पूछा तो कहा कि पुरी में भगवत् के चँदोवे में अग्नि लगी थी उसको बुझाया है राजा ने झट सांड़िनी दौड़ाकर समाचार मँगाया तो सत्य हुआ और यह भी मालूम हुआ कि हर एकादशी को पीपाजी जागरण में आया करते हैं। ऐसे २ बहुत से चरित्र पीपाजी के हैं ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यां प्रेमनिबन्धे सप्तषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६७ ॥

अथाष्टषष्टितमः प्रदीपः।

श्रीरङ्गजी का दृष्टान्त।

यमदूतोद्भवाम्भीतिं तथा प्रेतभवाम्॥
हरेर्भक्तिर्य्यथा रङ्गेऽथ तत्सुते॥ १॥

हरिभक्ति जो है वह यमदूतों के भय को और प्रेतभय को भी दूरकरती है। जैसे रङ्गनाथ और तिनके पुत्र की व्यवस्था भई। (दृष्टान्त) जैसे श्रीरङ्गजी, देवसा गांव जयपुर के निकट है तहां के रहनेवाले सरावगी के बेटे थे उनका सेवक मरकर यमदूत हुआ और उसी गांव में एक बनजारा टिका था उस के प्राण निकालने को वही यमदूत आया तो आगे की प्रीति-वश करके रङ्गजी से मिला और सब निजवृत्तान्त कहा तो रङ्गजी को उस चरित्र के देखने की इच्छा हुई जहां बन-जारा टिका था तहां गये तो देखा कि उस दूत ने एक बैल उसका भड़काया बनजारा उसे पकड़ने को उठा वह दूत बैल के शिरपर जाबैठा और सींग से बनजारे का पेट फाड़ बड़ी पीड़ा से मारडाला। श्रीरङ्गजी देखकर चकित हुये और उस दूत से उपाय पूछा कि जिससे यमदूतों के हाथों से बचें उसने कहा कि बिना भगवद्भक्ति के सबको ऐसीही पीड़ा होती है और जो भगवद्भक्त हैं उनके पास स्वप्न में भी कभी यमदूत नहीं आते श्रीरङ्गजी ने सुनतेही उस सरावगीमत को असार समझकर छोड़ा और उसी घड़ी भगवद्भक्ति स्वीकार करी उसी दूत के बतलाने से (अनन्तानन्दजी) के चेले भये। एक प्रेत, नित्य श्रीरङ्गजी के बेटे को दिखाई देता था इस कारण वह दुबला होगया रङ्गजी ने वृत्तान्त सुना तो उसकी खाट पर सोरहे जब प्रेत आया तो उसे हरिनाम सुनातेही प्रेत भागा और कहा कि मैं इसी गांव का फलाना सुनार हूं परस्त्रीगमन चोरी मिथ्याकर्म करने से प्रेत होगया हूं तब श्रीरङ्गजी को

दया आगई तो भगवत् का चरणामृत उसे दिया उसके प्रभाव से वह देवरूप होगया ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेऽष्टषष्टितमः प्रदीपः ॥ ६८ ॥

अथैकोनसप्ततितमः प्रदीपः ।

खड्गसेन का इतिहास ।

(खड्गसेनजी-जाति कायथ)रहनेवाले गवालियर के भगवत् के रासनिष्ठ भक्त प्रेमी भये पदरचना बहुत ललित किया करते थे । व्रजगोपिका और व्रजग्वालों के मा बापों के नाम ढूंढ़ २ कर एक ग्रन्थ बनाया तथा दानलीला और दीपमालिकाचरित्र, ऐसा ललित बनाया कि जिसके सुनतेही भगवत् में प्रीति उत्पन्न होजाती सम्पूर्ण अवस्था को श्रीव्रजचन्द्र महाराज के और उनके सखा सखियों के चरित्रों में व्यतीत किया और श्रीनन्दनन्दन स्वामी के चरणकमल में ऐसी प्रीति थी कि सिवाय उनके चरित्रों के दूसरी बातों का ध्यान न था रासलीला और दूसरे चरित्रों का समाज उत्साह सदा रहा करता था और शरद्पूनोंको यह दृढ़ प्रण था कि बहुत द्रव्यलगाकर रासलीला कराया करते थे एक बेर प्रिया प्रियतम की रास विलास की दशा में हँसी खेल और राग नृत्य और परस्पर देखना और मुसकियाना श्रीलाड़ली जू का मान और श्रीलालजी का आप मनाना आदि चरित्र देखकर ऐसे बेसुधि तदाकार होगये कि निजदेह को उस प्रिया प्रियतम के रासविलास की नेछावर करके प्राणमुख्य रसरास और नित्य विहार में प्राप्त किये और प्रेम की दशा रासनिष्ठा की महिमा की उसके प्रभाव करके नित्य रासविलास और भगवत्स्वरूप प्राप्त होता है उसे लोक में प्रकट करके भगवद्भक्तिभाव को शिक्षा किया ॥

इति श्रीशुक्रदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेएकोनसप्ततितमः प्रदीपः ॥६९॥

अथ सप्ततितमः प्रदीपः

रैदासजी का इतिहास।

जातो नीचकुले चापि भक्तो भक्तिं न विस्मरेत् ॥
यथा रैदासभक्तोऽसौनीचजोऽपि महत्कृतः ॥ ७० ॥

भक्त किसी कुकर्मवश से नीच कुल में भी जन्म लेलेवे पर वह निजभक्ति को भूलता नहीं है। जैसे भक्त (रैदासजी) गुरु के शाप से नीचजाति के यहां भी जन्मेथे पर बड़ों २ ने उन का सत्कार किया (वृत्तान्त) रैदासजी, पहिले जन्म में ब्रह्मचारी रामानन्दजी के शिष्य सेवक अद्वितीय थे उनके लिये नित्य २ भिक्षा मांगकर लाते फिर आप भोग लगाकर भगवत्प्रसाद पाया करते, एक दिन जल वहुत वर्षता था सो एक बनियां जो बहुत दिनों से कहता था और उसका भोग नहीं लेते थे उसी के यहां से रसोई का सामान लेआये जब रामानन्दजी भोग लगाने को बैठे तो भगवत् ध्यान में भोग लेने न आये तब रामानन्दजी ने ब्रह्मचारी से पूछ उस बनियें का भेद निश्चय किया तो उसका लेन देन चमारों से था तब रामानन्दजी ने ब्रह्मचारी को शाप दिया कि तुझ को भी चमारके घर जन्म लेना पड़े तो ब्रह्मचारीने ब्राह्मणशरीर छोड़ कर चमार के घर जन्म लिया परन्तु भगवद्भक्ति और भजनप्रताप से पहिले जन्म का स्मरण बना रहा जन्मे तभी से माता का दूध पीना छोड़दिया कि विना गुरुउपदेश के खान पान अयोग्य है तब तो रामानन्दजी को भगवत् ने आकाशवाणी से कहा कि ब्रह्मचारी को तुमने घोर दण्ड दिया उस आज्ञा से चमार के घर जन्मे पर अब उनपर अनुग्रह करो तभी रामानन्दजी उस चमार के घर गये और मन्त्रोपदेश करके (रैदास) नाम धरा और दूध पीने आदिकी आज्ञा दी जब रैदासजी कुछ स्याने भये तभी से भगवद्भक्तोंकी सेवा करनेलगे जो कुछ घर से

मिलता लेजाकर भगवद्भक्तोंके आगे धरदेते बाप ने रिस करके घर के पिछवाड़े एक जगह उसको रहने के लिये देदी द्रव्य घर में था परन्तु रैदासजी को कुछ न दिया रैदासजी स्त्री समेत तहां रहनेलगे जूती बनाकर निर्वाह करते जब कोई वैष्णव साधु देखते तो विना दामों के जोड़ी पहनादिया करते फिर एक छप्पर डालदिया और उसमें भगवत्मूर्ति विराजमान करके सेवा पूजा करने लगे और आप उस छप्पर से बाहर चौरे में (विन छाया) पड़ेरहते यद्यपि उनपर दुःख दरिद्र आदि का था पर भगवद्ध्यान में मग्न रहते थे भगवत् ने वह कङ्गाली भी हटाने का विचार किया तो आप साधु बनके रैदासजी के घर गये रैदासजी ने बड़ी सेवा करके भगवतरूप ध्यान करके भोजन करवाया उन्होंने प्रसन्न होकर (पारसपाषाण) रैदासजी को दिया और गुण वर्णन करके रैदासजी से कहा कि बहुत यत्न से रखना रैदासजी ने कहा कि मेरे यह किसी भी काम का नहीं है मेरा धन सम्पत्ति रामनाम है तब भगवत् समझे कि इसने प्रभाव जाना नहीं है इसहेतु रांपी को लगाया तो सुवर्ण की होगई रैदासजी ने मनमें कहा कि रांपी भी मेरे हाथ से गई तो उसे न ली उन्हों ने बहुतही कहा तब लिया और उस पारस को छप्पर में रखवाया तेरह महीने पीछे भगवत् फिर आये रैदासजी का वैसाही वृत्तान्त देखके पूछा कि पारस कहां गया रैदासजी बोले जहां आप रखगये तहांही होगा मुझको उसके हाथ लगाने से भय होता है निदान भगवत् उसे लेकर चलेगये। एक दिन रैदासजी की पिटारी में सेवा पूजा करने के लिये पांच मुहर निकलीं तो रैदासजी को भगवत्सेवा से भी भय होनेलगा तब भगवत् ने स्वप्न में कहा कि यद्यपि तुम को कुछ लोभ नहीं है पर अब हम जो कुछ दें वह अङ्गीकार करो तब रैदासजी ने अङ्गीकार किया और उस द्रव्य से धर्मशाला

नाकर भगवद्भक्तों को उसमें रक्खा फिर एक मन्दिर तैयार राके उसमें भांति २ के चंदोवे झालर लगाये और सुनहरी न्दनवार दीवारगीरी और छतबन्ध इत्यादि से ऐसा स-ाया कि जो दर्शन करनेवाले आते थे वे मन्दिर की शोभा ौर भगवत्मूर्ति की छवि देखकर मोहित होजाते थे पूजा तिष्ठा सब ब्राह्मणों के हाथ होती थी। तिस के पीछे जहां दासजी आप रहते थे तहां एक स्थान दोमहला बनवाया ौर बड़ी प्रीति से सेवा पूजा करनेलगे तो बहुत से ब्राह्मणों । शत्रुता करके राजा के पास कठोर वचन कह २ कर फरि-ाद करी कि जाति का चमार है इसे भगवत्मूर्ति के पूजने ा अधिकार किसी भी शास्त्र के मत से नहीं है और रैदास नेःशङ्क भगवत्मूर्ति विराजमान करके सेवा पूजा कियाकरता े उसको दण्ड देना चाहिये राजा ने रैदासजी को बुलाया ौर ऐसा प्रताप राजा पर रैदासजी का व्यापा कि एक दो ातेंही कहकर फेरदिया राजा की रानी का नाम झाली था उसने जो प्रताप रैदासजी का देखा सुना तो सेवक होगई जो ब्राह्मण लोग रानी के पास रहते थे उन्हों ने दुष्टता की तो कहने लगे कि रानी की बुद्धि जातीरही यह सब वृत्तान्त राजा के पास पहुँचाया तब रानी ने रैदासजी को बुलाया और सब ब्राह्मण इकट्ठे हुये वे ब्राह्मण जाति की बड़ाई करनेलगे और रैदासजी का यह वचन था कि भगवत् को भक्ति प्यारी है जाति पर कुछ हद नहीं है बहुत वादविवाद भया पीछे यह बात ठहरी कि भगवत्मूर्ति जो सिंहासनपर विराजमान है जिसके पास प्रसन्न होकर आजावे वही भगवत् को प्यारा है इस बात पर ब्राह्मणों ने तीन पहर पक्का वेद पढ़ा पर कुछ न भया और जब रैदासजी पर बात आई तो विनय किया कि हे महाराज! अपने (पतितपावन) नाम को सफल कीजिये और दो एक विष्णुपद कीर्त्तन किये जिस पद की पहिली तुक

यह है (विलम्ब छांड़ि आइये कि तौ बुलाय लीजिये) और दूसरे पद की तुक चौपाई । (देवराज आयो तुम शरणा । कृपा करो राखो निजचरणा ॥) भगवत् इन पदों को सुनतेही सिंहासन पर से उठकर रैदासजी की गोद में आय बैठे तब तो विश्वास करके सब आधीन भये तिसके पीछे रानी झाली काशीजी से अपनी राजधानी में आई और यज्ञ करने का विचार किया रैदासजी को बड़ा विनयपत्र लिखकर भेजा रैदासजी चित्तौर में आये रानी बहुत आनन्दित हुई बहुत सा रुपया पुण्य किया तो ब्राह्मणोंको शोच हुआ कि इस रानी का गुरु चमार है यह अच्छी बात नहीं तब रसोई की शुद्धसामग्री लेकर तैयार की जब भोजन करनें को बैठे तो सबने दो जनों के बीच में रैदासजी को बैठे देखे तब तो विश्वासयुक्त और आधीन होकर चरणों में गिरपड़े तब तो लाखों मनुष्य शिष्य होगये और रैदासजी ने सबके दृढ़ विश्वास होने को अपने शरीर की खाल उतारकर भीतर जनेऊ दिखलाया और गुरुजी के शाप की सब वार्त्ता कही ऐसे सबका मोह दूर कर आप तन छोड़करके परमधाम को पधारे जहां से फिर आगमन नहीं होता है ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे सप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७० ॥

अथैकसप्ततितमः प्रदीपः ।

कर्म्मावाईजी का इतिहास ।

जाता वात्सल्यभक्तेषु कर्म्मावाई महत्तमा ॥ दुयग्र हान्मुखलग्नान्नः कृष्णोऽग्रान्निजमन्दिरे ॥ १ ॥

वात्सल्यभाव से भक्ति करनेवाले भक्तों में (कर्म्मावाईजी) सबसे बड़ी भक्ता भई जिसके घरसे मुखअन्न से सनाभयाही लिये अर्थात् मुँह धोये विनाही भगवान् (जगन्नाथरायजी)

निजमन्दिर में भोग लेने गये। वृत्तान्त है कि (कर्म्माबाई) वात्सल्य उपासक हुई संसार में यह रीति है कि प्रभात होते ही वालक अपनी माता से खाने को खिचड़ी अथवा रोटी मांगा करते हैं इससे उनके जागने से पहिले माता को चिन्ता होती है सो कर्माजी भी उसी भाव से पहिले चिन्ता भगवत् के लिये खिचड़ी बनाने की करतीं तो विनहीं न्हाये और शौच कर्म किये थोड़ी सी खिचड़ी एक छोटी सी हँड़िया में अत्यन्त प्रेम से बनाया करतीं और प्रीति के साथ भगवत् के भोग लगाया करती थीं और जगन्नाथरायजी पुरुषोत्तमपुरी से आकर अतिप्रीति से भोग लगाया करते थे एक वेर कोई साधु आगया वह शिक्षा देगया कि आचारपूर्वक भोग लगाया करो तव लाचार होकर कर्माबाईजी आचारपूर्वक भोगलगाने लगीं तो भगवत् के भोग में देर होने लगी एक दिन कर्मा बाईजी के गोद में बैठे भगवत् खिचड़ी खारहे थे सोही पुरुषोत्तमपुरी में राजभोगकी तैयारी भई तो विन हाथ मुँह धोये ही तहां पहुँचे पण्डों ने जो भगवत् के हाथ मुँह में खिचड़ी लगी देखी तो चकित हुये और विनय किया तव आज्ञा हुई कि कर्म्माबाई हम को प्रभातही नित्य खिचड़ी भोग लगाया करती थी और हम उसके घर प्रीतिवश होकर भोग लगाने जाया करते थे अब एक साधुने उसको आचार विचार सिखा दिये इसकारण विलम्ब होजाता है सो अब उस साधु से कह देओ वह कर्म्माबाई जैसे पहिले करती रहीं तैसेही करके भोग लगावे तव पुजारियों ने उस साधु को ढूँढ़कर कर्म्माबाईजी के घर भेजा वह भगवत्शिक्षा उसे पहिले की सी वताय आया कर्म्माबाईजी ने उस शौचाचार को वड़ी भारी वलाय समझा इसहेतु कि मेरा लड़का सुकुमार और थोड़ा खाने वाला है सो दोपहर तक भूँखा रहने लगा जव पहिली रीति से करने की शिक्षा पाई तो ऐसी प्रसन्न हुई कि फूली अंग में न

भोग लगाया धन्य है भगवत् की दयालुता को कि निज भक्तों की ऐसी प्रीति निवाहते हैं ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धे द्विसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७२ ॥

अथ त्रिसप्ततितमः प्रदीपः ।

त्रिपुरदास का दृष्टान्त ।

भक्तप्रीत्यर्प्पितं वस्तु तुच्छं हि बहु मन्यते ॥ हरिस्त्रिपुरदासस्य वस्त्रेण मुदितोऽभवत् ॥ १ ॥

भक्त करके प्रीति से अर्प्पण की तुच्छ थोड़ी भी वस्तु को बहुत मानकर भगवान् स्वीकार करते हैं। जैसे त्रिपुरदास के दिये वस्त्र सेही भगवान् निश्शीत हो सुखी भये वृत्तान्त यह वर्णन किया जाता है कि (त्रिपुरदासजी) जाति के कायस्थ रहने वाले शेरगढ़ के वात्सल्यभाव से प्रेम और भक्ति के स्वरूप हुये हरसाल जाड़े के दिनों में यह नियम था कि श्रीनाथजी महाराज के वास्ते पोशाक जरदोजी की या और किसी प्रकार की सुन्दर भेजा करते संयोगवश राजा ने उनकी धन सम्पत्ति का अवरोध करलिया तो कुछ पास न रहा शोच करनेलगे कुछ न बनसका अधिक हुआ तो यह शोच हुआ कि उस सुकुमार को जाड़ा लगता होगा तब विकल होकर रोने लगे और घर में जाकर बहुत ढूंढ़ा तो दावात हाथलगी उसे एक रुपया पर बेचकर एक मोटा थान ले कुसुम्भा रँगाकर भेजने के उपाय में लगे कोई भक्त ब्रज को जाता था उसके हाथ वह मोटा कपड़ा पछताय हाथ मारके भेजा और बड़ी आधीनताई से विनय किया कि इस कपड़े का समाचार गुसाईंजी को न पहुँचे क्योंकि उनकी दासियों के योग्य भी नहीं है भण्डार में डालदेना वह आदमी गया और भण्डारी को सौंपा उसने बेमर्य्याद से डाल दिया श्रीनाथजी को जाड़ा लगनेपर अच्छी २ रजाइयां उढ़ाई

गई पर जाड़ा न गया फिर शाल दुशाले उढ़ाये आग की अंगीठी धराई दरवाजे बन्द करवाये पर सरदी न मिटी निदान गुसाईंजी ने कहा भाई यह शीत नहीं किसी की प्रीति है सो कहो किस २ ने क्या २ जड़ावल भेजा है उसने सब बताया वह उढ़ाया गया शीत न मिटा तब उसने विनय किया कि एक थान गाढ़ा त्रिपुरदास कङ्गाल ने भेजा है वह पोशाक बाँधने को भण्डार में रक्खा है तो गोसाईंजी ने कहा शीघ्र लेआओ सो आया तब उसका चोलना सा बनाकर पहिनाया कि तुर्त सरदी हटी और शरीर पसीजने लगा भक्तों की दयालुता का विचार करना चाहिये ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रे
निबन्धे त्रिसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७३ ॥

अथ चतुस्सप्ततितमः प्रदीपः ।

जनकपुर के साधु का दृष्टान्त ।

तमेव भावम्भजति प्रभुर्यद्भावभावितः ॥ ध्यातो जामातृबुद्ध्याऽपि तद्भावमभजद्धरिः ॥ १ ॥

प्रभु श्रीरामचन्द्रजी महाराज जिस भाव से भावना किये जावें उसी भाव को भजते हैं जैसे जनकपुर के साधु करके (जामातृ=जमाई) के भाव से ध्याये गये तो तिन्हों ने उसी भाव को भजा अर्थात् तैसीही प्रीति पाली । वृत्तान्त यह है कि (रामप्रसाद) जनकपुर के रहनेवाले श्रीरघुनन्दन महाराज को अपने दामाद मानते थे । जब अयोध्याजी में आये तो अयोध्या के देश का पानी भी नहीं पिया और जब दर्शन को रघुनन्दन महाराज के समीप गये तो उनका भाव पूर्ण करने को और भक्ति के प्रताप को प्रकट दिखाने के निमित्त भगवत् की मूर्ति रत्नसिंहासन से उठकर कई डगतक उनकी अगवानी को आई और जो रीति मर्याद राजा जनक की होती थी

सो सब उनकी हुई यह बात विख्यात है और स्वामी रा
प्रसादजी के सेवक अबतक उस देश में बने हैं और प
वैष्णव, रघुनन्दनस्वामी को अपना बहनोई जानते रहे अ
कोई घड़ी भजन बिना नहीं बिताते थे और जिस घड़ी अप
विश्वास की वार्ता लाया करते तो सुननेवाले प्रेम में मग्न ह
जाते थे, हे स्वामिन् ! हे दीनवत्सल ! हे पतितपावन ! क
अच्छी घड़ी इस तुच्छ सेवक के लिये भी आवेगी कि जित
इस संसार में स्नेह मित्रता और नातेदारी हैं सब आप
चरणकमलोंहीं से समझा करूंगा और कभी वह भी दि
होगा जो सब अवलम्ब छोड़ आपही के चरणारविन्द
ध्यान रहैगा जो ब्रह्मादिकों करके सेवनीय है ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम
निबन्धे चतुःसप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७४ ॥

अथ पञ्चसप्ततितमः प्रदीपः ।

युधिष्ठिर आदिकों का इतिहास

किंकुर्य्यात्प्रबलो वैरी सहायी यदि हीश्वरः ॥ ना
युतबलभ्रष्टं नष्टं वासो न द्विकरम् ॥ १ ॥

जहां श्रीभगवान् सहायक हैं तहां प्रबल भी शत्रु हो
क्या करसक्ता हैं जैसे द्रौपदी के चीर खैंचते दुश्शासन
दशसहस्र गज बल घटगया और वह दश हाथ का धोतव
नहीं घटा (वृत्तान्त) युधिष्ठिर आदि पांचो पाण्डव
महाराज को अपना भाई जानतेरहे और भगवत् भी उन
भाव पूर्ण करते थे अर्थात् प्रभात उठतेही युधिष्ठिर
सेन जो अपने वयक्रम से बड़े थे उनको प्रणाम
नकुल सहदेव जो छोटे थे उन्हें आशीश कह
[illegible] निज ईश्वरता का [illegible]
वह भाव ईश्वरता का [illegible] बना रहत

जितनी संकोच मर्य्याद राजायुधिष्ठिर से रहती थी तितनी भीमसेनादिक से नहीं और हँसीठट्ठा चारों भाइयों से हुआ करता था विशेष करके बहुत भोजन करने से भीमसेन को हँसा करते थे तो भीमसेन भी मन च्चाहैं सो कहदेते थे बोलचाल व्यवहार उनका कौन वर्णन करसक्ता है॥ राजा युधिष्ठिर धर्म का अवतार, भीमसेन पवन का और नकुल सहदेव ये अश्विनीकुमार वैद्य से हुये इनको जो २ संकट दुर्य्योधन की शत्रुता करके हुये उन सबो को श्रेष्ठ श्रीकृष्ण महाराज हटाते भये सो पहिले तो दुर्योधन ने भीमसेन को विष दिया और हाथ पांव बांधकर नदी में डालदिया तो भगवत् की कृपा से भीमसेन को वरुणजी अपने घर लेगये वहां उनको अमृत और दशहजार हाथी का बल मिला पीछे दुर्योधन ने लाक्षाभवन में जलाने का उपाय किया तब भी भगवत् की कृपा से कुछ न हुआ और अधिक ऐश्वर्य्य और ख्याति का कारण पाण्डवों को यह हुआ कि हजारों राजाओं की सभा में से जीतकर द्रौपदी को लाये तिस पीछे हस्तिनापुर में आये तहां भगवत् ने सब राजों से विजय कराकर राजायुधिष्ठिर से राजसूययज्ञ पूर्ण कराया उस यज्ञ में जब दुर्योधन की हँसी भई तो जुये में इनकी छलकरके सब धन संपत्ति जीत ली और द्रौपदी को राजसभा में नङ्गी करना चाहा तो भगवत् नें रक्षाकर उसका चीर अमित बढ़ाया॥ और जब पाण्डव दुर्य्योधन से वचन हारने के कारण तेरह वर्ष वन में रहे तो बहुत गन्धर्व और राक्षसों को विजय किया और अनेक प्रकार के लाभ उनको ऋषीश्वरों से और शिव इन्द्रादिकों से हुये और भगवतही ने दुर्वासा के शाप से उन को बचाया और महाभारत युद्ध के समय दुर्य्योधन की ओर ग्यारह अक्षौहिणी दल था और भीष्मपितामह, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य, सोमदत्त, जयद्रथ और

विकर्ण आदि ऐसे २ शूरवीर थे कि सब कोई पाण्डवों को जीतने का अहंकार रखते थे और दुःशासन दशहज़ार हाथियोंका बलधारी और दुर्य्योधन का अङ्ग अष्टधातु के सदृश था बाकी अट्ठानवें भाई भी बलवान् और सब शूरवीर थे। और इधर पांचों पाण्डव आप और दो चार राजा और सात अक्षौहिणी दल था। तब भी भगवत् ने तिस युद्धरूप घोर नदी से आप कैवर्तक मल्लाह होकर पाण्डवों को पार उतारे और दुर्य्योधन की शूरवीर सहित सब सेना नष्ट करवाई। पीछे राजा युधिष्ठिर राजसिंहासनपै बैठे तो धर्म और न्यायपूर्वक प्रजापालन किया जब परमस्नेही भगवत् के अन्तर्द्धान होने का वृत्तान्त सुना तो उसी घड़ी राज्य छोड़ उत्तर दिशा में सुमेरुपर्वत के बरफाने में जाकर परमधाम को पधारे यह कथा महाभारत में विस्तार से है इति। द्रौपदीजी की माहिमा कौन वर्णन कर सकै जिसके मनोरथ को ब्रह्मादिकों ने सफल किया अर्थात् जब द्रौपदीजी ने भगवत् का स्मरण किया तो तुरन्तही आये और अपनी ईश्वरता को छोड़कर उनकी चाहना को मुख्य समझा, द्रौपदीजी श्रीकृष्णचन्द्र स्वामी को मन से यद्यपि परब्रह्म परमात्मा जानती थीं पर बाहर से भाव देवर का मानती थीं उस भाव में भी परमानन्द और अपार रस है कथा द्रौपदीजी की महाभारत आदि में विस्तार से है इससे यहां कुछ थोड़ी लिखते हैं जब राजायुधिष्ठिर ने द्रौपदी और राज्य भाइयों समेत अपने को दुर्य्योधन के हाथ हारदिया तब दुर्य्योधन ने पाण्डवों को बेमर्य्याद करनेचाहे तो राजसभा में जहां ये पांचों भाई द्रौपदी सहित और सब राजा बैठे थे तहां दुर्य्योधन ने निज छोटे भाई दुःशासन को द्रौपदी का चीर उतारने की आज्ञा दी तिससमय भीष्मपितामह और द्रोणाचार्य्य इस विचार से न बोले कि द्रौपदीजी हरिभक्त है भगवत् इनकी सहाय करैंहींगे अथवा दुर्य्योधन के भय से मना नहीं

करसके और युधिष्ठिर आदि धर्म को विचारकर न बोलसके और द्रौपदीजी उससमय स्त्रीधर्म के कारण एक वस्त्र पहिरे थीं दुष्ट दुःशासन जब चीर खैंचने को तैयारहुआ तो द्रौपदीजी ने भक्तवत्सल, दीनबन्धु, कृपासिन्धु निज देवर का स्मरण किया और पतिराखन महाराज सर्वदा निजभक्तों के पास बनेही रहते हैं आन पहुँचे और द्रौपदीजी की सारी वामनजी के शरीर सदृश अथवा कुरुक्षेत्र के दान समान अथवा भगवत् अर्पित कर्म के सम अथवा नारायण के नाभिकमल की नाली की सी बढनेलगी सो ऐसी भी बढ़ी कि जो दुःशासन दशसहस्र हाथियों का बल रखता था वह भी खैंचते २ हारगया और द्रौपदीजी का एक नख भी न देखसका सब दुष्ट लज्जित होरहे और उसीसमय उन पापियों से राज्य और धर्म, बुद्धि, बड़ाई, आयु, सम्पत्ति इत्यादिकों ने विदा मांगी। शिक्षा–

दो० कहा करै वैरी प्रवल, जो सहाय यदुवीर॥
दशसहस्र गजवलघट्यो, घट्यो न दशगज चीर॥१॥

(कवित्त) दुर्जन दुशासन दुकूलगह्यो दीनबन्धु! दीन ह्वैके द्रुपददुलारी यों पुकारी है। आपनो सवल छांड़ि ठाढ़े पति पारथ सें भीम महाभीम ग्रीवा नीचे करिडारी है॥ अम्बरलौं अम्बर पहाड़ कीनो शेष कवि, भीषम करण द्रोण सभी यों विचारी है। सारी मध्य नारी है कि नारी मध्य सारी है कि सारी है कि नारी है कि नारी है कि सारी है॥१॥

फिर दुर्योधन ने पाण्डवों को वारहवर्ष का वनवास और तेरहवें वर्ष गुप्त रहने की आज्ञा की तो वन को चले तव सिवाय एक शस्त्र के और कुछ भी सामग्री न लेसके खाने पीने को कुछ पास न था सूर्य्यनारायण ने एक टोकनी प्रसन्न होकर दी उसका यह चमत्कार था कि जवतक द्रौपदीजी भोजन नहीं करलेतीं तवतक सब प्रकार की सामग्री भोजन की चाहती सो सोही उसमें से निकलती थी और जब द्रौपदीजी

परन्तु बहुत रोकने से रुका और अलग मकान में मीराजी को टिकाई जब एकान्त स्थान में रहनेलगीं तो बहुत प्रसन्न भईं गिरिधरलालजी को विराजमान करके शृङ्गार और सजावट में दिन रात मन लगाया और राना की बेटी जिस का ऊदाबाई नाम था वह मीराबाईजी को समझाने आई और कहनेलगी कि भाभी तू बड़े घर की बेटी है कुछ ज्ञान और विवेक सीख वैरागियों का सङ्ग छोड़ दे इसमें दोनों कुल को कलङ्क लगता है तब मीराबाईजी ने उत्तर दिया कि सत्सङ्ग से करोड़ों जन्म के कलङ्क छूटते हैं जिसको सत्सङ्ग प्यारा नहीं वही कलङ्की है और हमारा तो सत्सङ्गही से जीवन है जिस किसी को दुःख हो वह तुम्हारी सीख माने ऊदाबाई फिर आई और वृत्तान्त मा बाप से कहा कि मीराबाई भक्ति में दृढ़ लगी हैं किसी का कहना नहीं मानतीं तब तो राना बड़ा क्रुद्ध हुआ और विष का कटोराभर चरणामृत का नाम लेकर मीराजी के पास भेजा बाईजी ने चरणामृत का नाम लेतेही शीश पर चढ़ाया और अति आनन्द से पान करगई राना देखता रहा कि अब मीरा के मरने का समाचार आवे, परन्तु मीराजी के मुख की कान्ति क्षण २ और भी बढ़तीरही और उस समय मीराजी ने भगवत् का शृङ्गार करते एक विष्णुपद भगवत् के सामने कीर्त्तन किया जैसे। (राना जी जहर दियो हम जानी) मीराबाईजी को विष की ज्वाला कुछ भी न व्यापी तब राना ने लाचार होकर डेवढ़ीदार रखदिया कि जिस समय मीरा साधुओं से बोलचाल करती हो तब खबर करना। मीराजी गिरिधरलालजी के साथ बोलचाल खेलआदि अन्य स्त्री पुरुषों के सदृश किया करती थीं एक दिन डेवढ़ीदार ने खबर दी कि इससमय मीराजी किसी के साथ बोलचाल हँसी ठट्ठा खेल कररही है राना झट तलवार लेकर पहुँच पुकारा कि केवाँर खोल मीराजी ने खोलदिये जब भीतर गया

और कुछ न देखकर बोला कि जिसके साथ हँसी ठट्टा होरहा था वह कहां है मीराजी बोलीं कि तुम्हारे आगे विराजमान हैं आंख खोलकर देखलेओ तुम्हारा उनसे परदा नहीं है उस समय मीराबाई और गिरिधरलालजी आपस में चौसर खेलते थे जब राना पहुँचा तो भगवंत् ने पांसा डालने को हाथ फैलाया था राना ने जो हाथ भगवंत् का फैलाया देखा तो लज्जित हुआ फिर आया राना ने यह प्रताप भगवंत् का निज आंखों से भी देखलिया पर उसके मन में कुछ भी न व्यापा निश्चयही जब तक भगवद्भक्तों की कृपा नहीं होती तब तक भगवत् भी कभी कृपा नहीं करते हैं राना तो मीराजी के मारने के प्रबन्ध में था उस पर कृपा कैसे हो । एक धूर्त्त, कपटी साधुवेष बनाकर मीराजी के सामने आया और बोला गिरिधुरलालजी की आज्ञा है कि इस पुरुष को अपने अङ्गसङ्ग का सुख देव इस हेतु आया हूं मीराजी बोली गिरिधरलालजी की आज्ञा मेरे शिर पर है पहिले आप भोजन प्रसाद करें फिर मीराजी ने जहां भगवद्भक्तों का समाज होता था उस मकान के आंगन में पलंग बिछाया और शृङ्गार करके उस धूर्त्त साधु को बुलाया और कहा पधारिये वह लज्जित हुआ तो बोली कि भय किसका है गिरिधरलालजी की आज्ञा पालनीही उचित है तब तो वह धूर्त्त सुनतेही पीला पड़गया और हृदय की आंखें खुलीं तब तो त्राहि २ करके मीराबाई जी के चरणों में गिरा तब मीराबाईजी ने कृपा करके उसे भगवत् सम्मुख करदिया । अकब्बर बादशाह, मीराबाईजी की सुन्दरता का वृत्तान्त सुन तानसेन को साथ लेकर दर्शन करने को गया पीछे भक्ति की दशा देखकर अपने भाग्य को धन्य माना और बहुत प्रसन्न हुआ तानसेन ने जब एक विष्णुपद भगवत् के भेंट किया और चलाआया फिर मीराजी दर्शन को श्रीवृन्दावन में आईं और जीवगोसाईंजी के दर्शन को गईं । जीव-

गोसाईं जी ने कहला भेजा कि हम स्त्रियों को दर्शन नहीं देते तब मीराजी ने उत्तर दिया कि हम तो वृन्दावन में सबको सखीरूप जानती थीं और पुरुष केवल गिरिधरलालजी को सो आज से जान लिया कि इस व्रज के और भी पट्टीदार हैं गोसाईंजी यह सुनतेही नङ्गेपांयन आये और मीराबाईजी के दर्शन करके प्रेम में पूर्ण होगये फिर मीराजी सब वन और कुञ्जों के दर्शन करके अपने देश में आईं तब भी राना की द्वेषबुद्धि ज्यों की त्यों देखकर द्वारका में चली गईं तहां भगवत् शृङ्गार रस में मग्न रहनेलगीं जब राना के नगर में भगवद्भक्तों का आवना बन्द हुआ और नगर में भांति २ के उपद्रव होनेलगे तब मीराजी का प्रताप मालूम हुआ और बहुत ब्राह्मण मीराजी के लेआने को भेजे उन्हों ने राना की ओर से बहुतही विनय किया जब मीराजी का मन न देखा तो धन्ने बैठे तब मीराजी ने कहा कि मेरा द्वारका में निवास रनछोड़जी की कृपा से हुआ है सो उनसे विदा होआऊं सो वहां जाय गिरिधरलालजी के प्रेम में मग्न होकर एक विष्णुपद भगवत् की भेंट किया अन्त का तुक यह है (मीरा के प्रभु गिरिधरनायक मिलि बिछुड़न नहिं कीजे) भगवत् मीराजी का अत्यन्त प्रेम देखकर अलग न करसके तो उनको अङ्ग में मिलालिया विलम्ब भये पीछे ब्राह्मणलोग ढूंढ़ते वहां पहुंचे तो मीराबाईजी को कहीं नहीं देखा परन्तु सारी जो मीराजी पहिरे थीं वह पीताम्बर के स्थान में देखपड़ी तब भक्ति का निश्चय देखकर लौटआये और अकबर ने मीराबाईजी के जाने पर चित्तौर को युद्ध में जीतकर ध्वस्त करादिया तब सबों ने राना को धिक्कारा ॥

इति श्रीशुकदेवसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनिबन्धे षट्सप्ततितमः प्रदीपः ॥ ७६ ॥

अथ सप्तसप्ततितमः प्रदीपः ।

करमैतीजी का दृष्टान्त ।

यथा मीरा तथा जाता करमैती हरेः प्रिया ॥ यथा त्यक्त्वा पतिं स्वीयं हरिरूपतिमथावृणोत् ॥ १ ॥

जैसी मीराबाईजी भई तैसीही (करमैतीजी) हरिकी प्यारी हुईं जिसने निज अज्ञानी पति को छोड़कर श्रीकृष्ण महाराज को पति किया। (वृत्तान्त) करमैतीजी परशुराम ब्राह्मण की पुत्री ऐसी भगवद्भक्ता हुई कि कलियुग जो हजारों कलङ्क और पीड़ा से भरा हुआ है वह करमैतीजी के निकट नहीं आया जिसने अनित्यपति को छोड़कर श्रीकृष्णमहाराज से प्रीति लगाई संसार के सब फांसों को तृण के सदृश तोड़कर वृन्दावन में वास किया। निर्मल कुलीन परशुराम ब्राह्मण धन्य हुये जिनके घर ऐसी सुशील लड़की जन्मी जिसकी भक्ति की बड़ाई भगवद्भक्तों ने करी और श्रीकृष्णमहाराज की छविपर करोड़ों कामदेव निछावर होते हैं ऐसा चित्त को लगाया कि उसी के ध्यान चिन्तन में मग्नरहती और ध्यान के सुखका ऐसा स्वाद पाती कि शरीर में न समाती संसार का सब काम असार और फीका होगया करमैतीजी का व्याहतू पति लेने आया जब मा बाप ने गहने वस्त्र की बड़ी तैयारी की तो करमैतीजी को शोच हुआ कि यह तन भगवत् भजन के हेतु है विषयभोगादि सुख लेने के निमित्त नहीं है इसहेतु देहत्यागने की इच्छा की फिर सोचा कि भगवत् की प्रीति और भजन सब अर्थों पर मुख्यतर है और जगत् की प्रीति सब अनित्य है सो विना शरीर भगवद्भजन नहीं होसक्ता इस से देह त्यागना उचित नहीं किन्तु भजनविमुखों को त्यागना चाहिये यह निश्चय ठहरायके जिस भोर गवना था उसी रात को भगवत् की छवि में छकी भई उसी ध्यान रूप के साथ निर्भय निराली अकेली

है पीछे नरसीजी निज घर को चले तो एक स्त्री का नाम उस काग़ज़पर नहीं चढ़ा था उसको नरसीजी की लड़की अपनी पोशाक देनेलगी तो उसने हठ किया कि जिसके हाथ से सब ने लिया उसी से लेऊंगी तव नरसीजी ने अपनी लड़की के सङ्कोच से दोहरायके भगवत् को बुलाया और उसको भी सब असबाब दिवाया इस देने से नरसीजी की लड़की ऐसी प्रसन्न भई कि शरीर में न समाई और अपने बाप की भक्ति देखकर अपने पति आदि को त्याग दिया और नरसीजी के साथ चलीगई वहां भगवत् के भजन में लगी दूसरी लड़की ने अपना व्याहही नहीं कराया वह भी भगवद्भक्त होगई। जूनागढ़ जहां नरसीजी का घर था तहां दो गानेवाले फिरते थे पर कहीं एक कौड़ी भी उनको नहीं मिली किसीने नरसीजी का नाम बतला दिया वे पहुँचे और नरसीजी को निजगान सुनाया नरसीजी बोले हम फ़क़ीर हैं हमारे पास देने को क्या धरा है यहां तो भगवद्भक्ति धन है जो यह चाहिये तो शिर मुड़ायके आ बैठो वे तुरन्तही शिर मुड़ाय आय बैठे तब तो नरसीजी की दोनों लड़की और दो गायक प्रेम और भक्ति से भगवत् का कीर्त्तन किया करते। नरसीजी का मामूँ शाह लंघना में जूनागढ़ के राजा का दीवान था उसे नरसीजी का आचरण अच्छा न लगा और राजा के आगे इनको मिथ्या पाखण्डी ठहरायके इस बात पर सन्नद्ध किया कि ब्राह्मणों का समाज करके नरसीजी को देश बाहर निकलवाय देने सो दो चोवदार नरसीजी के लेआने वास्ते भेजे तब नरसीजीने दोनों लड़की और गायकों से कहा कि तुम कहीं अलग होजाओ हम राजा के पास जाते हैं उन्हों ने कहा कि राजा का क्या डर है हमभी आप के साथ हैं सो सब भगवत्कीर्त्तन करते हुये राजा की सभा में गये तब सब सभावालों के मुख की श्री नरसीजी के प्रताप से जातीरही तब एक पण्डित ने इनसे

पूंछा कि स्त्रियों को साथ रखना किस पद्धति में लिखा है नरसी जी ने उत्तर दिया कि सब शास्त्र पुराण और वेदों का सार भगवद्भक्ति है वह जिस किसी को प्राप्तभई वह भगवद्रूप है क्या स्त्री और क्या पुरुष भगवत् ने आप मथुरावासी स्त्रियों की श्लाघा की और उनके पति माथुर ब्राह्मणों ने उनके भाग्य की बड़ाई करी कि ये स्त्रियां परम बड़भागिनी हैं जो भगवत् का दर्शन पाया और हमारी सर्वज्ञता और वेदपढ़नेपर धिक्कार है जो भगवत् से विमुख हैं भागवत में लिखा है कि वही बड़ा है और वही मुक्ति के योग्य सत्संगी है जो भगवद्भक्त है फिर भगवत् का वचन है कि मैं भक्ति के आधीन हूं इससे भगवद्भक्ति से परे कोई पदार्थ नहीं भक्ति जिसको है वह तुच्छ भी सर्वज्ञ परिडत है और जो विमुख है वह सर्वगुणी भी तुच्छ है ऐसे ही ऐसे उत्तरों से सबों को निरुत्तर किये इन्हीं बातों में एकब्राह्मण ने नरसीजी के हूंडक देने का वृत्तान्त राजा से कहा तो राजा विश्वासी हो चरणों में गिरा और विनयकिया कि मेरेघर को आप कुछ दिन रह के कृतार्थ कीजिये नरसीजी राजा का आश्वासन करके चलेगये और भगवत् भजन में लगे श्रीमूर्त्ति भगवत् की जो विराजमान थी नित्य उसके सन्मुख भजन कीर्त्तन किया करते थे और जिससमय (केदारा–राग) गाते थे उससमय भगवत् प्रसन्न होकर अपने गले की माला दिया करते एकबेर साधुसेवा का प्रयोजनपड़ा केदारा रागिनी को साहूकार के यहां गिरवी धर आये कि जबतक रुपया न देंगे तबतक केदारा रागिनी को न गावेंगे उसी समय शत्रुलोगों ने राजाको बहकाया कि नरसीजी की मिथ्या प्रशंसा फैलरही है एक कच्चेतागे में फूलों की माला पहिराय देता है तो वह माला आपही फूलोंके भार से टूटपड़ती है राजा उसकी परीक्षा लेनेपर हुआ राजा की माता भगवद्भक्त थी उस ने बहुत समझाया पर कुछ न माना तब एक मोटे रेशम के

डोरेमें मालाको बिनवाया और भगवत्‌को पहिनाकर नरसीजी से कहा कि हम भी तो देखें तुम को भगवत् कैसे माला पहिराते हैं तब तो नरसीजी ने कीर्त्तन आरम्भ किया एक केदारा छोड़ सब राग रागिनी गाये पर भगवत् प्रसन्न न भये और माला न दई तब नरसीजी ने बोलीमारना आरम्भ किया कि आप तो नितान्त ग्वाल बाल हो एक माला के लिये ऐसी कृपणताकरी कि छातीही से लगारक्खी है और सिवाय उस केदारा के प्रसन्नही नहीं होते हो भगवान् नारायण बड़े मनोरथ पूर्णकरनेवाले हैं मेरे भाग्य में तुमसरीखे ग्वालबालही लिखे गये जो एकमाला के लिये इतना संकोच कररहे हो इस कृपणता से मेरी क्या हानि है आपही को कलङ्क लगेगा लज्जा आप कोही है जब आप भगवत् ने नरसीजी का यह वचन सुनलिया तो तुरंही नरसीजी का रूप बनाय उस बनिये का रुपया लेकर उसके घर गये वह साहूकार नींद में था उसने कहदिया कि मेरी स्त्री को रुपया देकर लिखतम फेरलेजा जब स्त्री के पासगये तो उस बड़भागिनी ने इनको दण्डवत् प्रणामकिया और रुपये लेकर लिखतम फेरदी फिर कुछ भोजन कराकर बिदा किया । साहूकार की स्त्री को जो दर्शनहुये सो कारण यह है कि एकवेर उस स्त्री ने नरसीजी से बहुत विनय करके कहा कि मुझ को भगवद्दर्शन होवे तब नरसीजी ने वचन दिया था सो वचन पूर्ण करने को आपने दर्शन दिये। जब नरसीजी ने भगवत् के आगे राग केदारा आलापा तो वह कांकर नरसीजी के गोद में डालदिया वे देखतेही प्रसन्न हुये शरीर में न समाये और ऐसा रागगाया कि और दिन तो माला भगवत् के गले से अलग होजाती थी और उस दिन आप भगवत् ने निज गले से माला निकालकर नरसीजी के गले में डालदी सब जय २ कहने लगे और राजा विश्वासित होकर चरणों में गिरा सब दुष्ट लज्जित हुये उन सबों ने

भगवत् शरणला भगवत् न विना कदारा राग क कृपा न का ता
कारण यह है कि पहिले तो नरसीजी के मन से बड़ाई और प्रेम
उस रागिनी की जाती रहती सिवाय इसके साहूकार और दूसरे
लोगोंको उस रागिनी का विश्वास नहीं होता और नरसीजी ने
जो माला मिलने हेतु और सिद्धाई दिखावने का जो हठ किया
सो कारण यह है कि उस देशमें भक्ति का प्रचार न था और यह
प्रभाव देखने से बहुत से लोगों ने भक्ति को अङ्गीकार किया
जो इस सांची भक्ति की परीक्षा में कुछ अनर्थ प्रकट होता
तो सब बेविश्वास होजाते और भक्ति का प्रचार उस देश में
न होता एक ब्राह्मण लड़की के विवाह के निमित्त लड़का
ढूंढ़ता हुआ जूनागढ़ में आया पर कोई लड़का रुचि के अनु-
सार नहीं मिला किसी ने नरसीजी का नाम लेदिया कि उन
का लड़का बड़ा सुन्दर है उस ब्राह्मण ने नरसीजी का जो
लड़का देखा तो बहुत प्रसन्न हुआ और तुरन्त तिलक विवाहका
करदिया नरसीजी ने कहा कि हम कङ्गाल हैं तुम किसी धन-
वान् के घर लड़की व्याहो तब वह ब्राह्मण, नरसीजी की बड़ाई
और प्रार्थना करके विदा हुआ और नगर में पहुँच लड़की के
बाप से सब वृत्तान्त कहा वह लड़कीवाला नरसीजी का नाम
सुनतेही विमन और क्रोधयुक्त हुआ उस ब्राह्मण से कहनेलगा
कि हमको यह लड़का अङ्गीकार नहीं है टीका फेर लाओ ।
ब्राह्मण बोला कि जिस अंगुली से तिलक कर आया हूं उस
को जो काटडालो तो कुछ चिन्ता नहीं परन्तु सम्बन्ध नहीं
फिर सकेगा तब वह लड़कीवाला लाचार होकर बोला कि
लड़की के भाग्य में जैसा लिखा वही होगा शोच करना कुछ
प्रयोजन नहीं लड़की के विवाह में ऐसा दहेज देंगे कि क-
ङ्गाली दूर होजावेगी जब विवाहका दिन निकट आया तो उस
ने लग्नपत्रिका भेजी तो नरसीजी ने उसे कहीं एकओर डाल
दी और न कभी विवाह की चर्चा चिन्ता करते थे ज्यों के त्यों

कोरे कोरे भजन कीर्त्तन में लगेरहे जब चारही दिन विवाहके रहे और नरसीजी ने नाम भी विवाह का न लिया तब तो श्रीकृष्ण स्वामी और रुक्मिणीजी को विवाह कार्य्य सुधारने की चिन्ता हुई तो आप आये और रुक्मिणीजी तो स्त्रियों के कार्य्य करने में लगीं और श्रीकृष्णजी नरसीजी के करने योग्य कार्यों में लगे स्त्रियों ने विवाह के गीतगाना आरम्भ किया मिठाई पकवान बटते और नगारे बजनेलगे। (श्रीरुक्मिणी जी ने) निज हाथ से लड़के के भालपर तिलक किया और मरमट मुखपर मांडा और शृङ्गार करके घोड़े पर चढ़ाया और जिस २ जगह जो २ नेग आचार थे सो सब श्रीरुक्मिणीजी करती रहीं ज्योंनार हुई अनगिनत मनुष्य आये तो ब्राह्मणलोगों ने ईर्षासे इतनी मिठाई और पकवान लिया कि पोट बांध २ कर लेगये पर वह अटूट भण्डार नहीं टूटसका। फिर बरात की तैयारी भई तो असंख्य हाथी, घोड़े, रथ और पालकी पर सुन्दर २ जनेती चढ़े जब बरात चढ़ी तो भगवत् ने नरसीजी का हाथ पकड़कर कहा कि तुम भी बरात में चलो गुप्त में यद्यपि हम साथ हैं तथापि प्रकट में सब काम आप अपने हाथों से करते रहो नरसीजी ने कहा हे महाराज! आप जानें और आप का काम जानें मुझको ताल बजाना और आप का कीर्त्तन करनाही आता है यह काम जहां चाहो तहांहीं लेलो भगवत् ने विचार लिया कि सिवाय भजन कीर्त्तन के नरसी जी से और कुछ काम न होगा तो आपही सब कामों में अधिष्ठाता हुये और बरात समधी के नगर निकट पहुँची उससमय समधी ने बरात के आने से पहिले अपने आदमी भेजे थे कि दिन निकट आये जो कुछ न हो तो लड़का और दो चार आदमियों कोही लेवाय लाओ उन लोगों ने जो बरात ऐसी भारी देखी तो पूछा कि यह बरात किसकी है लोग बोले कि (नरसीजी—महात्मा) की है तभी वे लोग

समधी के पास आये और ऐसी धूमधाम से भारी बरात आने का वृत्तान्त कहा तो समधी ने जो नरसीजी को कङ्गाल समझलिये थे तो कुछ सामान नहीं तैयार किया था और उन लोगों से कहा कि क्यों मेरी हँसी करते हो उन्हों ने कहा हँसी नहीं सत्य कहते हैं तब तो समधी की बुद्धि जाती रही और जो ब्राह्मण टीका देने गयाथा उसे देखने को भेजा वह बरात को देखतेही अत्यन्त प्रसन्न हुआ तनमें न समाया और समधी से आय के कहने लगा कि इतनी बरात आती है कि तुम अपना सर्वधन लगाने से घोड़ों को घास भी नहीं देसक्के हो जिस ओर दृष्टि जाती है उसी ओर बरात के सिवाय कुछ और नहीं देख पड़ता है तब घबराकर समधी आप बरात देखने को गया और बरात को देखतेही चारआंखें होगईं जो धन का अहंकार था वह दूर होगया मर्य्याद रहनी कठिन समझी तब तो लाचार हो तिन लेकर उस तिलक चढ़ानेवाले ब्राह्मण के चरणों में गिरा कि अब मेरी लाज तुम्हारे सिवाय और किसी से नहीं रहसक्ती है तब वह ब्राह्मण उसको नरसीजी के पास लेगया उसने जातेही नरसीजी के चरण पकड़लिये और हाथ जोड़ के प्रार्थना की कि कृपा करो मुझ को जगत् में रखलेओ यह कहकर रोनेलगा और फिर चरण पकड़ लिये नरसीजी उससे मिले और कृपाकर उसे भगवत् के दर्शन कराये और उसको धीर धराई कि दोनों ओर की लाज इन महाराज के आधीन है यह समझाय विदा किया और भगवत् ने दोनों ओर का काम सँभाला और इस धूमधाम से विवाह हुआ कि वर्णन नहीं होसक्ता जब विवाह करके नरसीजी घर आये तब भगवत् भी विदा हो द्वारका को पधारे और भगवद्भक्ति का प्रताप यश सारे संसार में विख्यात हुआ। यह प्रसंग नरसीजी का पढ़ सुन कर जिसको भगवत् के चरणों में भक्ति उत्पन्न नहीं होवे तो उससे अधिक भाग्य-

सुना करती जब अच्छे प्रकार भगवत् के चरित्रों में मन लगाया तो दर्शनों की चाह हुई तो सहेली से कहा कि ऐसा कुछ उपाय करना चाहिये कि जिस में भगवत् के दर्शन होवें कि प्राण सुखी रहैं क्योंकि वह मनमोहन मन में समाय गया है तब सहेली ने कहा कि, उसके दर्शन बड़े कठिन हैं हज़ारों ऋषीश्वर आदि घरवार छोड़कर धूल में लोटते हैं और दर्शन नहीं पाते परन्तु तुम प्रेम से शृङ्गार और रागभोग में लवलीन रहा करो तब रानीजी ने नीलमणिस्वरूप भगवत् का विराजमान किया और बड़ी प्रीति से भावसेवा में लगी भांति २ के शृङ्गार और रागभोग और नानाप्रकार के लाड़ लड़ानेलगी तो थोड़ेही समय में उस पदवी को पहुँची कि स्वप्न में भगवत् से बात चीत हुआ करती निश्चय कर करोड़ों उपाय और योग यज्ञ तप दान से प्रेम की राह कुछ निरालीही है पीछे यह आकाङ्क्षा हुई कि भगवत्के साक्षात् दर्शन होवें तो उसी सहेली से मन की बातचीत कही तब उस ने उत्तर दिया कि एक मकान अपने महल के निकट बनवाओ और मनुष्य अपने सावधान करो कि जो कोई भगवद्भक्त आया करें उनको लेआकर उस मकान में टिकावें और भोजन इत्यादि सेवा उनकी अच्छेप्रकार होती रहै और तुम परदे में बैठके उनके दर्शन किया करो इस उपाय से विश्वास है कि व्रजकिशोर महाराज के दर्शन अवश्य होजावेंगे रानीजी ने वैसाही सब किया और साधुसेवा में विरहिन और प्रेम मतवालियों के सदृश दिन गिन २ काटने लगी एक वेर व्रजभूमि के रहनेवाले साधु आगये जो व्रजचन्द महाराज के रंग में रँगेहुये थे तो उनके दर्शन और बोलचतरान से रानी को अत्यन्त प्रेम उपजा तब उस सहेली से पूछा कि इनमें वह कौन सा शरीर है जिस की लज्जा से साधुसेवा और सत्संग में व्यवधान पड़ता है मेरे देखने में सब अङ्ग बराबर हैं भगवत्स्वरूप के रस से परमआनन्द रस

में मग्न होना यही सार है और सब असार तुच्छ हैं यह कहकर जहां भगवद्भक्त थे तहां चली आई और उस सहेली ने मना भी किया पर न मानी आयके चरण पकड़ दण्डवत् प्रणाम किया और आधीनतापूर्वक अपने श्रीहस्त से भोजन कराने और सेवा करनेका मनोरथ करके विनय किया कि जो आज्ञा होय सो करें उससमय की दशा रानी की लिखने में नहीं आती कि प्रेम से सोने का थाल भगवत्प्रसाद का निजहाथ से लेकर उनको भोजन करवाया पान दिया और चरणों में गिरी वे हरि-भक्त यह प्रेमभक्ति रानीजी की देखकर चकित होरहे और जब सब परदा और संकोच रानी ने उठाय धरा तो नगर में शोर हुआ लोग देखने को आये महलपर मुसद्दी तैनात था उसने राजा को सब वृत्तान्त लिखा कि रानी ने निर्भय होकर सब लज्जा दूर की और मुण्डी वैरागियों के साथ बैठती है राजा ने जो पत्र पढ़ा और हलकारों की जबानी जो सब हाल सुना तो जलकर भस्म होगया संयोगवश (कुँवर प्रेमसिंह) जो रत्नावली के पेट से जन्मा था वह अपने बाप से मुजरा करने इस रूप से आया कि भाल पर तिलक और गले में कण्ठी माला थी जिस समय आकर सलाम किया तो माधवसिंह ने उस कुँवर को (मुण्डिनी) का अर्थात् वैरागिन का बेटा कहा और कहकर महल में चलागया तो प्रेमसिंह को अपने पिता के क्रोध करने की चिन्ता हुई तब लोगों से वृत्तान्त पूछा सब वृत्तान्त समझने पीछे विचार किया कि जो हम साधु हैं तो इससे अच्छा और क्या है भगवद्भक्ति अङ्गीकार करनी चाहिये तब अपनी माता को लिख भेजा कि जो तुम्हारी प्रीति भगवत् के चरणों में सांची है तो राजा ने आज सभा में हमको (मुण्डिनी) का कहा है उसी को सत्य करना चाहिये और मृत्यु को शिर पर पहुँचा जानकर किसी प्रकार का शोच करना योग्य नहीं रानी ने जो वह पत्री पढ़ी तो भगवद्भक्ति में रंगीन होकर उसी

नाम लिया तब नाव चली राजा मानसिंह ने आकर भक्ति से दर्शन किये और दृढ़भक्तियुक्त हुआ॥

इति श्रीशुकदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेऽशीतितमः प्रदीपः ॥ ८० ॥

अथैकाशीतितमः प्रदीपः ।

विल्वमङ्गल का दृष्टान्त ।

अत्यन्तव्यभिचारेऽपि ज्ञानं सम्यक्प्रजायते॥ महत्त्वं चाप्यविदुषो यथासीद्बिल्वमङ्गलः ॥ १ ॥

अत्यन्त व्यभिचार होने से भी परिणाम में ज्ञान उत्पन्न होजाता है और अज्ञानी भी पुरुषको महत्त्व (बड़ापन) होजाता है जैसे विल्वमङ्गलजी भये (दृष्टान्त) विल्वमङ्गलजी श्रीकृष्ण स्वामी के कृपापात्र आनन्दस्वरूप परमभागवत हुये करुणामृत और गोविन्दमाधव ग्रन्थ और स्फुट स्तोत्र संस्कृत में ऐसे रचना किये कि रसिक भक्तों के माला हार के सदृश हैं दक्षिण देश में कृष्णवेणा नदी के निकट रहनेवाले थे और चिन्तामणि नाम वेश्या के प्रेम में ऐसे मग्न थे कि संसार की लाज तज कर उसके प्रेम में फँसे हुये उसी के घर रहाकरते थे जाति के ब्राह्मण थे पिता के श्राद्ध के दिन कर्म करते और ब्राह्मण जिमाते दिन थोड़ा रहगया तो विकल होकर चले वह वेश्या नदी के उस पार रहती थी जब नदी पर पहुँचे तो बाढ़पर देखी और नाव आदि उतरने की सामा कुछ नहीं मिली तो अत्यन्त बेचैन हुये और विन निज प्रेमी के जीवन व्यर्थ जाना तो नदी में कूदपड़े कुछ सुधि अपने बिराने की न थी उसी वेश्या मिलने का ध्यान था जब नदी में डूबनेलगे तो एक बहाजाता था उसे पकड़लिया और बिचारा कि उस यह नाव भेजी है उसपर चढ़कर किनारे पहुँचे वहां पड़ते बड़े वेग से उस वेश्या के द्वारपे पहुँचे

म्ब था भीतर आने की चिन्ता में हुये संयोगवश वहां एक सर्प लटक रहा था तो विचारा कि उस प्यारी ने कृपा करके यह रस्सी लटकाई है उसे पकड़कर चढ़े और वहां से जब उतरने की राह न पाई तो आंगन में कूदपड़े तब घरके लोग जगे और दीपक बारकर देखा तो बिल्वमङ्गलजी हैं स्नान करवाया वस्त्र पहिराये और पूछा किसप्रकार आये तब उत्तर दिया कि तुम्हीं ने तो नदीपर नाव को भेजा और द्वारपै रस्सी लटकाई थी उसी के अवलम्ब से आया हूं तब वेश्याने छतपर चढ़कर देखा तो बड़ा भारी अजगर लटक रहा है तब वह वेश्या क्रोध करके कहनेलगी कि जिसप्रकार मेरे इस अस्थिचर्ममय शरीर में तेरा मन लगा है तैसे श्यामसुन्दर नटनागर महाराज में मन को क्यों नहीं लगाता जिसकरके संसारसागर से तिरजावे और दोनों लोक सुधरें में तो प्रभातही से युगलकिशोर महाराज का स्मरण भजन करूंगी तू जो चाहै सो करना तब तो बिल्वमङ्गलजी के हृदय की आंखें खुलगईं और श्रीव्रजचन्द्रकी रूपमाधुरी ने तुर्त हृदय में प्रकाश किया और उसीसमय ऐसा माधुर्य्यरस प्राप्त हुआ कि परमआनन्द से उस रस में मग्न हुये वह रात तो भगवत्चरित्र और वृन्दावनकुञ्जचिन्तन में व्यतीत हुई और प्रभात होतेही दोनों ने अपनी २ राह ली मन में परमशोभाधाम भगवत् का ध्यान और जिह्वापर नाम और आंखों में प्रेम का जल था बिल्वमङ्गलजी माध्वसम्प्रदाय में (सोमगिरिनाम) संन्यासी के शिष्य भये और भगवत् के रूप अनूप की चिन्तना करतेहुये हजारों श्लोक भगवत्रसचरित्र के गुरुसे पढ़े और आप रचना किये एक वर्ष तक गुरु की सेवा

म्ब था भीतर जाने की चिन्ता में हुये संयोगवश वहां एक सर्प लटक रहा था तो विचारा कि उस प्यारी ने कृपा करके यह रस्सी लटकाई है उसे पकड़कर चढ़े और वहां से जब उतरने की राह न पाई तो आंगन में कूदपड़े तब घरके लोग जगे और दीपक बारकर देखा तो बिल्वमङ्गलजी हैं स्नान करवाया वस्त्र पहिराये और पूछा किसप्रकार आये तब उत्तर दिया कि तुम्हीं ने तो नदीपर नाव को भेजा और द्वारपै रस्सी लटकाई थी उसी के अवलम्ब से आया हूं तब वेश्याने छतपर चढ़कर देखा तो बड़ा भारी अजगर लटक रहा है तब वह वेश्या क्रोध करके कहनेलगी कि जिसप्रकार मेरे इस अस्थिचर्ममय शरीर में तेरा मन लगा है तैसे श्यामसुन्दर नटनागर महाराज में मन को क्यों नहीं लगाता जिसकरके संसारसागर से तिरजावे और दोनों लोक सुधरें मैं तो प्रभातही से युगलकिशोर महाराज का स्मरण भजन करूंगी तू जो चाहे सो करना तब तो बिल्वमङ्गलजी के हृदय की आंखें खुलगईं और श्रीव्रजचन्द्रकी रूपमाधुरी ने तुर्त हृदय में प्रकाश किया और उसीसमय ऐसा माधुर्य्यरस प्राप्त हुआ कि परमआनन्द से उस रस में मग्न हुये वह रात तो भगवत्चरित्र और वृन्दावनकुञ्जचिन्तन में व्यतीत हुई और प्रभात होतेही दोनों ने अपनी २ राह ली मन में परमशोभाधाम भगवत् का ध्यान और जिह्वापर नाम और आंखों में प्रेम का जल था बिल्वमङ्गलजी माध्वसम्प्रदाय में (सोमगिरिनाम) संन्यासी के शिष्य भये और भगवत् के रूप अनूप की चिन्तना करतेहुये हजारों श्लोक भगवत्रसचरित्र के गुरुसे पढ़े और आप रचना किये एक वर्ष तक गुरु की सेवा में रहे फिर श्रीवृन्दावन के दर्शन की चाह हुई तो उसी प्रेम में मतवाले होकर चले राह में रहे एक नदी किनारे पहुंचे वहां स्त्रियां सब स्नान कररही थीं तो एक परमसुन्दरी को देखकर आसक्त हुये और अपने वेष को भूलकर उसके पीछे चले वह

जो यह कार्य्य मुझको सौंप भी दियागया गोसाईंजी ने कई वार बुलाया नहीं गये विनयकर भेजी कि साधुसेवा करें पीछे दर्शन को पहुँचूंगा तो गोसाईंजी और साधु इस विश्वासपर बहुत प्रसन्न हुये सन्दीले के सूबे से तेरहलाख रुपया तहसील-कर आया सो सब साधुसेवा में लगाया और कुछ हिसाब वादशाह का न किया जब वादशाहके मनुष्य रुपैया लेने को आये तो सन्दूक कङ्करों से भरकर सब सन्दूकोंमें एक २ परचा लिखकर डाल दिया उसमें यह लिखा था "तेरहलाख स-न्दीले भेजे सब साधुन मिल गटके। सूरदास मदनमोहनजी आधिरात को सटके" और हर सन्दूक पर अपनी मुहर करके आधीरात को भग निकले वादशाह ने परचों को पढ़कर कहा कि (गटक—खाजाना) तो अच्छा था मगर (सटक—भगजाना) यह अच्छा न हुआ और साधुसेवा और उदारता पर प्रसन्न हुये तब एक परवाना माफ होने का और हाजिर होने के निमित्त भेजा सूरदासजी ने उजर लिखभेजा कि अब इस सूबेदारीसे श्रीवृन्दावन की गलियों में झाड़ू देना अच्छा समझा है तो टोडरमल दीवान ने विनय किया कि जो इसीप्रकार माल वाजिब सरकार का लोग खर्च करके भगजावें तो इन्तजाम बि-गड़ जावेगा तो इनके गिरफ़्तार कराने का हुक्म भिजवाया और क़ैदखाने में भेजादिया तब सूरदासजी ने एक दोहा लिखकर बादशाह के पास भेजा उसमें वादशाह की श्लाघा और अपने क़ैद से छूटने का हाल लिखा था तो वादशाह ने उसी घड़ी छोड़दिये तब वृन्दावन में आकर श्रीव्रजकिशोर किशोरीजी की सेवा भजन में मग्न रहे ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धेद्व्यशीतितमः प्रदीपः ॥ ८२ ॥

अथ त्र्यशीतितमः प्रदीपः।

कील्हदासजी का दृष्टान्त।

कील्हदासोऽभवद्भीष्मपितामहसमो यथा॥ त्रिवारं नागदष्टोऽपि न मृतोऽथ मृतः स्वयम् ॥ १ ॥

कील्हदासजी (भीष्मपितामह) के समान स्वेच्छा से परलोकगामी हुये । जिनको तीनबेर नाग ने डसा पर नहीं मरे और स्वेच्छा से आपही परधाम को पधारे । वृत्तान्त यह है कि स्वामी (कील्हदासजी) चेले कृष्णदास पयआहारी के माधुर्य्य और शृङ्गाररस के उपासक परमभागवत स्वामी अग्रदासजी के गुरुभाई हुये दिनरात श्रीरघुनन्दनस्वामी के ध्यान में मग्न रहते थे जिनका निर्मल यश सारे संसार में अबतक विद्यमान है भगवत् भजन में शूरवीर और सांख्ययोग के मुख्य, तात्पर्य्य के जाननेवाले हुये और भीष्मपितामह के सदृश स्वेच्छाचारी थे ऐसी सिद्धतापर प्रेम और नम्रता का यह वृत्तान्त था कि सबको आप प्रणाम किया करते सुमेरुदेव उनके पिता गुजरात में सूबा थे जब उनका परलोक हुआ तो वे विमानपर चढ़कर परमधाम को चले तो उसी घड़ी कील्हदासजी मथुरा में राजा मानसिंह के पास बैठे थे तब उठे और साष्टांग प्रणाम कर बोले कि अच्छा हुआ २ तब राजा ने पूछा कि किस से बात करते थे तो कील्हदासजी ने पहिले तो उस बात को छिपाया जब राजा ने हठ किया तो वृत्तान्त जैसा था वह कह दिया राजा ने तभी हलकारा भेजके दिन घड़ी सब समझा, ठीक उतरा तो दण्डवत् किया और दृढ़ विश्वास माना एक बेर कील्हदासजी पूजन करते थे फूलों की पिटारी में फूल लेने को हाथ डाला तो सांपने काटा तो कील्दासजी ने जाना कि सांप तृप्त नहीं हुआ तो उससे कहा फिर काट २ ऐसे तीनबेर कटवाया पर त [illegible] विष न [illegible] और जब परमधाम की

इच्छा हुई तब भगवद्भक्तों का समाज किया और दशमद्वार ब्रह्माण्ड फोड़के देह त्यागा ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेम निबन्धत्र्यशीतितमः प्रदीपः ॥ ८३ ॥

अथ चतुरशीतितमः प्रदीपः ।

केशवजी का इतिहास ।

अभिमानो न कर्तव्यो विद्यायाः केशवो यथा ॥
शास्त्रदर्प्पं दधानोऽसौ वालकेन पराजितः ॥ १ ॥

विद्या का अभिमान कभी किसी के साथ न करना चाहिये जैसे केशवजी शास्त्र के अभिमान से कई पण्डितों का तिरस्कार करतेरहे फिर वालकरूप विष्णुजी से तुर्त हारे (वृत्तान्त) केशव भट्ट काश्मीरी ब्राह्मण ऐसे परमभक्त हुये कि लोगों को दुःखपापों से छुटाकर भगवत् सम्मुख करादिया महिमा भट्टजी की विख्यात है कि भक्ति के कुल्हाड़े से अन्य धर्मरूप वृक्षों को काटकर भगवत्चरित्रों को जगत् में विख्यात किया भट्टजी को निम्बार्क सम्प्रदायवालों ने अपने गुरुपरम्परा में लिखा है पर ऐसा जान पड़ता है कि उनको भगवद्भक्ति का उपदेश (श्रीकृष्ण चैतन्यमहाप्रभु) से हुआ उससमय महाप्रभु की अवस्था सातवर्ष की थी इसकारण से उनके शिष्य न भये निम्बार्क सम्प्रदायवालों के सेवक हुये जिसप्रकार भगवद्भक्ति प्राप्त हुई उसका वृत्तान्त यह है कि ये भट्टजी वड़े पण्डित थे हजारों पण्डितों को शास्त्रार्थ में निरुत्तर करते हुये नदियाशान्तीपुर में जा पहुँचे तो वहां के पण्डित लोग भयभीत हुये तब महाप्रभुजी ने विचार किया कि इसको अपनी पण्डिताई का वड़ा गर्व है सो दूर करना चाहिये इसहेतु भट्टजी के पास आये और मधुरवचनसे वोले कि आपकी विद्या और यश ... में विख्यात हो रहाहै कुछ मुझको भी सुनाकर

कृतार्थ कीजिये भट्टजी ने उत्तर दिया कि अभी बालक हो विद्या प्राप्त नहीं भई है ऐसे निर्भय वचन बोलना ठीक नहीं है परन्तु हम तुम्हारे मधुरवचन से प्रसन्न हैं जो कुछ कहो सोई सुनावें तब तो महाप्रभुजी ने कहा कि श्रीगङ्गाजी का स्वरूप वर्णन करो तो भट्टजी ने कई श्लोक अपने बनाये पढ़े तब महाप्रभुजी ने तुरन्त उनको उपस्थित कर लिये और पढ़ सुनाये और कहा कि अर्थ और गुण दोष उनमें हैं वे वर्णन करो तो भट्टजी ने कहा मेरे काव्य में दोष कब होसक्ता है तब महाप्रभुजी बोले जो आज्ञा करो तो मैं गुण दोष वर्णन करूं सो कहना आरम्भ किया तो ऐसे २ अर्थ किये कि जो बनाने के समय भट्टजी को याद भी नहीं थे जो २ दोष गुण थे उनका ऐसे विस्तार से वर्णन किया कि भट्टजी को उत्तर न आया तब महाप्रभु तो अपने स्थान पधारे और भट्टजी लज्जित होकर रात को सरस्वती का ध्यान करतेभये सरस्वतीजी आई तो भट्टजी ने विनय किया कि सारे संसार में विजय कराकर एक लड़के से हरायदिया हमसे ऐसा कौन अपराध हुआ था तब उत्तर हुआ कि (महाप्रभु) भगवत् का अवतार हैं और मेरे स्वामी हैं मेरी क्या सामर्थ्य है जो उनके सामने बोलसकूं तुम्हारे धन्यभाग्य जो उन के दर्शन भये यह कहके सरस्वतीजी तो अन्तर्द्धान हुईं और भट्टजी महाप्रभुजी की सेवा में आये और हाथ जोड़कर विनय प्रार्थना करी कि कुछ शिक्षा होय महाप्रभु ने आज्ञा किया कि भगवद्भक्ति अङ्गीकार करो और फिर कभी किसी पण्डित के साथ वाद मत करना भट्टजी ने भक्ति से उस वचन को धारण किया और जो पण्डितलोग साथ थे उन सबों को विदा करके भगवद्भक्त होगये फिर कश्मीर अपने घरगये कुछदिन वहां रह फिर मथुराजी के वृत्तान्त और समाचार पहुँचे कि विश्रान्तघाट पर मुसल्मानों ने ऐसा यन्त्र लगादिया है कि कोई उस पर जावे आपसे आप उसकी सुन्नत (मुसल्मानी) होजाती है फिर व-

लात्कार से मुसल्मान उसको अपने में मिला लेते हैं भट्टजी यह समाचार सुनतेही अपने हज़ारों चेलों सहित चले मथुरा में पहुँचे पहिले विश्रान्तघाट परही गये दुष्टों ने जैसे और लोगों से दुष्टता करते थे तैसेही भट्टजी से भी कहा कि नङ्गे होकर हमको दिखाओ तो भट्टजीने उनको अच्छे प्रकार से दिखलाया फिर मारा और यन्त्र को तोड़कर यमुनाजी में डालदिया तब मुसल्मान सब सूबा के पास फिरियादी हुये सो सब दुष्टता उनकी सूबे की हिमायत से थी तो उसने सहायता के हेतु फ़ौज भेजी तब भट्टजी उस फ़ौज से ऐसे लड़े कि बहुतेरों को मारे और कितनोहीं को यमुनाजी में डालदिया और कुछ भागगये इस युद्ध का वृत्तान्त एक कवि ने विस्तार करके लिखा है उससे जानने में आया कि भट्टजी ने चक्रसुदर्शन की आराधना करके ऐसी अग्नि वर्षाई कि सब दुष्ट आ शरण होगये और काजी और सूबा आदि सब आयके चरणों में गिरे पीछे उसके यह चरित्र किया कि सब मुसल्मानों के शरीपर चिह्न हिन्दुओं के जनाई पड़ने लगे वे लोग यह प्रभाव देखकर अधिक आधीन हुये और सबने हाथ बांधके सेवकाई करनी अङ्गीकार करके रक्षा चाही त्राहि २ पुकारे भट्टजी ने व्रज के सब हिन्दुओं का समाज किया और बहुत जगह आप गये और सबको मुसल्मानों से निर्भय किया और भगवद्भक्ति की प्रवृत्ति करी ॥

इति श्रीशुक्लदेवीसहायकृतदृष्टान्तप्रदीपिन्यांप्रेमनिबन्धेचतुरशीतितमः प्रदीपः ॥ ८४ ॥

अथ पञ्चाशीतितमः प्रदीपः ।

अम्बरीष की रानी का दृष्टान्त ।

भक्त्यम्बुधिनिमग्नस्य नश्यते स्वपरभ्रमः ॥ पश्चज्ज्ञायेत संबोध अम्बरीषस्त्रियो यथा ॥ १ ॥

जो भक्तिरूप समुद्र में मग्न है उसको अपने पराये का ज्ञा

नहीं होता है फिर बहिर्दृष्टि होनेपर पहिंचान होती है जैसे अ-म्बरीष की रानी ने, निजपति को नहीं पहिंचाना ॥ वृत्तान्त ॥ राजा (अम्बरीष) की रानी जब ब्याहिआई और राजा से उपदेश सेवा पूजा करने का अलग पाया तो अत्यन्त प्रेम और विश्वास से भगवत्मूर्ति विराजमान करके सेवा पूजा करने लगी और भगवत् में इतना प्रेम हुआ कि किसीसमय सिवाय भगवत्भजन और आराधन के किसी काम में मन नही ल-गाती थी राजा को भी इस सेवा का समाचार पहुँचा तो रानी के महल में आया और देखा कि रानी को भगवत् में इतना प्रेम है कि साधन अवस्था से चलके सिद्ध अवस्था पर्यन्त अर्थात् तद्रूपता को पहुँच गई है इस दशा को कि कभी अति चाव उमंग से गाती है और कभी नाचती है और कभी हँसती है कभी रोती है और कभी भगवद्ध्यान में भीत के चित्र स-दृश होजाती है राजा यह दशा देखकर अतिप्रसन्न हुआ अपने भाग्य की बड़ाई करनेलगा और रानी के समीप स्थित हुआ उस समय रानी तो भगवत् के छवि के अनुभव में मग्न हुई थी शरीर की भी सुधि उसे न थी तो पहिले कुछ बातचीत न पूछी फिर बहुत देरहुये सुधि भई तो पति को देखकर बड़ी रीति मर्य्याद से हाथ जोड़के खड़ी भई इस हेतु कि एक तो पति दूसरे राजा तीसरे गुरु कि उसही के उपदेश से भगवत्-सेवा मिली राजा ने यह दशा देख अपना भाग्य धन्य मान के मन को हर घड़ी भगवत में निश्चल लगाया ॥

अथ षडशीतितमः प्रदीपः ।

शबरी का इतिहास ।

समभूद्धरिभक्तेषु शबरी केशवप्रिया ॥ सद्यो यदपमानेन प्रजाताः क्रिमयो जले ॥ १ ॥

हरिभक्तों में (शबरी) भगवत् की प्रियभक्ता भई जिसकी अवज्ञा से जल में कीड़े पड़े फिर उसी के प्रसन्न होने से दूर हुये। वृत्तान्त । (शबरी=भीलनी) की महिमा किसप्रकार वर्णन होसकै कि बड़े २ ऋषीश्वर जिसकी भक्ति को देखकर आधीन होगये । प्रथमहीं जब शबरी को भगवद्भक्ति उत्पन्न हुई तो साधुसेवा स्वीकार करी सो दण्डकारण्य में पम्पासर के समीप मतङ्ग इत्यादि ऋषीश्वरों के आश्रम में रात्रि के समय छिपकर लकड़ियों का भार डालजाती थी और रात से उठकर जिस राह से ऋषीश्वर लोग स्नान को आयाजाया करते उस राह को झाड़ बुहारकर विमल करदेती थी तब (मतङ्ग=ऋषीश्वर) अपने मन में कहा करते कि ऐसा कौन बड़भागी है जो ऐसी सेवा करता है और हमारे तप भजन में बखेड़ा डालता है तब रात को दश बीस ऋषीश्वर चुपके छिपकर लगेरहे जब शबरी आई तो पकड़कर मतङ्गजी के पास लेगये तब शबरी ऋषीश्वर के डर से कांपनेलगी जब सामने गई तो रोदन करने के दुःख और डर से कुछ विनय न करसकी दूसरे ऋषीश्वरों के मतमें यह हुआ कि यह शबरी नीच जाति है तिससे ले आई हुई लकड़ी जो हमने काम में लगाई इसके पाप से न जानें हम कौन नरक में पड़ेंगे और मतङ्गजी उसके प्रभाव को जानते थे तो अपने मन में कहनेलगे कि यह शबरी ऐसी शुद्ध है कि जिसके ऊपर करोड़ों ब्राह्मणों के धर्म कर्म निछावर करने योग्य हैं तो मतङ्गजी उसको अपने आश्रम में लेआये और भगवत्मन्त्र उपदेश किया जब मतङ्गजी परमधाम को पधारे तब शबरी को

उपदेश किया कि श्रीरघुनन्दन स्वामी सच्चिदानन्द यहां पधारेंगे तुझको उनके दर्शन होंगे तू इसी आश्रम में रहाकर। यद्यपि शवरी गुरु के वियोग से अत्यन्त शोकवाली थी पर श्रीरघुनन्दन स्वामी के दर्शनों की आशा से प्रसन्न रही जिस घाट पर ऋषीश्वर स्नान को जाया करते तहां शवरी राह बुहारा करती थी एक दिन नियत समय में विलम्ब होगया, तो ऋषीश्वरों ने शवरी को देखकर क्रोध किया और उसी क्रोध में एक ऋषीश्वर का वस्त्र जो शवरी से स्पर्श होगया था तो ऋषीश्वरों को और भी क्रोध हुआ तव शवरी को दुष्ट और कठोर वचन कहकर फिर स्नान को गये तो तड़ागजल का रुधिर से भरा पाया और उसमें बड़े २ कीड़े पड़गये उनसे जल सड़नेलगा तव भी उन्हों ने अपनी शठता से यही समझा कि उस शवरी की अपवित्रता से यह जल विगड़गयाहै तो फिर कुटीपर आये और शवरी अपने स्थानपर चलीगई और श्रीरघुनन्दन स्वामी के लिये फल लेने चाहिये इस चिन्ता से वन मे गई तो अच्छे २ वेर तोड़कर प्रहिले आप चखलिया करती कि यह मीठे हैं कै खट्टे जो खट्टे होते उन्हें फेंकदिया करती और जो मीठे होते तिन्हें रख लिया करती फिर राहपर जाकर जिस ओर से रघुनन्दनस्वामी पधारेंगे वाट निहारा करती थी और जव अपने कुरूपता और जाति की नीचता को विचारती तो किसी जगह झाड़ी में छिपजाती और जव अपने गुरु के वचन और भगवत् की दयालुता और पतितपावनतापर दृष्टि करती तो आगे लेने को दौड़ती इसी प्रकार भगवत् के प्रेम और चिन्तन में दिन रात व्यतीत करती जव वहुत दिन वीते तो अधमउधारण, भक्तवत्सल महाराज पधारे और लोगों से बड़ी चाहकरके शवरी का स्थान पूछा कि शवरी महाभक्ता कहां है जव स्थान के समीप आये तो शवरी ने उठकर साष्टांग प्रणाम करी रघुनन्दन स्वामी ने लपककर धरती से उठाई और सव दुःख

समय यह विचार हुआ कि यह मेरी तद्रूपता को पहुँचगई है केवल पीताम्बर ही नहीं है इसहेतु पीताम्बर भी उढ़ाय देना चाहिये अथवा यह बात हो कि जब राजा किसी अपने प्यारे सेवकपर प्रसन्न होताहै तो निजपोशाक इनाम में खिलत देता है सो भगवत् महाराजाधिराज ने निज पीताम्बर खिलत दिया अथवा ऐसा मन में आया हो कि जब कोई राजा की सेवा में जाता है तो कुछ भेंट दिया करता है सो भगवत् ने विदुरजी कि स्त्री को अपने प्रेमियों की राजा समझकर पीताम्बर भेंट किया पीछे भगवत् को अपने घर लेआई और परमप्रीति से सिंहासन पर बैठाकर अत्यन्त प्रेम आनन्द में बेसुधि होगई कृपासिन्धु महाराज ने जो उसकी यह दशा देखी तो अपनी ओर वार्त्तालाप में लाने की आज्ञा किया कि कुछ भोजन तैयार हो तो लेआवो तो वह बड़भागिनि केले के फल ले आई और पास बैठकर खिलानेलगी वह तो परमआनन्द में पूर्ण थी तो गिरी को धरती में डालदी और छिलका भोग लगाने को दिया विश्वम्भर महाराज जो केवल प्रेम के भूखे हैं उन छिलकों को सराहि २ खानेलगे उसीसमय विदुरजी भी आये तो भगवत् के चरणकमलों को दण्डवत् करके स्त्री को तर्जन भर्त्सन करनेलगे कि रे मन्दबुद्धे ! गिरी खिलाने को छोड़ छिलके खिलाती है और आप बड़े प्रेम से गिरी निकाल २ कर खिलाने लगे भक्तचित्तरञ्जन महाराज ने कहा कि विदुरजी ! यह केलों का गूदा बड़ा मीठा है परन्तु उन छिलकों के सवाद को नहीं पहुँचता इस वचन से भगवत् अपने भक्तों को शिक्षा करते हैं कि जिस किसी को जितनी प्रीति और भक्ति मेरे चरणों में है तितनाहीं भोजन इत्यादि जो कुछ मेरे अर्पण करते हैं मैं सब अङ्गीकार करता हूं दूसरे यह बात जताते हैं कि मेरे दरबार में चतुराई आदि कुछ नहीं चलती केवल प्रेम और स्नेह पर रीझ है और एक यह अर्थ भी प्राप्त होगया कि जो विदुरजी

और उनकी स्त्री को छिलको के खिजाने के कारण से लज्जा और शोक हुआ था सो सब मिटगया और दोनों परमप्रीति से भगवत् की सेवा में तत्पर हुये ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे सप्ताशीतितमः प्रदीपः ॥ ८७ ॥

अथाष्टाशीतितमः प्रदीपः।

राजा भक्तदास का इतिहास।

भक्त्या यच्छृणुयाद्भक्तस्तत्तथैवाचरेत्पुनः। फलञ्च तद्वल्लभते भक्तदासो यथाऽभवत् ॥ १ ॥

भक्त, भक्तियुक्त चित्त से जो सुनता फिर वह वैसाही आचरण करता है फिर उसको वैसेही फल की प्राप्ति होती है जैसे भक्तदासजी भये वृत्तान्त यह है कि राजा (भक्तदास) कुलशेखर जिनका पद है प्रेमी भगवद्भक्त हुये कथा उनके प्रेम और भक्ति की (प्रपन्नामृत ग्रन्थ) में लिखी है यहां मूलमात्र लिखते हैं यह राजा श्रीरघुनन्दन स्वामी के उपासक थे तो तिनके चरित्र अत्यन्त भक्ति से नित्य सुना करते थे और अतिप्रेमभाव से लीला उत्साह भगवत् का नित्य नया करते थे कथा सुनाने वाला ब्राह्मण, राजा के प्रेम को जानता था तो जब रामायण में सीताहरण की कथा आया करती तो उस स्थल को छोड़ दिया करता था एक वेर उसके बेचैन होने पर उसका पुत्र कथा बांचने को गया और वही कथा सुनाई कि रावण आया और जानकी महारानी को हरकर लेगया इतना वचन सुनते ही राजा, तरवार खींच कर मार २ करता हुआ दौड़ा और घोड़े पर सवार होकर लङ्का की ओर चला कि इसी घड़ी रावण को मारकर अपनी माता सीताजी के दर्शन करूंगा मेरे जीते उसको कैसे हरलेजाय जब राह में समुद्र आया तो निर्भय घोड़ा समुद्र में डाल दिया तो भक्तभावन महाराज जानकी और लक्ष्मण सहित प्रकट हुये और कहा हे कुलशेखर!

यह वृत्तान्त जाना तो भगवत्कृपा और अपने भाग्य को धन्य मानके परम आनन्द में मग्न रहे और भगवद्भजन में ऐसे लवलीन हुये कि सिवाय उस प्रेम के और कुछ न जाना और साधुसेवी ऐसे थे कि हरिभक्तों को भगवत् के समान जानते रहे जो किसी को ऐसी शङ्का हो कि भगवत् ने अपने पैर का घुँघुरू क्यों पहिनाया वही घुँघुरू क्यों न सजदिया सो यह हेतु है कि जो वही घुँघुरू सजि के पहिनाते तो विलम्ब होता इससे अपनाही घुँघुरू पहिनाया और भक्तों के मन में अपनी रिझवारता और चाह को प्रकट करदिया और सिवाय इसके यह भी बात सूचित होती है कि भगवत् ने रीझकर यह घुँघुरू इनाम दिया ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे नवतितमः प्रदीपः ॥ ९० ॥

अथैकनवतितमः प्रदीपः ।

माधवदासजी का इतिहास ।

भक्त्या निश्चेष्टितस्याऽपि भक्तस्यारोग्यकृत्प्रभुः ॥
यथा माधवदासं स सद्योऽरक्षाद्विपत्तितः ॥ १ ॥

भक्तिकरके चेष्टारहित चित्तवाले भी भक्त के आरोग्यकारी भगवान्ही हैं जैसे माधवदासजी को शीघ्रही आपत्ति से बचाया । वृत्तान्त । (माधवदासजी) रहनेवाले कधागढ़ के ऐसे भगवत् के प्रेमी भक्त हुये कि जब भगवत् चरित्रों का कीर्त्तन वा गान सुनते अथवा आप कीर्त्तन करते तो भगवत् के रूप माधुरी के चिन्तन में वेसुधि होकर लोटने लगजाते और कुछ सुधि देहादि की नहीं रहती और उनके पुत्रपौत्रों का भी भगवत् में अत्यन्त प्रेम था और तनमन से उनकी सेवा टहल किया करते थे । नगर का राजा भगवत् से विमुख था तो दुष्ट लोगों ने उसको बहकाया कि माधव संसार को दिखलाने को भगवत् प्रेम के बहाने झूठ मूठ धरतीपर लोटता है तब

राजा अज्ञानी ने परीक्षा के निमित्त अपने स्थानपर समाज ठहराया और तिमंजिले पर तैयारी करी तो समाज के समय माधवदासजी ने नूपुर बांधकर कीर्त्तन किया और बेसुधि होकर लोटनेलगे और उसी दशा मे मकान की छत से एक कड़ाह तप्त घृतवाले मे वह उत्सव के निमित्त पक्वान बनाने को था उसमें गिरे तो भगवान् ने ऐसी रक्षा करी कि किसी अंग में कुछ भी चोट न आई तब इस चरित्र से राजा की आंखें हृदय की खुलगई तो भय मानके भगवद्भक्ति मान और भगवद्भक्तों के आधीन होगया और आप भी परमभगवद्भक्त हुआ ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे एकत्रिंशत्तमः प्रदीपः ॥ ९१ ॥

अथ द्विनवतितमः प्रदीपः ।

नारायणदासजी का इतिहास ।

नर्त्तकश्चाभवच्छ्रेष्ठः श्रीनारायणदासकः ॥ नृत्यरक्तो यथा स्वीयप्राणान् विष्णौ समर्पयत् ॥ १ ॥

नर्त्तकभगवद्भक्तों में (श्रीनारायणदासजी) श्रेष्ठ भये जिन्हों ने नृत्य में अनुरक्त होकर निज प्राणों को भी निछावर करदिया वृत्तान्त। नारायणदासजी नर्त्तक अर्थात् नट और भगवद्भक्त हुये यद्यपि संसार में हजारहों नाचनेवाले हुये पर जो कुछ भगवत्प्रेम को उन्हों ने निबाहा सो दूसरे से क्या होसके विष्णुपद को अक्षर के रूपसे जान भगवत्रूप में मग्न होकर भगवत् के नित्यविहार मे जा मिले उनका यह नेम और प्रण था कि सिवाय भगवत् के और किसी के सामने नृत्य गान नहीं करते थे तीर्थ और भगवत् मन्दिरों की यात्रा करतेहुये (हँड़िया-सराय) में जो प्रयागराज से छःकोस पूर्व है वहां पहुँचे तो उनके नृत्यगान की धूम सारे नगर में पहुँची वहां का हाकिम यवन था उसने बुलाने को अपने आदमी भेजे तो नारायणदासजी ने भगवत् सिंहासन को यवन के सामने लेजाना उचित नहीं स-

अथ चतुर्णवतितमः प्रदीपः ।

मुरारिदासजी का इतिहास ।

भक्तिःश्रेष्ठा न जात्यादि कार्य्यो नैवाऽत्र संशयः ॥
यथा मुरारिदासो हि चर्मकारजलं पपौ ॥ १ ॥

भक्ति बड़ी श्रेष्ठ है भक्तिमार्ग में जाति आदि का सन्देह नहीं करना चाहिये क्योंकि "हरिका भजै सो हरिका होई । जाति पाँति पूछै नहिं कोई" जैसे मुरारिदासजी ने चमारके हाथ से चरणामृत लेलिया (वृत्तांत) "मुरारिदासजी" बलवण्डा शहर में जो मारवाड़ में विख्यात है तहां श्रीरघुनन्दन स्वामी के अत्यन्तप्रेमी भक्त हुये भगवत का उत्साह और हरिभक्तों की सेवा और भण्डारा करने में अद्वितीय थे कीर्त्तन करते में रघुनन्दन स्वामी के चरित्रों में लवलीन होकर प्रेमकी अन्तिम दशा हरिभक्तों को शिक्षा की । एक चर्मकार, भगवत की सेवा पूजा बड़ेभाव से करके उच्चस्वर से पुकारा करता कि जो भगवत चरणामृत का अधिकारी हो सो लेजावे । मुरारिदासजी ने राह चलते वह शब्द सुना तो उसके घरगये तो वह चमार डर से कांप उठा तब मुरारिदासजी ने उसको बहुत आश्वासन करी और कहा कि भय किसका करता है केवल चरणामृत के निमित्त आया हूं चमार ने विनय किया कि महाराज ! मैं जाति का चमार हूं आपको कब दसका हूं तो मुरारिदास जी ने उत्तर दिया कि तू हम से भी अच्छा है और जो तुझको कुछ डर है तो हम किसी से नहीं कहैंगे यह कहकर विह्वल होगये और आंखों से जल बहनेलगा चमार ने पूछा कि हे महाराज ! तुम किसलिये रोते हो तो उत्तरदिया कि हमारी आंखें दुखती हैं फिर चमार ने वड़ी विनय और पुकार से कहा कि हे महाराज ! आप को मुझ नीच का चरणामृत न लेना चाहिये तब मुरारिदासजी ने न माना और हठकरके चरणामृत

लेलिया भगवद्भक्त को मुख्य समझा और जाति कर्म आदिपर धूल डाली. जानना चाहिये कि मुरारिदासजी ने इस चरित्र से तीनोंप्रकार के लोगों को शिक्षा किया है कि जो कोई भगवत् प्रेम और भक्ति की सिद्धदशा को पहुँचगये हैं उनको तो यह शिक्षा है कि जातिआदि का बन्धन उनलोगों को है जो भगवत् प्रेम में दृढ़नेसी नहीं हुये सो तुम उस दृढ़तापर स्थिर रहना और साधक लोगों को दृढ़ निश्चय कराते हैं कि भगवद्भक्ति और प्रेम में वह पदवी प्राप्त करनी चाहिये कि भेद और द्वैत दूर होजावे और जो भगवत् से विमुख हैं उनपर यह कटाक्ष है कि तुम से चमार भी अच्छा है जो भगवत्सेवा करता है; तब तो मुरारिदासजी का यह वृत्तान्त सारे नगर में पहुँचा और सबलोग प्रकट में बोली मारनेलगे और राजातक समाचार पहुँचाया तो राजा को भी यह बात अच्छी न लगी और मन फिरगया एक बेर मुरारिदासजी राजा के पास आये तो पहिले कीसी भक्तिभाव न देखी तो आप सब त्यागन करके और कहीं जारहे तो उनके जाने से राजा के यहां भगवत् भक्तों का आना जाना निर्मूल बन्द होगया और राजा जो प्रतिवर्ष उत्साह करता था और देश २ के भगवद्भक्त साधु इकट्ठे होते थे कोई न आया और अकाल उपद्रव दिखाई दिया तब राजा शोक दुःख से व्याकुल होकर मुरारिदासजी को फेरलेआने को चला और जाके प्रेमभक्ति से साष्टांग दण्डवत् किया तो मुरारिदासजी ने मुँह फेर लिया कि ऐसे भगवत् विमुख का मुख भी न देखना चाहिये ऐसे विमुख से गुरु की निन्दा होती है तब राजा हाथ जोड़े दुःखदीनता की नदी में डूबकर खड़ा रहा और फिर दण्डवत् करके प्रार्थना की कि आप मेरे ऊपर विचार करके जो दण्ड देना चाहैं उसी के योग्य हूं और यह कटाक्ष का वचन भी नियत किया कि मेरे अच्छे भाग्य होने में कुछ संदेह नहीं कि आप सरीखे गुरु मुझको मिले, परन्तु आप

अथ चतुर्णवतितमः प्रदीपः ।

मुरारिदासजी का इतिहास ।

भक्तिःश्रेष्ठा न जात्यादि कार्य्यो नैवाऽत्र संशयः ॥
यथा मुरारिदासो हि चर्मकारजलं पपौ ॥ १ ॥

भक्ति बड़ी श्रेष्ठ है भक्तिमार्ग में जाति आदि का सन्देह नहीं करना चाहिये क्योंकि "हरिका भजै सो हरिका होई। जाति पाँति पूछै नहिं कोई" जैसे मुरारिदासजी ने चमारके हाथ से चरणामृत लेलिया (वृत्तांत) "मुरारिदासजी" बलवण्डा शहर में जो मारवाड़ में विख्यात है तहां श्रीरघुनन्दन स्वामी के अत्यन्तप्रेमी भक्त हुये भगवत् का उत्साह और हरिभक्तों की सेवा और भण्डारा करने में अद्वितीय थे कीर्त्तन करते में रघुनन्दन स्वामी के चरित्रों में लवलीन होकर प्रेमकी अन्तिम दशा हरिभक्तों को शिक्षा की। एक चर्मकार, भगवत् की सेवा पूजा बड़ेभाव से करके उच्चस्वर से पुकारा करता कि जो भगवत् चरणामृत का अधिकारी हो सो लेजावे। मुरारिदासजी ने राह चलते वह शब्द सुना तो उसके घरगये तो वह चमार डर से कांप उठा तब मुरारिदासजी ने उसको बहुत आश्वासन करी और कहा कि भय किसका करता है केवल चरणामृत के निमित्त आया हूं चमार ने विनय किया कि महाराज! मैं जाति का चमार हूं आपको कब देसक्ता हूं तो मुरारिदासजी ने उत्तर दिया कि तू हम से भी अच्छा है और जो तुझको कुछ डर है तो हम किसी से नहीं कहैंगे यह कहकर विह्वल होगये और आंखों से जल बहनेलगा चमार ने पूछा कि हे महाराज! तुम किसलिये रोते हो तो उत्तरदिया कि हमारी आंखें दुखती हैं फिर चमार ने बड़ी विनय और पुकार से कहा कि हे महाराज! आपको मुझ नीच का चरणामृत न लेना चाहिये तब मुरारिदासजी ने न माना और हठकरके चरणामृत

लेलिया भगवद्भक्त को मुख्य समझा और जाति कर्म आदिपर धूल डाली जानना चाहिये कि मुरारिदासजी ने इस चरित्र से तीनोंप्रकार के लोगों को शिक्षा किया है कि जो कोई भगवत् प्रेम और भक्ति की सिद्धदशा को पहुँचगये हैं उनको तो यह शिक्षा है कि जातिआदि का बन्धन उनलोगों को है जो भगवत् प्रेम में दृढ़ऐसी नहीं हुये सो तुम उस दृढ़तापर स्थिर रहना और साधक लोगों को दृढ़ निश्चय कराते हैं कि भगवद्भक्ति और प्रेम में वह पदवी प्राप्त करनी चाहिये कि भेद और द्वैत दूर होजावे और जो भगवत् से विमुख हैं उनपर यह कटाक्ष है कि तुम से चमार भी अच्छा है जो भगवत्सेवा करता है; तब तो मुरारिदासजी का यह वृत्तान्त सारे नगर में पहुँचा और सबलोग प्रकट में बोली मारनेलगे और राजातक समाचार पहुँचाया तो राजा को भी यह बात अच्छी न लगी और मन फिरगया एक बेर मुरारिदासजी राजा के पास आये तो पहिले कीसी भक्तिभाव न देखी तो आप सब त्यागन करके और कहीं जारहे तो उनके जाने से राजा के यहां भगवत् भक्तों का आना जाना निर्मूल बन्द होगया और राजा जो प्रतिवर्ष उत्साह करता था और देश २ के भगवद्भक्त साधु इकट्ठे होते थे कोई न आया और अकाल उपद्रव दिखाई दिया तब राजा शोक दुःख से व्याकुल होकर मुरारिदासजी को फेरलेआने को चला और जाके प्रेमभक्ति से साष्टांग दण्डवत् किया तो मुरारिदासजी ने मुँह फेर लिया कि ऐसे भगवत् विमुख का मुख भी न देखना चाहिये ऐसे विमुख से गुरु की निन्दा होती है तब राजा हाथ जोड़े दुःखदीनता की नदी में डूबा

की दया में न्यूनता अवश्य करके है कि आपके चरणों में विश्वास न रहा । मुरारिदासजी, इस कटाक्ष युक्त वचन से बहुत प्रसन्न हुये और और प्रसङ्ग बाल्मीकि, श्वपच का कि जिसे कृष्ण महाराज ने युधिष्ठिर के यज्ञ में सबसे ऊँचे आसन पर बैठालकर द्रौपदीजी के हाथ से भोजन कराया और शबरी का कि ऋषीश्वरों ने जिस के चरण पकड़े और जिसी चरण के प्रभाव से तड़ाग पवित्र हुआ और निषाद का कि जिसे वशिष्ठजी और ऋषीश्वरों ने बराबर बैठाया । और हनूमान्, विभीषण, सुग्रीव और गज, गणिका इत्यादि का वृत्तान्त उपदेश करके राजा के अज्ञानरूप अन्धकार को दूर किया और भगवद्भक्ति और भक्तों का विश्वास दृढ़ करादिया पीछे राजा के नगर में आये भगवद्भक्तों का वैसाही समाज और सत्सङ्ग रहने लगा सब उपद्रव और उत्पात शान्तभये और लोगों ने भगवद्भक्ति अङ्गीकार करी । एकबेर समाज हुआ तो जो २ भजन कीर्त्तन में प्रवीण और ज्ञाता थे सब चेले आये तब कीर्त्तन के समय भगवद्भक्तों ने मुरारिदासजी से कहा कि, कुछ आप भी भजन करैं तो उनके कहने से उठे और घुँघुरू बांधकर नृत्य करने लगे वे भगवद्भक्त थे तो सब रागरागिनी सातों स्वर और तीन ग्राम और इक्कीसों मूर्च्छना सब आपके प्राप्त भये । और ऐसा समाज हुआ कि जो किसी ने भी देखा सुना नहीं था जब श्रीरघुनन्दन स्वामी के वन में जाने का चरित्र भगवद्भक्तों ने कीर्त्तन किया तो मुरारिदासजी भगवत् विरह के तन्मय होगये और चित्त के सदृश ज्यों के त्यों स्थिर हो रहे अथवा यह बात समझी कि उस वनमें वे परमसुकुमार रघुनन्दन स्वामी और जानकी महारानी तथा लक्ष्मणजी की सेवा कौन करैगा इसहेतु इन प्राणों को सङ्ग भेजना उचित है यह विचारकरके मुरारिदासजी समाधि लगाय श्रीरघुनन्दन स्वामी की सेवा में पहुँचे वह सब समाज यह चरित्र देखकर चकित होरहा ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे चतुर्णवतितमः प्रदीपः ॥ ९४ ॥

अथ पञ्चनवतितमः प्रदीपः ।

गदाधरभट्टजी का इतिहास ।

गदाधराख्यभट्टो हि भक्तिनिष्ठोऽभवद्दृढः ॥ चौरोऽपि दृष्ट्वा सम्यग्भक्तो जातः सुशिक्षितः ॥ १ ॥

गदाधर भट्टजी भक्तिनिष्ठ दृढभक्त भये । जिनका दर्शन करतेही चोर भी शिक्षित हो हरिभक्त होगया (वृत्तान्त) "गदाधर भट्टजी" प्रेमभक्ति के समुद्र, सुशील, मधुर बोलनेवाले सहज स्वभाव निस्पृह अनन्य भगवत् भजन में आनन्द और लोगों को भगवद्भक्ति में दृढ करनेवाले हुये किसी से कुछ चाहना नहीं रखते थे और भगवद्भक्तों की सेवा ऐसे प्रेम से करते थे मानों इसी हेतु उनका जन्म हुआ था उनका यह विष्णुपद कि "सखीहौं श्यामरंग रँगी। देखि बिकायगई वह सूरति मूरति माहिं पगी ॥" यह जीवगोसाईंजी ने सुना तो एक चिट्ठी लिखकर दो साधुओं के हाथ भेजी उसमें यह लिखा था कि "तुमको बिना रैनी रङ्ग किसप्रकार चढ़गया यह हम को चिन्ता है" इस लिखने का तात्पर्य्य प्रथम यह कि बिना वैराग्य अर्थात् त्याग बिना भक्तिका रङ्ग चढ़ना कठिन है सो तुम ने गृह आदि का त्याग अभीतक किया नहीं फिर रङ्ग में रङ्गीन किसप्रकार होगये। दूसरे यह कि श्रीवृन्दावन, भगवद्रूप के रङ्ग की रैनी है सो वृन्दावनवास बिना रङ्ग किसप्रकार चढ़ गया साधुलोग वह चिट्ठी लेकर भट्टजी के घर पहुंचे संयोग वश भट्टजी नगर से बाहर कुवेंपर बैठे थे उन्हीं से पूछा कि भट्टजी कहां रहते हैं भट्टजी ने उनसे पूछा कि तुम कहां से आये और कहां रहते हो साधुओं ने कहा कि सब धामों का परमधाम श्रीवृन्दावन है तहां रहते और तहांहीं से आये है तो भट्टजी उस परम अभिराम नाम के सुनतेही प्रेम में मग्न हो गिरपड़े और कुछ काल पीछे सुधि भई तो परम

की दया में न्यूनता अवश्य करके है कि आपके चरणों में विश्वास न रहा । मुरारिदासजी, इस कटाक्ष युक्त वचन से बहुत प्रसन्न हुये और और प्रसङ्ग वाल्मीकि, श्वपच का कि जिसे कृष्ण महाराज ने युधिष्ठिर के यज्ञ में सबसे उँचे आसन पर बैठालकर द्रौपदीजी के हाथ से भोजन कराया और शबरी का कि ऋषीश्वरों ने जिस के चरण पकड़े और जिसी चरण के प्रभाव से तड़ाग पवित्र हुआ और निषाद का कि जिसे वशिष्ठजी और ऋषीश्वरों ने बराबर बैठाया । और हनूमान्, विभीषण, सुग्रीव और गज, गणिका इत्यादि का वृत्तान्त उपदेश करके राजा के अज्ञानरूप अन्धकार को दूर किया और भगवद्भक्ति और भक्तों का विश्वास दृढ़ करादिया पीछे राजा के नगर में आये भगवद्भक्तों का वैसाही समाज और सत्सङ्ग रहने लगा सब उपद्रव और उत्पात शान्तभये और लोगों ने भगवद्भक्ति अङ्गीकार करी । एकबेर समाज हुआ तो जो २ भजन कीर्त्तन में प्रवीण और ज्ञाता थे सब चले आये तब कीर्तन के समय भगवद्भक्तों ने मुरारिदासजी से कहा कि, कुछ आप भी भजन करें तो उनके कहने से उठे और घुंघुरू बांधकर नृत्य करने लगे वे भगवद्भक्त थे तो सब रागरागिनी सातों स्वर और तीन ग्राम और इक्कीसों मूर्च्छना सब आयके प्राप्त भये । और ऐसा समाज हुआ कि जो किसी ने भी देखा सुना नहीं था जब श्रीरघुनन्दन स्वामी के वन मे जाने का चरित्र भगवद्भक्तों ने कीर्तन किया तो मुरारिदासजी भगवत् विरह के तन्मय होगये और चित्त के सदृश ज्यों के त्यों स्थिर हो रहे अथवा यह बात समझी कि उस वनमें वे परमसुकुमार रघुनन्दन स्वामी और जानकी महारानी तथा लक्ष्मणजी की सेवा कौन करेगा इसहेतु इन प्राणों को सङ्ग भेजना उचित है यह विचारकरके मुरारिदासजी समाधि लगाय श्रीरघुनन्दन स्वामी की सेवा में पहुँचे वह सब समाज यह चरित्र देखकर चकित होरहा ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे चतुर्णवतितमः प्रदीपः ॥ ६४ ॥

अथ पञ्चनवतितमः प्रदीपः ।

गदाधरभट्टजी का इतिहास ।

गदाधराख्यभट्टो हि भक्तिनिष्ठोऽभवद्दृढः ।
दृष्ट्वायं सम्यग्भक्तो जातः सुशिक्षितः ॥ १ ॥

गदाधर भट्टजी भक्तिनिष्ठ दृढभक्त भये । जिनका दर्शन करतेही चोर भी शिक्षित हो हरिभक्त होगया (वृत्तान्त) "गदाधर भट्टजी" प्रेमभक्ति के समुद्र, सुशील, मधुर, बोलनेवाले सहज स्वभाव, निस्पृह अनन्य भगवत् भजन में आनन्द और लोगों को भगवद्भक्ति में दृढ करनेवाले हुये किसी से कुछ चाहना नहीं रखते थे और भगवद्भक्तों की सेवा ऐसे प्रेम से करते थे मानों इसी हेतु उनका जन्म हुआ था, उनका यह विष्णुपद कि "सखीहौं श्यामरंग रँगी । देखि विकायगई वह सूरति सूरति माहिं पगी ॥" यह जीवगोसाईंजी ने सुना तो एक चिट्ठी लिखकर दो साधुओं के हाथ भेजी उसमें यह लिखा था कि " तुमको विना रैनी रङ्ग किसप्रकार चढ़गया यह हमको चिन्ता है" इस लिखने का तात्पर्य्य प्रथम यह कि विना वैराग्य अर्थात् त्याग विना भक्तिका रङ्ग चढ़ना कठिन है सो तुम ने गृह आदि का त्याग अभीतक किया नहीं फिर रङ्ग में रङ्गीन किसप्रकार होगये । दूसरे यह कि श्रीवृन्दावन, भगवद्रूप के रङ्ग की रैनी है सो वृन्दावनवास विना रङ्ग किसप्रकार चढ़ गया साधुलोग, वह चिट्ठी लेकर भट्टजी के घर पहुँचे संयोग वश भट्टजी नगर से बाहर कुवेंपर बैठे थे उन्हीं से पूछा कि भट्टजी कहां रहते हैं भट्टजी ने उनसे पूछा कि तुम कहां से आये और कहां रहते हो साधुओं ने कहा कि सब धामों का परमधाम श्रीवृन्दावन है तहां रहते और तहांहीं से आये हैं तो भट्टजी उस परम अभिराम नाम के सुनतेही प्रेम में मग्न हो गिरपड़े और कुछ काल पीछे सुधि भई तो परम आनन्द

रे मौन होकर चित्र के सदृश खड़े रहे तब किसी ने साधुओं
से कहा कि गदाधरजी यही महाराज हैं तो साधुओं ने वह
पत्री उनको दी भट्टजी ने उसे पढ़ी और शिर पै धारण कर
वृन्दावन और विहारी के रूप में आनन्द होकर उसी क्षण में
श्रीवृन्दावन को चल खड़े हुये और आकर जीव गोसाईंजी
से मिले दोनों भागवतों के प्रेम की नदी ऐसी उमड़ी कि
उसमें मग्न होगये और आपस के सत्सङ्ग से निज भाग्य को
धन्य मानकर भगवत् की बड़ी कृपा समझी। गदाधर भट्टजी
ने जीवगोसाईंजी से सब ग्रन्थ भक्ति भगवत्चरित्र और
प्रिया प्रियतम के रास विलास के पदें सुने और भगवत् के
रूप रङ्ग में रङ्गीन भये। भट्टजी श्रीमद्भागवत की कथा नित्य
कहाकरते (कल्याणसिंह) राजपूत रहनेवाला वरेगांव का
जो वृन्दावन के निकट है; वह कथा सुनकर भगवत् की ओर
सावधान हुआ तो अपने घर का आना जाना त्यागके भग-
वद्भजन में रहनेलगा तब उसकी स्त्री ने समझा कि भट्टजी के
सत्सङ्ग से घर की चाह और काम की वासना सब जातीरही
तो अपने पति को बेविश्वास करने के लिये एक स्त्री गर्भवती
जो भिक्षा मांगती फिरती थी उसें वीस रुपये देने करके सिखा
भेजा कि जिससमय भट्टजी कथा कहैं तब यह मेरी शिक्षा
अच्छेप्रकार पुकार देना तब तो मेरे साथ तुमको वह हेलमेल
था कि गर्भभी रहगया अब ऐसी निठुराई है कि खर्च का देना
भी बन्द किया। उसने जायके वैसाही कहा तो भट्टजी ने कथा
कहतेही में उत्तर दिया कि ठीक है पर मेरी इसमें कौन सी
तक़सीर है तुम्हीं ने दर्शन नहीं दिया तो कथा में जितने
लोग थे किसी को भी उसका विश्वास न आया और कहने
लगे कि यह निपट झूठ है और यह पापिनी दण्ड के योग्य
है तब राधावल्लभलालजी के गोसाईं को यह समाचार पहुँचा
... दुःखित हये तो उस स्त्री को बुलाकर बहुत भय त्रास

दिया कि सच कहु नहीं तो जी से मार डालेंगे तो उसने जो बात थी वह सत्य कहदी तब उस कल्याणसिंह ने भी उस निज स्त्री के त्रियाचरित्र को समझा तो तलवार लेकर उसके मारने को तैयार हुआ तो भट्टजी नेही दया करके कहा कि स्त्री को मारना कदापि उचित नहीं है इतनाही दण्ड बहुत है जो उसका त्याग होगया। किसी देश का एक महन्त कथा में आया तो भट्टजी ने सबसे आगे उसे बैठाया तो उस महन्त ने देखा कि सब श्रोता प्रेम से भरे हुये निज २ आंखों से जल बहा रहे हैं तब महन्त ने विचारा कि मेरी आंख से एक बूंद भी जल नहीं पड़ता है तो ये लोग निश्चय मेरी महन्तता पर बोली मारेंगे। इस हेतु मिरच आंखों में डालली तो जल बहने लगा। एक साधु ने इस वृत्तान्त को देख लिया था तो भट्टजी से सब वृत्तान्त कहा तो भट्टजी अपने हृदय की सचाई से यह समझे कि उस महन्त ने इसहेतु निज आंखों में मिरच डाली कि जिन आंखों से प्रेम का जल नहीं निकले वे आंखें फूटी भली तो जब कथा होचुकी भट्टजी उस महन्त से अत्यन्त प्रेम करके मिले तो वह थोड़ेही दिनों में अन्य प्रेमियों से भी अधिक प्रेमी नेमी होगया। एकबेर गदाधरजी के स्थान में एक चोर आयो और वस्त्र आदि वस्तु की दृढ़ पोट बांधी परन्तु भारी के कारण से उठाय न सका तो भट्टजी आप आये और वह असबाब की गठरी उठवादी तब चोर ने विचार किया कि यह कौन मनुष्य है जो पकड़ता नहीं है गठरी उठाये देता है तो पूछा कि तुम कौन हो तो भट्टजी ने अपना नाम बतलाया तो चोर असबाब को छोड़कर चरणों में गिरा और गिड़गिड़ानेलगा तब भट्टजी ने कहा कि निर्भय होकर लेजाओ और जो चाहिये सो लेलेओ और शीघ्र चलेजाओ प्रभात होगई तब तो चोर ने हाथ जोड़के विनय किया कि अब वह निरुपाधि धन मुझको कृपाकरके दिया जाय कि दोनों लोक सुधरें यह कह

रोकर फिर चरण पकड़ लिया तो भट्टजी ने कृपा करके उसको मन्त्रोपदेश किया और इस चोरी से छुटाकर माखनचोर का हाथ पकड़ा दिया भट्टजी की यह रीति थी कि भगवत् की रसोई सेवा सब अपने हाथ किया करते थे सेवक बहुत थे पर भगवत् सेवा किसी को नहीं करने देते थे एकदिन भगवत् रसोई का चौका देते थे तो कोई राजा दर्शन करने को आया और बहुत द्रव्य भेंट करने को लाया तो एक सेवक ने विनय किया कि चौका छोड़ हाथ धोकर शीघ्र गद्दी पर आवैं तो भट्टजी उस सेवकपर बहुत क्रुद्ध हुये और कहा कि भगवत् सेवा से अन्य मुख्य काम कौन सा है जिससे भगवत् सेवा छोड़ी जावै ऐसे २ गदाधर भट्टजी के बहुत से चरित्र हैं ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे पञ्चनवतितमः प्रदीपः ॥ ९५ ॥

अथ षण्णवतितमः प्रदीपः ।

रतवन्ती का इतिहास ।

भक्तो न सहते पीडां कृतां केनापि च प्रभोः ॥ रतवन्ती यथा प्राणान् जहौ दाम्नार्दिते प्रभौ ॥ १ ॥

भक्त, निजस्वामी की, किसी करके भी की भई पीड़ा को नहीं सहता । जैसे रतवन्तीजी ने निजस्वामी श्रीकृष्णजी के माता करके रस्सी से बँधने की कथा सुनतेही निज प्राण त्याग दिये (वृत्तान्त) रतवन्ती बाई वात्सल्य उपासक परमभक्त भई भगवत् भजन और भोग की तैयारी आदि में सर्वदा लवलीन रहा करती एकजगह श्रीमद्भागवत की कथा होती थी तो वहां नित्य जाने का नियम था एक वेर भगवत् का भोग बनारही थी तो उसे छोड़कर जाना उचित नहीं समझा क्योंकि सेवा की विशेषता है सो बेटे को कथा में भेजदिया उस दिन कथा में यह प्रसंग था कि श्रीनन्दनन्दन महाराज माखन चुरा कर निज सखाओं को देरहे थे तो यशोदाजी ने यह चरित्र

आप अपनी आंखों से देख लिया और उसी दिन किसनेही उलहने ब्रजसुन्दरियों को भी आनपहुंचे तब नन्दरानी ने ब्रजभूषण महाराज को ऊखल से बांध दिया यह कथा बेटे ने आकर रतीवन्तीजी से सब कही तो जिस समय उस लड़के के मुख से यह बात निकली कि रस्सी से बांध दिया तो विह्वल होगई और यह कहा कि यशोदा बड़ी कठोर है कि उस सुकुमार कोमल अङ्गवाले को रस्सी की बन्धन कब सहिसकी होगी हाय २ मेरा वह मनोहर बालक तो रस्सी से बंधा है और मैं सुख से बैठी हूं यह कह उसी घड़ी निज प्राण निछावर किये और नित्य परमआनन्द को पहुंचकर अपनी आंख की पुतली और कलेजे के टुकड़े श्यामसुन्दर को ऊखल के बन्धन से छुटाया ॥

इति श्रीप्रेमनिबन्धे षण्णवतितमः प्रदीपः ॥ ९६ ॥

॥ अथ सप्तनवतितमः प्रदीपः ॥

॥ जस्सूधर का इतिहास ॥

जस्सूधरोऽपि तच्छ्रुत्वा चरितं हि निजप्रभोः ॥
तथैव कृतवान् पश्चाद्रामेणाश्वासितो यथा ॥ १ ॥

तैसेही जस्सूधरजी भी निज स्वामी का चरित्र सुनतेही तन्मय होकर तैसाही करने लगे फिर रघुनन्दन स्वामी ने आकर उनको समझाया (वृत्तान्त) देवदासवंश में जस्सू स्वामी ऐसे दृढ़भक्त हुये कि उनके स्त्री पुत्र आदि सर्व भगवत्परायण थे और जिस भक्तिभाव से भगवत् में स्नेह था उसी भाव से भगवद्भक्तों की सेवा करते थे और रघुनन्दन स्वामी के चरित्रों में ऐसी प्रीति थी कि चरित्रों को सुनकर भगवत् प्रेम से बेसुधि होजाते थे। यह चरित्र जो रामायण में लिखा है कि विश्वामित्र ऋषीश्वर आये और दशरथ महाराज से श्रीरघुनन्दन स्वामी और लक्ष्मणजी को मांगा और भक्तवत्सल महाराज,

आयुर्वेदकृतश्रमः श्रुतिपरो विद्वज्जनाह्लादको दृष्टान्तावलिकां व्यधत्त रुचिरां विद्वद्गणे चेश्वरे ॥ ७ ॥

जो शुक्ल देवीसहाय–शब्द, व्याकरण, न्याय, तर्कशास्त्र इ० वेत्ता और आत्मशास्त्र, वेदान्त में कुशल और ज्योतिषी रमनेवाला और कर्मकाण्ड में अत्यन्त परायण तथा तन्त्रमशास्त्रमें परायण और आयुर्वेद वैद्यकविद्याज्ञाता, श्रुतिअर्थवे० विद्वज्जनों को आनन्ददायक, ऐसे इसने इस " दृष्टान्तावली ग्रन्थ को बनाकर विद्वानों के समूह में और ईश्वर में तथा ईश्वरीसहाय निज पिताजी के चरणों में समर्पण किया इस ईश्वरसेव से सब जगत् को सदासुख वृद्धि होवे ॥ ७ ॥ शमितिशम् ।

समाप्तिसमयज्ञानम् ॥

रसाब्धिनन्देन्दु १९४६ मितेसुसंवन्मासे सहस्ये त्वथ पक्षशुक्ले ॥ शुक्रेन तिथ्यां त्रिमितज्ञकायां शुक्लाय ग्रन्थः परिपूरितोऽसौ ॥ ८ ॥

संवत् १९४६ पौष शुक्ल तृतीया बुधवार को शुभ भारतभूमिमण्डलान्तर्गत प्रसिद्ध इन्द्रप्रस्थनगर से पश्चिमकोणस्थ आर्चीकशैलतलवर्ति नन्दग्रामनिवासी, श्रीमद्वृद्धसमृद्ध शुक्लोपनामक पण्डिताग्रगण्य श्रीमत् " ईश्वरीसहायजी " तिनके सत्पुत्र वरपण्डित " गङ्गासहायजी " याज्ञकेश, तिन कनिष्ठभ्राता पण्डित "देवीसहाय" करके वद्रीनारायण युगलकिशोरार्थ तथा समस्त विद्वज्जन विनोदार्थ बनाया यह ग्रन्थ सम्पूर्ण भया सो सबको सदा सुख देवे ॥ ८ ॥

मङ्गलम्भगवान् विष्णुर्मङ्गलं गरुडध्वजः ॥
मङ्गलं पुण्डरीकाक्षो मङ्गलायतनोहरिः ॥ ९ ॥

इति दृष्टान्तप्रदीपिनी समाप्तिमगात् ।